

आधुनिक हिन्दी कविता में व्यक्तिवाद

(सन् १९४१ ई० से सन् १९७० ई० तक)



अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि के लिए प्रस्तुत
शोध-प्रबन्ध

निर्देशक—

डॉ० फूलाबिहारी शर्मा

एम० ए० (हिन्दी, अँग्रेजी)

पी-एच० डी०

वरिष्ठ प्रवक्ता, हिन्दी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय

प्रस्तुतकर्ता—

प्रेमशंकर

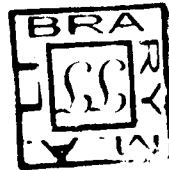
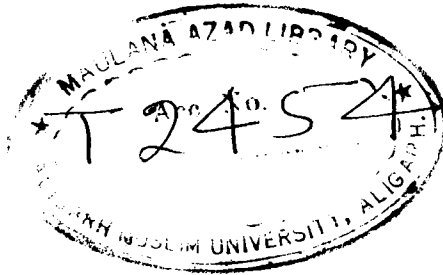
एम० ए०, एम० फिल्०

शोध-छात्र, हिन्दी विभाग

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय



T2454



~~CHECKED~~ 4002

CHECKED 1996-97

श्रीवाक

मानव जीवन पर दर्शन और साहित्य का अत्यधिक प्रभाव रहा है। दर्शन और साहित्य मानव द्वारा निर्मित है। मानव दर्शन एवं साहित्य से समय समय पर प्रेरणा ग्रहण करता रहा है। दर्शन और साहित्य में बहुत सम्बन्ध है। कुर्गी से ये दोनों एक दूसरे से अत्यन्त प्रभावित होते रहे हैं। मानव स्वका निर्माण भी करता रहा है और स्वमें प्रेरणा भी पाता रहा है। विश्व का समग्र दर्शन और साहित्य व्यष्टि एवं समष्टि के स्तुर्दिक व्याप्त है। व्यष्टि को केन्द्र मानकर विकसित होने वाला दर्शन व्यक्तिवाद के नाम से अभिहित हुआ और समष्टि को केन्द्र में मानकर विकसित होने वाला दर्शन समूहवाद, साम्यवाद अथवा समाजवाद आदि के नाम से प्रचलित हुआ है।

कुर्गी से व्यक्तिवाद और साम्यवाद जन-जीवन के प्रत्यक्ष जीवन को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते रहे हैं। आज भी दोनों का प्रभाव जन जीवन पर दृष्टिगोचर ही रहा है। दोनों का सम्बन्ध अलग अलग महत्त्व है। समाज, देश एवं राष्ट्र का निर्माण व्यक्ति (अर्थात्) से हुआ है। व्यक्ति विश्व के समग्र प्राणियों में सर्वात्म्य भेदा को धारण किये हुए है। वह एक विविध सम्पन्न उन्नत कोटि का विकसित प्राणी है। व्यक्ति समग्र विश्व को क्रियाशील का केन्द्र बिन्दु है। व्यक्तिवाद के केन्द्र में ' व्यक्ति ' सदैव रहा है। व्यक्तिवाद को महत्ता इसलिए भी विचारणीय रही है।

व्यक्तिवाद पश्चात्य दर्शन की देन है। पश्चात्य दर्शन एवं इतिहास से व्यक्तिवाद के विभिन्न दार्शनिकों एवं

उनके सिद्धान्तों का परिणय प्राप्त होता है। प्राचीन भारत का 'नवार्क' दर्शन 'व्यक्तिवाद' को ^{विशेषतः से प्रभावित है।} भारतीय दर्शन में व्यक्तिवाद पर स्वतन्त्र रूप से कन्य को 'विचार' प्राप्त नहीं होती। परन्तु पश्चात्त्य दर्शन में 'परी-बली' (४६०-४२६) ई० पू० के एक भाषण में सुसीदायकीज (४६०-४००) ई० पू० द्वारा विवेचित व्यक्तिवाद को ग्रीक उत्पत्ति है लेकर अमेरिकी दर्शन एवं आधुनिक दर्शन में व्यक्तिवाद का कृत्यधिक योगदान प्राप्त होता है। प्राचीन व्यक्तिवाद से आधुनिक व्यक्तिवाद में वैचारिक परिवर्तन आया है। इस कारण व्यक्तिवाद से प्रभावित अनेक धाराएँ - दर्शन, साहित्य, अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, मनोविज्ञान एवं समाजशास्त्र आदि में प्रवाहित हो रही हैं। व्यक्तिवाद ने साहित्य एवं काव्य को कृत्यधिक प्रभावित किया है। काव्य पर व्यक्तिवाद का प्रभाव अनेक रूपों में दृष्टिगोचर होता है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध का विषय 'आधुनिक हिन्दो कविता में व्यक्तिवाद' (सन् १९४९ ईसवी से सन् १९७० ईसवी तक) है। इसके पूर्व डा० बलभद्र तिवारी ने 'आधुनिक साहित्य को व्यक्तिवादो भूमिका' विषय पर शोध कार्य किया है। परन्तु अभी तक स्वातंत्र्योत्तर कविता पर व्यक्तिवादो प्रभाव को विवेचित नहीं किया जा सका और न ही व्यक्तिवाद को व्यक्ति एवं उसके व्यक्तित्व को केन्द्र मानकर 'पायित' किया जा सका है। अब प्राचीन व्यक्तिवाद एवं आधुनिक व्यक्तिवाद में वैचारिक अन्तर स्पष्ट हो गया है। मेरे शोधप्रबन्ध में सन् १९४९ से व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों को रेखांकित किया गया है। मैं व्यक्तिवाद को साहित्य एवं काव्य में अवलम्बित होने के कारणों पर प्रकाश डालते हुए व्यक्ति के

वन्तर्गम को अनुभूतियों को महत्ता दो है। काव्य में व्यक्तिवाद को निरूपित करते हुए व्यक्तित्व- बोध एवं बर्ह-बोध को विवेक्षित किया है। नवगीत को विकासयात्रा को निरूपित किया है, ताकि नवगीत का उचित मूल्यांकन हो सके तथा व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों का सहो वास्तव हो सके। अतः अपने अध्ययन- काल में मेरा प्रयास अत्यन्त नवोन एवं अविवेक्षित विचारों को विवेक्षित करना एवं व्यक्तिवादो प्रभाव को स्पष्ट करना रहा है।

जमी तक व्यक्तिवादो- भेदना के आधार पर आधुनिक हिन्दी कविता का अनुशीलन पूर्ण रूप से नहीं हो सका है। अन्यान्य दृष्टियों से लिखे गए कुछ शोध- प्रबन्धों का वातावरण ग्रंथों में साहित्यिक रूप से अथवा एक पक्षीय रूप से आधुनिक हिन्दी कविता में व्यक्तिवादो धारणा का उल्लेख किया गया है। आधुनिक हिन्दी कविता पर लिखे गए शोध-प्रबन्धों का वातावरण समीक्षा ग्रंथों में भी वार्षिक रूप से स्वातंत्र्योत्तर कविता पर विचार हुआ है। किन्तु व्यक्तिवादो धारातल पर विधिवत् स्वतन्त्र एवं व्यवस्थित अध्ययन का अब तक अभाव रहा है। प्रस्तुत शोध- प्रबन्ध इस अभाव को पूर्ति को दिशा में एक प्रयास है।

यह शोध प्रबन्ध आठ अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में विषय प्रवेश के अन्तर्गत 'व्यक्तिवाद का विकास, इतिहास एवं स्वरूप' को विवेक्षित किया गया है। व्यक्ति को परिभाषा करते हुए व्यक्तित्व - बोध एवं बर्ह-बोध पर प्रकाश डाला गया है। व्यक्ति एवं व्यक्तिवाद का आपसो क्या सम्बन्ध है तथा व्यक्तिवाद के अन्तर्गत व्यक्ति को क्या महत्ता है ? इस पर विचार किया गया है। व्यक्तिवाद

के प्रारम्भिक स्वरूप का ऐतिहासिक निरूपण करते हुए प्राचीन व्यक्तिवाद का दार्शनिक स्वरूप प्रस्तुत किया है। तदुपरान्त बीसवीं शताब्दी में वाधुनिक व्यक्तिवाद के विभिन्न रूपों को उद्घाटित किया है। व्यक्तिवाद को परिभाषित करते हुए पश्चात्य एवं भारतीय विद्वानों के मतों को प्रस्तुत किया गया है। व्यक्तिवाद के भेद- धार्मिक, नैतिक, साहित्यिक, वैज्ञानिक, वाणिज्यिक, राजनैतिक एवं मनोवैज्ञानिक आदि को विवेचित करते हुए व्यक्तिवाद की प्रमुख प्रवृत्तियों पर विचार किया गया है। अन्त में, साहित्य एवं काव्य के अन्तर्गत व्यक्तिवाद एवं व्यक्ति की उपादेयता पर प्रकाश डालते हुए साहित्य में व्यक्तिवादो धारणा को अभिव्यक्ति पर विचार किया गया है। इसी प्रकार काव्य के विविध परिदृश्यों पर प्रकाश डालते हुए- अहंवादो कविता, कलावादो कविता, वस्तुवाक्यवादो कविता, अभिव्यक्तिवादो काव्य, मनोविश्लेषणवादो काव्य, अस्तित्ववादो काव्य आदि पर विचार किया गया है। काव्य में व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों को विवेचित करते हुए व्यक्तिवाद एवं व्यक्ति को काव्य में महत्ता प्रस्तुत की है। इस प्रकार व्यक्तिवाद की उत्पत्ति, विकास, स्वरूप, परिभाषा, भेद, साहित्य में व्यक्ति एवं व्यक्तिवाद की भूमिका, काव्य में व्यक्तिवाद एवं काव्य में व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों के परिपार्श्व में नवीन रूप से स्पष्ट किया है।

द्वितीय अध्याय में 'वाधुनिक हिन्दी कविता (सन् १६०१ ई० से सन् १६४० ई० तक) में व्यक्तिवाद' का अध्ययन के अन्तर्गत भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, शायरवाद एवं उत्तर शायरवाद युग की कविता में व्यक्तिवादो धारणा को वर्णित किया गया है। द्विवेदी युग के काव्य में व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों का प्रारम्भ भारतेन्दु युग के परिपार्श्व में विवेचित

करते हुए विवेदो युग में व्यक्तिवाद के स्वरूप वादशास्त्रिक व्यक्तिवाद -
 इक्षिवाद, वादशास्त्रवाद, मानववाद, राष्ट्रवाद, स्वच्छन्दतावाद पर विचार
 किया है। इस प्रकार विवेदो युगीन काव्य में व्यक्तिवाद के प्रफुटन को
 काव्य एवं शिल्प में प्रस्तुत करते हुए काव्य को भाषा में परिवर्तन एवं शब्दों
 के नये संस्कार को प्रमुख रूप से उद्घाटित किया है। शायवादी में व्यक्तिवाद
 के विस्फोट को रेखांकित करते हुए 'वह बनाम मैं' एवं वैयक्तिकता का
 प्रफुटन, प्रेम तथा सौंदर्य के प्रति नूतन दृष्टिकोण आदि के द्वारा शाय-
 वादी काव्य में व्यक्तिवाद के प्रभाव को विवेचना की गई है। इस युग को
 विद्रोह भावना नयी चेतना का उद्घोष लेकर उपस्थित हुई जो कि फ्लायम
 वाद एवं निराश्वय के रूप में वर्णित है। शायवादी कवि नियतिवाद एवं
 परीक्षा सत्ता को शक्ति को मानता है। मैं राष्ट्र-प्रेम को व्यक्ति-स्वातं-
 त्र्य के रूप में रेखांकित किया है। शायवादी के शैली-शिल्प में नवीनता को
 व्यक्तिवादी प्रभाव के रूप में प्रस्तुत किया है। उत्तर शायवादी का प्रा-
 नितान्त व्यक्तिवादों एवं वैयक्तिक रूप में वर्णित किया गया है। इस काव्य
 में वैयक्तिकता को सहज अभिव्यक्ति, प्रेम को स्तुति एवं मांसल अभिव्यक्ति
 को शायो रोमांस के परिपार्श्व में प्रस्तुत किया है। जीवन के प्रति लज्जा
 अंगुष्ठा एवं निष्ठा का भाव दर्शाते हुए निराशा, फ्लायमवाद, नियतिवाद
 एवं भाग्यवाद को विवेचित किया है। उत्तर शायवादी में शाय को आत्म-
 स्वीकृति, मृत्युवाद या मृत्युपासना के रूप में प्रस्तुत की गई है। तदुपरान्त
 इस काव्य में भोगवाद एवं हालावाद के विविध स्वरूपों पर विचार किया
 गया है। इस काव्य में विद्रोह, वहीवाद, व्यक्ति-स्वातंत्र्य और व्यक्ति-
 समष्टि के संघर्ष को रेखांकित करते हुए सहज और सरल अभिव्यक्ति प्रणाली
 पर विशद रूप से विवेचना प्रस्तुत की है। इस प्रकार विवेदो युग, शायवादी
 एवं उत्तर शायवादी पर व्यक्तिवाद का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

तृतीय अध्याय 'सम्कालीन काव्य (सन् १९४१ ई० से सन् १९७० ई० तक) में व्यक्तिवाद के नूतन प्तितिज के अन्तर्गत - प्रयोगवाद, समष्टिवाद, नयी कविता, नवगीत, कविता, अस्वोक्त कविता, बोट का भुसी पीढ़ी, श्मशानी पीढ़ी, ताजो कविता, टटको कविता, युक्तसावादी कविता, निर्दिशायामी कविता, जति कविता, सनातनधूर्यादयो कविता, जगली कविता एवं सहज कविता के नामकरण, पृष्ठभूमि, प्रेरणाश्रोत, विकासयात्रा, व्याख्या तथा इनमें व्यक्तिवादो दर्शन की अभिव्यक्ति पर विचार किया गया है। इस प्रकार इस अध्याय में स्वातंत्र्योत्सार कविता तथा सम्कालीन कविताओं के अन्य नामों का परिचय एवं उन पर व्यक्तिवादो- चेतना और व्यक्तित्वता के प्रभाव को विवेचित किया गया है।

“ प्रयोगवाद में व्यक्तिवादो चिन्तन और अभिव्यक्ति ” शीर्षक के अन्तर्गत चतुर्थ अध्याय में प्रयोगवादो काव्य पर व्यक्तिवादो चेतना का प्रभाव विवेचित किया गया है। प्रयोगवादो कविता पर अस्तित्ववाद, जर्हवाद, पीगवाद, फ्लायनवाद, दाणवाद, अनास्था एवं विद्रोह , नकेनवाद, नकेनवाद में व्यक्तिवाद के नकारात्मक प्रयोग पर प्रभाव को वर्णित करते हुए प्रयोगवादो कविता के विविध उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं। इस प्रकार प्रयोगवादो कविता पर व्यक्तिवादो दर्शन के विविध रूपों का उद्घाटन किया गया है।

पंचम अध्याय ' नयी कविता में व्यक्तिवाद ' के अन्तर्गत व्यक्तिवादो प्रकृतियों को रेखांकित किया गया है। नयी कविता में निराशा, अस्तित्ववाद, लघुमानववाद, दाणवाद, जर्हवाद, वाच्यैतिक

वैयक्तिकता, विद्रोह, भोगवाद, कैलाफ, जनबोध, व्यंग्य, कृष्ण, अनास्था आदि व्यक्तिवादों प्रवृत्तियों पर विचार करते हुए सम्प्रमाण व्यक्तिवादों- ज्ञाना को अभिव्यक्ति को प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार सामाजिक दायित्व को व्यक्तिगत अनुभूति, नयी कविता में व्यक्ति और समाज एवं अर्थ को तय आदि पर विचार करते हुए इनकी नयी कविता में अभिव्यक्ति को विवेक्षित किया गया है। इस अध्याय में 'नयी कविता पर व्यक्तिवाद, वैयक्तिकता, व्यक्तिनिष्ठा एवं व्यक्तिवादों- ज्ञान के प्रभाव को विविध रूपों में स्थापित किया है।

षष्ठ अध्याय ' नवगोत : व्यक्तिवादों प्रवृत्तियों ' के अन्तर्गत व्यक्तिवादों अवधारणा को रेखांकित किया गया है। नवगोत में व्यक्तिवादों प्रभाव को स्थापित करते हुए नयी रोमानिक्त बनाम नया व्यक्तिवाद, नया एक-बोध: नया भाव-बोध, स्वाकी-फन, जनबोध, अनास्था, वैयक्तिकता को अभिव्यक्ति, आक्रोश के नये स्वर एवं व्यक्ति और समाज आदि पर विविध विवेचन प्रस्तुत करते हुए विचार किया गया है। इस प्रकार नवगोत पर व्यक्तिवादों प्रवृत्तियों का वास्तव किया जा सका है।

सप्तम अध्याय ' कविता में व्यक्तिवादों प्रवृत्तियों का प्रतिफलन ' के अन्तर्गत व्यक्तिवाद के ठोस एवं सघन स्वरूप को प्रस्तुत किया गया है। उसमें ' वस्तु-कृति का नवोन्मेष : मृत्यों से विद्रोह , फलदुःख- भवेदुःख, वायुनिष्ठा को विद्रुति, लह का विस्फोट- व्यंग्य चित्र और उल्लोलता , जटिल अभिव्यक्ति बनाम सपाटवयानों, अपरि- निष्ठ कथ्य तथा जीका देने वाला चित्र आदि व्यक्तिवादों प्रवृत्तियों का

उदाहरण देकर निरूपित किया गया है।

सातवीं दशक की अन्य काव्य-प्रवृत्तियाँ :

व्यक्तिवाद के परिप्रेक्ष्य में शौर्यक के अन्तर्गत व्यक्तिवाद के भाव स्वरूप कविता के सघु बान्दीतनों में व्यक्तिवाद की प्रवृत्तियों को विवेचित किया गया है। इसमें वस्त्रोक्त कविता, शम्शानी पीढ़ी, बीट कविता, मूसी पीढ़ी, साठोत्तरी कविता, गुरुत्वावादी कविता, सहज कविता आदि पर व्यक्तिवाद की चेतना को रेखांकित किया गया है। इस प्रकार साठोत्तरी कविता-प्रवृत्तियों पर व्यक्तिवाद, वैयक्तिकता एवं व्यक्तिनिष्ठा की विविध रूप से प्रस्तुत किया गया है।

उपसंहार के अन्तर्गत वाधुनिक हिन्दी कविता (सन् १९४९ ई० से सन् १९७० ई० तक) की व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों के द्वारा विकसित उपलब्धियों पर प्रकाश डाला गया है। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यक्तिवादी-चेतना द्वारा विकसित नयी स्थापनाओं पर विचार किया गया है। वाधुनिक हिन्दी कविता में व्यक्तिवादी चिन्तन के प्रभाव को प्रस्तुत करते हुए नूतन विचारधाराओं एवं अवधारणाओं को रेखांकित किया जा सका है। काव्य में व्यक्ति और समाज दोनों को विवेचित करने का प्रयास किया है। परन्तु व्यक्तिसत्ता एवं व्यक्तिनिष्ठा पर मेरा ध्यान निरन्तर केन्द्रित रहा है। इस प्रकार वाधुनिक हिन्दी कविता, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता, साठोत्तरी कविता एवं नवगोत में व्यक्तिवाद के सर्वांगीण विवेचन का मेरा प्रयास रहा है।

श्रेष्ठ गुरुवर्य विभागाध्यक्ष श्रीगुरु प्रोफेसर
डा० प्रेमचन्द गुप्त जी प्रणाम्य व्यक्तित्व के प्रति श्रद्धाभाव और सम्मान

व्यक्त करता हूँ। मेरे प्रति बापू की एवं बापू के प्रत्येक व्यक्तित्व को कृपा दृष्टि नहीं रही होती तो कदाचित् यह कार्य पूरा भी न हुवा होता। बापू अपना बहुमूल्य समय देकर मुझे निरन्तर लाभान्वित करते रहे हैं। मैं बापू के समक्ष बाभार- नत हूँ। वादरणीय गुरुवर्य श्रीयुक्त डा० गिरिधारी लाल शास्त्री जो ने मुझे इस कार्य को करने के लिए निरन्तर प्रेरित किया है। मैं बापू का अत्यन्त बाभारी हूँ। वादरणीय गुरुवर्य श्रीयुक्त नज़ीर मुहम्मद ने मेरा निरन्तर अध्ययन मार्ग प्रशस्त किया है और समयसमय पर मुझे प्रेरित किया है। मैं बापू के इस अनुग्रह का भणौ हूँ। इस शोध प्रबन्ध का निर्देशन वादरणीय गुरुवर्य श्रीयुक्त डा० फूल बिहारी शर्मा जो ने किया है। बापू की विद्वत्ता एवं व्यक्तित्व ने मुझे अत्यन्त प्रभावित किया है। बापू अपना बहुमूल्य समय देकर मुझे निरन्तर लाभान्वित करते रहे हैं। बापू को कृपा दृष्टि से मैं इस कार्य को सुगमतापूर्वक कर सका हूँ। मैं इसकी सवाकू अभिव्यक्ति क्या करूँ ? तब भी, मैं बापू के समक्ष बाभार नत हूँ। अन्य गुरुजनों के सहयोग के प्रति भी बाभार प्रकट करता हूँ।

मिस्टर डी० आर० डी० शास्त्री, सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नयी दिल्ली, डा० भानु कुमार जैन, वरिष्ठ प्रवक्ता, बलन्दशहर एवं डा० गिरीश चन्द्र शर्मा आदि के सहानुरोध के कारण यह कार्य पूर्ण करने में प्रवृत्त हुआ हूँ। अन्त में पत्नी श्रीमती राजकुमारी 'राजा' के सहयोग के प्रति धन्यवाद प्रकट करता हूँ।

इस शोध प्रबन्ध में जिन कवियों, लेखकों, कालोन्कों एवं सम्पादकों की रचनाओं और पत्रिकाओं का उपयोग किसी भी रूप में किया है, उन सबके प्रति बाभार व्यक्त करता हूँ। विभिन्न

सहयोगियों एवं पुस्तकालयों का मैं आभारी हूँ जिन्होंने मुझे लोक
 सभिकताओं एवं ग्रंथों का सहयोग प्रदान किया है। परम स्नेही कृष्ण बंधु
 डा० रामेश्वर पयास है जिसे सक्रिय और सार्थक सहयोग के बिना यह प्रबन्ध
 पूर्ण नहीं हो सकता था। मैं उनके हस्तक्षेप, सहयोग को कभी नहीं भूल
 सकता।

बन्धु मैं एक अनुरोध है : अपनी ओर से
 मैं अत्यन्त माय-सत्यता के साथ प्रयत्न किया है। परन्तु विषय की
 परिधि सीमित है और भी बाधन होमिल है। अतः विदग्धन मुनि निकषित
 विषय की सुटियों, अभावों अथवा कथनतियों को बहाल हुए अपनी उपयोगी
 सुझाव देने लो मैं अत्यन्त व आभारपूर्ण उनका स्वागत करिगा। इसके
 अतिरिक्त और क्या कहूँ, विदग्धन अनुरक्त भाव को जान लेते हैं। मैं आप
 सबको अपनी ओर वैचारिक एवं कौशल कुतन्त्रता प्रकट करता हूँ।

Y. M. Zia

(प्रकाशक)

दिनांक १-७-१९८० ई०

सीधायी

विषय-सूची

पृष्ठानुक्रम

प्रथम अध्याय : विषय प्रवेश

व्यक्तिवाद का विकास इतिहास एवं स्वरूप 1-115

(क) व्यक्तिवाद का विकास, इतिहास एवं स्वरूप 1

व्यक्ति की परिभाषा

(ख) पारम्परिक विद्वानों की परिभाषा

(ग) भारतीय विद्वानों की परिभाषा

(घ) व्यक्तित्व-बोध

(ङ) तर्क-बोध

(च) व्यक्ति एवं व्यक्तिवाद

(ख) व्यक्तिवाद का व्युत्पत्ति : प्रारम्भिक स्वरूप 16

(ग) बौद्धों तथा जैनों में व्यक्तिवाद 33

(घ) व्यक्तिवाद की परिभाषा 48

(१) पारम्परिक व्यक्तिवाद

(२) भारतीय व्यक्तिवाद

(३) व्यक्तिवाद के भेद

धार्मिक व्यक्तिवाद

नैतिक व्यक्तिवाद

साहित्यिक व्यक्तिवाद

वैज्ञानिक व्यक्तित्ववाद

वार्त्तिक व्यक्तित्ववाद

राजनीतिक व्यक्तित्ववाद

मनीषज्ञानिक व्यक्तित्ववाद

(४) व्यक्तित्ववाद की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

(क) साहित्य में व्यक्तित्ववाद

70

१- साहित्य में व्यक्ति

२- साहित्य में व्यक्तित्ववादी धारणा की अभिव्यक्ति

३- काव्य में व्यक्तित्ववाद की भूमिका

(ख) व्यक्तित्ववादी काव्य : विविध परिदृश्य

84

(१) कर्मवादी कविता

(२) कलावादी कविता

(३) वक्तियर्थवाद की कविता

(४) अभिव्यक्ततावादी काव्य

(५) मनीषिस्तृष्णणवादी काव्य

(६) वास्तव्यवाद की काव्य

(७) समाहार

170

(ग) काव्य में व्यक्तित्ववादी प्रवृत्तियाँ

द्वितीय अध्याय

वाधुनिक कवित्व की कविता - (सन् १९०९ ई० से सन् १९३६ ई० तक)

में व्यक्तित्ववाद का व्युत्पन्न

116-171

(क) द्विवेदीयुगीन काव्य में व्यक्तिवाद

(१) द्विवेदी युगीन काव्य में व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का प्रारम्भ

(२) द्विवेदी युगीन कविता में व्यक्तिवाद का स्वल्प-वादशास्त्रिक व्यक्तिवाद के तत्त्व

(क) बुद्धिवाद

(ख) वादशास्त्रवाद

(ग) मानववाद

(घ) राष्ट्रवाद

(ङ) स्वच्छन्दतावाद

(३) द्विवेदीयुगीन काव्य में वादशास्त्रिक व्यक्तिवाद का प्रस्फुटन

(४) द्विवेदी युगीन काव्य के कथ्य एवं शिल्प में व्यक्तिवाद की स्थापना

(क) प्राचीन के प्रति मोह एवं नवीन के प्रति लक्ष

(ख) चरित्र दृष्टि में नवीनता का वाग्रह

(ग) भाषा में परिवर्तन एवं नया संस्कार

(ख) व्यक्तिवाद का विस्फोट : शायरावाद

(क) कई ब्रह्म में : वैयक्तिकता का प्रस्फुटन

(ख) प्रेम एवं क्षीणत्व के प्रति नूतन दृष्टिकोण

(ग) विद्रोह की भावना : नयी चेतना का उद्घोष

(घ) पलायनवाद : नैराश्य की भावना

(ङ) नियतिवाद : परीक्षा अन्तर्गत की शक्ति

(च) राष्ट्र-प्रेम बनाम व्यक्ति-स्वातन्त्र्य

(छ) ऐसी-शिल्प में नवीनता

(न) व्यक्तिवाद का व्यार्य की वीर संक्रमण : उत्तर हायावाद

154

(व) वैयक्तिकता की सख बभिव्यक्ति

(वा) प्रेम की स्युत एवं मसित बभिव्यक्ति : दायी

रोमास

(ह) दाय की वात्म स्वीकृति : मृत्युवाद बनाम मृत्यु-

पासना

(उ) जीवन की दाण-पशुता के प्रति निष्ठा : निरासा

(ऊ) फलायनवाद

(ए) नियतिवाद वीर भाग्यवाद

(ऐ) भोगवाद बनाम हातावाद

(ओ) विद्रोह की भावना

(वी) अवैवाद

(वी) व्यक्ति- स्वातंत्र्य बनाम व्यक्ति वीर समष्टि का
संघर्ष

(वः) सख वीर सख बभिव्यक्ति प्रणासी

तुतीय काय

समकालीन काव्य (सन् १९४१ ई० से सन् १९७० ई० तक) में

व्यक्तिवाद के नुतन दिातिव

172-273

(१) प्रयोगवाद

172

(ब) " प्रयोग " शब्द का अर्थ वीर उसको प्रामाणिक
व्याख्या

- (वा) काव्य में प्रयोग
- (ब) हिन्दी कविता में प्रयोग
- (ई) आधुनिक हिन्दी कविता में प्रयोग
- (उ) प्रयोगवाद का आविर्भाव
- (ऊ) प्रयोगवाद की प्रमुख प्रवृत्तियाँ
- (ए) प्रयोगवाद में व्यक्तिवादी वर्णन का स्वरूप

(२) व्यक्तिवाद बनाम समाष्टिवाद

202

- (क) व्यक्ति और समाज
- (ख) सामाजिक व्यवस्था के विकास का मोड़
- (ङ) शक्ति एवं विद्रोह की भावना
- (च) राष्ट्र-प्रेम
- (उ) नूतन सौन्दर्य

(३) नयी कविता

209

- (क) नामकरण
- (ख) नयी कविता : पृष्ठभूमि एवं प्रेरणा स्रोत
- (ङ) विकास-यात्रा
- (च) व्याख्या
- (उ) नयी कविता में व्यक्तिवादी वर्णन की अभिव्यक्ति

(४) नवनीति

229

- (क) नामकरण
- (ख) प्रेरणास्रोत
- (ङ) नवनीति : विकास-यात्रा

(ई) व्याख्या

(उ) नवगीत में व्यक्तिवादों दर्शन का स्वरूप

253

(५) कविता तथा अन्य काव्य प्रवृत्तियाँ

(क) पृष्ठभूमि

(ख) कविता : प्रेरणा-स्रोत

(ग) कविता : नामकरण

(ई) वस्वीकृत कविता : नामकरण

(उ) कविता एवं वस्वीकृत कविता : व्याख्या

(ज) विकास-यात्रा

(२) सम्कालीन कविता के अन्य नाम तथा परिचय

(क) बीट कविता या भूली पीढ़ी

(ख) रमसानी पीढ़ी

(ग) ताबी कविता बनाम टटको कविता

(घ) युगुत्सववादी कविता

(ङ०) निर्दिष्टायामी कविता एवं तति कविता

(च) सनातन सूर्यादय कविता

(छ) जगली कविता- सख कविता

(ज) घाठीत्तरी कविता

(६) कविता तथा अन्य कविता विधाओं में व्यक्ति-
वादों दर्शन का स्वरूप

(जी) निष्कर्ष

चतुर्थ अध्याय

प्रयोगवाद में व्यक्तिवादी निम्नतन और वयिअ्यक्ति

274-347

- (अ) अस्तित्ववाद
- (आ) तर्कवाद
- (इ) योगवाद
- (ई) फलानवाद
- (उ) दाणवाद
- (ऊ) आस्था एवं विद्रोह
- (ए) निष्कर्ष
- (ऐ) नकनवाद
- (ओ) नकनवाद : अ्यक्तिवाद का नकारात्मक प्रयोग
- (वी) निष्कर्ष

पंचम अध्याय

नयी कविता में अ्यक्तिवाद

348-478

- (क) नयी कविता में निराशा
- (ख) नयीकविता में अस्तित्ववाद
- (ग) नयी कविता में लघुमानववाद
- (घ) दाणवाद
- (ङ०) तर्कवाद
- (च) आत्यन्तिक वैयक्तिकता
- (झ) सामाजिक दायित्व की वैयक्तिक अनुभूति

- (ब) विद्रोह के नये स्वर
- (भ) नयी कविता में भोगवाद
- (ज) नयी कविता में क्लृप्ताक्ष तथा वजनबोध
- (ट) नयी कविता में व्यंग्य
- (ठ) नयी कविता का व्यक्ति

(१) क्लृप्ताक्ष

(२) वृष्ठा

(३) पौड़ा-बोध

(य) नयी कविता में व्यक्ति और समाज

(१) व्यक्त को तय

(२) निष्कर्ष

अष्ट अध्याय

नवगीत : व्यक्तिवादी प्रवृत्तियाँ

479-550

- (ब) नयी रोमान्टिक नाम नया व्यक्तित्व
- (का) नया युग-बोध : नया भावबोध
- (ड) क्लृप्ताक्ष, वजनबोध तथा क्लृप्ताक्ष
- (ई) व्यक्तित्वता को अभिव्यक्ति
- (उ) नवगीत : विद्रोह के नये स्वर
- (ऊ) व्यक्ति और समाज
- (ए) निष्कर्ष

सप्तम अध्याय

कविता में व्यक्तिवादों प्रवृत्तियों का प्रतिफलन

551-599

- (क) वस्त्रोक्ति का नवीन्यन : मूल्यों से विद्रोह
- (का) फुल्लफुल - भद्रसफ : वाधुनिकता की विकृति
- (ख) बर्त का विस्फोट - व्यंग्य चित्र और वस्तुलता
- (ङ) बटित अभिव्यक्ति बनाम सपाटबयानों
- (उ) अपरिचित कथ्य और चौका देने वाला शिल्प
- (ऊ) निष्कर्ष

अष्टम अध्याय

सातवें दशक की अन्य काव्य प्रवृत्तियाँ : व्यक्तिवाद के परिप्रिय में

600-644

- (क) वस्त्रोक्ति कविता
- (का) शमशानी पीढ़ी
- (ख) बोट कविता- भुसो पीढ़ी
- (ङ) साठोत्तरी कविता
- (उ) युयुत्सावादों कविता
- (ऊ) सहज कविता
- (ए) कणित

उपसंहार : उपसंधियाँ एवं स्थापनाएँ

645-682

परिशिष्ट : सहायक ग्रंथों एवं पत्र- पत्रिकाओं की सूची

683-700

प्रथम अध्याय

विषय- प्रवेश

व्यक्तिवाद का विकास : इतिहास एवं स्वरूप

व्यक्तिवाद का विकास, इतिहास एवं स्वरूप

(१) व्यक्ति की परिभाषा

छोटी भाषा के शब्द इंडिविजुअल का

समान्य अर्थ, व्यक्ति कच्चा किसी वर्ग, समूह का किसी व्यक्ति है।

‘व्यक्ति’ के वास्तव मानव समूह की स्मार्क है है। मानव तथा मनुष्य शब्द व्यक्ति समूह या वर्ग की ओर संकेत करते हैं। पारम्परिक एवं भारतीय विद्वानों ने ‘व्यक्ति’ शब्द की विविध प्रकार के व्याख्या की है। ‘व्यक्ति’ नारी कच्चा पुरुष कोई भी हो सकता है, क्योंकि वह मानव-वस्तु की स्मार्क है। व्यक्ति की व्याख्या पारम्परिक एवं भारतीय विद्वानों ने इस प्रकार की है। यथा-

पारम्परिक विद्वानों की परिभाषाएँ

- व्यक्ति का सामाजिक मुख्य ही संस्कृति का मानवपण्ड है।
- मनुष्य उसी प्रकार एक पूर्ण वस्तु है जिस प्रकार वस्तु पूर्ण बनस्पति है।

- १- डा० हरिवंश वाहरी- वृहत् छोटी हिन्दी कील भाग १ पृ० ६५१-५२
- २- उपस्थित पृ० ६५१-५२
- ३- कान्त - छोट्टे वाहरी वास्तवमानेन गतिछे उन वेस्त वृहत्तरिहरी वास्तव (१८-४) : द्रष्टव्य , इतिहास दर्शन - डा० वृहत् प्रकाश पृ० १५
- ४- योहान नीतिप्रिय हैदर (प्रका १९४४-१८०३) वही पृ० १६५

पीछे देखी होती है।^१

- व्यक्ति अपना जाति की आत्मा एक

उपकी उपलब्धि है।^२

- व्यक्ति समाज का निर्माता नहीं है, बल्कि

ही है, और न कोई आदर्श पूर्णतः स्वतन्त्र
ही है, और न कोई पूर्णतः गुलाम ही।

- नेता और पुरोहित बहुत कम ही समाज
के विशिष्ट व्यक्ति हो गए थे, वे विशिष्ट गुणों से सम्पन्न समझे जाते
थे, भले ही वे गुण उनमें ही या नहीं।^४

- शत्रुओं और प्रेक्षकों की आँखों
वाले करोड़ों नाड़ी पूर्ण से कुशल मानव- शत्रु, जीवतास्त्रीय सम्पत्ति
के विस्तृत विपरीत दिशा में गमन करने वाली प्रवृत्ति की कारण परि-
णति है। क्योंकि उसमें व्यवहार के पूर्व निर्धारित स्वल्प कम होते हैं,
किसी मानव शत्रु अन्य प्राणियों के शत्रुओं की तुलना में अधिक कठोर
होता है।^५

- तत्त्व विमर्श में यह सिद्धान्त है कि

१- लेन : बही पृ० २१६

२- स्वधीनाय : एक स्वधीनाय एक उन या एक (१९०९) के० कृति का प्रति-
माचन माचन पृ० ५२-६०० की० प्राधिका, परास व हवि-
विपु दास विवरमिनिज्य सोधयास १२१६० की रीकरी, पु
वी प्रीक्राम व साधोधिनीहीवीम० १४ द्रष्टव्य - इतिहास
दर्शन - डा० सुह प्रकास पृ० ५२

३- कर्तव्य रख- उत्ता और व्यक्ति- अनुपादक- मोलनास पृ० १३४

४- बही पृ० ५०

५- नारमन सह० मुने - साक्षात्कारी पृ० २०७

मानवीय संरूप-शक्ति स्वतन्त्र नहीं है। वह केवल नियमों, सामाजिक पर्यावरण या ऐतिहासिक-राजनीतिक वार्षिक शक्तियों पर निर्भर करती है।^१...

- प्रत्येक व्यक्ति एक महान् ग्रंथ है, यदि आप उसे पढ़ना जानते हैं।^२

- ईमानदार मनुष्य ईश्वर की सर्वात्म्य कृति है।^३

उक्त व्याख्याओं पर विचार करने पर यह होता है कि व्यक्ति समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, दर्शनशास्त्र, प्राणिविज्ञान, नीतिशास्त्र, तत्त्व-मीमांसा आदि के अनुसार प्रकृति के अन्य प्राणियों से किताब भिन्न है ? व्यक्ति में नियम एवं संवाहन करने की क्षमता तथा विलक्षण भेदा है। अनिर्दिष्टता भेदा के द्वारा ही वह सर्वोत्कृष्ट कार्य की ओर प्रेरित होता है। निष्कर्षतः व्यक्ति महान् है और ईश्वर की सर्वात्म्य कृति है। विश्व की समस्त क्रियाओं के केन्द्र में व्यक्ति की प्रभुता अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। व्यक्ति समाज की स्मार्त होने के कारण किसी भी देश जैसा राष्ट्र के लिए महत्त्वपूर्ण है। व्यक्ति और समाज में अटूट सम्बन्ध है। समाजके समस्त कार्यक्रम व्यक्ति के द्वारा सम्पादित होते हैं। विश्व के अन्य प्राणियों से अधिक श्रेष्ठ भेदा का स्वामी, व्यक्ति अत्यन्त

१- एन साइन्सोपीडिया आफ ह्यूमैनिटीज़ एण्ड फिलॉसफी १० है

२- Every man is a volume, if you know how to read him.

- लेखकर्ता - एमार्सेन गुप्त , पृष्ठ ३७३

३- An honest man is the noblest work of God.

- Pope pp 373

बुद्धिमान प्राणी है। व्यक्ति अपनी विवेक और बुद्धि के कारण अन्य प्राणियों से भिन्न है। वह विश्व के अन्य प्राणियों से भिन्न एवं विशिष्ट है। इसी कारण व्यक्ति का महत्त्व समाज, धर्म एवं देश के लिए अति आवश्यक है।

भातीय विद्वानों की परिभाषाएँ

हो उभरा कभी^१ - मनुष्य नवजात शिशु के रूप में, विकास

कायलाह है, संसार की समस्त शक्तियाँ उसके बागें नत-मस्तक हैं।^२

का पाद है^३ - मनुष्य प्रकृति का कुम्भर और नियति

काई और उभरा फलतः रूप ही नीति है।^४

है, जो पराजय की कभी स्वीकार नहीं करती^५।
उसके बागें फुलना ही पड़ेगा, क्योंकि उसके दुर्लभ फलें शरीर में मस्तिष्क
इसी बीज हैं जो किसी बन्धन की नहीं मानती और उसमें ऐसी भावना

१- स्वामी नाथ टेंगीर - छंदकृत - रमालीर गुप्त - प्रकृत धानर १०३७२

२- बलास- वही १० ३७३

३- अलीर प्रसाद - वही १० ३७३

४- डा० नीन्द्र - आर्या के चरण १० २६

५- वी० बहादुर साह नेहरू- छंदकृत - रमालीर गुप्त - प्रकृत धानर

- मानव का मानव होना उसकी शर है।

मानव का परमानव होना उसका अन्तकार है और मनुष्य का मानव होना उसकी जीत है।^१

- कई प्रतापि^२ ।

- व्यक्ति केवल रीकारों की रचना है,
या स्कन्धी का धनुष है। वह न काट है, न वेधक ।

- व्यक्ति केवल उसकी शक्ती का साधन
है, निमित्तमान है।^४

- वास्तविक युग का साधारण व्यक्ति
यौन वक्ताओं का पुन है।^५

भारतीय दर्शन एवं साहित्य में वाक्यात्मिका
के प्राधान्य के कारण व्यक्ति की महत्ता की पारम्पर्य दर्शन के समान
भौतिक दृष्टि से स्वीकृत नहीं किया गया । उस दृष्टि से व्यक्ति की
स्वतन्त्र सत्ता पर विचार नहीं किया गया है। व्यक्ति शक्तियों की मि-
नारी है तथा ब्रह्म तथा व्यक्ति की कौली एवं कौल के रूप में स्वीकार किया

१- डा० राधाकृष्णन् - ६० स्मारक गुप्त - प्रवृत्तिधामर पृ० २२

२- बृहदारण्यकोपनिषद् - वही पृ० २३

३- ब्रह्मसूत्र - श्रीमद्भारतम् काव्य १७ २०-२१

यस्य रीकारणं विविक्तं नकारकः केवल वेदकी वा ।

४- भगवद्गीता ११३२-३४

५- कौटिल्य- तात्पर्य- ब्रह्मसूत्र पृ० २०२

गया है। भारतीय दार्शनिक विचारधारा के अनुसार व्यक्ति मनवान् के सम्युक्त पूर्णस्वेण समर्पित है। वह ईश्वर की कृपा से उत्पन्न हुआ है और उसी की कृपा के समस्त कार्य कर रहा है। वे व्यक्ति को महान् एवं ईश्वरही से निर्मित मानते हैं तथा उसकी श्रेष्ठ मधा का स्वामी मानते हैं।

पारम्पर्य एवं भारतीय विचारों के अनुसार व्यक्ति महान् श्रेष्ठ तथा विलक्षण मधा की धारण करे वाला है, और उसकी कृता पूर्णता के समस्त प्राणियों से विशिष्ट है। 'व्यक्ति' से तात्पर्य है कि वह अन्य प्राणियों से विशिष्ट ही है। इस विशिष्ट्य के कारण ही वह विश्व के प्राणियों में सर्वोत्तम है। नील पाटी सम्प्रदाय के मनुष्यों ने 'व्यक्ति' का 'रेमी' नाम रखा, जिसका वाक्य है 'उत्कृष्ट प्रकार का मनुष्य'। 'अविद (१०, ६०) में वादिपुत्रान की ओर भगवद्गोता में (११३२-३४) में विराट् रूप के प्रणि में भी व्यक्ति को महान् एवं सर्वोच्च माना गया है। मानव का वैज्ञानिक नाम 'होमोइरियन्स' (ज्ञान सम्पन्न प्राणी) है जिसका अर्थ यह है कि मानव समग्र प्राणि-जगत् में मधावी है। व्यक्ति की उसकी वाचिकारिणी, बौद्धिक प्रविधा तथा भाषणा-शक्ति के कारण सर्वोत्तम प्राणी, सर्वोच्च कृता का स्वामी 'वादि लोक विशेषणों से वर्णित किया गया है।

व्यक्तित्व-बीध

'व्यक्ति' विश्व की सर्वोत्कृष्ट कृति है।

१- ले० हेण्ड्रिक विलेम वान डून, मनुष्य जाति की कहानी पृ० २५

- अनुवाद डा० रामफेर त्रिपाठी

२- उच्चिदानन्द वात्स्यायन की- हिन्दी वास्तव्य एक वाचनिक परि-

दृश्य पृ० २१

उसकी गैरछटा एवं उज्ज्वला की पूर्णता , परिवर्तित भाव तक की छीपित नहीं है, अपितु क्लृप्तिक प्रभावित है। व्यक्ति का " व्यक्तित्व " " पन-सिटी " का पर्याय है। व्यक्ति को व्यक्ति का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। व्यक्तित्व- बीज से सामान्य वाक्य यह है कि व्यक्ति अपनी शारीरिक गठन, शक्ति, व्यव करने की शक्ती , विरोध की तीव्रता एवं शारीरिक स्वस्थता आदि के द्वारा दुसरे को प्रभावित कर सके । प्राचीनकाल में व्यक्तित्व की माप , लीयें एवं निर्भक्ता थी । परन्तु वायुनिक युग में वायुय टीम- टीम एवं कृत्रिम उकरणों द्वारा शरीर को सुसज्जित करना गैरछ माना जाने लगा है। युगीन प्रवृत्ति अपना प्रभाव समष्टि जीवन पर डालती है। युग- ज्ञं एवं व्यक्ति हमारे व्यक्तित्व के विकास में सहायणी है। व्यक्तित्व- बीज से तात्पर्य व्यक्ति को व्यक्तित्व का ज्ञान होना है। मनोविज्ञान एवं अन्य वैज्ञानिक विचारों के द्वारा व्यक्तित्व के सम्बन्ध में अधिक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

व्यक्ति एवं व्यक्तित्व एक सिक्के के दो पक्ष हैं। व्यक्तित्व के अभाव में व्यक्ति का क्या होगा ? इसी कल्पना करना व्यर्थ है। व्यक्ति एवं व्यक्तित्व एक दुसरे के प्रत्यक्ष हैं। " व्यक्तित्व- विहीन व्यक्ति न तो अपना स्थिर रह सकता है और न समाज तथा देश का । " व्यक्ति को व्यक्तित्व की पूर्णता ऊँचा उठाती है। अतः व्यक्ति का विकास उसके सम्पूर्ण जीवन एवं व्यक्तित्व के विकास पर आधारित है।

प्रसिद्ध मनोविज्ञानिक ग्रायड के अनुसार समष्टि

१- डा० श्री नाथ कूर्वदी - कथ्य का काव्य : एक पुनर्मुख्य १० ७३

व्यक्तित्व हम, कई तथा बापत कई (सुपर लो) पर आधारित है।
उसने स्वयं व्यक्ति में उन तीनों तन्त्रों के संयोजन, सम्मिलन, संगठन
एवं संवाहन के सहयोग पर अधिक बल दिया । एक भी तन्त्र में स्वता न
होने पर व्यक्ति कमजोर और कृष्णार्थ में फँस जाता है।

व्यक्तित्व परिवर्तनशील है । उसमें निरन्तर
विकास होता है। व्यक्ति की रुचियाँ एवं वांछितियाँ में परिवर्तन होता
रहता है। बाल्यावस्था से जीवनकाल तक व्यक्तित्व विभिन्न परिवर्तनों
से गुजरता है। फ्रायड ने सुस्थिर व्यक्तित्व के सम्बन्ध में अपनी विचार
एवं प्रकार रखे हैं, " व्यक्तित्व में महानतम परिवर्तन जीवन के प्रथम
तीन वर्षों में घटते हैं। यह वह समय होता है, जब व्यक्ति परिपक्वता की
ओर बढ़ता होता है तथा वाक्य एवं वास्तविक विकसितार्थों एवं व्यक्ति-
गत बलशक्ति की नियन्त्रण में लाना या उनमें समझ स्थापित करना,
कष्ट से बचने के लिए तथा भिन्ना को दूर करने के लिए जायें, कीर्ति
तथा ज्ञान प्राप्त करना, तथ्य- विषयों की प्राप्ति करना तथा सुख
प्राप्ति करना, शान्ति, भावों तथा वस्तुओं की सन्धि-पुष्टि करना
तथा संघर्षों को हल करना सीखता है।

व्यक्तित्व विकास के लक्षणों में तीन
विधितियाँ से गुजरता है। व्यक्तित्व का संगठन एवं विकास बृद्धावस्था में
अवसृजित होने लगता है। सुस्थिर व्यक्तित्व में भिन्ना, विकल्पा जादि
होती है तो ऐसा व्यक्तित्व भिन्ना एवं विकल्पा से उत्पन्न तनावों

१- केस्विन २५० हात- ५०० बी० डी० मेट - फ्रायड मनोविज्ञान

प्रतिका ५० २०

२- उपरिक्त

५० १०३

पर विषय प्राप्त करने की क्षमता भी रखता है। व्यक्तित्व किसी की कसूरि नहीं होता, बल्कि मौलिक खूबन है। व्यक्तित्व का विकास व्यक्ति एवं समाज के संघर्ष के फलस्वरूप होता है। व्यक्ति और समाज की टकरावट से ही व्यक्तित्व बनता है, वह समाज का आलोचक हो सकता है, विरोधी नहीं।^१ पुरुष का विज्ञान के अन्तर्गत व्यक्ति की आकांक्षाओं, भावनाओं, विचारों एवं गुणों का कुलभूत रूप माना है।

व्यक्ति एवं समाज नियमों, प्रतिबन्धों से जितने मुक्त होते हैं व्यक्तित्व उतना ही संवर्धित होता है।

बाहुनिक युग में व्यक्ति को व्यक्तित्व-बोध होने के कारण श्रद्धा, संघर्ष, विरोध, विद्रोह, अपारणा, अविवशता, कृतिकता, बर्लीकता आदि पर्यादाहीन एवं कृतिक परिस्थितियों से झुगना पड़ रहा है। बाव का व्यक्ति व्यक्तित्व-बोध के कारण ही स्वतन्त्रता, स्वतन्त्रता, रोमांस भावना आदि के प्रति आसक्त है। प्राचीन काल के व्यक्ति में व्यक्तित्व-बोध के प्रति जिज्ञासा नहीं होती थी।
 कतः प्राचीनकाल का व्यक्तित्व एवं व्यक्ति राजाओं और सामन्तों के हाथों एवं आसक्त तक ही सीमित था। बाहुनिक युग के वैज्ञानिक आविष्कारों के कारण बुद्धिवादो दृष्टिकोण विकसित हुआ। अब व्यक्ति अपने व्यक्तित्व के प्रति सजग रहने लगा। प्रगति एवं स्व की दृष्टि व्यक्तित्व-बोध का एकल उदाहरण है। व्यक्ति ने अपने व्यक्तित्व की परवान कर उसे उचित मार्ग में कार्यरत किया। अतः अतः व्यक्ति का व्यक्तित्व-बोध

१- रामस्वरूप कूर्बदी- कृत्य और बाहुनिक रचना की समस्या पृ० १७

२- कदरी नाथ कपूर - वैज्ञानिक परिभाषा काल पृ० २०१

३- रामस्वरूप कूर्बदी- कृत्य और बाहुनिक रचना की समस्या पृ० १६

अज्ञा, अहित्य, संस्कृति आदि में प्रत्यक्ष- या अप्रत्यक्ष रूप में प्रतिकल्पित होने लगा । आधुनिक हिन्दी कविता में व्यक्ति मुक्त, स्वच्छन्द एवं स्वतंत्र रूप से चित्रित हुआ । आधुनिक कविता में व्यक्तित्व- बोध के नूतन निहित्य दृष्टिगोचर होते हैं। आधुनिक कविता में व्यक्ति का व्यक्तित्व- बोध - आयावाद, उत्तर आयावाद, प्रयोगवाद, प्रगतिवाद, नयी कविता, नव-गीत में नूतन आधारणा लेकर व्यक्तित्व हुआ है। अनेक कविता के बीच में अनेक आन्दोलनों का सुवपात हुआ है और व्यक्ति- बोध एवं व्यक्ति-आन्दोलन के नवीन वातावरण होते हैं। व्यक्तित्व- बोध के द्वारा व्यक्ति-वादी जीवन दर्शन कविता में समाहित होता गया जिससे कविता में व्यक्ति के मुक्त करने का आन्दोलन चला ही गया । हिन्दी कविता मानव-मुक्ति एवं मानवतावादी विचारों के निकट वा गर्भ जिससे व्यक्तिवादी विचार-धारा मानवतावादी कविता के नाम से भी अभिलिखित की जाती है।

संग्रह: व्यक्तित्व- बोध का केन्द्र- बिन्दु व्यक्ति है और व्यक्तित्व- बोध व्यक्ति के हेतु अत्यन्त आवश्यक है। व्यक्तित्व- बोध व्यक्ति को स्वतन्त्रता, स्वच्छा एवं स्वच्छन्दता के प्रति अतृप्त किया होता है। व्यक्तित्व - बोध की अनुपस्थिति में व्यक्ति का कोई स्थान नहीं ।

अर्थ - बोध

‘अर्थ’ शब्द का अंग्रेजी पर्याय ‘मैनी’ है जो अर्थ भाव के संकेत में प्रयुक्त होता है। ‘अर्थ’ का वास्तविक अर्थ है अपनी स्थिति और अपनी अस्तित्व की स्वीकृति के साथ-साथ सामाजिक

जैन में अपनी नियति और अपनी ऊँचाई के प्रति जागृत रहना^१। यह जागृतता ही व्यक्ति के जीवन-प्राप्ति में जितना के नाम से अभिव्यक्ति की गई है और यह जितना की अभिव्यक्ति ही जई है। जई आत्मबोध के अर्थ निकट है। जहाँ आत्म-बोध होगा, वहाँ जई अवश्य होगा जो व्यक्ति में जागृत एवं सक्रिय रूप से भाग लेगा। जई बाह्य कार्यों एवं आन्तरिक कार्यों का केन्द्र - बिन्दु होने के कारण, दोनों की अभिव्यक्ति के रूप में परिणत करता है। जई-बोध प्रज्ञा का बोध है। व्यक्ति का जई बुद्धि के अधिक समीप है। जई एक विशिष्ट प्रकार की प्रकृति है जो कि अपनी अस्तित्व का समर्थन करती है। जई की विकृति का मूल नहीं कहा जा सकता। जई अस्तित्व तथा उसके द्वारा जीवन, सौन्दर्य एवं समाज के सम्बन्ध जोड़ना चाहता है। जई की अस्तित्वता का अर्थ यह नहीं है कि कोई प्रवृत्ति जई के कारण निम्न परावर्त को होगी। जई कार्यों की जितना की अधिक सकल बनाता है। जई की स्वकृति व्यक्ति के साथे पुर स्वाभिमान को सीटाने का प्रयत्न है। जई की पूर्णता व्यक्ति की निर्भीक एवं दृढ़ विचार रत्नी की प्रतीक्षाएँ देती है। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य एवं जई की अनुपस्थिति में सामाजिक, धार्मिक एवं नैतिक मानदण्ड पूर्णतः अपूर्ण हैं। जई की धार्मिकता व्यक्ति-स्वातन्त्र्य एवं व्यक्ति-जितना की महत्वपूर्ण स्थान देती है।

क्रायक ने जई की मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं का एक बटिल संगठन माना है जो वह तथा बाह्य जगत् के बीच मध्यस्थ का कार्य करता है। जई ऐसे अभिव्यक्ति का कार्य-सम्पादक होता है जो कि व्यक्ति की अवस्था एवं संबन्धित रहता है। जिस व्यक्ति में जई जितना

१- लक्ष्मीकान्त वर्मा- नवी कविता के प्रतिमान पृ० २२४

२- कैल्विन हब्स हास - स्था० बी०डी०एट्ट, क्रायक मनोविज्ञान प्रक्रिया

बहिः संघटित एवं तीव्रतर होगा, वह व्यक्ति उतना ही कार्यकुशल, यत्न-
 एवं कार्य-संचालन में निपुण होगा ।

स्वरक्षा और प्रजनन का दूसरा नाम ही
 कई है। प्राणि-जगत् में जीवन का विकास ही कई को वृद्धि की ओर
 प्रेरित करता है। भारतीय दर्शन में कईवादी विचारधारा निरन्तर प्रवा-
 हित होती रही है। कई-बोध हीना ही, व्यक्ति का जीवन एवं उसके
 स्वतन्त्र अस्तित्व का केन्द्र है। कई के सम्बन्ध में प्राणिक के विचार अत्यन्त
 महत्वपूर्ण हैं। उसने जगत्क व्यक्तित्व को जन्म, कई बादल कई के उन्मि-
 लन से निर्मित माना है। 'कई' से प्राणिक का तात्पर्य उस कई जैसा
 है कि जो विचार, निर्णय, अनुभव और संकल्प करती है।

प्राणिक के उपरान्त जार्ज ग्रिडिक ने कई को
 'दि इट' या जन्म का नाम दिया । प्राणिक ने कई को धार्मिक एवं
 एक ईश्वर के समान माना है। परन्तु ग्रिडिक ने कई को मात्र पुत्तीटा माना
 जो कि नास्तिक दर्शन के बहिः निष्कट है।

वस्तुतः जितना जागृत और जितना
 सकल जन्म होगा, उतनी ही बहिः तीव्र शक्ति के साथ वह जीवन को
 प्रत्येक व्यवस्था में सक्रिय ही रहेगा । जन्म को जागृतता से यह ज्ञान
 ग्रहण करना कि वह मात्र आत्म रक्षा को सीत है, गलत है। आत्मरक्षा
 को सीत कार्यरता का प्रतीक है। जन्म का मत आत्मरक्षा पर नहीं है,
 उसका मत (ऐस्क सिगनिफिकैन्स) आत्म समर्थन में है। वे व्यक्ति

१- डा० गोविन्द रानील- हिन्दी साहित्य आधुनिक परिप्रेक्ष्य पृ० १२२

२- उपरिष्ठ

पृ० १२३

जी मानव व्यक्तिता के साथ उसके स्वाभिमान और कई के प्रति आस्था-
वान नहीं है, वे ही अपनी आत्म-रक्षा के लिए कई के महत्व को महत्ता
समझ लेते हैं, किन्तु जहाँ तक उनका प्रश्न है जो अपनी कई की जागृक
स्थिति और परिस्थिति के समर्थक है, वे तो स्वयं उस गतिशीलता की
स्वीकार करते हैं जो जीवन की समृद्ध शक्ति की निरन्तर विकास की ओर
से चलने में सहायक होती है।

व्यक्ति की कई-बीध होना प्रजा का दर्शन
है। जब तक व्यक्ति की कई बीध नहीं होता, तब तक व्यक्ति अज्ञान एवं
अन्धकार में रहता है। कई-बीध व्यक्ति एवं उसके व्यक्तित्व के विकास
एवं निर्माण के लिए अत्यन्त आवश्यक है। कई-बीध के द्वारा ही व्यक्ति
में ज्ञान, जागृकता एवं निरन्तर संघर्ष करने की शक्ति की वृद्धि होती
है। साहित्यकार स्वतन्त्र एवं मुक्त साहित्य-संघर्ष की ओर उन्मुख
रहता है। वह प्रक्रिया में सामन्ती एवं साम्राज्यवादी शक्तियाँ के विरोध
निरन्तर बना रहता है, जिसके कारण विप्लव का साहित्य निर्मित
होता है। आधुनिक हिन्दी कविता में सन् १९४० ई० के उपरान्त व्यक्ति
कई बीध के प्रति निरन्तर जागृक एवं संवेत रहता है। इसके फलस्वरूप
कविता में नूतन प्रयोग होते रहे हैं। कवि अत्यन्त जागृक प्राणी होता
है। आधुनिक हिन्दी कविता में कई-बीध अधिक संचित एवं सकल रूप
में उभरा है। यही कारण है कि आधुनिक कवि अज्ञाती तथा कई के
प्रति जागृक दिखाई पड़ता है।

व्यक्ति एवं व्यक्तित्व

व्यक्ति समाज की क्रांति है जो समस्त

प्राणियों में सर्वोच्च स्था की धारण किये हुए है। व्यक्तिवाद का मूल केन्द्र व्यक्ति है। व्यक्ति की स्व-केन्द्रित अनुभूति, व्यावहारिक कार्य एवं विचार वर्तमान के रूप में प्रतिफलित होते हैं। विचार के सभी दर्शन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में व्यक्ति से सम्बन्ध हैं और वे व्यक्ति के जीवन में ही विकसित हुए हैं। यह ही मार्क्सवाद ने स्वीकार कर लिया है कि मानव पूर्ण का निर्माता है, लेकिन हमें यह याद रखना चाहिए कि निर्माण निर्माता के ही अनुस्यू होता है। का: यह कहा जा सकता है कि व्यक्तिवाद का व्यक्ति से प्रत्यक्ष एवं कटू सम्बन्ध है और व्यक्ति एवं व्यक्तिवाद एक सिक्के के दो पक्ष हैं। व्यक्ति में ऊँ की उपस्थिति व्यक्तिवादी दर्शन को प्रभावित करती है। व्यक्तिवादी विचारधारा के अन्तर्गत समाज के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण है। परन्तु समाज व्यक्तियों का सम्मिलन है। समाज व्यक्ति के हितों, स्वार्थों एवं इच्छाओं से अना परिचित नहीं होता किना कि व्यक्ति होता है। यह सत्य है कि समाज द्वारा निर्मित संस्थाओं, पर्याप्त परम्पराओं एवं रीति-रिवाजों के कठोर बन्धन व्यक्ति को पूर्णतः शास्त्रित नहीं कर सकती। व्यक्ति के समग्र व्यापार का साम्य व्यक्ति का हित है और उभरा जाता व्यक्ति है।

व्यक्तिवादी दर्शन में व्यक्ति का महत्त्व स्थान है। व्यक्ति को अनुपस्थिति में व्यक्तिवादी विचारधारा का अस्तित्व ही नष्ट हो सकता है। ऊँ-बोध, व्यक्ति-स्वातंत्र्य, व्यक्ति= हित

१- Self centred feelings or conduct as action or thought,

egoism- The Shorter Oxford English Dictionary on Historical Principles-Vol. I page 1993

२- डा० धर्मवीर भास्कर- प्रातिवाद : एक समीक्षा पृ० १४२- १४३

३- डा० धीरेन्द्र वर्मा- हिन्दी साहित्य कील भाग १ पृ० ७४४

वैयक्तिक वाक्य वादि व्यक्ति के विचारों, प्रवृत्तियों एवं उनके संस्कारों के प्रतिफलन में विकसित होती हैं। अतएव व्यक्ति एवं व्यक्तिवाद एक दूसरे के पुरुष हैं। बीसवीं शती से पूर्व व्यक्तिवाद के लिए 'लॉटिज्म' शब्द का प्रयोग किया जाता था, परन्तु आज 'लॉटिज्म' शब्दवाद के लिए प्रयुक्त होता है। शब्दवाद के अनुसार व्यक्ति अपने प्रत्येक कार्य का लक्ष्य है, तथा व्यक्ति का समस्त कुराग एवं लज्जा बर्ष के लिए है। व्यक्ति की कृत्यन्त स्वार्थी होना उसकी स्फूर्ति की दिगुणित करता है। यह समस्त कार्य - व्यापार व्यक्ति के अन्तर्गत एवं बाह्य मन में घटित होते हैं। शब्दवाद के अन्तर्गत भी सभी विचारधारा का विकास होता है, व्यक्ति एवं व्यक्तिवाद एक दूसरे के कृत्यन्त निष्पत्ति हैं। सभी प्रकार व्यक्तिवाद एवं शब्दवाद भी व्यावहारिक रूप में निष्पत्ति हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सभी विचारधाराओं का मूल उत्पत्ति एवं भोक्ता व्यक्ति है। व्यक्ति की अनुपस्थिति में समाज, देश, संस्थाएँ, मर्यादाएँ एवं समस्त विश्व व्यर्थहीन है और सभी विचारधाराएँ, साहित्य, इतिहास, संस्कृति, कला वस्तु-स्थलीन हैं। व्यक्तिवाद व्यक्ति की प्रथम स्थान देता है और उसके आत्म-केन्द्रित स्वभाव की अपनी विचारधारा का प्रथम उद्धान मानता है।

व्यक्तिवाद विश्व की सबसे प्राचीन दार्शनिक विन्तन-धारा है। यह वह संहिता है जिसे प्रवाद से अपनी नूतन विचारधाराएँ प्रवाहित हुई हैं। विश्व-इतिहास में व्यक्ति के हित में जो आन्दोलन हुए उनके मूल में- अग्रयण या प्रत्यय रूप से व्यक्तिवादी

चिन्तनधारा की कुछ न कुछ प्रतिक्रिया कराय रही है। यह चिन्तनधारा जोर्जो विद्यानी द्वारा बालीयना का केन्द्र- बिन्दु बनी है। व्यक्तिवादी चिन्तनधारा पर जितने भी बासीप लगाये गए, उतने बासीप अन्य किसी चिन्तनधारा पर नहीं लगाये गए।

व्यक्तिवाद का मूल बिन्दु व्यक्ति है और वह उसका मूल तत्त्व। इसी कारण व्यक्ति सामाजिक बन्धनों, धार्मिक कदियों, परम्परागत रीति- रिवाजों, शासन के कठोर नियमों को तोड़ कटखत करता है। यह विरोध में व्यक्ति अपनी मूलतः कल्पना के सतर्क नियमों को उठाती हुए- विद्रोह, लोभ एवं वाञ्छित वापि के द्वारा अन्य विरोधी शक्तियों को चुनौती देता है। यह कटखती में निराश एवं परा-जित होने पर वह कठपुतली एवं दुःख की कल्पना से व्यक्ति ही उठता है। लोक चिन्तकों ने यह पर चिन्तन एवं मनन कर मूल चिन्तनधाराओं को सुदृढ़ होने का अवसर प्रदान किया है। इसी कारण व्यक्तिवाद राजनीति शास्त्र, समाजशास्त्र, दर्शन, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र एवं साहित्य में विविध रूपों में प्रतिफलित हुआ है। व्यक्ति की प्रकृति व्यक्तिवाद के साथ साथ ही चरितार्थ नहीं होती, अपितु विश्व के संपन्न स्थानों एवं लोगों में विकसित हुई है।

(स) व्यक्तिवाद का अन्वय : प्रारम्भिक स्वरूप

वर्धमान विद्यानी ने व्यक्तिवाद का प्रारंभ एवं उसका अन्वय योरोपीय दर्शन से मानते हैं। योरोपीय दर्शन का प्रारंभ एवं उसका विकास ग्रीस में हुआ था^१। अतः ग्रीस की योरोपीय दर्शन

को पाठ्यपुस्तिका कहना उचित है। व्यक्तिवाद के वन्द्युदय की सम्झने के लिए यह आवश्यक है कि योरोपीय दर्शन के ऐतिहासिक विकास को ध्यान में रखा जाए। श्री रामावतार शर्मा ने योरोपीय दर्शन की निम्न ऐतिहासिक शताब्दियों में विभाजित किया है :

- १- साकृतीय के पहले का दर्शन
- २- साकृतीय, पीटी और वरिस्टाटस के दर्शन
- ३- ग्रीस का अन्तिम दर्शन
- ४- ग्रीकानुयायियों के दर्शन
- ५- स्कूल का दर्शन
- ६- नये दर्शन का आरंभ
- ७- काण्ट का परोक्षवाद
- ८- अनुभववाद
- ९- काण्ट के बाद का दर्शन

व्यक्तिवादो चिन्तन उन्नीस शताब्दी के आरंभ में कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में उपस्थित रहा है। व्यक्तिवाद व्यक्ति की केन्द्र में मानकर चलता है। अतः व्यक्तिवाद के स्वरूप एवं उसकी उपलब्धियों में शनैः शनैः परिवर्तन आता गया और नये-नये दर्शन, फल एवं सिद्धान्तों का जन्म तथा विकास होता गया। व्यक्तिवाद की प्रारम्भिक जड़ें ख़ास है पाँचवीं शताब्दी पूर्व विकसित हुईं और प्रथम एवं द्वितीय सम्राट्त्वर काल में दर्शन, राजनीति, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र एवं साहित्य में विविध रूपों में प्रकट हुईं।

व्यक्तिवाद के विकास की एक सम्पूर्ण पुस्तक-

पुमि है। यूरोडाक्टोस (४६०-४०० ई० पू०) द्वारा वर्णित पेरि-क्लीस (४६०-४२६ ई० पू०) के एक भाषण में हमें सर्वप्रथम व्यक्तिवाद की ग्रीक उत्पत्ति का ज्ञान मिलता है। तत्परान्त पाँच सौ वर्ष पूर्व के लगभग जब ग्रीक समाज विघटित हो रहा था तब ग्रीक विचारकों ने व्यक्तिवादी मान्यताओं की प्रतिष्ठा की। उस प्रतिष्ठा की विशेषताएँ इस प्रकार हैं - समाज-व्यवस्था और परम्परा से दूर कर भी व्यक्ति अपनी वस्तुत्व का पक्ष-पक्षि निर्वाह कर सकता है। उसकी वात्सल्य-निर्भरता निर्गुण सिद्ध है। ज्यों विचारों की आधार मानकर ग्रीक सोफिस्टों ने अपने व्यक्तिवाद की स्थापना की। उनके अनुसार राज्य कृत्रिम है और मानव जन्म परम्परा का श्रोत। अतः राज्य की परम्परा शक्ति का व्यक्ति के नैतिक स्वार्थों से नीति विरोध है। राज्य और व्यक्ति का यह कन्फ़्लिक्ट निर्गुण और परम्परा के नीति कन्फ़्लिक्टों की पुष्ट्युक्ति में चिह्नित किया गया था।

यूरोडाक्टोस द्वारा वर्णित पेरिक्लीस के भाषण से व्यक्तिवाद के क्षेत्र में उसकी ग्रीक उत्पत्ति का ज्ञान होता है, इस क्षेत्र में अन्य विचार स्पष्ट नहीं हैं। पार्श्वगत्य दर्शन के अन्तर्गत सर्वप्रथम व्यक्तिवाद की सोफिस्ट सम्प्रदाय ने विवेचित किया। व्यक्तिवाद की सोफिस्ट दार्शनिकों ने मुख्यतः सामाजिक समस्या के रूप में ग्रहण किया।

सोफिस्ट समुदाय का समाज योद्धाओं और कृत्रिमों का समाज था। ज्ञान में और स्वयं योद्धाओं के लोभों का प्रभाव था

१- डा० धीरेन्द्र वर्मा- हिन्दो साहित्य कीर्तन भाग १ पृ० ७४४

२- प्र० डॉ० रामप्रसाद बिपाठी - हिन्दो साहित्य कीर्तन भाग १ पृ० १६०

रुने: रुने: ये प्रारम्भिक शासक, योद्धा, वीर कालान्तर में राज परिवार
 वंश एवं कुलों में परिवर्तित हो गए। इन योद्धाओं शासकों एवं कुलों
 को ही समग्र सुत - धुविधाओं को नीगने का अधिकार था। ये योद्धा एवं
 कुलीन साधारण जन-जीवन की देखो रखित एवं परम्पराओं से भयाक्रान्त
 करके उसे समस्त अधिकारों से वंचित रहे हुए थे। इन परिस्थितियों में
 सोफिस्ट समुदाय ने परम्परा एवं रीति-रिवाजों का मानवीय मूल्यों
 के निकष पर मूल्यवान् करने का प्रयास किया। सोफिस्ट समुदाय में
 दो नाम विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं- प्रोटोगोरस और जर्मिडस। जर्मिडस
 प्रोटोगोरस (४८०-४११ ई० पू०) का एक विख्यात कथन व्यक्तित्ववाद
 के विचार को स्पष्ट करता है, " मनुष्य सभी चीजों की माप है, जो
 कुछ है उसके अस्तित्व के सम्बन्ध में और जो नहीं है, उसके अभाव के लक्ष्य
 में, वही निश्चय करता है। "

कौन मनुष्य ? प्रोटोगोरस प्रतिष्ठा का
 यह फल प्रत्येक मनुष्य की देता है। "

जो प्रकार प्रोटोगोरस वादों के उद्गम में
 कहता है कि वादों हमारे बाहर नहीं, बल्कि हमारे अन्दर है, हम में
 है प्रत्येक के अन्दर है। जो कुछ मुझ जाता है, वह भी तिर बज्जा है,
 जो कुछ भी बाधों की माता है, वह उसके तिर बज्जा है, ऐसे तुम का
 कवेक्षण करना जो उसके तिर तुम है, समय नष्ट करता है। ऐसे तुम
 का कोई अस्तित्व नहीं। "

१- हिन्दो विश्व कोश खण्ड ११ पृ० १६७

२- ह्यूमन वेल्थ

३- डा० दोवान बन्ध - पश्चिमी दर्शन (ऐतिहासिक निरूपण) पृ० १५

४- उपस्थित

५०१६

वार्शनिक प्रोटिगोरस के उक्त विचारों से

यह सिद्ध होता है कि उसके काल में व्यक्तिवाद का पूरा प्रीत उपरिष्ठ है। उन्हीं उक्त व्यक्तिवादों विचारों को सम्मुख रखी हुए ज्ञान को व्याख्या में कहा, " हम वस्तुओं को नहीं, प्रत्यक्ष के विचारों को जानते हैं। " इसीसे ही बीदाओं के युग में ज्ञान को प्रत्यक्ष के निरूपण पर जना धितनी की वैचारिक शान्ति थी ? इस शान्ति का उद्देश्य सामान्य जन की प्रतिष्ठा एवं उसकी स्वतन्त्रता की प्रतिष्ठित करना था । जन-साधारण की कृपा को स्थापित करना एवं अधिकार वंशित व्यक्ति को उनके गौरव तथा मुक्तों के परिचित कराना ही उसका प्रधान उद्देश्य था ।

उक्त वार्शनिक काल में व्यक्तिवादी विचार-धारा का प्रारम्भिक स्वरूप मिलता है। इसमें व्यक्ति के स्वतन्त्र अस्तित्व एवं वैयक्तिक वास्तव्य के मुख्यतः उपादानों के सम्बन्ध के साथ स्वतन्त्र-विचार, स्वतन्त्र हक एवं स्वतन्त्र व्यवहार आदि पर विचार प्रस्तुत किया गया है। इस तरह , तत्त्व ज्ञान और नोति दोनों में प्रोटिगोरस ने व्यक्तिवाद की मौलिक प्रत्यक्ष बताया । व्यापक सत्य और व्यापक भ्रम का कोई अस्तित्व नहीं, वाणिक बोध और वाणिक भाव ही सब है।^२

वास्तव में प्राचीन वार्शनिक यह ज्ञात करता चाहते थे कि जगत् का पूरा कारण क्या है ? सभी वार्शनिकों की दृष्टि बाह्य जगत् को और केन्द्रित थी । परन्तु सोफिस्टों ने इस दृष्टिकोण को बदल दिया । उन्होंने बाह्य जगत् के स्थान पर स्वयं मनुष्य की वार्शनिक विचार का केन्द्रीय विषय बताया । अन्त्य के विचार की दृष्टि

१- राम प्रसाद बिपाठी- हिन्दो विश्वकोश खण्ड ११ पृ० १६०

२- बरिचो बर्ज- (ऐतिहासिक निरूपण) डा० दीवान खन्त पृ० १६

में मनुष्य ही पितृवर्षों का केन्द्र बना रहा । भूमण्डल विषय का स्थान नीति और राजनीति ने लिया । नीति में प्रथा को स्थान प्राप्त था , व्यक्ति को स्वतन्त्रता नाम मात्र की थी । राजनीति में बहुमत का राज था । प्रोटेगीरस का धारा यन्त्र उस स्थिति का विरोध करने के लिए था । उसने व्यक्ति के महत्त्व पर जोर दिया । उसकी भूल यह थी कि उसने बुद्धि का महत्त्व नहीं समझा । बुद्धि मनुष्यों की गठित करती है। समूह कबोदिक कार्य करता है क्योंकि बुद्धि के स्थान में उद्देश के नेतृत्व में चलता है।

विश्वकर्ष रूप में सोफिस्ट समुदाय के विचारक प्रोटेगीरस ने व्यक्ति के महत्त्व को उन्नत माना । परन्तु उन्होंने बुद्धि को अधिक महत्त्व नहीं दिया । बुद्धि को महत्त्व न देना उसकी बहुत बड़ी भूल थी । यद्यपि उसने अपनी विचारों की व्यक्ति के अस्तित्व, सांख्यिक-बोध आदि पर अधिक केन्द्रित किया । डा: व्यक्तिवादी विचारधारा के उद्भव एवं विकास की यात्रा में सोफिस्ट समुदाय के प्रोटेगीरस दार्शनिक का अपना एक विशिष्ट महत्त्व है। व्यक्तिवाद के सम्बन्ध में उसका एक निश्चित विचार है जो कुछ हदों की सीढ़ी पर वास्तविक व्यक्तिवाद का आधार बना जा सकता है।

प्लेटो के ' रिपब्लिक ' में व्यक्तिवादी विचारधारा प्राप्त होती है। ' उसने सत्ता की समस्या को सम्मुख रखकर बस्तुओं के ' धार ' की सत्ता खोकार दिया । उसी को उसने द्रव्य माना ।

- १- पश्चिमी दर्शन- ऐतिहासिक निरूपण - डा० दीवान चन्द्र पृ० १७-१८
२- हिन्दी विश्वकोश - खण्ड ११ प्र० ६० राम प्रसाद त्रिपाठी पृ० १६७

जब तार्किकों ने यह सिद्ध किया कि ज्ञान वाजार बादि सब व्यक्ति के अधीन है। इसी प्रकार व्यक्ति ही जिसमें अपना हुन ही उसे वही कार्य करना उचित होगा। इस प्रकार प्रत्यक्ष, तत्त्व और तर्क का सम्बन्ध कर स्टीडी ने यह स्थापित किया है कि वास्तव ज्ञान दार्शनिक विवेक से होता है। रुग्णियों से बुद्धि पर, व्यक्ति से वाति पर फलन कर संवित् (वादहिया) का बोध विवेक है। सामान्य प्रत्यक्षों के द्वारा विचार करने से मनुष्य संवित् तक पहुँच सकता है। व्यक्तिवाद का मत उत्तम व्यक्ति का हुन है और उसके समस्त कार्य व्यक्ति पर निर्भर है। व्यक्ति यद्यपि शुद्ध, वृष्णों और अनित्य है तथापि उन व्यक्तियों में जो सामान्य धर्म हैं वे पूर्ण, नित्य और शुद्ध हैं।

बस्तु ने स्टीडी के सामान्यवादी दर्शन में कोई परिवर्तन न कर, बस्तु के ही सहायक कारण ' फल' ' स्व ' ' वाकार ' पर बल्लि बल दिया। इसी सिद्धि होता है कि बस्तु के विचारों में समग्र रूप से समष्टिवादी एवं व्यक्तिवादी विचारधाराएँ नहीं प्राप्त होतीं, बल्कि समष्टिवाद एवं व्यक्तिवाद का मिलित रूप दृष्टिगोचर होता है।

इसके उपरान्त स्टीड्स एवं बीनी वर्ग का दर्शन प्रकाशित हुआ। स्टीड्स समष्टिवादी दर्शन का प्रचार करते थे। इस विचारधारा के अन्तर्गत डेवस्टड, एम्पिरिकल एवं एरीसीडीमल मुख्य दार्शनिक हुए।

स्टीड्स वर्ग में मुख्य दार्शनिक बीनी हुआ

१- यूरोपीय दर्शन- रामायतार सर्वा पृ० ६, १०

२- उपरिबु पृ० १०

३- राम प्रसाद त्रिपाठी- हिन्दो चित्तकोश तन्त्र ११ पृ० १६७

किसके अनुयायी बिलरी, डेनका आदि हुए। रोम का प्रसिद्ध छाट्ट मार्कस कारीलियस भी इसी मत से सम्बद्ध था।

चीनी के समय में ही एपोक्युरस (342-290 ई० पू०) बुद्धादी दार्शनिक का मत ग्रीस तथा रोम में फैल गया। छाट्ट बुलियस सीजर भी इस मत का अनुयायी हो गया था। इसके अनुसार मनुष्य का जीवन उत्प है, जन्म के साथ इसका आरम्भ होता है, मृत्यु के साथ इसका अन्त हो जाता है। बुद्धिमत्ता की माँग यही है कि जो कुछ हमें से निकल आती है, निकल ही चुकित या कुछ जीवन में जीवित प्रत्यक्ष की वस्तु है। वाक्य ' एपोक्युरियस ' शब्द का अर्थ ऐसा मनुष्य है जो ' हाजी फिजी और नीय करी ' की वफा रख करता है।

एपोक्युरस का मत एक श्रान्तिकारी दर्शन था जो मनुष्य की स्वतन्त्र, कस्मात् सब कुछ करने में समर्थ, पूर्ण क्षमता से दूर रहने वाला मानता है। वह ईश्वर, देवता आदि किसी कल्पित वस्तु का अस्तित्व नहीं स्वीकार करता। वह इस विश्व की स्वभाव सिद्ध, शाश्वत मानता है, और विश्व की किसी के द्वारा निर्मित स्वीकार नहीं करता। पुना, साधना आदि का भी एपोक्युरस विरोध करता है। पुनर्जन्म, वात्मा, मृत्यु एवं धर्म पर उसकी वास्तविकता नहीं। इसे ज्ञात होता है कि वह व्यक्ति की ईश्वर, देवता, वात्मा, धर्म, पुना-साधना के बन्धनकारो उफरणाई से मुक्त एवं स्वतन्त्र रहने में आस्था रखता था। इसी कारण एपोक्युरस के दर्शन में व्यक्तिवादी विचारधारा की

कथयिक अवतारणा हुई। एपीक्यूरेस ही व्यक्तिवाद की सर्वप्रथम एक दार्शनिक रूप में प्रस्तुत करता है। उसके दर्शन में वाधुनिक व्यक्तिवाद के दो प्रधान तत्त्व स्पष्ट रूप से दीख पड़ते हैं- प्रथम प्रत्येक मनुष्य का एक मात्र सत्य दुःख है और द्वितीय, समाज और राज्य बाधक दोनों हैं।^१ इसके यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि एपीक्यूरेस ही व्यक्तिवाद का जन्म-दाता है और इसी के प्रयास से व्यक्तिवाद का स्पष्ट एवं दार्शनिक रूप विश्व में समझा जाया।

मध्यकाल में ईसाई धर्म का प्रसार होने से ये यूनानियों द्वारा प्रवर्तित स्वतन्त्र चिन्तन को परम्परा समाप्त हो गई और बाइबिल पर बाधास्थ धार्मिक चिन्तन ने महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया। जब वर्तन धर्म से प्रभावित होकर धार्मिक दर्शन का रूप ग्रहण कर चुका था। धार्मिक विचारों के कारण वीदिकता का प्रादुर्भाव होने लगा और बन्ध-विश्वास काफी लगा। इसके ईसाई धर्मों ने बलिष्ठ धृष्टि के कल्याण का बहिष्कार किया। अतः उस युग के दर्शन को धर्म पिच्छित दर्शन कह सकते हैं और उस विचारधारा को कोई स्वस्थ स्वल्प प्रदान नहीं किया जा सकता। कारण में यह समष्टिवादी धार्मिक विचारधारा थी। मध्ययुग के प्रसिद्ध दार्शनिक सेन्ट ऑगस्टिन (ऑगस्टिन), थोमैस, वीरिनि ऐम्ब्रिजियस, स्कॉटस एरिनास (स्कॉटस) एम्ब्रिजियस, वीरिनि ऐरिनास, गानिली, रोसेलिनस, टॉमस रेकिनस (टॉमस एम्ब्रिजियस) वीरिनि वीरिनि हैं। मध्य युग को विचारधारा को सेंट टॉमस एम्ब्रिजियस (१२२७ से १२७४ ई०) के निम्नलिखित विचारों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है- मनुष्य के दो की हैं- एक प्राकृतिक एवं स्वाभाविक और दूसरा बाह्यात्मिक (सुपर-

नेहरू) । मनुष्य जो जीनी में से किसी भी स्तर पर रह सकता है, किन्तु उसकी स्थिति उस लौकिक जीवन में न होकर, पारलौकिक जीवन में है। अतः उस स्थिति की प्राप्ति के लिए बाध्यात्मिक स्तर पर जीवन व्यतीत करना नितान्त आवश्यक है। सेंट टॉमस के अनुसार ईश्वर की सत्ता, परमसत्ता है और उसी सत्ता का मनुष्य के प्राकृतिक तथा बाध्यात्मिक जीवों पर पूर्ण अधिकार है।

दान्ते (१२६५ से १३२१ ई०) ने 'डिव्वाइन कॉमिडी' ग्रन्थ की रचना की, किन्तु उसकी विचारधारा भी ईसाई धर्म से पूर्णतया सम्पृक्त थी। उस महाकाव्य में दान्ते ने वैयक्तिकता का समष्टि में तादात्म्य करने का प्रयास किया है। पारम्पर्य राजनीति का बाणव्य मेकियावेल्लो (१४६९ से १५२७ ई०) कूटनीति पर बलिष्ठ अंक दिया है। उसके अनुसार धर्म तथा नैतिकता राज्य शक्ति के अधीन होती हैं। अतः मेकियावेल्लो शासक की दृष्टि से धर्म से युक्त सम्मत्ता है।

उसके उपरान्त मध्य युग का दर्शन बहुरूपिक रूप धारण करने के कारण अपनी महत्त्व को खोने लगा। दार्शनिक अब कल्पना को त्याग कर प्रत्यक्ष विज्ञान पर विचार करने लगे। उस समय भूगोल, रसायनशास्त्र, फ्रिजिडि, केमन प्रसिद्ध हुए। उसके उपरान्त दार्शनिक हाब्स ईंग्लैंड में हुआ। उसके सभी दार्शनिकों ने नूतन विचार दिये जो तर्क एवं विज्ञान पर आधारित थे, जिनका डेकार्ट वादि ने वास्तविक दर्शन में प्रयोग किया है।

कतिपय विद्वान् हाब्स की वास्तविक युग

१- डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा कौली - पश्चिमीय वाचार विज्ञान का बालीक्या-

त्मक अध्ययन पृ० ६३, ६४

२- उपरिष्ठ पृ० ६५

के दार्शनिकों में मानते हैं। आधुनिक दर्शन भीतिकवाद पर आधारित माना जाता है। इसका गण्डेरी तथा हाक्स (१५८८ - १६०६ ई०) का प्रमुख सम-
र्थक माना जाता है। हाक्स का सिद्धान्त ' सब मनुष्य स्वभाव से वर्णवादी
हैं ' पर आधारित है। का: हाक्स का दृष्टिकोण व्यक्तिगत सुखादो है।
व्यक्तिगत सुखाद में प्रत्येक निजी सुख उसका मरम तथ्य होता है।

आधुनिक ज्ञान के प्रारम्भ होने के साथ वैज्ञा-
निक आविष्कारों की धूम मचने लगी। न्यूटन जैसी वैज्ञानिकों के आवि-
ष्कारों ने नुतन दिशा प्रदान की। इसके फलस्वरूप दर्शन में क्रान्तिकारी
परिवर्तन हुए।

डेकार्ट को आधुनिक दर्शन का पिता माना
जाता है। डेकार्ट प्रकृत: बुद्धिवाद एवं उपद्रष्टिवाद का समर्थक है। इसके
दार्शनिक समर्थक स्पेन्सीज, लोक्ज, ह्यूक और वाफगाटन प्रमुख हैं।

भीतिकता एवं ऐन्द्रिक विषयों को महत्व
 देने वाले डेकन, लाक, डेफिटसबरो, कले और ह्यूम व्यक्तिवादो ज्ञान
के क्युयायी रहे। का: यहाँ दोनों प्रकार के दार्शनिकों पर विचार करना
ज्याह है।

डेकार्ट के अनुसार मनुष्य का ज्ञान प्रत्यक्ष
और शब्द प्रमाणाँ से बन्धित है। यदि मनुष्य जीन्ता विना होता है तो
' यह कसर्य है ' । ' कसर्य है ' ही अस्तित्ववादो सिद्धान्त के समीप

१- जाल में बार जॉइन्ट - वही पृ० ६६

२- डा० ईश्वर चन्द्र बेतली- पश्चिमीय बाजार विज्ञान का वातीनात्मक
क-यम पृ० ६६

३- जॉस्टिड डेडोनीज

ही जाता है।

“ मैं सीखता हूँ, इसलिए मैं हूँ ” (कोणी-टूथ वरणी सम ^१) इसका वाक्य ही यह हुआ कि “ मैं अस्तित्वमान हूँ ” ।
टेकर्ट के अनुसार ईश्वर की स्थिति के कारण हमें ईश्वर का ज्ञान प्राप्त होता है। उसके मत में ईश्वर आत्मा और विश्व वस्तु हैं परन्तु आत्मा और विश्व ईश्वराधीन है। यह विश्व को गति ईश्वर प्रदत्त है। वह आत्मा और मुक्त कर्मात्मी में भेद मानता है। आत्मा निराकार है और वस्तुई साकार । जो के अनुसार ईश्वर ईश्वर तया ज्योतिः है । ईश्वर के अनुसार ईश्वर हमारे समस्त कार्य का नियन्ता है। ज्योतिः कहता है कि ईश्वर हमारे समस्त ज्ञान का ज्ञाता है।

सीकोप ने एक एक शक्ति केन्द्र की महत्त्व देकर व्यक्ति को ऊपर की महत्ता बताई तथा प्रकृति में व्यक्ति की श्रेष्ठ भेदा का स्वामी माना है। उक्तः इसके विचार बुद्धिवाद के सबसे अधिक समीप है। इसके प्रमुख अनुयायी बीनहाइन, प्युफेन्डाफे, टामेसियस तथा बुल्फ हूए ।

हाक ने प्रथम समष्टिवादी विचारधारा के विरोधी प्रतीति केन का विचार था कि विश्व, स्वर्ग, नरक, ईश्वर, देवदुत वादि पर विश्वास नहीं करना चाहिए और व्यक्ति की पहचान करना चाहिए । ये सब तो अज्ञान के फलस्वरूप उत्पन्न हुए हैं। केन प्रत्यक्ष ज्ञान पर विश्वास करके व्यक्तिवादी विचारधारा का समर्थन करता है। हाक के अनुसार व्यक्ति का मन चाहा काम है और व्यक्ति अनुभवी

स्वं अनुभूतियों से ज्ञान स्वयं करता है। इसके लिए वह बाह्य संवेदन एवं ज्ञानात्मिक विचारों का सहयोग लेता है। वह सात्वत वस्तु का अनुभव इन्द्रियों से नहीं मानता बल्कि (मन) की शक्ति का यह समर्पण करती हुए कहता है कि उत्पत्ति तबित है, वह जहाँ तक जाहे किसी देश, काल एवं वस्तु की फैला सकता है। उसके अनुसार व्यक्ति की कृति शक्ति (विल) सुख के अधीन है। अतः वह सुखाधीन वर्ण को भीति ही आत्मा एवं ईश्वर का चिन्तन होकर कर व्यक्ति अनुभव और परीक्षापर व्यक्ति बस देता है।

प्लेटो और सोटिग के विचारों की

नूतन रसिक डेफिटसबरी ने प्रदान किया उन्ने विषय की जानने का साधन इन्द्रियों को माना। उसके समस्त विचार वैयक्तिक इन्द्रिय-संवेदना के द्वारा व्यक्तिवादी चिन्तन के समर्पण हैं। इसके ज्ञात होता है कि डेफिटसबरी व्यक्तिवादी विचारधारा का प्रतिपादक था। उसके साक के ही विचारों की एक नूतन दिशा प्रदान करता है। उन्ने आत्मसाध का प्रतिपादन किया तथा आत्मा की बुद्धि से ग्रन्थ एवं इन्द्रिय-संवेदना से सम्बन्ध माना। वह आत्मा की ही ईश्वर स्वीकार करता है। इसके मत का तत्त्व-ज्ञान प्रसार हुआ। मैनिस् तथा फ्रांस के अन्य दार्शनिकों ने इसका सम्बन्ध एवं विरोध किया। ह्यूम के अनुसार प्रत्यक्ष या अनुभव, चिन्तन या स्मृति में कोई ज्ञान नहीं है। अतः ह्यूम अनुभववादो हुआ जो कि व्यक्तिवादी चिन्तन के अन्तर्गत जाता है। ह्यूम के अर्थ पर बाह्य वस्तुओं की स्थिति, ईश्वर की अस्तित्व, कार्य कारण भाव सभी बुद्धि पूर्ण सगे। कालान्तर में, काण्ट के लिए इसके एक मार्ग प्रशस्त हुआ। साक के अनुयायियों में काण्ट-के दार्शनिक हुआ जो कुछ प्रत्यक्षवादो था।

काण्ट ने अपनी प्रथम ग्रंथ 'सूक्ष्म ज्ञान की परीक्षा' (क्रिटिक वाफ् प्यीर रीजन) में कहा कि यह परीक्षा हीनो बाहिर कि ज्ञान किसी कथी है। काण्ट की विचारधारा में सम्प्रिय-विदना और बुद्धि तत्त्वों का समावेश प्राप्त होता है। उनके मत को ज्ञान, बुद्धि एवं अनुभव के सम्मिलन का प्रतिफल माना जाता है। उसी 'व्यावहारिक ज्ञान की परीक्षा' (क्रिटिक वाफ् प्रैक्टिकल रीजन) ग्रंथ में कृति शक्ति का वर्णन किया है। उसी परमाणुवाद, ईश्वरवाद आदि कल्पनाओं को कथ्य सिद्ध कर दिया। 'बाह्य वस्तु अविवर्चनीय है, उसकी प्रमाणात्मा अविवर्चनीय है, बहुवचनवत् अविवर्चनीय है, इन तीनों अविवर्चनीयों का सम्बन्ध अविवर्चनीय है। कथी जो स्वप्नवत् आभास होता है, वही संसार है और इस संसार का परमाणु क्या है, यह नहीं कहा जा सकता। परन्तु किसी वस्तु और संसार समझा जाता है, वह केवल बौद्ध विज्ञान रूप है, उसकी पारमार्थिक अस्तित्व नहीं है।' उसी ज्ञान शक्ति के द्वारा आत्मा आदि का प्रमाण और नास्तिकों का बाह्य वस्तुवाद भी कथित माना है। वह प्रकृति के नियमों को अपरिहार्य मानता है। और उनके विपरीत कार्य न करने पर कल देता है। वह आत्मा को स्वतन्त्र, अग्रिम पारमार्थिक वस्तु में प्रकृति के नियमों की गति द्वारा मानता है। यह उसने स्वातन्त्र्य, अप्राकृत और कृति शक्ति से निश्चित सिद्ध किया। उसने यह जोकार किया कि आत्मा अमर है। कतः वह आत्मवाद का प्रकट समर्थक रहा। काण्ट ने अपनी द्वितीय ग्रंथ में 'उत्तम ज्ञान की परीक्षा' (ड्योडिक वाफ् ज्युडिमेंट) में बताया कि बुद्धि शक्ति है छा का ज्ञान प्राप्त होता है। उसी बुद्धि शक्ति के कार्यों, कृति शक्तियों तथा उसके विषय, सौन्दर्य

बापि पर कभी विचार प्रकट किये ।

जैनसुख काण्ट ने व्यष्टिवादी और समष्टिवादी विचारधाराओं की प्रवृत्ति पर उनका सम्मिलित चार विरोधी प्रति-पत्तियाँ में रखा । क्या-

१- गुणात्मक चीज में व्यष्टि और समष्टि का अन्त विहीन हो जाता है, इसका कारण है कि क्या या सौन्दर्य की भूतानुप्रायित सत्त्व वस्तुति है।

२- काव्य स्यात्मक है उसी तर्क एवं विद्वान्त नहीं हो सके । यह विरोध परमाणवात्मक विशेषता के अन्तर्गत है।

३- सौन्दर्य उपयोगी है, परन्तु उपयोगिता के सामान्य गुणों से दूर है।

४- क्या विरोध सम्बन्ध निर्देश के क्षेत्र में है, परन्तु इसके अन्तर्गत सौन्दर्य वस्तु उद्देश्यपूर्ण होता है और प्रत्यक्ष प्रयोग के नियमों से मुक्त है। वास्तव में काण्ट ने वस्तुओं की सत्ता स्वीकार की । अपने ज्ञात की प्रमात्पत्ता की कायम रखा , किन्तु ज्ञान की प्रक्रिया की क्या उत्तरदायी ठहराया । जब वस्तु ज्ञात के समर्थन की समस्या समाप्त हो गई थी, समस्या थी उसे जानने की ।

काण्ट के उपरान्त जर्मन दार्शनिकों का वागमन होता है, जर्मन फिलॉसॉफी, जैसिंग एवं होगेल प्रमुख थे, जो कि

भाष्य के परिणासाद के परवाह् दार्शनिक दौर में प्रसिद्ध हुए। फिल्टे व्यक्ति की प्रभुता का तब स्वीकार करता है। उसने विवेक की वात्मा का स्वयम् माना। ज्ञान शक्ति, कृति शक्ति तक पहुँचने का एक मार्ग है। फिल्टे के विचार में परमात्मा कोई पुष्प वस्तु नहीं है। एक वात्मा की व्यक्तियों में कृति शक्ति की पूर्णता का प्रकाश करती है। हेसिंग ने वात्मा की स्वयम् और स्वतन्त्र माना। वात्मा और वात्मा की सांसारिक वस्तु है और ज्ञान से अपेक्षित सम्बन्ध है। उसके विचार में प्रकृति वात्मा की शक्ति है और वात्मा के साथ साथ प्रकृति भी - उसी प्रकार करती है। बुद्धि के तीन कार्य हैं- स्मरण, प्रत्यक्ष एवं चिन्तन, परन्तु प्रत्यक्षवाक्या में बुद्धि कृति शक्ति का वातावरण है। यद्यपि हेसिंग सर्वज्ञत्वादी था, किन्तु धीरे धीरे स्वीकृतिवादी हो गया। उसने ज्ञान के द्वारा व्यक्ति के ज्ञान तक पहुँचने का विचार प्रस्तुत किया। उसी कारण इसका दर्शन धर्मवादियों का दर्शन कहा गया।

होगेस ने ज्ञान की स्वातन्त्र्य की प्रशंसा की। होगेस के दर्शन से प्रारम्भिक दर्शन का इतिहास समझा जा सकता है। वास्तव में होगेस ज्ञान स्वतन्त्र एवं पूर्ण विचारक कहे जा सकते हैं। उनके अनुयायी रीज, फिल्टर, जर्मन, ग्रोन, स्टर्लिंग, प्रेडर, कैड, बीरा आदि हुए। यद्यपि में होगेस ने दृष्टात्मक नियम की वाक्यात्मक भूमि पर प्रस्तुत किया जो कालान्तर में मार्क्स द्वारा भौतिक भूमि पर स्थापित हुआ। होगेस के उपासक जर्मनवादी, हर्बर्ट, कोन्ट, मिल्, हार्मिन्, स्पेन्सर एवं साय आदि दार्शनिक प्रसूत हुए जिन्होंने वाक्यात्मक दर्शन में अपना उपयोग दिया।

व्याख्या है कि व्यक्तिवाद का प्रारंभ ज्ञान से पाँच सौ वर्ष पूर्व ही हुआ था। परन्तु उसकी कोई स्पष्ट स्वीकृति

निर्मित नहीं ही पाई थी। कातान्तर में एपीक्यूरेस ने सुल्लादी सिद्धान्त का प्रसार कर व्यक्तिवादी चिन्तन को एक क्लेश प्रदान किया। ईसा से तीन ही वर्ष पूर्व ही एपीक्यूरेस ने ईश्वर, देवता, पूजा, साधना एवं वाक्य वादम्भरी का विरोध कर व्यक्ति को स्वतन्त्र होने के लिए शान्तिकारी वात्सान किया। मध्ययुग का दर्शन धर्मवादी ईसाई धर्म पर आधारित था। अतः इस काल में वाक्यात्मिकता एवं ईश्वर तथा धर्म के प्रति निष्ठा का प्रसार मिश्रा है। जब व्यक्ति धर्म एवं ईश्वर सम्बन्धी नियमों एवं उपनियमों में बंध गया था।

बाधुनिक युग से पूर्व ही व्यक्तिवादी चिन्तन को एक उर्वर वैचारिक भूमि प्राप्त हो चुकी थी। काष्ट के दार्शनिक विचारों से व्यक्तिवादी चिन्तन का पिष्टपिचण हुआ। इसके उपरान्त फिष्ट, सेलिंग वीर हॉग्स वादि चिन्तकों को विचार-धारा से व्यक्तिवादी विचारों को अधिक विकसित होने में सहायता प्राप्त हुई।

व्यक्तिवाद ईसा से पाँच ही वर्ष पूर्व से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी तक एक विचारधारा के रूप में विकसित होता रहा है। इसके व्यक्तिवादी दर्शन के महत्व का ज्ञान होता है। इसके उपरान्त बीसवीं शताब्दी में व्यक्तिवाद नूतन रूप में विकसित हुआ जो कि आगामो उप कथाय में विवेक्षित है।

(ग) बोसनी स्लाव्दी में व्यक्तिवाद

फ्रांस की राज्य-क्रांति के फलस्वरूप समस्त देशों में स्वतन्त्रता, समानता तथा भ्रातृत्व की भावना का प्रसार होने लगा। इसके साथ ही साथ समस्त योरोपीय देशों में राष्ट्रियता की भावना का उदय हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी में यूरोप के सभी देश धार्मिक शक्ति की वृद्धि में रत होने लगे। इसी समय यूरोप में राष्ट्रियता के साथ अन्तराष्ट्रियता की भावना का भी जन्म हुआ जिससे विषय में नवीन विचारों का वादान-प्रदान शुरू हो गया। इसी शताब्दी में समाजवाद का उन्मेष हुआ। प्रसुत समाजवादी विचारक मार्क्स, एंगेल्स, पियरे-जोसेफ पुरुआ, कार्ल मार्क्स, फ्रेडरिक एंगेल्स आदि उत्पन्न हुए। धीरे-धीरे कार्ल मार्क्स के मीतिस्तावादी एवं क्रान्तात्मक विचारों का प्रसार प्रारम्भ हो गया जिससे व्यक्ति की अपेक्षा समाज या वर्ग को फलता दी जाने लगी। मार्क्सवाद का प्रभाव बोसनी स्लाव्दी की विचारधारा पर अधिक पड़ा है।

उन्नीसवीं शताब्दी का प्रारंभ व्यक्तिवादी चिन्तन के दौर में अत्यधिक महत्त्व का माना जाता है। फ्रांस का राज्य क्रांति ने समस्त योरोप में उत्प्रेरणायी प्रभावार्थिक शासन व्यवस्था में इस क्रांतिकारी व्यक्तिवादी दर्शन की प्रधानता दी। प्रभावार्थिक व्यवस्था में व्यक्तिवादी विचारधारा का उन्मेष होता है। इसके फलस्वरूप अन्तर्मुखी व्यक्ति-जीतना और वैयक्तिकता के अर्थात्मक विचारों ने नूतन विचारधारा और व्यक्तिवाद के संकेत को अधिक महत्त्व दिया। इस संदर्भ में सारेन कीर्क-

गार्ह के निम्नलिखित विचार उत्सिक्त हैं:

“ ईसाई- सम्यक्ता वैयक्तिक आत्म छाहों के लक्ष के अन्तर्गत नहीं है और वे अपनी व्यक्तिगत निर्णय के कारण ईसाई आस्था पर विश्वास करती रहती हैं।”

नूतन वैयक्तिकता के उन्नीसवाले में सर्वप्रथम अस्तित्ववादी विचारक कीर्किगार्ह ने यह विचार रते- “ नैतिक कथा तार्किक तथ्यात्मकता ही एकैक तथ्य है, जो अनुभव किए जाती समय केवल सम्भावना नहीं है, और जिसे केवल विज्ञान कथा विचार के द्वारा जाना जा सकता है। इस स्तर पर व्यक्ति ही तथ्यात्मक का स्वामी है। व्यक्ति द्वारा तथ्य का परिचय करने के पूर्व तथा उसमें वस्तुनिष्ठ रहता है और वह एक सम्भावना के रूप में है। नैतिकज्ञान व्यक्ति पर ही और पैता है, का: नैतिक दृष्टि से यह प्रत्येक व्यक्ति का स्वतन्त्र है कि वह सम्पूर्ण मानव को का यत्न करे। यह एक नैतिक पूर्व मान्यता है कि प्रत्येक मनुष्य में इस तरह की स्थितियाँ हैं जिसे वह मान व छाहें बन जाँ।”

उसका आशय है कि सारे कीर्किगार्ह व्यक्ति को व्यक्ति को सीधा एवं धरातल से ऊपर नहीं मानता। उसका मत है कि मानव, मानव समान है और वे सब अस्तित्व के स्तर द्वारा एक पुत्र

१- A christian civilization is nothing other than the quantity of individual souls living by personal decision on the christian faith.

- डिमर एथिकल्टिडियलिस्ट फिर्स : अस्तित्व १० ५०

२- डा० स्वामिभुन्दर फि- अस्तित्ववाद और द्वितीय उपरीस्तर हिन्दु

वास्तव्य १० १६

में बाधित हो सकती है। कीर्किगार्ड ने व्यक्ति की गरिमा पर बल दिया।
उसने उपरान्त जर्मन दार्शनिक एवं तत्त्ववेत्ता फ्रेडरिक नीत्शे ने अस्तित्व-
वादो एवं व्यक्तिवादो विचारधाराओं में वृद्धि की। यह उन्नीसवीं
शताब्दी के उत्तरार्द्ध का एक प्रतिभा-सम्पन्न दार्शनिक था। उसने सुपर-
मैन की कल्पना की तथा सामाजिक एवं नैतिक परम्पराओं, धारणाओं,
रोतिरिखाओं और विचारों के प्रति विद्रोह का स्वर सुनलिया किया।
उसने व्यक्तिवाद के बहिष्कार का विरोध कर व्यक्ति की वैयक्तिक वास्त-
विक शक्ति की प्रशंसा पुनः के रूप में स्वीकार किया है। वह परम्परा है
स्वोक्त समग्र राजनैतिक, धार्मिक एवं सामाजिक विचारों के प्रति विद्रोह
करता है तथा समाज की अधिकतर व्यक्तियों के लोचन को संतुष्ट मानता
है।

नीत्शे ने यह सिद्ध किया कि जाय का
व्यक्ति निर्माण है और निम्न जोष दृष्टि तथा जाने वाली महामानव
(सुपरमैन) के मध्य अनुपात है। नीत्शे ने स्पष्ट कहा कि वह अस्तित्व
की भाँति फाँसवर है जो आगामी महामानव की उद्घोषणा कर रहा
है। यथार्थ में नीत्शे शक्ति का उपासक था। नैतिक मूल्यों के प्रति नीत्शे
के विचार मानवीय गौरव के विपरीत थे। उसने कहा- " किसी भी
मृत का अस्तित्व होना उसकी हमारे बालीप के योग्य नहीं बना देता---
प्रश्न यह नहीं है कि कौन मृत अस्तित्व है, बल्कि अस्तित्व प्रश्न यह है कि वह
कहाँ तक जीवन की विकास देने वाला है, जीवन का रक्षण करने वाला
है, (बेजबल शक्ति का रक्षण करने वाला है) जाति की वृद्धि करने वाला

है और मुक्त: हम यह मानते जाये हैं कि सबसे कष्टमय फल ही हमारे लिए अनिवार्य बिंदु हुए हैं— उनके बिना हम रह नहीं सकते, कष्टमय फल का विरहकार वस्तुतः जीवन मात्र का निजीय बन जायगा । ”

नोत्पत्ती की विचारधारा ने महामानव की कल्पना द्वारा जर्जान की अधिक प्रशंसा दिया , क्योंकि वह स्वयं व्यक्ति की प्रशंसा मानता था । का: व्यक्ति में कई की प्रधानता उत्तरीत्तर वृद्धि करने लगी । इसके व्यक्तिवादो महामानव एवं जर्जान का अतिरिक्त एक नूतन स्वरूप है कर उपस्थित हुए । जब व्यक्तिवाद की एक नवीन भावभूमि प्राप्त होकर जिसका प्रसार काद्यान्तार में नवीन रूप में व्यक्त हुआ ।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से विचार करने परजात होता है कि अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सामन्तवाद का प्रसार का उदय ही रहा था । पूँजीवाद के विकास का कारण नये आविष्कार एवं कारखानों तथा मशीनों का बाहुल्य था । जब मजदूर सामन्तवादी दासता और कल्याणार की समझ गया था, इसके फलस्वरूप साहित्य में बाधुनिक उपन्यास का उदय हुआ । इन उपन्यासों में जीवन का यथार्थ चित्रण होने लगाऔर व्यक्ति स्वातंत्र्य- ज्ञान का अर्थ समझने लगा । वह अपने हितों, स्वार्थों के लिए सामन्तवादी, पूँजीवादी लक्षितों और विद्वतियों का भण्डाफोड करने लगा । वातावरण और परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ साथ व्यक्तिवादी दर्शन ने नवीन दिशाएँ निर्मित कीं । जब बाधुनिक दर्शन यूरोप का ही न होकर अमेरिका, अफ, फ्रांस एवं भारत आदि से सम्बद्ध होगया । अमेरिका में सुखावाद, परात्मस्वादी

भाषणाव संयुक्त होकर अमेरिकी व्यक्तिवाद की अभिव्यक्ति के रूप में प्रकाशित होने लगा। इसका स्रोत अमेरिकी चिन्तक स्पर्सन की है। स्पर्सन का चिन्तन खेती और कस्बे के प्रभाव से मुक्त था। वास्तविक व्यक्तिवाद की अमेरिकी वर्णन ने अत्यधिक प्रभावित किया है। बोल्सी स्ताव्स्की में व्यक्त-हारावकी वर्णन (प्रेमिटिज्म) ने प्रत्यक्ष को ज्ञान का उक्ति मान्यमाना। बाल्ब १९० पीयर्स (सन् १८३६-१९१४ ई०) इसका जन्मदाता था, यद्यपि उनके मुख्य व्याख्याकार विलियम जेम्स (सन् १८४२-१९१० ई०) हैं, उन्होंने प्रयोग की उत्थापत्य ज्ञान माना। जेम्स का विचार था कि कोई वस्तु हमारी इच्छाओं की उत्पत्ति करती है या नहीं। यह अवधारणा के कारण ही मनोविज्ञान का प्रसार हुआ और कार्यवादी चिन्तन प्रति-फासित होने लगा। जब दार्शनिक विचारवादा ने मनोविज्ञानिक व्याख्याओं से सम्पत्तीता कर लिया। मनोविज्ञान प्रत्येक व्यक्ति का स्वतन्त्र रूप से अध्ययन करने लगा। फ्रांस के चिन्तक हेनरी कर्णो (सन् १८५६-१९४१ ई०) ने वस्तुओं के मानसिक बोध की वेदना वास्तविक अनुभव (इन्फोर्म) की अधिक मूल्य दिया। व्यक्ति की वपरीणानुति उसे अन्य व्यक्तियों से विनिष्ट बना देती है। यह अनुति किसी विनिष्ट व्यक्ति में नहीं, सभी में होती है। वभिप्राय यह है कि एक ही संसार में रहते हुए, सबकी दृष्टि-कोण भिन्न है, सभी अपनी अपनी दृष्टि के व्यक्ति हैं। इस प्रकार वर्तमान ज्ञान मोपक्षित व्यक्तियों की दृष्टि में प्रत्येक व्यक्ति की एक विनिष्ट स्थान देती है।

वास्तविक व्यक्तिवाद धार्मिक परितो की त्याग कर वैज्ञानिक व्यक्तिवाद के रूप में विकसित हुआ। मनोविज्ञानिक

विन्तों को विज्ञान के परमाणुवादी धिमान्त से कथ्यधिक संकल प्राप्त हुआ । वे विज्ञान की भाँति ही प्रत्येक विचार एवं वस्तु को लघु कणों में विभाजित मानकर प्रयोग करने लगे । मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्ति की मान-धिम सत्ता को खेदनाओं में और समाजशास्त्रियों ने सामाजिक संघटनों को स्वतन्त्र व्यक्तियों के वस्तित्व के स्वरूप में विभाजित कर दिया । काः अब सत्ता का धिमान्त टूटने लगा और बहुसंता एवं जीवता परिलक्षित होने लगे । इस प्रकार व्यक्तिवाद ने उन्नीसवीं सताब्दी के अन्तिम वर्षों में संयुक्त परिवार और संस्कारक विवाह पर प्रहार करने प्रारम्भ कर दिए । इसका मुख्य कारण व्यक्तिनिष्ठ दृष्टिकोण था । अब व्यक्ति-निष्ठा समाज में व्याप्त हो गई तथा रोमांटिक विचारों के कारण संस्कार-क विवाह की विशिष्ट व्यक्तियों के सम्मिलन में परिवर्तित हो गया । अब व्यक्ति स्वातंत्र्य के हित में मुक्त प्रेम और प्रेम विवाह को विचारधारा स्थायी रूप से प्रस्थापित हो गई । संयुक्त परिवार और संस्कारक विवाह पर व्यक्तिनिष्ठ प्रवृत्तियों ने बाहुमण कर दिया, इसके विरोध में व्यक्ति-निष्ठ विरोधी प्रवृत्तियाँ संयुक्त परिवार को अहित नहीं मानने में सक्षम हो गई ।

१-

There is a kind of individualism also which has attacked the family and institution of marriage. At the beginning of the second half of the 19th cent. marriage began to be looked at far more from the individualistic point of view than from the social. Under the influence of Romantic ideas, even a theologian like Schleiermacher held for sometime that marriage could be dissolved if the two individuals united by it no longer suited each other. Free love, or a conception of marriage which is very near to it, has been extolled by a series of writers (e.g. the brothers Margueritte, Ellen Key), in the interests of individual liberty. It is far from being the case, however, that all the attacks against marriage and family have been inspired by individualistic tendencies, sometimes they are the result of an anti-individualistic tendency which regards the strongly constituted family as an obstacle to the omnipotence of a society which aims at quality.

-Encyclopaedia of Religion and Ethics Vol. VII pp 221-22

बाधुनिक मनोविज्ञान में शान्तिकारी परिवर्तन सिमप्ले प्रयाग और युग के वर्गीकरण तथा परीक्षणों की व्याख्या के फलस्वरूप हुए। प्रयाग ने व्यक्ति के व्यक्तित्व और मन को विश्लेषित कर नवीन व्याख्या की। बीसवीं शताब्दी में वैज्ञानिक मन सम्बन्धी वर्गीकरणों ने धूम मचा दी। प्रयाग ने स्वयं सिद्धान्त और दक्षिण काम वृत्ति की व्याख्या की। उन्ने मानसिक दीर्घत्व का प्रमुख कारण काम वृत्ति माना किन्तु कारण व्यक्तिवाद समाज, साहित्य, मनोविज्ञान वादि में व्यक्ति की विशिष्टता पर विचार करने लगा।

बाधुनिक व्यक्तिवाद में निरन्तर वैचारिक शान्ति होती रही। इस परिवर्तन का मुख्य कारण वार्तिक, राजनीतिक, सामाजिक और वार्तिक है। धर्म रीति: रीति: राज्य तथा नवीन सामाजिक नियमों में रूढ़ गया। जब वर्गशास्त्र और राजनीति के विद्वान् व्यक्तिवाद की विविध स्वरूप देने लगे। वर्गशास्त्र के क्षेत्र में 'वर्गशास्त्र ज्ञानापी' के जन्मदाता हेनरि स्पिय (सन् १७२३-१७९० ई०) हुए, जिन्होंने विनियम के सिद्धान्त का विकास किया। यह वार्तिक व्यापार में राज्य के हस्तक्षेप के विरोधी थे क्योंकि स्वतन्त्र विनियम में रुकावट होती थी। उनके मतानुसार प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थी का पुत्र है तथा नियति उन स्वार्थी का संयोग किसी बहुसंख्य शक्ति द्वारा करती है ताकि स्वार्थी व्यक्ति संघर्षरत न हो जायें। इसलिए राज्य और समाज किसी कृत्रिम संस्थाओं की वार्तिक आधार में व्यवधान नहीं डालना चाहिए। उनकी 'रिक्तों की नैतिक सम्मति' कक्षा 'नेतृत्व वास्तविकिती वाव कष्टरेस्ट' कहा और इसे प्रजावाद के विकास में उद्योग प्राप्त हुए। कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों के प्रसार के कारण रीतियों में संघटन करने लगे और 'मिल्ड्रेड' तथा मजदूर संघों

का निर्माण होने लगा । तब : राज्य वार्षिक व्यापार में हस्तक्षेप करने लगा और स्वतन्त्र विनियम के सिद्धान्त में बहुत बाधें मिलीं वार्षिक व्यक्तिवादी विचारधारा का प्रसार कम हो गया । तब भी एकता भाव और प्रसार की व्यापक रूप से समाय की वास्तविकता रहता रहा । उस समय के समाय और संस्कृति में व्यक्तिनिष्ठ विचारों का भाव कम गया जिसकी कि मार्क्सवादी विचारधारा ने व्यक्तत्व किया । इस तरह व्यक्तिवाद ने अधिकतर परम्परागत दृष्टिकोणों की उत्पत्ति किया कि वे समानता के गुणों के विरोध में असमानता की वृद्धि करें । इस प्रकार व्यक्तिनिष्ठ सत्य असमानता के गुणों की स्थापना है।

कार्ल मार्क्स ने ऐसे व्यक्तिवादी सिद्धान्तों की पूर्णतया समाप्ति करने की मांग की । यद्यपि, उसकी यह मांग श्रुति-कारी थी और समाजवाद उन्नीसवीं शती में अधिक विकसित नहीं हुआ था । परन्तु बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ होते ही स्वतन्त्र विनियम और

Moreover, pure individualism, involving the institution of inheritance tends to increase the tendency toward inequality inherent in the fact of unequal abilities, In this and other ways the individualistic fact of unequal abilities. In this and other ways the individualistic society of the 19th century become more and more unsatisfactory to increasing numbers of people.

Karl Marx demanded a radical departure from individualistic principles. Although his call for revolution and socialism did not succeed in the 19th century.

-Encyclopaedia Britannica, Vol. 12 p 163

वार्त्तिक व्यापार पर राज्य द्वारा प्रतिबन्ध लगा दिए गए जिससे कारण वार्त्तिक व्यापार के क्षेत्र में व्यक्तिवाद का प्रसार कम होने लगा। औद्योगिक-वाद के प्रसार के प्रतिकूलन में मजदूरों द्वारा निर्मित संघ कम राजनैतिक वातावरण को उत्प्रेक्षित करने लगे, इसके मार्क्सवादी विचारधारा के प्रसार में कथ्यधिक वृद्धि हुई। इस में सन् १९१७ ई० में क्रान्ति हुई और ब्राह्मणहीन समाज के समाजवादी सरकार की स्थापना हुई। कम मार्क्सवाद राजनैतिक स्वल्प ग्रहण करने लगा जिससे व्यक्तिवाद के प्रसार में बाधा उत्पन्न होने लगी।

वार्त्तिक व्यक्तिवाद के उदय और प्रसार में कुछ, वार्त्तिक व्यवस्था, मानव के प्रति उदार दृष्टिकोण एवं न्यायीचित्त भाग ने कथ्यधिक लक्षित की इसके फलस्वरूप व्यक्ति, व्यक्ति-स्वातंत्र्य के प्रति अधिक जागरूक हो गया। प्राचीन व्यक्तिवाद के दोषों का परिष्कार व्यक्ति-स्वातंत्र्य, न्याय, सद्व्यय एवं मानवीय बन्धनों के प्रति विद्रोह के संकल्प के रूप में परिवर्तित हो गया। इस परिवर्तन के महत्वपूर्ण कारणों पर विचार करते समय व्यक्तिवाद पर राजनैतिक विचारधारा के प्रभाव का अध्ययन समीचीन है। इस दृष्टि से 'व्यक्तिवाद की वात्सा' 'वान स्टुवर्ट मिल की उत्तर कृति 'वान सिम्टी' और 'रिप्रेजेंटेटिव गवर्नमेण्ट' का विवेकन अध्ययन आवश्यक है। स्टुवर्ट मिल ने राज्य के वादसंबाधी ढाँचे पर प्रहार किया और मानव के सुख एवं समृद्धि पर विशेष धन दिया। उनके अनुसार 'व्यक्ति के निजी कार्यों में राज्य के न्यूनतम अवरोध हों तथा राज्य व्यक्ति की सुखी, समृद्धि रखने के बाधन हटाने का कार्य करे, न कि उनके पथ में रुकावट डालने वाला हो'।

१- John Dewey- Individualism : Old and New p. 71

२- इष्टव्य- वशीधर विनायक - कल्पना - मार्च में प्रकाशित रामानन्द प्रसाद सिंह का वाद का व्यक्तिवाद तिस पृ० १८

विचारक मिस्र की यह धारणा वैचारिक
 भ्रान्ति का उद्गम है, उसकी 'वान सिवर्टी' नामक कृति विचारकत्व
 की सृष्टि का वाक्यांश है। उसके मतानुसार राज्य का कार्य व्यक्ति
 के सुख में निरन्तर वृद्धि करना है, न कि व्यक्ति की स्वतन्त्रता में बाधक
 बनना। विचारक मिस्र ने राज्य की सुरक्षा पर प्रहार किया और यह
 विचार रखा कि राज्य व्यक्ति पर तब तक नियन्त्रण न लगाये, जब तक
 कि यह अपने सदस्यों, सम्बन्धी व्यक्तियों पर कुपित बौद्ध नहीं बनता।
 यह विचार मानवतावादी दृष्टिकोण के अन्त्यन्त निष्ठ है। उस धरातल
 पर पहुँच कर व्यक्तिवाद वास्तुतः वादरणीय सिद्धान्त बन जाता है, जिसको
 उपेक्षा नहीं की जा सकती। ठीस वाधार पर आधारित होने के कारण
 व्यक्ति की राजनीतिक सम्पदा-वाक्यांशों से यह सिद्धान्त है।

यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति वास्तविक रूप से वराज्यता-
 वादी सिद्धान्तों के निष्ठवर्ती विचारधारा के रूप में देखा जा सकता है,
 न कि उसकी वराज्यतावादी कहा जाये।

द्विस्मरणी वाक्य किताबकी एष्ट शास्त्रा-
 ताबी में उस भ्रान्ति के संदर्भ में स्पष्ट कहा गया है कि 'यह कार्य व्यक्ति-
 वादी स्तर और प्रतिस्था के है जो कि वराज्यतावादी विचारों से उत्कर
 ज्ञानदार सरकार की समानता और स्वतन्त्रता की स्वीकृति की उद्घोषणा

१- अन्तः ५० १६

२- उपरिष्ठ ५० १६

3- These works remain the standard defence of individualism which differs from anarchism in recognizing the rightfulness of government to maintain order and to enforce equality of liberty.

- Dictionary of Philosophy and Psychology Vol. 1 p 530

कही है। व्यक्तिवाद समानता और स्वतन्त्रता के सिद्धान्तों के आधार के द्वारा ही मानवतावादी विचारधारा के निष्पत्ति है। यूरोपीय जगत् में सर्वोच्च स्तर के विचारों के कारण उसकी गति कुछ समय तक रुकी रही, तथापि स्वतन्त्रता और समानता के सिद्धान्तों की स्थापना के कारण व्यक्तिवाद का प्रसार होता रहा। राजनीतिक क्षेत्र में स्वतन्त्रता और समानता के वाक्य को भीति वाक्य भी महत्वपूर्ण है।

व्यक्तिवाद का आर्थिक क्षेत्र में पराभव हुआ इसके अंदर में तीन बातों की और ध्यान देना आवश्यक है :

- (क) प्रत्येक व्यक्ति समान रूप से दूरदर्शी है तथा अपनी आवश्यकताओं को जानने को उसमें समान योग्यता है।
- (ख) प्रत्येक व्यक्ति अपनी इच्छित वस्तुओं की प्राप्ति के लिए सामर्थ्यवान् है, तथा अपनी उच्छा के लिए स्वतन्त्र है।
- (ग) समस्त व्यक्ति की आवश्यकताओं से उत्पन्न समता और संतुष्टि समाज की भलाई में कोई भेद नहीं है।^१

उपरिलिखित वर्णितियाँ तथा समाजवाद के प्रसार के कारण व्यक्तिवाद की गति सीधे होने लगी। बोखरी तानाशूरी में ही नीतिक उत्थ- पुस्त, महारुद्ध, भोजन उद्योग, वैज्ञानिक व्यवस्थाएँ

के कारण महत्वपूर्ण रही ।

जब राज्य के कार्यों को जन-जीवन के विभिन्न क्रिया-कलाप प्रभावित करने लगे । राज्य से जलग जैक प्रकार के आर्थिक नैतिक कार्यों में संलग्न संस्थाएँ सामने आयीं । जिन्होंने अपनी-अपनी कार्य और विकास की दृष्टि से यह सिद्ध कर दिया कि राज्य ही व्यक्ति के कल्याण की संस्था नहीं है, बल्कि राज्य से जलग भी दूसरी संस्थाएँ व्यक्ति स्थित और उसके कल्याण में श्रेष्ठ कार्य कर सकती हैं।

वास्तविक युग में महायुद्धों का विस्तार,

युद्ध की विनोदिका, सरकारी कार्य व्यापार और राज्य की फासिट-वादो एवं नाबोवादो नीतियों के विरोध में व्यक्ति-स्वातंत्र्य की भावना उमरने लगी । फासीवाद तथा नाबोवाद के कल्याणकार, निरुद्धता और उत्प्रेरक ने यह प्रमाणित कर दिया कि राज्य व्यक्ति का पोषण और उत्प्रेरक करने का महत्वपूर्ण साधन है। जब राज्य अपनी अधिकारों तथा अधिकारियों की संस्था में वृद्धि और व्यक्ति-स्वातंत्र्य के उपकरण की धिनी नीतियों के कारण कटुता उत्पन्न करने लगा । इसलिये व्यक्ति राज्य के निरुद्ध स्वल्प के विरोध में विद्रोह करने लगा । व्यक्ति युद्धकाल के भयानक सणों और विधियों से शासन के प्रतिवर्तित हो उठा, इसका प्रभाव उस पर मनोवैज्ञानिक रूप से पड़ा । व्यक्ति ने जब यह अनुभव किया कि मोक्ष और समुदाय के पूर्णतापूर्ण नारे और निर्णय उसको गुंता और पैदा करता रहे हैं। आः वह मोक्ष एवं समुदाय से अलग होकर वैयक्तिक स्वा-धीनता की ओर झुका हुआ । बीसवीं शताब्दी में समाचार-पत्र, पत्रिकाएँ, रेडियो आदि के कारण जन मत एवं बहुमत निर्मित करने शासन स्थापित

दिये जाने लगे किन्तु बहुमत की प्रभुता अत्यन्त व्यक्तिओं का शोषण भी करे लगे। इसलिए यह आवश्यक हो गया कि मोक्ष तथा समुदाय के कल्याण और शोषण से व्यक्ति-स्वातन्त्र्य को रक्षा की जा सके और व्यक्ति अपना स्वतन्त्र विकास कर सके। आधुनिक व्यक्तिवाद की सभी अधिक प्रख्यात नामों रूसि के 'दो ग्रेट बुक्स' से प्राप्त हुए। उनके मतानुसार 'राज्य शासन कर्म का एक टुकड़ा भर है, जिसका अन्त आवश्यक और आवश्यकताहीन है। उस महान् विचार के अनुसार हमें अन्तर्राष्ट्रीय समान की विस्तृत कार्य में विस्तार ही जाना पड़ेगा।'

नामों रूसि ने मार्क्स के वर्ग-विहीन समाज के उपरान्त राज्यहीन समाज को कल्पना की। उसके अनुसार व्यक्ति के अपना सम्पूर्ण और बागल होने पर वर्गहीन समाज के उपरान्त राज्यहीन समाज विकसित होगा। उस समय राज्य को कोई आवश्यकता नहीं रहने लगे और व्यक्ति राज्याविहीन समाज में स्वतन्त्र तथा समान शक्ति में जीवन यापन करेगा। राज्य विहीन समाज अख्योग-समितियों के कार्य व्यापार द्वारा संवाहित होगा जिस पर 'गिल्ड सोशलिज्म' का प्रभाव होगा।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आधुनिक व्यक्तिवाद स्वतन्त्रता, समानता तथा अख्योग-समितियों कीबीर उन्मुख है, जिसमें व्यक्ति स्वतन्त्रतापूर्वक विकास कर सके। प्राचीन व्यक्तिवाद व्यक्ति को निजी स्वार्थ के प्रति अधिक प्रेरित करता था परन्तु आधुनिक व्यक्तिवाद व्यक्ति को अख्योग-समितियों द्वारा कार्य करने की प्रोत्साहित करता है।

विचार प्रारम्भ वैश्व वास्तविक प्रतिनिधित्व को माँग करके जनतात्मिक प्रणाली को सिद्ध प्रदान करती है। वास्तव में संसदात्मक राज्य प्रणाली सर्वश्रेष्ठ नहीं ही पाती क्योंकि उसमें बड़े दोष उत्पन्न हो जाते हैं। यद्यपि कुछ सम्प्रदायी बुद्धिवादी- नारे बाबू, प्रचार-बाबू, जहाल्लू आदि प्रजातांत्रिक वास्तव में कुरीतियाँ फैलाती हैं। अमेरिका, भारत, पाकिस्तान आदि देशों में चुनाव को लेकर बड़े झगड़े काफ़ी हुए हैं। अभी अमेरिका में 'निस्सन्न काण्ड' वहाँ को सरकार उलटने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा चुका है।

विचार प्रारम्भ वैश्व चुनाव की कुरीतियों से बचने के चुनाव प्रस्तुत करती है। वह जनियन्त्रित बहुमत की बुद्धिवादी से व्यक्ति की रक्षा करने के उपाय बताती है। वे भीड़ तथा समूह द्वारा किये गए क्रियाचार को राज्य के क्रियाचार से अधिक नकार मानती है, जिससे कि व्यक्ति भीड़ और समुदाय के मुहतापूर्ण सामूहिक निर्णयों से बच सके। हमें ज्ञात होता है कि व्यक्तिवाद दार्शनिक विचारधारा से राजनीतिक विचारधारा में किस प्रकार परिवर्तित होता आया गया। आज के व्यक्तिवाद पर सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक प्रभाव अधिक हैं। आज भी व्यक्तिवाद का केन्द्र व्यक्ति है। व्यक्ति के समूह की राजनीतिक कार्यो को नकार माना गया है, क्योंकि एक व्यक्ति विश्व पर में एक ही समय उपस्थित नहीं हो सकता और न अभी घटनाओं का सुन्धार या संवाकनकर्ता बन सकता है। यद्यपि व्यक्तियों का समूह या समुदाय विविध स्थानों पर एक साथ में विविध कार्य कर सकता है। संसदात्मक चुनाव-दण्ड में व्यक्तियों के समूह या समुदाय अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए

है। बाब इसी मान्यता के अनुसार व्यक्ति नहीं, बल्कि व्यक्ति से निर्मित गिरीह ही राजनीतिक कार्यों के लिए महत्वपूर्ण हकाई है। इस निश्चय के लिए प्राचीन व्यक्तिवाद की वाज्य होना पड़ा है, क्योंकि व्यक्ति की विभिन्न शक्तियों के शोचण से कानि में यह कलकल छिद हुआ था। वे शोचक शक्तियाँ हैं- निजी स्वतन्त्रों पर बाधारि कार्मिक स्वार्थ और बहुमत शासन के रूप में अभिव्यक्त होने वाला अमृत। काः गिरीह का संगठन सर्वप्रथम ही रक्षा की दृष्टि से किया जाता है, पुनः सदस्यों के सर्वमान्य विचारों की प्रस्ता की दृष्टि से भी उसका उपयोग किया जाता है। जोसिह गिरीह के पक्ष में यह कहा जा सकता है कि उनके मान्य से न केवल व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास संभव हो सकता है, बल्कि व्यक्तित्व की स्वाधीनता के लिए यही एक मात्र एकल मान्यता है।

काः बाधनिक व्यक्तिवाद व्यक्ति-स्वातंत्र्य हेतु व्यक्ति का राज्य और विविध मान्यताओं के विरोध में लड़ा गया महाभारत है। वास्तव में, व्यक्ति रुढ़ियों, मान्यताओं, राज्य के बन्धनों बादि से सर्व संघर्ष करता रहा है और व्यक्ति-व्यक्तित्व, व्यक्ति-स्वातंत्र्य, वैयक्तिक-दायित्व बादि के प्रति उत्तम क्रियमाण रहा है। बाब व्यक्तिवाद साहित्य, कला, राजनीति, मनोविज्ञान, समाजविज्ञान, व्यक्तित्व में अपना दीव बना चुका है और विविध प्रकार से प्रतिफलित हो रहा है। व्यक्तिवाद की नरम परिणति राज्य विहीन समाज की स्थापना करता है जो मानव के वर्गविहीन समाज केउपरान्त ही निर्मित हो सकने जिसमें व्यक्ति कम से कम नियमों द्वारा बाधित होगा और अपना स्वतन्त्र विकास कर सकेगा। तब व्यक्तिवाद की कोई नकारात्मक दर्शन या फलानवादी विचारों का समूह नहीं रहेगा।

(घ) व्यक्तिवाद की परिभाषा और स्वरूप

(१) पारम्परिक व्यक्तिवाद

व्यक्तिवाद के स्वरूप के सम्बन्ध में विद्वानों के विभिन्न मत प्राप्त होते हैं। यद्यपि व्यक्तिवाद की सर्वमान्य परिभाषा करना कठिन है, तब भी लोक विद्वानों ने व्यक्तिवाद के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण विचार प्रकट किये हैं। व्यक्तिवाद पारम्परिक दर्शन है। आः हम पुराने पारम्परिक मनोविज्ञानों के व्यक्तिवाद प्रस्तुत करते हैं।

व्यक्तिवाद एक परिपक्व एवं शान्त भावना है, जो समाज के प्रत्येक सदस्य को अपनी साधियों के समुह से अपनी को विलग कर लेने तथा अपनी परिवार एवं मित्रों से पूर्ण रूप से अलग हो जाने के लिए प्रेरित करता है, जिससे वह प्रकार अपना निजी एक छोटा सा लोहा बना देने के बाद वह स्वच्छात्सर्गक समाज को उसी के ऊपर छोड़ देता है।

विद्वान् बर्टन ने व्यक्तिवाद के सम्बन्ध में निम्नलिखित विचार प्रस्तुत किए हैं :

“ व्यक्तिवाद एक सीमित मनोवृत्ति है, जो अस्मृत , सामाजिक बन्ध प्रेरणाओं से या एक विशेष सामाजिक स्थिति के प्रतिक्रिया के रूप में हमारे व्यक्तित्व में उभित हो जाती है,

१- क्लेविसेड डि टोक्वोस, अमेरिका में प्रजातंत्र (हिन्दी संस्करण)

जीर हमें व्यक्तिगत स्वार्थी जीर धोपायी की जीर उत्पन्न करती है।^१

" Self centred feelings or conduct as a principle, a mode of life in which the individual pursues his own ends or follows out his own ideas, free and independent individual action or thought ; egoism..... Individualism is a novel expression to which a novel idea has given birth.....; Individualism is a nature and class feeling which disposes each member of the community to sever himself from the mass of his fellow- Creatures and to draw apart with his family and friends.'¹

" Socialism and Individualism are merely two contrary general principles, ideas, or methods, which may be employed to regulate the constitution of economical society. 1840 Wesscott in Guardian 8 at 1581/I Individualism regards humanity as made up of disconnected or warring atoms; Socialism regards it as an organic whole members mutually interdependent."²

" The Individualism which is aimed at by architects."³

1. The Oxford ~~Standard~~ English Dictionary, Vol. II p 224

2. Ibid p 224

3. Ibid p 224

" Individualism is a term some what similar in meaning to liberalism. Both concepts place high value on the freedom of the individual. While liberalism , changing in connotation with the times, has come to include concepts of freedom that are compatible with either governmental control conjoint activity, individualism stresses the self directed self-contained and comparatively understrained individual or ego.¹"

" As a philosophy, individualism involves a value of system, a theory of human nature, a general political economic, social and religious arrangements. The value system may be described in terms of three proposition all values are man, centred, that is they are experienced (but not necessarily created) by human beings; the individual is an end in himself is of Supreme value, society being only a means to individuals are in some sense morally equal, this equality being best expressed by the proposition that no one should ever be treated solely as a means to the well-being of another person.²"

" Individualism is a modern word. The

1. Encyclopaedia Britannica Vol. XII p 162

2. Ibid p 162

Oxford Dictionary finds the first instance of its use in Henry Reene's translation of de Tocqueville's *De la democratie en Amerique*, in 1900. Reene in a note speaks as appologizes for adopting the term directly from the French because he knows " no English word exactly equivalent to the expression." De Tocqueville explains the meaning of the term thus, " Individualism is a novel expression , to which a novel idea has given birth. Our fathers were only acquainted with egotism. Egotism is a passionate and exaggerated love of self, which leads a man to connect everything with his own person and to prefer himself to everything in the world. Individualism is mature and calm feeling, which disposes each member of the community to sever himself from the mass of his family and friends so that, after he has thus formed a little circle of his own, he willingly leavens society at large to himself..... Individualism is of democratic origin, and it threatens to spread in the same ratio as the equality of conditions. " ¹

" The term ' Individualism ' may be taken either in a genetic or in a normative sense. In the former

sense it denotes the systems which appear in religious and political society and their laws, as well as in the great manifestations of the human mind, creations of isolated or associated individuals; in the latter it denotes a principle according to which the integral and free development of the individual ought to be the aim of social life. ¹ "

" The individual must be free , able to develop to the utmost of his ability, employing all opportunities that confront him for his own and his family's welfare; otherwise he is merely a cog in a machine. The society must be stable, assured against violent upheaval and revolution, otherwise it is nothing but a temporary truce with chaos. But freedom for the individual must never degenerate into the brutish struggle for survival that we call barbarism. Neither must the stability of society ever degenerate into the exchained sermitude of the masses that we call statism. "2

1. Encyclopaedia of Religion and Ethics Vol. VII

p 218

2. The New Dictionary of thoughts : A Cyclopaedia of
quotations p 301

समाज की अपेक्षा व्यक्ति अपने हित एवं स्वार्थ के प्रति रुका रहता है। यह समस्त व्यक्ति विद्वानों द्वारा व्यक्तिवाद के सन्दर्भ में चिन्तन की प्रक्रिया के परिणाम है। व्यक्तिवाद में साम्यवाद और समुदायवाद का विरोध प्राप्त होता है। अतः व्यक्तिवाद एक चिन्तन है जो कि दर्शन, राजनीति, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, मनो-विज्ञान एवं साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

(२) भारतीय व्यक्तिवाद

व्यक्तिवाद के सन्दर्भ में भारतीय विद्वानों ने भी अपने व्यक्तिवाद व्यक्त किए हैं। वास्तुतः व्यक्तिवाद एक पारम्परिक दर्शन है और पारम्परिक संस्कृति के श्रोत में उसका विकास हुआ है। अतः व्यक्तिवाद के सन्दर्भ में पारम्परिक विद्वानों के व्यक्तिवाद समीचीन ही समझे हैं, तथापि भारतीय विद्वानों का अपना चिन्तन एवं व्यक्तिवाद की ओर रुका प्रमाण है कि उन्होंने व्यक्तिवाद की गम्भीर रूप से प्रवृत्ति करने का प्रयास किया है। भारतीय विद्वानों ने प्रायः पारम्परिक विद्वानों का अनुकरण किया है या उसका अन्वयार्ण कर दिया है। यद्यपि कुछ ऐसे मनोविद्वानों भी हैं जिन्होंने व्यक्तिवाद के सन्दर्भ में नूतन दिशाएँ भी उद्घाटित की हैं। अतएव कुछ भारतीय मनोविद्वानों के व्यक्तिवाद निम्न रूप में संकलित हैं। यथा-

“ व्यक्तिवाद का अर्थ है- व्यक्ति के अबाध एवं निरपेक्ष अस्तित्व की स्वीकृति, उसके अर्थ की प्रतिष्ठा तथा

समाज की तुलना में व्यक्ति की स्वतन्त्र छुट्टा की स्थापना । व्यक्ति-वादो विन्तन में व्यक्ति की समाज का अनुसर नहीं माना गया वरु व्यक्ति पर लादे गये विधीय अनुक्ति उपने गये हैं।^१

व्यक्ति की अपनी विराटता का बोध हो जाये- यही व्यक्तिवाद की बरम परिणति है। किन्तु यही व्यक्ति-वाद जब जहाँ के गहरे पल्लव में फँस जाता है तो उसका विस्तार सम्भव हो ही जाता है।^२

वास्तव में व्यक्तिवादो जीवन दर्शन अपनी विश्वास के बरमोत्कर्ष पर व्यक्ति की उछ स्तर तक पहुँचा देता है, जहाँ उसका वह प्रवृत्त हो जाता है और वह समाज के प्रति विद्रोह की भावना निर्मित कर देता है।^३

परिणाम में व्यक्तिवाद व्यक्ति की हर प्रकार की स्वाधीनता देता है, व्यक्ति किसी से प्रतिबद्ध नहीं है- न ईश्वर से, न देश से, न समाज से और न ही अपनी परिवार से।^४

व्यक्तिवाद वाक्तावरक और संस्कार ग्रस्त

१- डा० सुखदेव शुक्ल- हिन्दी उपन्यास का विकास और नैतिकता ५०

२०७-२०८

२- रैत सिन्हा - प्रयोगवाद और जीवन ५० ५२

३- डा० सुरेश सिन्हा- हिन्दी उपन्यास उद्भव और विकास ५०३६७

४- मंगु सिन्हा- स्वार्थव्योत्तर हिन्दी और गुजराती नयी कविता

५० १०१

विशेष है, जहाँ व्यक्ति समाज समित्त काटने के रूप में प्रकटित न होकर वह एक व्यक्ति के रूप में व्यक्त है।

साधारण रूप में, स्वार्थ के समर्थन की, कच्चा विशिष्ट समित्त जाने वाली व्यक्तियों की महत्ता कोकार करने की प्रवृत्ति, जहाँ में, प्रत्येक व्यक्ति की विशिष्ट ठहराने की प्रवृत्ति।

यह शब्द श्रीबो के 'इष्टि विभुवलिज्म' का पर्याय है, जिसका सर्वप्रथम प्रयोग 'वाल्सफीड शब्दकोश' के सुधारकारी रीन्स द्वारा श्रीबो में सुचित ही टावली की एक पुस्तक में मिलता है। यही तो यह शब्द मुक्तः फ्रेंच भाषा का है, किन्तु हेनरी रीन्स ने कई कारणों से इसका श्रीबो में प्रयोग किया है। हेनरी रीन्स ने इस प्रयोग के किसी भी कारण कायि है, उनके केवल उस प्रयोग के बीजित्य का ही ज्ञान नहीं होता, प्रत्युत वह शब्द की भाव गत विभिन्नताओं का भी फा पकता है। वह शब्द के पहले रूप में 'जीटिज्म' शब्द प्रयुक्त होता था, किन्तु वह शब्द जिस मानसिक दृष्टिकोण और जिन नैतिक प्रतिमानों का प्रतीक था, 'इष्टि विभुवलिज्म' शब्द उनके वही अधिक संक्षिप्त मानसिक दृष्टिकोण और वही अधिक विस्तृत नैतिक मानदण्डों का प्रतीक है। 'जीटिज्म' के अनुसार हर एक व्यक्ति अपनी प्रत्येक कार्य का लक्ष्य है। उसका सम्पूर्ण स्नेह, समस्त लगाव वक्तु के बीजित सम्पर्क से ही है। जति स्वार्थमयी प्रवृत्तियाँ ही उसकी प्रेरणाशक्ति है। परन्तु 'इष्टि विभुवलिज्म' उस मानसिक दृष्टिकोण का सूचक है, जिसके

१- डा० श्यामसुन्दर मिश्र- अस्तित्ववाद और द्वितीय समरीत्तर हिन्दी साहित्य पृ० १००

२- राम प्रसाद मिश्रा- हिन्दी विश्वकोश- खण्ड ११ पृ० १६७

कुछाए व्यक्ति समष्टि से पारंगत तो कर लेता है, किन्तु वह भी स्वार्थवादी प्रवृत्तियों के कारण में अपनी कर्म के प्रति सम्पूर्ण स्नेह और लगाव नहीं रखता। कुछ जगहों में व्यक्तिवाद का भावात्मक आधार अन्तर्निहित होता है।

व्यक्तिवाद समाज के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण को स्थापना है। समाज सामयिक अस्तित्व नहीं है, फलस्वरूप स्वतन्त्र व्यक्तियों का योग है। अतः समष्टि व्यक्ति को व्यक्ति पर, उसके अधिकारों और स्वतन्त्रताओं पर उस प्रयोग का नैतिक अधिकार नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी क्षमताओं और स्वार्थों को किना कम्भी तरह से समझ सकता है उतना समाज क्वापि नहीं। अतः तर्क की दृष्टि से सामाजिक बन्धन और परम्पराएँ, नीति और विचार, सामुहिक संस्थाएँ और मान्यताएँ निरक्षरता के साथ व्यक्ति पर शासन नहीं कर सकती। व्यक्तिगत व्यापारों का राज्य व्यक्ति का हित है और उसका एक मात्र ज्ञाता व्यक्ति है।

यह विचारधारा जो सामान्य (इनिक्वैलिटी) की तुलना में विषयों (पर्टीकुलरिटी) को प्राधान्य देती है। नीतिशास्त्र में, यह मानने की प्रवृत्ति कि नैतिक मानकों का मुख्य व्यक्तिपरक है, सर्वमान्य या निरपेक्ष नहीं। समाजवाद और राजनीति में, यह सिद्धान्त, किन्हीं कुछाए व्यक्ति का मुख्य प्रापक है, समाज और राज्य का नीति।

१- डा० प्रोफेसर वर्मा, हिन्दी साहित्यकीर्तन भाग १ पृ० ७४

२- उपरिष्ठ पृ० ७४

३- डा० नरेन्द्र- मानविकी पारिभाषिक कोश, वर्ग सप्प १० १०१

यह व्यक्तिवाद व्यक्ति की विराटता की बोध देता है जिसमें तत्कालीन सामाजिक प्रवृत्तियों का भी समाहार हो जाता है। यह 'वर्ग प्रताप्ति' का ही विकसित रूप है जिसमें समाज की व्यक्ति की सीमाओं में संघर्ष नहीं, सामंजस्य दीप्त पड़ता है और 'स्व' भी 'पर' की भावना से प्रेरित रहता है।

यह विचारधारा व्यक्ति को राज्य की तुलना में अधिक महत्व देती है। विलहेल्म हम्बोल्ट का यह विचार है कि राज्य की कम से कम शासन करना चाहिए क्योंकि इसी से उस राज्य में रहने वाले व्यक्तियों के व्यक्तित्व का सम्यक् रूप से विकास हो सकता है। फिल्लर नामक जर्मन व्यक्तिवादों का भी यही मत है कि व्यक्तित्व का प्रसार स्वस्थ होगा चाहिए। स्वयं भी यही कहता था कि जो अधिक महान् कार्य होते हैं वे बादमियों के समुदाय के द्वारा न होकर एक एक व्यक्ति के द्वारा ही होते हैं। आख्या ही समाज की महान् शक्तियाँ हैं। वेपि कीर स्वयं वादि को भी यही धारणा थी कि विभिन्न जातियों की उन्नति केनाओं से नहीं बल्कि किसी महान् व्यक्तित्व के माध्यम से होकर है।^१

बाज का व्यक्तिवाद जिस पर अ विभिन्न धूर्तों का प्रभाव स्पष्ट है, फल के व्यक्तिवाद से बहुत कुछ भिन्न है। बाज इसकी मान्यता के अनुसार व्यक्ति नहीं, वरन् व्यक्ति से निर्मित

१- डा० प्रदीप चिन्हा - आध्यात्मिक कथियों का सांस्कृतिक दृष्टिकोण

२- हिन्दी साहित्य का नूतन इतिहास- अष्टम भाग पृ० ५

गिरीह ही राजनीतिक कार्यों के लिए महत्वपूर्ण कारक है। वह निश्चय के लिए प्राचीन व्यक्तिवाद की बाध्य होना पड़ा है, क्योंकि व्यक्ति की विभिन्न शक्तियों के शोषण से बचने में यह अवकाश सिद्ध हुआ था। वे शोषक, शोषक शक्तियाँ हैं- निजी स्वतंत्रता पर बाधा है।
 बार्नि- स्वार्थ, और बहुमत शासन के रूप में अभिव्यक्त होने वाला जन-मत। अतः गिरीह का संगठन सर्वप्रथम तो रक्षा की दृष्टि से किया जाता है, पुनः सदस्यों के सामान्य विचारों के प्रवृत्ता को दृष्टि से भी इसका उपयोग किया जाता है। इसीलिए गिरीह के अन्त में यह कहा जा सकता है कि इसके माध्यम से न केवल व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास संभव हो सकता है, बल्कि व्यक्तित्व की स्वाधीनता के लिए यही समाधान सबसे गारंटी है।

व्यक्तिवाद में व्यक्ति अन्त समाजवादी का पुत्र होने के कारण सामाजिक बन्धनों, मान्यताओं एवं परम्पराओं से बंधी की अधिक स्वतन्त्र व्यक्तित्व के विकास की चाहत नहीं करता चाहता। वह समाज की स्वतंत्रता का ही अधिक ध्यान निर्भर होना चाहता है। वह सामाजिक पुनर्स्थापना एवं भारतीय विधि-विधानों की, जो उसकी मनः स्थिति में बाधक होते हैं, स्वीकृति नहीं प्रदान करता। वह अपने व्यक्तित्व पर राजकीय एवं शासकीय नियन्त्रण को नहीं सहन कर पाता। समाज में रहकर भी समाज के सामान्य प्राणियों की तुलना में वह अपने को श्रेष्ठ समझता है तथा अपने मनः स्वतंत्रता का प्रसार पूरी धरती पर

१- वीरोधर विचारकार - अन्तः, की ३, मार्च १९१४

सामान्य प्रवाद सिंह द्वारा लिखित - आज का व्यक्तिवाद है

देखा जा सकता है। पुराण वैधियों की वामिवात्म्यादी, मान्यताओं, नैतिकता एवं मर्यादा के अनुसृत व्यक्तिवादी की विद्रोही मानसिकता का तालमेल नहीं बैठता। क्योंकि शास्त्रीय एवं सामाजिक दबावों के कारण उसे अन्तर्मुखी बनना पड़ता है।

व्यक्तिवाद स्वच्छन्दतावादी शाक्तिय का मूल स्तम्भ कहा जा सकता है। व्यक्तिवादी-ज्ञान का प्रधान स्वर विद्रोह की भावना है और यह बहुभूत सामाजिक मान्यताओं के साथ ही शाक्तिय की शास्त्रीय मर्यादाओं तथा परिपक्व कथ्य शिल्प के स्तर पर घटित होता है।

व्यक्तिवाद प्रेमवादी समाज सम्बन्धों की बराकता की प्रतिनिधित्व करने वाली प्रवृत्ति है, जिसमें मनुष्य मनुष्य के बीच सामान्य सम्बन्ध दुर्बल की जगह शक्ति और मस्तिष्क ही जाती है।

व्यक्तिवाद एक प्रकार का मनोवैज्ञानिक परमाणुवाद है। प्रकृति के बीच की भाँति व्यक्तित्व की सामर्थ्य भी एक दूसरे से बहिर्गता है, जो कि एक दूसरे को स्थानात्मक कक्षा एक दूसरे के साथ लक्ष्य नहीं हो सकती।

१- डा० महेंद्र नाथ राय- नवजागरण और शायवाद पृ० १७१

२- उपरिक्त पृ० १७३, १७४

३- विषयान सिंह जीहान - शाक्तिय की समीक्षा पृ० ७

४- डा० रामानन्द तिवारी भास्तीनन्दन - सत्य किं सुन्दरम्

प्रथम भाग पृ० १७१

उपरिलिखित आधारणाओं को प्रस्तुत करने पर यह विदित होता है कि व्यक्तिवाद 'इण्डिविजुअलिज्म' शब्द का पर्याय है एवं व्यक्तिवाद 'पर्सनलिज्म' से अलग है। व्यक्तिवाद का प्राचीन समय में 'छोटीटिज्म' या कस्मवाद के नाम से परिचय प्राप्त था यद्यपि आज इसकी समाज, समुह, संस्था, धर्म नियम, रीतिरिवाज एवं मान्यताओं के विरोध के रूप में जाना जाता है। व्यक्तिवाद एक विरोध-पुस्तक या नकारात्मक दृष्टिकोण हो नहीं, बल्कि व्यक्ति (कारण) के महत्त्व के प्रति सतत जागरूक चिन्तन है। आधुनिक व्यक्तिवाद गुट निर्माण एवं विरोध के निर्माण के द्वारा स्वार्थ सिद्धि पर अधिक विश्वास करता है। व्यक्तिवाद का सबसे मुख्य एवं उदात्त तत्त्व व्यक्ति की स्वतन्त्रता के प्रति निष्ठा है। इसी कारण व्यक्तिवाद कैमरिका के प्रजातान्त्रिक पैर में निरन्तर प्रगति कर रहा है। अतः व्यक्तिवाद एक प्रजातान्त्रिक भावना है।

(३) व्यक्तिवाद के पैर

आधुनिक व्यक्तिवाद के सन्दर्भ में विचार करने पर यह ज्ञात होता है कि व्यक्तिवाद के स्वयं एवं चिन्तन में निरन्तर वृद्धि होती रही है। इस कारण आधुनिक व्यक्तिवाद का स्वयं एवं परिष्कृत रूप सामने आया है। व्यक्तिवाद को तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है। पहली व्यक्तिवाद की चार मार्गों में विभाजित किया जाता है, धार्मिक, वैज्ञानिक, आर्थिक एवं राजनैतिक। यद्यपि आज व्यक्तिवाद

का क्षेत्र बहुत है। अतएव व्यक्तिवाद के क्षेत्र में विकास हुआ और उसके भेद या स्वरूप में भी अभिवृद्धि हुई है। अब व्यक्तिवाद पाँच क्षेत्रों में व्याप्त है : (१) संस्कृति (२) विज्ञान (३) कलात्मक (४) राजनीति (५) मनोविज्ञान ।

डा० कलमद्र तिवारी का उक्त विभाजन आज अभीष्ट नहीं लगता, इसका कारण है कि हिन्दो साहित्य कोश भाग १ के व्यक्तिवाद प्रकरण में धार्मिक, वैज्ञानिक, आर्थिक एवं राजनीतिक ही व्यक्तिवाद के भेद एवं रूप निरूपित किये हैं। यद्यपि आज व्यक्तिवाद में अन्तर आया है। अतः आधुनिक व्यक्तिवाद का क्षेत्र छः भागों में विभाजित किया जा सकता है :

- १- धार्मिक
- २- संस्कृतिक
- ३- वैज्ञानिक
- ४- आर्थिक
- ५- राजनीतिक
- ६- मनोवैज्ञानिक

(क) धार्मिक व्यक्तिवाद

धार्मिक व्यक्तिवाद का विकास संसार धर्म के अन्तर्गत हुआ है। संसार धर्म के उपरान्त, प्रार्थनाओं एवं उद्देश्यों

१- डा० कलमद्र तिवारी - आधुनिक साहित्य को व्यक्तिवादो प्रेमिका

के मूल में व्यक्ति की महत्ता एवं व्यक्ति-स्वातन्त्र्य के तत्त्व विद्यमान हैं। ईसाई धर्म के अनुसार समस्त ईसाई धर्म के अनुयायी एक संघटित ईसाई समाज के सदस्य हैं और उन सदस्यों का एक गिरजाघर रोमन कैथोलिक चर्च के नाम से विख्यात है। ईसाई धर्म में प्रत्येक व्यक्ति की धार्मिक पूजा आदि की स्वतन्त्रता है जो कि व्यक्ति की उत्तम प्रतिमानों पर प्रतिष्ठित करता है।

यद्यपि पञ्चदश में रोमन कैथोलिक चर्च ने प्रथम तो समष्टिवादी तत्त्व को कार्य रूप दिया और बादमें व्यक्तिवादी चिन्तन को स्वीकार करके, धार्मिक सुतलों ने धार्मिक व्यक्तिवाद को फैलाया। यद्यपि हिन्दू धर्म एवं बौद्ध धर्म में भी व्यक्तिवादो बोधन दर्शन व्याप्त होता है, हिन्दू धर्म में अन्तःस्वाद एवं 'कस्मै क्वास्मि' के रूप में एवं आत्म उत्पत्ति तथा आत्म निरोध में प्राप्त होता है। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि धार्मिक व्यक्तिवाद प्रत्येक धर्म में किसी न किसी रूप में अवश्य ही विद्यमान रहा है।

(स) नैतिक व्यक्तिवाद

नैतिक व्यक्तिवाद तीन रूपों में प्राप्त होता है।

(क) राष्ट्रीय परम्पराओं एवं कदियों की आलोचना के रूप में।

१- डा० कस्मण्ड विवारी- आधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी प्रवृत्ति

१०० १६ के उपरान्त

(आ) व्यक्ति का समग्र जीवन नैतिकता से सम्बन्धित है ।

२- व्यक्ति के नैतिक जीवन के विकास की जीवन काष्ठ उद्देश्य रूप में । नैतिक व्यक्तिवाद की एक दीर्घ परम्परा जो कि प्राचीन व्यक्तिवाद के अन्तर्गत निम्न रूपों में प्राप्त होती है।

(ब) सोफिस्ट - इसमें व्यक्तिवाद का प्रथम रूप प्राप्त होता है। इसमें राष्ट्रीय परम्पराओं के अन्तर्गत में अपने अस्तित्व की व्याख्या किया ।

(ग) हाइडेटोज - इसमें व्यक्तिवाद का द्वितीय रूप प्राप्त होता है। इसमें नैतिकता के निर्माण के हेतु तर्क का प्रयोग किया । इसे परम्पराओं पर अधिक प्रभाव पड़ा ।

(घ) एपिक्यूरियन और स्टीक - इसमें व्यक्ति दुःख की अधिक महत्ता प्रदान की ।

- १- Moral Individualism is seen mainly in three forms;
- 1) The criticism of national customs and traditions;
 - 2) The view that moral obligation is born in the individual conscience and that the latter is also the heuristic principle of moral duties; and
 - 3) the view that the development of the individual is, not the only aim, at least one of the chief aims, of the moral life.

फ्रेडरिच में रक्काह और लुथर के विचारों में व्यक्तिवाद का नैतिक स्वल्प प्राप्त होता है, जो कि उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक तक दार्शनिक स्पष्ट हुआ था। बर्मेनी के स्वतंत्रता और ईश्वर का समय प्रतिनाशकियों का काल कहा जाता है। इसी कारण इस काल की क्रियाशुनिक व्यक्तिवादों में होती है। काण्ट, विल्हेम, कोर्किगाह आदि भी नैतिक व्यक्तिवादों विचारक के रूप में आते हैं। नोटी का व्यक्तिवाद शक्ति और लोको प्रकृत के विचारों के विरोध में उत्पन्न हुआ। नोटी ने एक विचार प्रस्तुत किया कि व्यक्तिवालों व्यक्ति को समस्त नोति और नियमों से मुक्त कर देना चाहिए। इस प्रकार उन्ने व्यक्तिमानव (सुपरमन) को कल्पना की।

साहित्यिक व्यक्तिवाद

साहित्यिक व्यक्तिवाद के उत्तमंत साहित्यिक व्यक्तिवाद प्रमुख है। आज विश्व साहित्य में साहित्यिक व्यक्तिवाद का क्रयधिक प्रभाव है। काव्य, नाटक, कहानी, उपन्यास, आलोचना आदि में साहित्यिक व्यक्तिवाद विभिन्न रूपों में प्राप्त होता है। साहित्य के कला एवं शिल्प में निरन्तर परिवर्तन आता रहा है। विभिन्न चिन्तन एवं द्रष्टियों का साहित्य पर प्रभाव पड़ता है। इसी कारण साहित्य में व्यक्तिवाद उपन्यास, कहानी, कविता एवं आलोचना में क्रयधिक

१-

" Nietzsche exempts the strangerman from all rule, despaises moral laws as an invention of the weak in or der to triumph over the strong, and sees in the superman the termines of human evolution.

विकसित हुआ है। साहित्य में व्यक्तिवाद स्वभाव, स्वभाव, व्यक्ति-
 व्यक्तवाद, व्यक्तिवाद, व्यक्तिवाद, व्यक्तिवाद, व्यक्तिवाद, व्यक्तिवाद,
 आदि के रूप में प्राप्त होता है। साहित्यिक व्यक्तिवाद व्यक्ति के
 तान्त्रिक संघर्ष, व्यक्ति के स्वातन्त्र्य, वैयक्तिक दायित्व, व्यक्ति
 निष्ठा एवं वैयक्तिक अनुभूतियों के माध्यम से अपने को प्रकट करता
 है। साहित्यिक व्यक्तिवाद को प्रभाव के मनोविश्लेषणवाद ने कथ्यक
 प्रभाव दिया है। काव्य में व्यक्तिवाद, भोगवाद, प्रभाववाद, मन-
 वाद, स्वभाव, स्वभाव, विद्रोह, कृष्ण, संवाद आदि का रूप धारण
 कर अभिव्यक्त हुआ है। आज साहित्यिक व्यक्तिवाद व्यक्ति को पूर्ण
 रूप से महत्व देता है।

वैज्ञानिक व्यक्तिवाद

वायुनिक युग के वागमय के साथ साथ
 वैज्ञानिक वागमयों में निरन्तर वृद्धि होती रही। विज्ञान के स्व-
 त्वादी एवं नूतन वस्तुओं के कारण रुढ़ियाँ, अन्ध-विश्वास तथा
 आदिश्यों को समाप्त होने लगी। अब व्यक्ति एवं समाज से कलम
 अपने स्वतन्त्र सत्ता एवं महत्ता के प्रति कटुता हुआ। अब व्यक्ति के
 शरीर का मन, का परिवेश आदि का विविध प्रकार से विश्लेषण करते
 अध्ययन किया जाने लगा। जैसे मनोविज्ञान का विकास हुआ। वैज्ञा-
 निक व्यक्तिवाद का मनोवैज्ञानिक व्यक्तिवाद एक विकसित रूप है जो
 आज अपना उत्तम अस्तित्व रखता है। इसका अध्ययन कति पृष्ठों में किया
 जायेगा।

वार्थिक व्यक्तिवाद

वार्थिक व्यक्तिवाद का प्रवर्तक जेम्स मिय

(सन् १७२२-१७६० ई०) को माना जाता है। उन्होंने विनियम के व्यक्तिवादी सिद्धान्त को प्रतिपादित किया एवं 'वैलफेअर कैलकुलस' को जन्म दिया। विनियम के व्यक्तिवादी सिद्धान्तके अनुसार किसी भी वार्थिक व्यापार में राज्य का हस्तक्षेप नहीं हो। इसे स्वतन्त्र विनियम में व्यवधान पड़ता है। उनका मत था कि राज्य की रणनीति को व्यापार में कोई कड़कन नहीं डालनी चाहिए। वस्तु व्यापार को मुक्त छोड़ देना चाहिए। यद्यपि उन्नीसवीं शताब्दी तक जारी जारी थी पति एवं पत्नी मजदूरी में संघर्ष हुए। अफिरों ने संघों की स्थापना की और अफिरों ने वार्थिक समानता को मांग की। अतः राज्य ने व्यापार पर कभी नियमों द्वारा संश्लेषित करने के नहीं की नियम बनाए।

वाज वार्थिकव्यक्तिवाद का स्वयं एवं व्यावहारिक रूप अमेरिका में प्राप्त होता है।

राजनैतिक व्यक्तिवाद

राजनैतिक व्यक्तिवाद की रूपों में प्राप्त होता है। एक तो उन्नीसवीं शताब्दी से पहले का जिसे प्राचीन व्यक्तिवाद कहते हैं, दूसरी उन्नीसवीं शताब्दी से आज तक का व्यक्तिवाद जो आधुनिक व्यक्तिवाद के नाम से प्रसिद्ध है। राजनैतिक व्यक्तिवाद के प्रवर्तकों में बेन्थम एवं जेम्स का नाम सर्वप्रथम स्मरणयोग्य होगा।

उन्नीसवीं शताब्दी में दो अन्य विद्वानों ने व्यक्तिवाद के विकास में विशेष योगदान दिया। ये प्रसिद्ध विद्वान् जॉन स्टुअर्ट मिल एवं हर्बर्ट स्पेंसर हैं। मिल ने दो पुस्तकें 'जॉन सिम्लेटों' एवं 'प्रिन्सिपल्स ऑफ़ गवर्नमेंट' व्यक्तिवाद के सन्दर्भ में लिखीं। उसने राज्य को एक नैतिक संस्था माना एवं व्यक्ति के हित का साधन राज्य ही कर सकता है। इसके उसके व्यक्ति-स्वातंत्र्य सम्बन्धी विचारों का फल बलता है। स्पेंसर ने हार्मिन के प्रसिद्ध सिद्धान्त विकासवाद समान्तर हो 'योग्य व्यक्ति ही जिसे' का प्रवर्तन किया। उसके राज्य में योग्य व्यक्ति हो रह सकते हैं। अतः यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि उन्नीसवीं शताब्दी तक के व्यक्तिवाद में व्यक्ति की स्वतन्त्रता, अधिकार, उसकी योग्यता एवं उसकी आवश्यकता की पूर्ति के सन्दर्भ में विचार नहीं कर सका। बाधनिक व्यक्तिवाद ने व्यक्ति की महत्ता एवं उसके स्वातंत्र्य की पूर्णतया उद्घोषणा की। इस सन्दर्भ में नार्मन रैणिल के ग्रंथ 'दि ग्रेट इलुजन' में विचार किया गया है। बाधनिक व्यक्तिवाद ने राज्य और व्यक्ति के सम्पर्कों को समाप्त करने का प्रयास किया।

मनोवैज्ञानिक व्यक्तिवाद

मनोवैज्ञानिक व्यक्तिवाद का अन्य वैज्ञानिक व्यक्तिवाद के द्रोह में हुवा है। मनोवैज्ञानिक व्यक्तिवाद के अन्तर्गत व्यक्ति को केन्द्र माना। परन्तु उसके अधिक उसके मन का विश्लेषण कर, उसकी प्रवृत्तियों एवं अन्तर्गत मन में कियी वस्तुओं की उद्घाटित किया। इस सन्दर्भ में फ्रायड, स्ट्रैटर एवं युंग मुख्य रूप से इसके प्रवर्तक हैं। व्यक्ति

आमान्य से असामान्य होता है तो उसका विश्लेषण कर उसकी दमि
लगावों के बारे में ज्ञात कर लिया जाता है। यद्यपि में मनोवैज्ञानिक
व्यक्तिवाद शास्त्र में, राजनीति में, समाजशास्त्र में प्रयुक्त होता है।
आज मनोवैज्ञानिक व्यक्तिवाद वाधुनिक शास्त्र के सम्बन्ध में प्रयोगकृत
किया जा रहा है।

व्यक्तिवाद की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

प्राचीन एवं वाधुनिक व्यक्तिवाद के सम्बन्ध
में उपरिस्थित दोनों अभिमत एवं आलोचनाएँ प्रस्तुत की गई हैं। उक्त
दोनों अभिमतों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने पर व्यक्तिवाद की कुछ
मुख्य प्रवृत्तियों के सम्बन्ध में विचार करना समीचीन है, यद्यपि यह प्रवृ-
त्तियाँ उक्त अभिमतों के आधार पर हैं, तब भी वाधुनिक एवं प्राचीन
व्यक्तिवाद के उन मुख्य विन्दुओं की उद्भासित करेंगी, जिन पर बिना
तब एक पक्ष हीकर विचार नहीं किया जा सका है।

व्यक्तिवाद की प्रमुख प्रवृत्तियों का विस्तृत
विविध निम्नलिखित है :

- व्यक्तिवाद, व्यक्ति के स्वार्थ की अधिक
परिचाय देता है।

- व्यक्तिवादो व्यक्ति समाज एवं समूह से
छाया करके स्वतन्त्रता एवं स्वाधीनता का जीवन जीने की प्रवृत्ति होता
है।

- व्यक्तिवाद कम्युनिज्म का स्वल्प है। अतः स्वयं व्यक्ति के कर्म के प्रति उत्तरक हीतो है।
- निराशावादी प्रवृत्ति व्यक्तिवादी विमर्शन के सम्मर्गत विकसित होती है।
- व्यक्ति की फलायन के प्रति वास्तव निरन्तर बढ़ती जाती है।
- स्वयं नकारात्मक, निषेधात्मक को स्वो-कृति है।
- व्यक्तिवादो व्यक्ति विद्रोह स्व विरोध के प्रति निरन्तर सम्मद रहता है।
- व्यक्ति में स्वयं नियम कर्म की प्रवृत्ति होती है।
- व्यक्ति (आदर्श) विशिष्ट होता है।
- धन, संस्था, संस्कार, धर्म से व्यक्ति को मुक्त रहता है।
- व्यक्तिवाद में प्राचीन अद्वितीय, परम्पराओं एवं कर्म विश्वासों के प्रति घोर विरोध की प्रवृत्ति पायी जाती है।
- व्यक्तिवाद व्यक्ति को अत्यधिक महत्ता प्रदान करता है।

(६०) साहित्य में व्यक्तित्व

(१) साहित्य में व्यक्ति

व्यक्ति विषय के सम्बन्ध प्राणिजों में सर्व श्रेष्ठ है। समाज और साहित्य में व्यक्ति का कर्तव्यिक महत्त्व है। व्यक्ति समाज एवं साहित्य का केन्द्र है। वह उनका निर्माता, रचनाक, प्रेरणकर्ता और प्रसारणकर्ता है। व्यक्ति की स्मार्त समाज में परिलक्षित होती है। व्यक्ति के द्वारा ही साहित्य का जन्म होता है। व्यक्ति साहित्य की और साहित्य व्यक्ति की चारों ओर से घेर हुए है। वह साहित्य का निर्माणकर्ता, पाठ, पाठक, प्रकाशक एवं उन्का उक्ति मुख्य निर्धारित करने वाला है। साहित्य व्यक्ति के द्वारा रचित है और उन्की कल्पना के कारण साहित्य में जन्म स्थापन हुए हैं। अतः व्यक्ति एवं साहित्य एक सिक्के के दो पक्ष हैं। जीवन में एक दूसरे की उपस्थिति अनिवार्य है। व्यक्ति भौतिक एवं वास्तविक उपयोगिताओं से सम्बन्ध है और उन्को शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के हेतु सर्वत्र सक्रम रहता है। यद्यपि वास्तविक उपयोगिता व्यक्ति की वाक्यात्मिक ज्ञान एवं साहित्य की ओर प्रेरित करती है। साहित्य व्यक्ति की एक स्मृति या कृत है जो व्यक्ति के रूप में प्रतिफलित होती है। साहित्य व्यक्ति के जीवन के विविध आयामों को स्थापित करता है।

साहित्य व्यक्ति के भाव और विचारों का प्रकाशन है। 'साहित्य' शब्द का वाक्य पर्याय 'लिटरेरी' है। यद्यपि

साहित्य = सक्ति + यत् प्रत्यय : 'साहित्य' का अर्थ है शब्द और अर्थ का सम्बन्ध वह भाव जहाँ 'साध होना' । प्राचीन काल में भारतवर्ष में 'साहित्य' शब्द को 'शास्त्र' के रूप में प्रयुक्त किया जाता रहा है और उसके उपरान्त साहित्य को 'काव्य' शब्द का अर्थ माना जाता रहा है।

संस्कृत के कवि भास्कर ने 'सम्बन्धी साहित्य-काव्यम्' । राजीश्वर ने 'सम्बन्धीययावत्सम्बन्धविधासाहित्यविधा' कहकर साहित्य की विस्तृत विवेचना की है। कुन्तल ने 'कौटिल्य की नीति-बोधित' में साहित्य की परिभाषा करते हुए लिखा है कि 'जिसमें शब्द और अर्थ, दोनों की सम्बन्धानुसार, परस्पर स्पर्धापूर्ण मनीषारिणी, स्थायी स्थिति हो, वह साहित्य है।

इस सम्बन्ध में साहित्यशास्त्र की काव्यशास्त्र के अर्थ में प्रयोग किया है। भारतीय साहित्य संप्रदाय का पदाधार है। पारम्परिक साहित्य में समाज, साहित्य और साहित्यकार के व्यक्तित्व पर लम्बी परम्परा प्राप्त होती है जिसमें कि साहित्य की सर्वाङ्गी एवं संपूर्ण की वैयक्तिक तथा मनोविष्ट प्रक्रिया के वर्णन माना है। अतः साहित्य व्यक्ति की चित्तवृत्तियाँ, वाक्यांशों की वसिष्ठ्यति है।

१- हिन्दो साहित्य की भाग १ वीं भाग धीरेन्द्र वर्मा पृ० ६२०

२- काव्यालंकार १ : २६

३- काव्यमीमांसा पृ० ५

४- साहित्यसमीक्षा : अभिलाषा लिता प्रकाशकाली ।

सम्बन्धानुसार मनीषारिण्यस्थितिः ॥

- कौटिल्यबोधित १:२०

साहित्य के अन्तर्गत 'व्यक्ति' का विमर्श एवं उसका महत्त्व एक कला विन्दु है और 'व्यक्तिवाद' की अभिव्यक्ति एक कला दिशा है। व्यक्ति और व्यक्तिवाद एक दूसरे के पुरुष हैं और व्यक्तिवाद का पुरुष व्यक्ति है। अतः व्यक्ति की साहित्य में अभिव्यक्ति नितान्त आवश्यक है। व्यक्ति का विमर्श विश्व के समस्त साहित्य में प्राप्त होता है। हिन्दी साहित्य का आदिकाल व्यक्ति की ओर रूप में चिन्तित कर चुका है, नवित काल एवं ऐतिहासिक में भी किसी न किसी रूप में व्यक्ति का विमर्श प्राप्त होता है। अतः यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति और साहित्य एक दूसरे के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं।

प्राक्त साहित्य संस्कार, सामेतवर्ग, शाधक, बाणकाता और नारी के धीन्यय के कुरिफि ही केन्त्रित रहा है। विश्व के प्रत्येक साहित्य में व्यक्ति का स्वयं निरन्तर परिवर्तित हुआ है। कभी व्यक्ति एक सामन्त, शाधक, बाणकाता एवं नारी के रूप में ही समाविष्ट था। परन्तु आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के कारण व्यक्ति अनुसृतियों का पुंन बन गया। अब व्यक्ति की प्रत्येक अनुसृति साहित्य के रूप में उद्घाटित होने लगी। व्यक्ति की जितना स्वातन्त्र्य प्राप्त होता गया वह उतना ही अभिव्यक्ति के संदर्भ में सुख्य होता गया। इस प्रकार आधुनिक साहित्य में व्यक्ति की समस्त अनुसृतियों की अभिव्यक्ति प्रदान होने लगी। आज का साहित्य मुक्तः व्यक्ति पर आधारित है। अब सबसे महत्त्वपूर्ण यह है कि व्यक्ति ही साहित्य का प्रकार करता है एवं उसकी सुरक्षित रहता है। व्यक्ति साहित्य का महत्त्व बर्ण कर उसके संदर्भ में विविध विचार व्यक्त करता है। अतः साहित्य के लिए व्यक्ति अत्यन्त आवश्यक है।

व्यक्ति और साहित्य का सम्बन्ध बूट

है। व्यक्ति साहित्य बिहीन होकर पृष्ठ के समान माना जाता है। साहित्य बिहीन वांति, धर्म, देश, राष्ट्र या संस्कृति का कोई अस्तित्व नहीं होता। ऐसी वांति या धर्म बिना साहित्य न ही निर्भर है। अतः साहित्यबिहीन व्यक्ति एक महसूस की वांति है उसमें न कोई रस है और न कोई वाक-योजना। अतः यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति और साहित्य एक दूसरे के पुरुष हैं, एक के बिना दूसरे का कोई अस्तित्व नहीं है। व्यक्ति साहित्य व्यक्ति के लिए अत्यन्त आवश्यक है और साहित्य के लिए व्यक्ति की उपस्थिति अनिवार्य है।

(2) साहित्य में व्यक्तिवादी धारणा की अविव्यक्ति

साहित्य में व्यक्तिवादी विमर्श की अविव्यक्ति उन साहित्यिक मानवधर्मों और परिस्थितियों की उपलब्धि है जो कि व्यक्ति के हृदय में धर्म का निरन्तर उपयोग करती है। साहित्यकार पहले व्यक्ति होता है उसके उपरान्त दूसरा और। अतः साहित्यकार की व्यक्ति की उन सभी प्रवृत्तियों, विद्वानात्मक अनुभूतियों और अविव्यक्ति के सीपानों से गुजरना पड़ता है। साहित्यकार अपनी मनीषा में अधिक स्वतन्त्र है और उसका स्वातंत्र्य क्या संसार के प्रति उल्लेख करता है। प्रत्येक व्यक्ति विभिन्न प्रकार की प्रवृत्तियों की अपने में होता है, क्योंकि यह मनोवैज्ञानिक बात परम्परागत है। व्यक्ति उन सभी प्रवृत्तियों

1- The number and the diversity of the tendencies which each individual carries in himself because of psychological heredity.

- History of English Literature, Legouis & Cazamass's New edition 12 impression 1954, page 1386

का संहास्य है जो कि उसकी पैना के पुत्र में अभिव्यक्ति का स्वयं
 ारण करती रहती है और उक्ति समय जाने पर साहित्य के रूप में नि-
 र्गम हो जाती है। इस प्रकार साहित्य में व्यक्तिवाद एक सत्य है, यह
 वास्तविक व्यापक की समस्या है। परन्तु साहित्य में व्यक्तिवाद के फली-
 भूत होने का एक मार्ग है किमें प्रत्येक वस्तु गम्भीर हो और व्यक्ति उसका
 ही सम्पादन को किसी कि उसमें सत्यता है। आज साहित्य में वास्त-
 विता की उपस्थिति निरन्तर कटि होती जा रही है। नैतिक विकास
 में आज करोड़ों अनुसृतियाँ विभिन्न रूप से साहित्यिक व्यवस्था में समूह की
 स्मृति हो चुकी है और व्यक्ति (स्फूर्ति) के रूप में उन्हें निरिक्त किए
 हुए हैं। यह ऐतिहासिक सत्य है कि समूह ने साहित्य की एक के उपरान्त
 एक में ग्रहण किया जिससे कि साहित्य के पुत्र रूप में परिवर्तन आया ।
 परन्तु उसकी स्थायित्व एवं उचित स्थान देने वाला व्यक्ति साहित्य की
 अपनी में वास्तविकता किये हुए है। व्यक्तिवाद एक परिपक्व एवं शान्त
 भावना है जो समाज के प्रत्येक सदस्य को अपनी साधियों के समूह से अपनी
 की विलग कर लेने तथा अपनी परिवार एवं मित्रों से फुलू हो जाने के लिए
 प्रेरित करता है, जिससे यह प्रकार अपना निजी एक छोटा सा चीज बना
 लेने के बाद वह स्वैच्छापूर्वक समाज की उसी के ऊपर झुंक देता है। यह
 परिपक्व एवं शान्त भावना साहित्य में व्यक्ति के माध्यम से स्थायित्व

8- Individualism in literature is thus a truth, it is in harmony with inner reality. Ibid 1327

9- कविता हि टीकवील- अमेरिका में प्रजातंत्र- प्रजातांत्रिक देशों में
 व्यक्तिवाद व्यापक से 90 सह

है। प्रत्येक साहित्यकार व्यक्ति की अनुसृष्टियों की भीमता है, व्यक्ति की जाना निरन्तर व्यक्ति के अस्तित्व, अस्तित्वता एवं जाना के प्रति जाग-रूक रहती है। साहित्यकार साहित्य- रचना के साधनों में अपनी जास-पास के परिवेश एवं समाज से मिलन ही वैयक्तिक अनुसृष्टियों के मनीराज्य में विचरण करता है। एक व्यक्ति की अनुसृष्टि में एवं दूसरे व्यक्ति की अनुसृष्टि में अन्तर अवश्य रहता है। इसी प्रकार एक साहित्यकार की अनुसृष्टियाँ दूसरे साहित्यकार की अनुसृष्टियों से कदापि मेल नहीं खाती।

साहित्यकार रचना- साधनों में बाह्य अव-रोध या रुकावट समझ नहीं कर सकता। यह बाह्य अवरोध धर्म, समाज या समूह द्वारा उत्पन्न किया गया हो या एक व्यक्ति द्वारा। साहित्य साहित्यकार के हृदय-घटन का भावनामयी चित्र है जो उसके वैयक्तिक विचार एवं अनुसृष्टियों को व्यक्त करता है।

व्यक्ति की मूल प्रसृति बन्धन मुक्त जीवन की कामना है। साहित्यकार इसी कामना में। प्रत्येक साहित्यकार अपनी में स्वतन्त्र है और वह स्वातन्त्र्य की रक्षा में निरन्तर लड़ रहा है। साहित्यकार या व्यक्ति के अस्तित्व की स्थापना, बन्धनमुक्त रहने की इच्छा और स्वातन्त्र्य की रक्षा साहित्य में व्यक्तिवादी धारणा की अभिव्यक्ति करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही है। इसी कारण साहित्य में भाव बोध और शिल्प के वायाम निरन्तर परिवर्तित होते रहे हैं। सभी भाव बोध की लेकर साहित्य में साहित्यान्दोलन, काव्यान्दोलन हुए हैं तो सभी रचना- शिल्प की लेकर साहित्यिक- शान्तिवादी ने नूतन मोड़ उत्पन्न किये हैं। अतः आधुनिक युग का साहित्यिक व्यक्तिवाद पर्याप्तः

प्रतिभा की गुणात्मकता एवं प्रतिभावाली व्यक्तियों तथा साधारण संकृति के सम्बन्ध विवेक से उत्पन्न है। यहाँ तक कि दोनों तथ्यों के मूल रूप नैतिकवाद में प्राप्त होते हैं जो कि निरन्तर सामाजिक विकास के लिए अब आवश्यक बन गए हैं।

यहाँ मैं यह व्यक्तिवाद मध्यम वर्ग का है जो कि सामन्तवादी समाज पर निरन्तर प्रणय वैज्ञानिक एवं तकनीकी आविष्कारों के कारण उसकी बर्तनाओं और नियमों को विलय करने के प्रतिफलन में उभरा है। यह बात की कविता का उचित रास्ता है जिसका कारण निरन्तर प्रगति रूप से तकनीकी विकास में वृद्धि होना है। इस तकनीकी विकास एवं सामन्तीय समाज के संघर्ष की क्या अत्यधिक तीव्रता है। सामन्तवादी शक्ति के प्रभाव में मध्यम वर्ग के अस्तित्व पर संकट आया और उनके सामाजिक जीवन एवं स्वतन्त्रता पर दमकारी प्रभाव पड़ा। इसके कारण व्यक्ति, व्यक्ति के सम्बन्धों में उदात्ता का वातावरण

१-

It thus would seem as if the literary individualism of the present time were deeply connected with the multiplicity of talents and the divorce between moral culture and genius; while the causes of these two facts might be found in the growing moral senselessness which is made inevitable by a prolonged psychological evolution.

- History of English Literature, Legouis D Cazamion's p. 1328.

2. This individualism of the bourgeois, which is born of the need to dissolve the restrictions of feudal society, causes a tremendous and ceaseless technical advance in production. In the same way it causes in poetry a tremendous and ceaseless advance in technique.

- Illusion and Reality- C. Cawdell p 68

उत्पन्न हुआ। अब मध्यम वर्गीय समाज वस्तुओं पर अपना अधिकार, उत्पादन पर स्वायत्त अधिकार तथा व्यक्तिगत सम्पत्ति के लिए मांग करने लगा। क्योंकि मध्यम वर्ग की भी अपनी व्यक्तिगत अधिकारों पर किसी भी व्यक्ति का अधिकार नहीं जा सकता, वरिष्ठ वह स्वतन्त्र रूप में अधिकार चाहता है। इस कारण धीरे-धीरे सामन्तवादी छिदान्त लीप होती गई और मध्यम वर्ग का उत्पादन एवं सम्पत्ति पर अधिकार हो गया। मध्यम वर्ग का समाज एक स्वतन्त्र समाज है जिसकी स्वतन्त्रता व्यक्तिवाद की है जो कि व्यापार की एवं बाजार की पूर्ण स्थिति मुक्त बाजार के अभाव में है जो कि सामाजिक सम्बन्धों में अनुपस्थिति का वातावरण बन जाता है और इस अनुपस्थिति के कारण ही मुक्त बाजार की अभिव्यक्ति प्राप्त होती है। यद्यपि मध्यम वर्ग का समाज विराटी समाज में परिवर्तित हो गया कि कि दम्पकारी समाज होता है, जिसकी व्यक्तिवाद की और स्वतन्त्र बाजार की पद्धति दम्पकारी एवं कठोर थी, यह प्राथमिक विरोध मध्यम वर्ग में उत्पन्न हुआ जिसकी संपूर्ण वास्तविकता के रूप में ग्रहण कर लिया जो पूँजीवादी संस्था के विकास के रूप में सुरक्षित हो गया।

कविता के रूप के सम्बन्ध में विद्वान् क्रिस्टोफर काह्लेन का यह विचार है कि प्रारम्भिक कविता का स्वयं काव्य या समूह के उत्सवों में प्राप्त होता है। यद्यपि ये सामूहिक भावना नहीं थी, वरिष्ठ व्यक्ति की सत्य भावनाओं की अभिव्यक्ति थी। अब मध्यम-वर्गीय संस्था में स्वतन्त्रता व्यक्तिवाद के सम्बन्धों और उनकी सत्य शक्ति व्यक्तिवाद के रूप में सुरक्षित हो गई। इसका तात्पर्य यह हुआ कि मध्यम-

वर्गीय संस्कृति काव्य की विरोधी होने का हिस्सा, क्योंकि काव्य सामूहिक है और मध्यम वर्ग व्यक्तिवादी है। इस सम्बन्ध में यह विचारणीय है कि मध्यम वर्गीय व्यक्ति अपने बाफो नायकत्व के गुणों से बोल प्रीत पाता है जो कि कुछ स्वै स्वतन्त्रता संग्राम में रहा। परन्तु वह कारण रूप में वैयक्तिक होकर समाज के समग्र सम्बन्धों के विरोध में संघर्ष करता रहा, व्यक्ति प्राकृतिक व्यक्ति या बीर वह स्वतन्त्र जन्मा था। परन्तु कुछ कवीय कारण से चारों बीर से श्रुतताओं में जड़ दिया गया। यद्यपि यह सत्य है इनका व्यक्तिवाद तकनीकी, वैज्ञानिक विकास को निरन्तर दिया प्रदान करता रहा जिसके कारण स्वातंत्र्य केतना में अमिष्टि हो सकी। उसका संघर्ष सामन्तवादी शक्तियों से था। उसका व्यक्तिवाद एक विशेष दिशा में अभिव्यक्त होने लगा किसे कि मध्यमवर्गीय व्यक्ति स्वतन्त्रता निरन्तर करी है जो कि इसका मुताधार है। कतः मध्यमवर्गीय कवि अपने बाफो व्यक्तिवादी रूप में पाता है। उसने अनुभव किया कि उसकी सामन्त-रिक शक्ति बाहर बाकर बाकार रूप से ग्रहण करने के लिए वह स्वै दृष्टि हो गई। यह मध्यम वर्गीय कवि का स्वप्न है। यह स्वप्न एक व्यक्ति का स्वप्न है जो कि स्वप्न की विश्व में प्रत्यक्ष रूप में देखता है। नाहि वह फास्ट हो, उन्फिट हो या शैतान के रूप में प्रस्तुत किया गया हो। यह सत्य है कि मध्यमवर्गीय कवि अपने बाफो कौशल में रत्ना बात्ता है। उसकी स्वतन्त्रता कथायी है बीर दमकारी है। वह सामन्तीय बन्धनों का विनाश करता है। वह सामन्तीय नियमों बीर सामाजिक दमकारी शक्तियों से कठोरतापूर्वक मध्यमवर्गीय राज्य केन्द्रित करना चाहता है जिसमें कि कौशा व्यक्ति स्वतन्त्र स्वै बन्धनों से मुक्त रह सके।

१- डिस्टीफर काहवैस- इल्लुमन एण्ड रिजिस्ट्री पृ० १०-१५

२- उपरिष्ठ

पृ० ६०

काव्य में व्यक्तिवाद की बमिब्यक्ति व्यक्ति को मनीषला पर अवलम्बित है। काव्य की रचना व्यक्ति के द्वारा होती है। व्यक्ति विविध प्रकार की परिस्थितियों में जीता है और वह विविध प्रकार की क्रुतुतियों को व्यक्त करने का प्रयास करता है। इन क्रुतुतियों को व्यक्त करने में वह निम्न सिद्धान्तों, परम्पराओं, नियमों पर अवलम्बित रहता है जल्पा वह किस् प्रकार नूतन प्रयोग कर अपनी कलम दिहा निर्धारित करता है, यह उस पर निर्भर करता है। अब कलाकार या कवि परम्परागत सिद्धान्तों या नियमों के अन्तर्गत अपनी वाफकी व्यक्त करता है तो उसकी नये 'वाच' की रंजा से बमिबिहित कर दिया जाता है। साहित्य के अन्तर्गत व्यक्ति की सर्व्व महत्त्व दिया गया है। प्राचीन चरित्र प्रधान ऐतिहासिक पात्रों की बिबिहित कर, व्यक्ति की महत्ता सर्व्व नीत्यों की नये प्रकार से स्थापित किया गया है। क्यपि बाधुनिक युग का व्यक्ति वैज्ञानिक परिवर्तित सर्व्व मनीषज्ञानिक सिद्धान्तों से अवधिप्रभावित हुआ है। व्यक्ति एक स्वतन्त्र प्राणी है। वह अपनी बात-पास के सम्प्रबन्धों की काटना चाहता है और इन बन्धों की काटने के लिए साहित्यिक बमिब्यक्ति का सहारा लेता है।

साहित्य में व्यक्तिवादी जीवन दर्शन को समाविष्ट करने का कार्य साहित्यकार के ऊपर निर्भर है। साहित्यकार का कलम् सर्व्व व्यक्ति-स्वातंत्र्य उसकी स्वतन्त्र रहने के लिए क्रुप्राणित करता रहता है। वैयक्तिक वास्तव सर्व्व व्यक्तिगत क्रुतुतय साहित्य की बमिब्यक्ति की दिहा में पय प्रस्तुत करते हैं। साहित्य एक व्यक्ति की रंजी नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण समाज की है। परन्तु साहित्य का निर्माण व्यक्ति (कारक) करता है। साहित्य में व्यक्ति का कलम्, दम्भ, कर्कार, बाधोत, कृष्ठा, रंजात, एहन, टुटन बादि विविध रूपों से

विश्वि हर है। आधुनिक साहित्य में व्यक्ति को मनःस्थितियों का लक्ष्य काम सम्बन्धी स्थितियों का विविध प्रकार से व्यक्त हुआ है। इन साहित्य में तनाव, स्वप्न, कल्पना, स्वप्नाभास, फटेसी, रोमांच, कथक, कल्पना, वास्तव संघर्ष, मानसिक वैयर्थी आदि का विविध वायापी में बँकन होने लगा। कविता, कहानी, उपन्यास आदि में व्यक्तिवादी जीवन-दर्शन ने यथार्थवादी स्वल्प धारण किया है। कहीं विनीय, विद्रोह, तनाव आदि के द्वारा विद्रोहात्मक या क्रान्तिकारी विचारों को विश्वि किया जा शब्द है, तो कहीं स्काकोप, क्लमबोप लक्ष्य क्लमव को मनःस्थितियों का साकार स्पर्कन प्राप्त होता है।

(२) काव्य में व्यक्तिवाद की भूमिका

व्यक्ति स्वार्थ का पुत्र है। वह स्वार्थ सिद्धि के हेतु शतत क्रियमाण रहता है। व्यक्तिवाद का मूल व्यक्ति है और उसकी जीवन दृष्टि व्यक्ति की स्वार्थ सिद्धि या श्कारं (व्यक्ति) के प्रति शतत बागल रहने की प्रवृत्ति/परम्परा आधुनिक काव्य में यही जीवन दृष्टि स्वार्थपरक न होकर श्कारात्मकता के प्रति मोह, स्काकोप, काल्पनिकता, रोमांच, विद्रोह विनीय, संवाच, कृष्ठा, नैतिक लक्ष्य सामाजिक मूल्यों का भंग लक्ष्य वतिश्रय योनपरक निर्भी को वमिअव्यक्ति के रूप में सामने आयी है। व्यक्ति गुटी का निर्माता है, आधुनिक युग में व्यक्ति (श्कारं) के स्थान पर कुछ लोगों ने भिन्न साहित्यिक गुट स्थापित किए और विभिन्न साहित्यिक आन्दोलनों का मार्ग प्रशस्त किया। काव्य के अन्तर्गत प्रयोगवाद, प्रपञ्चवाद, नयी कविता, कथक, बोट कविता, श्मजानी-

पीढ़ी, युगसावादी कविता, बादि काव्यान्वीक्षण जैसे प्रमाण हैं।
 वाधुनिक व्यक्तिवाद में व्यक्ति का परिवेश बहुत तन्मा चौड़ा हो गया,
 इस कारण उसे अपनी 'व्यक्ति' को स्थापित करने के लिए साहित्यिक
 गुटों का निर्माण करना पड़ा। कतः वाधुनिक काव्य में व्यक्तिवादी
 जीवन दर्शन को अभिव्यक्ति विभिन्न सोपानों में प्रतिकल्पित हुई है।

काव्य का निर्माता व्यक्ति है। व्यक्ति का
 सुख-दुःख, जीवन शक्ति एवं अभिव्यक्ति के विविध सोपान व्यक्ति को
 काव्य-संरचना में योगदान देते रहे हैं। कवि के वैयक्तिक अनुभव, जीवन,
 अनुभूतियाँ किस प्रकार वात्सानुभिव्यक्ति का स्वल्प धारण करती है ?
 यही व्यक्तिवादी काव्य का दृष्ट है। काव्य में व्यक्ति तत्त्व मुख्य है और
 इस व्यक्ति - तत्त्व को काव्य-रूपों में विविध प्रकार से स्थापित किया
 गया है।

काव्य मुक्तः वैयक्तिक होता है। कतः
 कवि के व्यक्तित्व या निजी अनुभूतियों के अभिव्यक्त होने का प्रत्यक्ष
 हो नहीं उठता। परन्तु जिस स्थान पर क्या कवि को निजी अनुभूतियों
 को साधक भी संस्पर्श करती है, वहाँ कवि को अभिव्यक्ति में स्थापक
 सौन्दर्य को अभिवृद्धि हो उठती है। प्राचीन काव्य में कवि का व्यक्तित्व
 कतना स्पष्ट नहीं हो पाता, यद्यपि उस काव्य का सन्देश एवं उपदेश
 कवि के जीवन दर्शन का स्वल्प धारण कर लेता है। मुक्तक काव्य में कवि
 उदाहरण प्रस्तुत कर विविध प्रकार को मनः स्थितियों एवं मनोदशाओं
 को अभिव्यक्ति अपने प्रकार से करता है। अपने भी कवि का व्यक्तित्व
 काव्य नियन्त्रा का कार्य करता है और अनुभूतियाँ मनोदशाओं में कतनी

व्यक्ति ही बातों है कि पूर्ण प्रीति नहीं होती। नाटक के सम्बन्ध में शेक्सपीयर के नाटक बहुचर्चित हैं। उनके नाटकों में व्यक्ति के भी ही उसमें शेक्सपीयर के व्यक्तित्व, उसके अनुभव की शायद अवश्य दिलाई जाती है। चाहे वह हैमलेट, आर्थर, मैकेथ, वाफोरिया, क्लॉडियस आदि कोई भी हो, कतः उसे स्पष्ट होता है कि व्यक्तिवाद नाटक में भी व्यक्ति-तत्त्व के रूप में अपनी भूमिका निभाता रहा है। गीत में व्यक्तिवाद का कथार्थिक प्रसार हुआ है। इसका मुख्य कारण यह है कि गीत की वात्सा-वैयक्तिकता है। कवि के निजी गुण-दुःख, बुरा-हास गीत में वात्साभि-व्यक्तिकता रूप धारण करती है। गीत की गेयता, वैयक्तिकता एवं सदात्मकता व्यक्ति-तत्त्व की ओर झीक करती है, जिसका कारण है कि लाकोफ, सम्पत्ता एवं ज्ञान व्यक्ति-तत्त्व में ही विद्यमान रहती है। कतः गीत व्यक्तिवादी जीवन दृष्टि का एक विस्तृत फलक है जिस पर कि गीतकार अपनी अनुभूतियों के हृदयभूज उद्गार करता है। गीति-नाट्य में भी व्यक्तिवादी धारणा का प्रतिकल्पन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त होता है।

बाह्यिक युग में वैज्ञानिक आविष्कारों के प्रसार के साथ साथ व्यक्ति की जीवन दृष्टि में परिवर्तन आया। प्रेमी-वादी समाज ने मध्यम वर्ग एवं निम्न वर्ग की विद्रोहात्मक तैवर रत्नी के लिए विवश कर दिया। बाह्यिक काव्य में प्रकृति प्रेम, रोमांस, काव्य-निकता का स्वर परिवर्तित होने लगा। अब व्यक्ति दैनिक समस्याओं में उलझा, उसकी कृष्ठा, संशय, विवशता, टूटन, छूटन, आक्रोश प्राप्त हुए, मध्यम वर्ग का कवि भी व्यक्ति था, वह एवं एवं मशहूरों को सम-

लाइट में फँसकर झटपटाने लगा । उसे विविध प्रकार की प्मिनी ,
 कीसी स्थितियों से गुजरना पड़ा । जब कवि का व्यक्ति विद्रोह कर
 उठा । उसका विद्रोह व्यक्तिवादो विद्रोह था, कारण में उसका सामन्त-
 वादी एवं औद्योगिकी कर्कर टूट टूट कर फिस्ने लगा । ऐसे व्यक्ति के
 कर्म की चीट लगी , वह तड़फ उठा, जब व्यक्ति ने संस्था के प्रति ,
 समाज के प्रति, समाज के प्रति, संसार के प्रति, नियति के प्रति और ही
 और व्यक्ति (स्वयं) के प्रति भी विद्रोह कर दिया । कवि संस्था,
 समाज, संसार, धर्म, नियति एवं व्यक्ति वादि से झटकर जगजगो एवं
 एकाकी का जीवन जीने पर विवश हो गया । वह ऐसी ही स्थितियों के
 चित्र प्रस्तुत करने लगा । काव्य में व्यक्तिवाद का प्रतिफलन एक इसी
 प्रकार से भी हुआ, वह है वस्तुओं के प्रति नकारात्मक एवं निरीधात्मक
 अपिअपि व्यक्ति एवं मीन धारण की प्रवृत्ति । जब कवि निरीध की प्रवृत्ति
 बफाने लगा तो परिस्थितियों वल कहीं कहीं उसे मीन रह जाने पर
 विवश होना पड़ा । ऐसे झुंझा , टूटन, विवशता, संसार, बाकी की
 मनःस्थितियों का काव्य में स्पर्क होने लगा । जब काव्य नयी कविता
 के रूप में परिवर्तित हो गया । भाषा , इन्द्र, सत्य, अपिअपि वादि
 के प्रतिमानों में आसुर जल परिवर्तन हो गया, व्यक्ति की समस्त मनः
 स्थितियाँ एवं मनोदशाएँ एवं आधुनिक कविता के अन्तर्गत प्रस्तुत की जाने
 लगीं । काव्य की शास्त्रीय परिपाटी टूट कर बिखर गई । जब कवि का
 कुराग मुक्त-इन्द्र के प्रति दृष्टिगीवर होने लगा ।

कवि ने भाषा के प्रति भी विद्रोह की
 मुद्रिका बफाई । जब वह जगद् एवं भविस शब्दों का प्रयोग कविता में
 करने लगा, सबसे बड़ा क्रान्तिकारी परिवर्तन यह हुआ कि कविता प्रत्येक
 व्यक्ति द्वारा रचित एवं सभी प्रकार के जन जीवन की प्रस्तुत कर ले लगी।

(ब) व्यक्तिवादी काव्य : विविध परिदृश्य

(१) ज्ञानवादी कविता

ज्ञान की वांछ मानना ही 'ज्ञानी' ^१

नाम से अभिहित किया गया है। ज्ञान से तात्पर्य उच्च ज्ञान है जो ज्ञान की स्वरक्षा एवं प्रजनन के प्रति प्रेरित करती है। ज्ञान संस्था वृद्धि या प्रजनन की बीर भावना रखता है। 'विजयिष्ठा' और 'रिहिष्ठा' का दूसरा नाम ही ज्ञान है। ज्ञान की वृद्धि दर में विकाश ही ज्ञान का विस्तार है। ज्ञान का ऐतिहासिक स्वल्प कालाधिक महत्वपूर्ण है। धार्मिक ज्ञान में ज्ञान के उन्मुखन हेतु कौन प्रकार के ध्यान, प्राणायाम, नियम, संन्यास, साधना के विविध शीपानों का विवेक प्राप्त होता है। भारतीय दर्शन में सम्यक् दृष्टि के अन्तर्गत दोनों तत्त्वों की कल्पना की गई है। एका ही ज्ञान (ज्ञाना, विजयि, मोक्षता) दूसरे को ही (विजय कर्मात् सम्यक् विजय) के नाम से जाना जाता है। नैयायिक आत्मा एवं मन के तादात्म्य पर 'अस्मात्सि' (मैं हूँ) कहकर ज्ञान का शुद्ध चेतन्य के रूप में अनुभव व्यक्त करते हैं। सांख्य दर्शन वृद्धि से ज्ञानकार की उत्पत्ति पर विश्वास करता है। उनका सिद्धान्त है 'सर्व विजय मेरे लिए है'। बीर 'मैं ही कार्य करने का अधिकारी हूँ।' यही विचार ज्ञानकार के रूप में विकसित होता है। ज्ञान दर्शन के फलानुसार जीवन की वृत्ति उपयुक्त है, जो वृत्ति के अन्तर्मुखी होने पर 'ज्ञान' का रूप मानी जाती है। ज्ञान

१- डा० हरदय बाहरी- वृत्त शीवो हिन्दो कोश भाग १ पृ० ६७

२- डा० गोविन्द रणधीश - हिन्दो साहित्य बाधुनिक परिदृश्य पृ० ११६

दर्शन और साहित्य दर्शन बाधुनिक जर्वादी चिन्तन के अत्यधिक निष्ठ हैं।
 व्यापक में कई व्यक्ति के जन्तुमूलो होने पर ही उत्पन्न होता है और यह
 बुद्धि-तत्त्व के कारण ही अविश्वव्यक्ति का स्वल्प धारण करता है। कई
 महान् व्यक्तियों में अत्यधिक मान में उपस्थित रहता है। व्यक्ति में कई
 जीव प्रजा के प्रकार का होता है।

बाधुनिक मनोविज्ञान में नूतन कल्पनाएं हुए
 हैं। इसके कारण कई को विविध प्रकार से व्याख्या की गयी है- कई
 के संदर्भ में प्रसिद्ध मनोविज्ञानिक सिगमण्ड फ्रायड के विचार अत्यन्त उप-
 योगी हैं। उनके अनुसार 'कर्म' को मनोविज्ञानिक प्रक्रियाओं का एक ऐसा
 चटित संगठन मान लेंगे हैं जो स्व तथा बाह्य जगत् के बीच मध्यस्थ के
 रूप में कार्य करता है। उसने माना है कि कई कार्य सम्पादन कुशलता से
 करता है तो अनुत्पन्न बना रहता है। यदि कई को माना में बाधिय या
 कमी जाती है तो अनुत्पन्न एवं क्षम्यत्व की स्थिति उत्पन्न हो जाती
 है। कई के कारण ही सौन्दर्य की भावनाएँ- कला, साहित्य आदि में
 अविश्वस्त होती हैं। फ्रायड ने सामान्य वयस्क व्यक्तित्व को छह (छद्म) ¹
 कई को उत्पत्ति कई के सम्पत्ति से निर्मित माना है। कई से उसका वाक्य
 उस कई केना से है जो निर्णय, अनुभव और संकल्प की शक्ति रखती है।
 उत्पत्ति कई (सुपर ईगो) व्यक्तित्व के समावर्णन करने वाली शक्ति
 है जो संस्कृति, नैतिकता एवं वाद्यों द्वारा बदलती तथा विकसित होती
 वंशानुगत नैतिक प्रवृत्ति के द्वारा निर्मित होती है। फ्रायड के उपरान्त
 जार्ज प्रोटेर ने कई सम्बन्धी धारणाओं पर अपनी विचार प्रकाश करते हुए
 कहा - ' वैयक्तिक प्राणी का सांस्कृतिक, शारीरिक, मानसिक, बाह्य-

लिख तथा अन्य अभितर्क अस्ति सुख्य संसार तथा अन्तरिक्ष जो कि एक मान्य है, में उनके जड़ की अज्ञात तथा शाश्वत अविवक्षित मानता है और उसकी 'दिष्ट' के नाम से सम्बोधित करता है।

प्रायः ने भी जड़ की सार्वभौम माना है।

एक संदर्भ में उसकी समानता उसी एक संज्ञक से दो जिसमें नूतन गीष्मणा के समान प्रतिभा विविध भागी में विभाजित हो जाती है। यद्यपि जार्ज ग्रोटे ने जड़ की मुलाटि के रूप में स्वीकार किया है। उसके उपरान्त स्प्रिङ्ग स्ट्रवर ने भी जलवादी छिदान्त पर पुनः बन्धन किया। जलवाद का प्रभाव अस्तित्ववाद पर अधिक पड़ा है। समग्र अस्तित्ववादो दर्शन जलवाद से परिभाषित है। बोल्से का विमर्श भी जलवाद की व्याख्या है। बाहु-निक युग में अस्तित्ववाद के प्रसार के कारण जलवाद विविध रूपों में प्रति-फलित हुआ है।

पाश्चात्य दर्शन और साहित्य से प्रभावित होकर हिन्दी उपन्यास तथा कविता में जलवादी प्रवृत्ति विविध रूपों में अभिव्यक्त हुई है। बाहुनिक भारतीय व्यक्ति जब पाश्चात्य वातावरण वैज्ञानिक आविष्कार, तार्किक ज्ञान-विज्ञान से परिचित हुआ तो उसमें तर्क, तन्त्र एवं नीतिक भावनाओं का प्रबल पैग से प्रतिफलित हुआ। बोल्से के संसार की मृत्यु से भारतीय वास्तविक छिदान्त में दरार पड़ गयी। जब भारतीय व्यक्ति भी संवरीय अज्ञात, मानवीय मूल्यों के लपटन एवं विघटन में जीवन को शान्ति खोजी लगा। जब लपटित अस्तित्व जड़ के वाक्य में अपनी ज्ञान की 'मुनादी' करते लगा।

व्यक्ति जब संसार के प्रति समर्पित न होकर, परिस्थितियों से जुझने

के लिए अपनी बाइबिल को विद्रोह भरी मुद्राओं में व्यक्त करने लगा ।
 नैतिक मूल्य , परम्पराएं, अनात्म रुढ़ियां और कधी मान्यताएं नये
 व्यक्ति और उसके अस्वादी उपवीच के समुत्पन्न टूट-टूट कर बिखर गयीं ।
 इसके व्यक्तिवादों की काव्य में नवीन रूप से स्थापना हुई । इसके प्रसार
 में महत्वपूर्ण भूमिका स्वतन्त्रतावाद एवं मनोविज्ञान की नूतन प्रवृत्तियों
 ने निभायी । मनोविज्ञान ने अस्वाद और व्यक्तिवाद की हिन्दी कविता
 में स्थापित करने की दिशा में निर्देशक का कार्य किया । अस्वाद के संदर्भ
 में हम क्लृप्त अध्याय में विचार करेंगे ।

(२) अस्वाद की कविता

साहित्य में अस्वादो दृष्टिकोण अपना
 विशिष्ट स्थान रक्ता है। अस्वाद से सामान्य वाक्य है- अस्वा अस्वा के
 लिए । वस्तुतः यह एक विशेष दृष्टिकोण का परिणाम है। पाश्चात्य
 साहित्य में अस्वाद की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। प्रचीन युग में अस्वा
 का साहित्य से सम्बन्ध अवश्य रहा है। खेटी एवं वारुण से लेकर बाज
 तक के साहित्य में अस्वा वाद किसी न किसी रूप में अवश्य प्रस्तुतित हुआ
 है। संस्कृत साहित्य में अस्वादो दृष्टिकोण की अत्यन्त महत्ता प्राप्त
 हुई है। हिन्दी साहित्य का मध्यकाल काव्य के सदाश वर्तकार, रीति,
 गुण वादि सम्प्रदायों से समृद्धि है। काव्य में अस्वाद व्यक्तिनिष्ठ एवं
 व्यक्तिवादी विचारधारा का प्रतिफलन है। अस्वाद की संकीर्ण एवं
 व्यक्तिनिष्ठ को संज्ञा भी दी जाती रही है। प्रसुत रूप से अस्वाद के
 अन्तर्गत काव्य की लीकातीह, कवि की लीकोत्तर एवं समीक्ष तया काव्य

द्वारा प्राप्त ज्ञान का कलात्मक वास्वाद्युक्त और समाय से परि का माना जाता है। कवि की वैयक्तिक अनुभूतियाँ कला के प्रति कितनी सन्त है और कवि को किस माध्यम से क्षिप्ता व्यक्त कर पाती है ? यह इसके मूल में निहित है।

यद्यपि कला कला के लिए सिद्धान्त बानी तीव्रता से व्याप्त हुआ था कि उसकी गति पर नियन्त्रण लगाना असम्भव लगता था। परन्तु आधुनिक युग में शास्त्रवादी प्रवृत्तियों के बाण्यन से उसकी गति मन्द अवश्य होने लगी। कलावाद का प्रारम्भिक विकास ग्रीक एवं रोमन धार्मिक चित्रण में प्राप्त होता है। इसके उपरान्त बरस्तु सिद्धरी, लीजान्जल, दति आदि ने कलावाद को समय-समय पर जीवदान दिया। प्राचीन में अथर्ववेद शास्त्रों में 'नियीकला सिद्धिज्य' या नव्य वास्वाद्य नाम से एक नुतन विन्तान उभरा जो कलावाद का रूप था तथा उसमें व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का तीव्र स्वल्प बाधित्य में प्राप्त होता है। अंशार्ध धार्मिक पदा के अन्तर्गत कलावाद का अतिवादी या पीर कलावादी रूप उभर कर आता है जो शास्त्रीय कला या 'कलाधिरस' के नाम से प्रसिद्ध है।

प्राचीन में सन् १४५३ ई० के पुनर्जागरणकाल के उपरान्त कलावादी वास्वादीस तोग्रगति से बागे आया। इससे कवि एवं कलाकार वास्व केन्द्रित और व्यक्तिनिष्ठ हो गए। सन् १८७१ में कलावाद का प्रसिद्ध प्रस्ताविक चिन्कार जेम्स एवाट मैन्नीस ड्विस्तर ने कलावाद को 'स वातं पीर स वातं' फ्रेंच का 'कला कला के लिए' की उद्घोषणा की तथा रकिन से विवाद किया। इसी कलावाद

की स्वरूप धरातल प्राप्त हुआ। इसके उपरान्त ब्रह्म, क्लृप्त, रीवर प्रवाल, जार्ज हर्ब, डीके वादि समालोचकों ने क्लृप्तावाद की विविध रूपों में व्याख्या की है। काव्य में क्लृप्तावाद मूलतः व्यक्तिवादी जीवन-दर्शन से प्रेरित है- जिसमें कि क्लृप्ताकार या कवि वात्म-केन्द्रित होकर क्लृप्ता के प्रति समर्पित हो।

हिन्दी साहित्य में रीतिकाल क्लृप्तावादी युग के प्रति सजा रहा है। बाहुनिक युग में बाहु जयकर प्रसाद का वानन्दवाद काव्य में क्लृप्तावाद की याद दिलाता है। हायावाद के अन्य कवि सुनी महादेवी वर्मा, सुमित्रानन्दन पन्त, पुष्पकान्त बिपाठी विरासा के काव्य में क्लृप्तावादी दृष्टिकोण प्राप्त होता है। इसके उपरान्त उत्तर हायावाद के कवियों तथा प्रयोग युग के जयज, गिरिजाकुमार माधुर, नेमिचन्द्र केन आदि क्लृप्तावादी दृष्टिकोण पाया जाता है।

बाहुनिक हिन्दी काव्य में कवि का व्यक्ति-निष्ठ, वैयक्तिक एवं वात्म केन्द्रित रूप उभर कर सामने आया है। इसके कारण कविता में विविध प्रकार के प्रयोग हुए हैं। प्रयोगवाद, प्रपञ्चवाद, नयी कविता, नवगीत आदि में व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का कथ्यार्थ विवेक हुआ जिसे फलस्वरूप क्लृप्तावादी प्रवृत्तियों के विविध रूपों में व्यापित होने लगे। यह संदर्भ में व्यक्तिवादावाद का विवेक सहयोग रहा जो रूपवाद, विम्ववाद एवं प्रतीकवाद के रूप में प्रतिफलित हुआ और इसके बाहुनिक हिन्दी कविता में व्यक्तिवादी क्लृप्ता सिद्धान्तों की स्थापना हुई।

(३) व्यक्तिवाद की कविता

व्यक्तिवाद का वास्तविक प्रसार 'द्वितीय विश्व-युद्ध' के उपरान्त सन् १९२० ई० में हुआ। प्रथम विश्व युद्ध का समय प्रगतिशील साहित्य में उत्तम पुस्तक का समय है। उस काल में रोमांटिक लेखक तथा कवि व्यक्तिवाद एवं प्रकृत-वाद की चरम सीमा तक पहुँच चुके थे जिसके प्रतिकूलन में सन् १९१६ ई० में दादावाद का जन्म हुआ। यह व्यक्तिवादों विचारधारा का बहिष्कार या किसी कारण साहित्य में व्यक्तिनिष्ठ एवं आत्म केन्द्रित चिन्तन व्याप्त होने लगा। व्यक्तिवाद का नेतृत्व जार्ज बौदेलियर (सन् १८२२ -१८६७ ई०) या पारसु इसके उपरान्त लामोमान, रिम्बो तथा मैलार्मे ने अपने साहित्य में व्यक्तिवाद की नींव की उचितजाली बनाने का प्रयास किया है। व्यक्तिवाद का जन्मदाता जॉन्स ब्रेन्तन (सन् १८६६ ई०) या जिने फि लिप डुपीस , लुई वारागो, जार्ज ह्यूम, रेने, डेक्स, ई० डे-सेन्थ तथा पात स्तुवार का सम्पूर्ण प्राप्त होता रहा है। इसकी व्याख्या में 'सिरोर्यारे, रिपोर्युलन दुरधियासिस्ते' आदि पद्य प्रकाशित हुए। व्यक्तिवाद मानसिक विस्तृतियों से सम्बन्ध रखता है। आधुनिक प्रगतिशील कविता के प्रकार में व्यक्तिवादों प्रकृतियों का बहुत प्रभाव है। व्यक्तिवाद व्यक्तिवाद की एक उपधारा के रूप में प्रकटित हुआ और धीरे धीरे प्रगतिशील काव्य, कला, चित्रकला आदि में उन्नत रूपका, स्वयं, दिवा स्वयं एवं फेन्टसी आदि के रूप की विविध रंगों से व्यापित करने लगा। जैसे: जैसे: यह जॉन्स ब्रेन्तन समस्त विश्व में हा गया। जर्मनी, अमेरिका स्पेन, इटली एवं भारत आदि में व्यक्तिवादों काव्य एवं कला पर विविध

ऐसी ही स्थापित करने लगा । अतः अतः यह आन्दोलन समस्त विश्व में फैल गया । जर्मनी, बेल्जिया, स्पेन, इंग्लैंड एवं भारत आदि में यथार्थवादी काव्य एवं कला पर विविध प्रदर्शनी एवं सम्मेलन होते रहे । इंग्लैंड में हर्बर्ट रीड ने इस आन्दोलन की प्रवृत्ति करने में विशेष योगदान दिया ।

वस्तुवाक्यवाद का ऐदानीतिक सम्बन्ध व्यक्तित्व के जीवन एवं उसकी बर्तवाग्रत अवस्था से है। इसमें स्वयं वाक्लि तेलन (वीटीमिटिक राश्टिंग) मान्य है। इस सम्बन्ध में हर्बर्ट रीड एक निबन्ध " मिथ ड्रॉम एण्ड पीडम " में विचार प्रस्तुत करता है- " स्वातंत्र्य वाक्लि तेलन के सम्बन्ध में लो वन्देवण होना चाहिए, परन्तु इस शब्द की उक्ति परिभाषा दे देना भी तिर कष्टा होगा । कुछ व्यक्तियों को लोवे देवी प्रक्रियाओं का भान होता है, जो स्पष्ट वादि यों का प्रयोग करते हैं, कथा किती से सन्देह का वाभास मिलता है जो सम्पीडन की अवस्था में प्राप्त किया गया हो । परन्तु प्रस्तुत प्रोग में स्वतः वाक्लि तेलन से हमारा तात्पर्य मन की उस अवस्था से है जिसमें वमिक्वक्ति तत्काल एवं नैसर्गिक रूप में होती है, जहाँ कि भाव चिन्तों कीर उसकी शाब्दिक प्रतिकृति में समय का कीर्ण अन्तर नहीं पड़ता । "

वस्तुवाक्यवाद से तात्पर्य यह है कि कलाकार कवि या समीक्षक तत्कालीन व्यवस्था के विरोध में शास्त्रीय स्तर की प्रय वेता है जो कि वराकृता की रिपति का पीतक है। वस्तुवाक्यवादियों के अनुसार यह वीश्वरवाद के सिद्धान्त पर आधारित है और जीवन-

दर्शन तथा स्थापक दर्शन में व्यवस्था की अधिक मान्यता देता है।
 यहाँ में यह कवि ऐसी ही समीक्षा का व्यवस्था के प्रति, प्रसन्नता
 के प्रति एक विरोध एवं विद्रोह है जो प्राचीन, परम्परागत कवियों,
 मान्यताओं की समाप्ति पर व्यवस्था की स्थिति की स्थापना करना
 चाहता है। वह नैतिक मान्यताओं पर भी नोट करता है और उसे जीवन
 के कार्त्तव्यिक स्थापना पर नज़र डाले लगता है। अतिव्याख्यावाद के मुक्त में
 स्वार्थवाद के प्रति पूर्ण वास्था है। इसे यह विषय होता है कि अति-
 व्याख्यावाद कवि की अपनी अभिव्यक्ति देने में पूर्ण रूप से मुक्त एवं स्वतन्त्र
 रहने के पक्ष में है। इस प्रकार अतिव्याख्यावाद में व्यक्तिवादो दर्शन का
 प्रतिफलन हुआ है और व्यक्तिनिष्ठ प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति करने में
 पूर्ण स्वतन्त्रता हुई है। इस 'वाद' के कारण ही मनोविश्लेषणवादी
 वास्तविकता की विशेष उपयोग प्राप्त हुआ क्योंकि इसमें मन आदि पर
 अधिक विचार किया गया है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य पर भी अतिव्याख्या-
 वाद का प्रभाव पड़ा है। विशेष रूप से प्रयोगवादी कविता में भाव चिन्तों
 का संयोजन, भावों के मुक्त साधन का प्रयोग, अव्यक्त के प्रतीकों तथा
 चिन्तों का प्रयोग अतिव्याख्यावाद का प्रभाव कहा जा सकता है। अतिव्याख्या-
 वाद का पूर्णतः प्रभाव प्रसन्नता पर पड़ा जो कि बिहार के (नैन)
 नरसिंह विश्वनाथ, केशरी कुमार एवं नरेश कुमार द्वारा प्रकटित हुआ है।
 उनके पीछे पड़ा पर एवं स्थापना के ज्ञात होता है कि उन्होंने अतिव्याख्या-
 वाद की अधिक ग्रहण किया है। इसके उपरान्त नये कविता में कुछ कवियों
 को स्थापना अति व्याख्यावाद के प्रभाव से नहीं बच सकी है। नये कविता के

कव्य बान्दीस - मुली पीढ़ी, रमतानी पीढ़ी, कविता वादि पर भी किसी-न-किसी रूप से कथार्थवाद का प्रभाव अवश्य रहा है। यद्यपि अतिथ्यार्थवाद नयी कविता में विद्रोह, क्लेश, व्यथना के प्रतिनिधित्व नैतिक मान्यताओं का वास्तव नष्ट करने में कटिबद्ध यौनपरक प्रतीकों की परम्परा के रूप में प्राप्त होता है, जो कहीं कहीं कथार्थवाद की अधिक विप्लव करता है तो कहीं व्यक्तिवाद के रूप में प्रतिफलित हुआ है।

(४) अभिव्यक्तावाद का कव्य

अभिव्यक्तावाद का उदय जर्मन साहित्य में प्रथम महायुद्ध के उपरान्त हुआ। इसके प्रसूतक स्तालिनो दार्शनिक एवं विचारक हेनरी शूबे (जन् १८६६ ई०-१९५२ ई.) हैं जो कला की आत्म-अभिव्यक्ति का स्वल्प स्वीकार करते हैं। अभिव्यक्तावाद के समर्थकों का विचार है कि कवि या कलाकार अपनी वास्तविक भावनाओं को बाहरी रूप में प्रकट करते हैं किसी बाहरी वस्तु को नहीं। कलाकार की भावना निजी होती है किसी से उधार तो नहीं। उस भावना को कलाकार प्रकटित करके कथार्थ का सही चित्रण करता है। वह कथार्थ को भी अपनी वास्तविक भावना के अनुसार चित्रित करता है। कलाकार अपनी मन की एक स्थिति को अभिव्यक्ति करने में शब्द, रंग वादि माध्यमों का प्रयोग करता है।

शूबे ने अभिव्यक्तावाद की व्याख्या करने के लिए सौन्दर्य की सहज ज्ञान (एन्ट्यूमेन्ट) की अभिव्यक्ति माना और

सौन्दर्य की ही अभिव्यक्ति सिद्ध किया। इसके लिए उसने सद्यः ज्ञान तथा अभिव्यक्ति को एक ही रूप प्रदान किया। उसने सद्यः ज्ञान को एक प्रतिबिम्ब (स्मृति) माना तथा इस प्रतिबिम्ब का बाह्य वस्तुओं की किसी ही निर्मित प्रतिबिम्ब से अन्तर स्थापित किया। कलाकार वास्तविक सद्यः ज्ञान की ही सुन्दर ही बाहरी रूप में निर्मित करता है। शीघ्र ही सौन्दर्य की सद्यः ज्ञान जैसा वास्तविक रूप माना, इसीलिए वह बाह्य अभिव्यक्ति को प्रत्यक्ष नहीं देता। उसके मतानुसार कोई भी कलात्मक वस्तु का अस्तित्व इस बात में है कि कलाकार उसके अस्तित्व की किस प्रकार अभिव्यक्ति करता है और कलाकार को भावना का उसी रूप में प्रत्यक्ष तब होता है जबकि वह अभिव्यक्ति होती है। किसी प्राकृतिक दृश्य, पुष्प, स्त्री, चरित्र की लहरों की सुन्दर तब माना जाता है जबकि वह कलाकार को भावना द्वारा अभिव्यक्ति होती है। कवि कविता को भावना का अपनी तरह प्रकट करता है। कला: कलाकार अपनी भावनाओं की अपनी कलाकृति में अभिव्यक्ति करता है। इसके लिए कलाकार के हृदय में सौन्दर्य का हीना आवश्यक है। इसे स्पष्ट होता है कि शीघ्र कलाकार के मन में रसा की प्रक्रिया और उसकी अभिव्यक्ति में भाव तर्कों की उत्पत्ति मानता है। कलाकार केवल उस क्षण कलाकार होता है जबकि सृजन- प्रक्रिया चल रही है अन्यथा दूसरे क्षण नहीं। इसीलिए कलाकार की दृष्टि उसकी अन्तर्दृष्टि में निहित है।

यद्यपि शीघ्र कला में समानता तथा सौन्दर्य- तत्वों का अत्यधिक सम्पर्क रहा है। अभिव्यक्तिवाद के प्रमुख विचारक शीघ्र हॉग्स, शपिनहावर, एवं कांट कला को ज्ञान का स्वरूप मानते हैं। अभिव्य-

कावादा का पाश्चात्य एवं भारतीय काव्य वान्दोलन में विशेष महत्व है। हिन्दी साहित्य में 'कवीश्वरवाद' प्राथमिक माना जाता रहा है। इसकी प्रतिष्ठा स्ता एवं साहित्य के सौन्दर्यशास्त्रीय तत्त्वों में अधिक प्रसृत हुई है।

वर्ण्यकावादा कावादा की भी प्रय देता है। काः अभिव्यक्तावादी काव्य को कला से कोहें धारा या उपधारा नहीं स्ता तथापि वाधुनिक हिन्दी काव्य में कवि ने कृप्य को भावनावी के धारा बाधरो वस्तु की वधो तरह प्रस्तुत किया । कावावाद, उत्तर-कावावाद प्रयोग वाद, नयो कविता, नवगत वादि में कवि प्रायः कृपुति की सज्जार् एवं अभिव्यक्ति को ज्ञानदारी की वधि फलत्व दिया । एष दृष्टि से वाधुनिक काव्य की अभिव्यक्तावादी काव्य के नाम से भी अभि-क्ति किया जा सक्ता है। प्रयोगवाद एवं नयो कविता में बोधत्व, भावनक-मिताने मिया की नयो दृष्टि देकर प्रस्तुत किया है जिसे कवि के अभि-व्यक्ति करने में नवोनता के दर्शन होते हैं। काः अभिव्यक्तावादी काव्य का वधो एक विशिष्ट महत्व एवं उपादेयता है जो व्यक्तित्वादी चिन्तन पर बाधारि है। इससे हिन्दी काव्य में अभिवृद्धि के सौधान दृष्टिगोचर होते हैं जोर व्यक्ति की प्रतिष्ठा के सन्दर्भ में नूतन पृष्ठ हुती हैं।

(५) मनीषिस्तम्भणवादी काव्य

वाधुनिक युग के साहित्य में सबसे प्रसृत क्रान्तिकारी परिवर्तन साहित्य में मनीषिज्ञानिक दृष्टिकोण का आगमन था जिसके कारण काव्य, कहानी, उपन्यास आदि में प्रायः के मनी-

विश्लेषणवाद की उत्पत्ति बप्ताया गया। वापुनिक कविता मनोविश्लेषणवादी विज्ञानों पर आधारित है जिसमें अन्तर् मन के क्षेत्र में स्थापित स्व अन्तर् मन की समस्त स्थितियाँ विविध प्रकार के स्थापित स्व अन्तर् मन की समस्त स्थितियाँ विविध प्रकार से स्थापित होने लगी।

प्राचीन काव्य का मूल धर्म संस्कार या परम्परा वापुनिक कविता का मूल केन्द्र व्यक्ति माना गया। जब कविता का वर्तन व्यक्ति विज्ञान के रूप में प्रतिष्ठित होने लगा। व्यक्ति के नैतिक समस्त भावनाएं, कल्पनाएं स्व क्रिया स्थापित कार्यरत हैं। जो: जब व्यक्ति की कविता का व्यवहार बना दिया गया उसके मन की प्रयोग करने की वस्तु मानकर विविध प्रकार के विश्लेषण होने लगे। इस प्रकार की कविता जो व्यक्ति के वास्तविक मन, उपलब्ध-पुस्तक स्व संघर्षयुक्त जीवन की अधिक महत्व देती है वह मनोविश्लेषणवादी कविता के रूप में उभरी। यह व्यक्तिवादी काव्य की एक उपधारा है क्योंकि इसमें भी समस्त क्रियाओं का केन्द्र व्यक्ति है। इस विचारधारा की वक्तव्यवाद, वादावाद, वादि ने अधिक सहयोग दिया। ये दोनों विचारधाराएं भी व्यक्तिवाद के क्रोह से उत्पन्न हुई।

मनोविश्लेषण शब्द का वाक्य 'मानसिकी पाश्चात्तिक कौशल मनोविज्ञान सण्ड में तीन प्रकार से लिया है -

१- मूल्य मानसिक उपचार विधियों की तरह मनोविश्लेषण भी एक विधि है और इसके द्वारा रोगी रोगी रूप से स्वस्थ किया जा सकता है।

२- वस्तुतः मन के अन्दर स्थित मूल्य तथा भावना श्रमियों की जानकारी प्राप्त करने की यह विशिष्ट युक्ति है।

३- मनोविलेखण एक सकारात्मक विज्ञान

या सिद्धान्त है जिसको निच की बपती धारणाएँ हैं और जो फ्रायड के द्वारा प्रतिपादित की गई हैं। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि मनोविलेखण एक सकारात्मक विज्ञान है। आधुनिक काल में सिग्मंड फ्रायड (जन् १८५६ ई० से १९३६ ई०) ने मनोविलेखण का एक कलाव्यवस्थापन निरूपित करने में अत्यधिक योगदान दिया है। इसी कारण यह मनोविलेखण को स्वतन्त्र विज्ञान की श्रेणी में गिना जाता है।

मनोविलेखण के जन्मदाता सिग्मंड फ्रायड

ये उन्होंने इसको पिकित्वाशास्त्र में प्रयुक्त किया है। फ्रायड के स्वप्न सिद्धान्त ने विश्व भर में श्रद्धा पा ली। उन्होंने स्वप्नकी व्याख्या करते स्वप्न व्याख्या (ड्रीम इन्टरप्रिटेशन), स्वप्न - क्रिया (ड्रीम वर्क), व्यक्त की (पैनीफेस्ट कन्टेन्ट), अव्यक्त की (हिटेन्ट कन्टेन्ट), विस्थापन (डिफेंसि-विष्ट), रंजीपण (कन्सेन्सेशन) तथा प्रतीकीकरण (सिम्बलाइजेशन) आदि धारणाएँ प्रतिपादित कीं। उन्होंने व्यक्ति के मानसिक दोषों का प्रमुख कारण काम वृत्ति माना है और काम-वृत्ति के उचित विकास न होने से जो दोष उत्पन्न होता है उसी व्यक्ति को रोग कहा जाता है तथा दमन (रिप्रेशन), अन्तर्गत (क्लिफ्ट), कामविवृत्ति (सेक्स परवर्जन) आदि विकृतियाँ व्याप्त हो जाती हैं। स्वप्न सिद्धान्त के अनुसार स्वप्न व्यक्ति के अन्तर्गत की पूर्ति है। ये व्यक्ति के अन्तर्गत बुद्ध्यावस्था में व्यक्त होती रहती हैं, क्योंकि

ऐसी स्थिति में सामाजिक वर्गों में बाध नहीं होती। इस कारण यह दमित स्त्रियों स्वयं में नग्न रूप, कई नग्न रूप और सभी प्रतीकात्मक स्वयं धारण करके सामने आती हैं।

फ्रायड ने मानसिक स्नायविक रोगों की चिकित्सा के समय अनुभव किया कि सम्पीडन क्रिया (हिस्टोरिस) वातावरण में जबकि व्यक्ति स्वच्छन्द विचार वास्तव्य की स्थिति में हो तो पुराने अनुभव पुनः जीवित हो जाते हैं। उन्होंने इसका मूल काम वृत्ति एवं उसका दमन माना। आः उनके सिद्धान्त का निष्कर्ष- शैशवोय, दमित काम वृत्ति माना गया। फ्रायड ने काम वृत्ति की जीवन की मूल शक्ति माना जो शिशु में जन्म से ही कार्यरत रहती है उसने इसकी 'सिबिडो' नाम से वर्णित किया। शैशवकाल के उपरान्त सामाजिक एवं नैतिक पर्यादाओं के भय के कारण कई तथा 'सुपर ईगो' विकसित होने लगती है और काम वृत्ति का दमन होता रहता है। इसे दमित काम वृत्ति कहते हैं जो निम्न मानस को निर्मित करती है। फ्रायड ने यह भी माना कि शिशु की काम वृत्ति भाई- बहन, एवं माता- पिता की ओर उत्पन्न रहती है, परन्तु नैतिक पर्यादाओं और सामाजिक निषेधों के कारण दमित हो कृष्ठा का रूप धारण कर लेती है जिसे 'हैटिफ़ कृष्ठा' कहते हैं। इसमें विषम लिंगीजनक के प्रति कामेच्छा तथा समलिंगी जनक के प्रति ईर्ष्या का भाव रहता है। हैटिफ़ कृष्ठा साधारण स्वस्थ जीवन में दमित वासनाओं तथा कृष्ठाओं के रूप में व्यक्त होने का प्रयत्न करती है, परन्तु सुपर ईगो के प्रतिरोध के कारण कष्ट के भी में प्रकट होती है। इन कष्ट के भी का जाग्रित हो हिस्टोरिया, अद्विष्ट व्यक्तित्व, अपराध-भावना आदि मानसिक रोगों को जन्म देता है। अतः फ्रायड ने यह

निष्कर्ष निकालता कि व्यक्ति का प्रत्येक कार्य निष्प्रीयजन नहीं होता, व्यक्ति कोई न कोई प्रतीयजन कार्य करता है।

मनीविश्लेषणशास्त्रियों में फ्रायड के उपरान्त युंग, स्त्रेजर, फेल्डनस आदि ने मनीविश्लेषण विज्ञान को नूतन दिशा दी है। वर्तमान काल में फ्रीडम होने, स्लोवन, कार्टर, मागोह, पोड, व्योमिडिक्ट आदि मनीविश्लेषण सम्बन्धी कई कन्सेप्शनों में रूढ़िमान हैं।

युंग का सम्पूर्ण कन्सेप्शण व्यक्तित्व के प्रकारों का सिद्धान्त है जिसमें उन्ने व्यक्ति को दो प्रकार के विभाजित माना है। प्रथम प्रकार के वे व्यक्ति होते हैं जो अपनी ध्यान एवं अपनी शक्ति स्वयं पर ही केन्द्रित रखते हैं, वे अन्तर्मुखी होते हैं। दूसरे वे जो अपनी शक्ति को सामाजिक एवं नीतिक परिवेश में रूढ़िमान रखते हैं, ऐसे बहिर्मुखी कहलाते हैं। अन्तर्मुखी व्यक्ति ही आत्म-केन्द्रित होते हैं जो अपनी विचारों, भावनाओं के केन्द्रित होने के कारण भावुक, कल्पनाप्रिय, स्वान्तर्मुखी, व्यावहारिक, फलायनवादी होते हैं। ऐसे व्यक्तियों को व्यक्तिवादी या व्यक्तिनिष्ठ माना जाता है।

फ्रायड के मनीविश्लेषण सिद्धान्त का कला और साहित्य पर कत्यधिक प्रभाव है। इसके सिद्धान्त को यौनवाद भी कहा जाता है। फ्रायड ने कला धर्म का उद्भव यौन मानस की संक्षिप्त प्रेरणाओं और इच्छाओं में ही होता है- यह काम संक्षिप्त के उन्मूलन के फलस्वरूप कला का उद्भव करता है। मानसिक जीवन में कार्य और सुरक्षा के बीच जो संघर्ष होता है, उसका समाधान कलाकार कला के द्वारा करता है। फ्रायड के कला विश्लेषक सिद्धान्त ने कलाकारों तथा साहित्यकारों को कत्यधिक प्रभावित किया जिसके कारण कविता और

कथा साहित्य में मनोवित्तेषणवाद की नवीन धारा प्रभासित हो गई। यह कथा के परिवेश में वादावाद, वस्तुवाक्यवाद आदि वाक्योक्तियों का विस्तार करने में सहायक सिद्धि हुआ। वाचनिक कविता की मनोवित्तेषणवाद ने कथ्यधिक प्रभावित किया और यौन-प्रतीकों, यौन-चिन्तों, स्वप्न-प्रतीकों, स्वप्न चिन्तों, कृष्ण, श्वास, क्लेश आदि का चित्रण करके हिन्दी कविता को नयी दिशा प्रदान की है। हिन्दी कथा-साहित्य में श्री साहबजी ने अपने उपन्यास एवं कहानी में मनोवित्तेषणवाद के श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। वाचनिक कविता में प्रपञ्चवाद पर मनो-वित्तेषण का कथ्यधिक प्रभाव है। अन्य कवियों में ज्ञेय, मुक्तिबोध आदि पर मनोवित्तेषणवाद और उसके मुक्त साहचर्य का प्रयोग बाधित्य में प्राप्त होता है। इसके प्रतिफलन में यौनवाद, फ्यान्सवाद, भोगवाद, कल्याणवाद आदि के रूप में व्यक्तित्ववादी कविता का प्रकार हुआ है।

(६) वस्तुत्ववादी काव्य

वाचनिक काल में परिस्थिति एवं परिवर्णित परिवर्तनों के साथ साथ वैचारिक क्रान्ति हुई जिसके कारण विचार की चिन्तनधारा में नवीनतम मोड़ आया। वस्तुत्ववाद भी एक ऐसी दार्शनिक विचारधारा है जो व्यक्ति के वस्तुत्व के प्रति अधिक जागरूक एवं प्रति-बद्ध है। वस्तुत्ववाद का शुभारम्भ दार्शनिक आरन कोर्नहार्ट (जन्म १८२३ ई० और मृत्यु १८५२ ई०) के दार्शनिक चिन्तन से होता है जिसमें उन्होंने व्यक्ति की नवीन वैयक्तिकता का उद्घोषण कर वैचारिक क्रान्ति उत्पन्न कर दी। इसके उपरान्त फ्रेडरिक नीत्शे, कार्ल मार्क्स, मैक्स

मार्सेल, डा० मार्टिन हेगनर, ज्या पास सार्ब तथा जाल्सीयर कासू ने
 अस्तित्ववाद की अपनी चिन्तन से नूतन विस्तार प्रदान की है। अस्तित्व-
 वाद की व्याख्या एरिन् कोर्किगार्ड ने इन शब्दों में प्रस्तुत की है-
 अस्तित्व शब्द का उपयोग इस वाक्य पर और देने के लिए किया जाता
 है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी वाप में स्वयं किसी (यूनिक) है और जाल्सी-
 त्विक या वैज्ञानिक प्रक्रिया के क्षेत्र में अविलेखनीय है। यह वह अस्तित्व-
 मय है, जो स्वयं चुनाव करता है, स्वयं स्वयं चिन्तन करता है, यह कि
 वह स्वतन्त्र है, और नूँकि वह स्वतन्त्र है, इसलिए सकल करता है, यह
 कि उसका मणिष्य कुछ क्षेत्रों में उसके स्वतन्त्र चुनाव पर निर्भर है, काः उस
 सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता ।

अस्तित्ववाद के क्षेत्र में मानव की क्षणों
 पार्थिव ज्ञान के उपयोग के प्रति जाल्सी है। अस्तित्ववादी दर्शन चिन्तन

1. The word is that used to emphasize that claim that each individual person is unique and unexplainable in terms of any Metaphysical or scientific system; that he is being who chooses as well as a being who thinks or contemplates, that he is free and that because he is free he suffers and that since his future depends in part upon his free choice it not altogether predictable.

का यह दावा है, जो सम्पूर्ण पार्थिव ज्ञान का उपयोग करता है और उसे उस रूप में परिवर्तित करता है, जिससे मानव पुनः स्वयं क्या बन सके।

बीसवीं शताब्दी के अस्तित्ववादी चिन्तकों के चिन्तन से ज्ञात होता है कि अस्तित्ववाद की प्रकार का है- एक तो ईश्वरवाद तथा दूसरा कौलखरवादी अस्तित्ववाद। ईश्वरवाद में ज्या पास धर्म, कात यास्क, मैथिलस मार्शल हैं और डा० हेडगर, नील्स आदि प्रमुखी चिन्तक कौलखरवादी अस्तित्ववादी हैं। यद्यपि ज्या पास धर्म का निम्नलिखित कथन उसे कौलखरवादी चिन्तक सिद्ध करता है- 'अस्तित्ववाद कौलखरीय और काल्पनिक सह जीवन स्थितियों के परिणामों को प्रस्तुत करने के प्रयास के बिनाय और कुछ नहीं है। अस्तित्ववाद के संदर्भ में भारतीय विद्वान् के० के० जीनिवास आयोगर की मान्यता है कि 'साधारणतः अस्तित्ववाद की उन्ध समानीकरण और अतिशक्तिकरण को प्रतिष्ठित कहा जा सकता है, जो प्रजातांत्रिक और प्रातिवादी तत्त्वों की अतिरिक्ता के कारण यौक्तिक प्रीति के प्रभावों से शरीर और मस्तिष्क का नपुंकीकरण करते हैं। अस्तित्ववाद की

१-

Philosophy of existence is a way of thinking which uses and transcends all material knowledge in order that man may again become himself.

-Encyclopaedia Britannica p 968

2. Existentialism is nothing else than an attempts to draw all the consequences of a coherent atheistic position.

-Existentialism : Jean Paul Sartre p 61

3. In every general terms existentialism may be described as a reaction against the blind equalisation and vulgarisation brought about by the excess of the democratic revolution and the progressive inasculatation of body and mind effected by the technological revolution.

- The Adventure of Criticism KK Srinivas Iyengar p870

व्याख्या करते हुए डा० श्यामसुन्दर मिश्र के विचार अधिक सार्थक हैं-

वस्तित्ववाद कुमातल जीवन के विभिन्न विधीयों (सामाजिक, नैतिक, वार्तिक, राजनैतिक) और वैज्ञानिक उपसब्धियों को यात्रिकता के बीच बाधक व्यक्ति- स्फाटों की वास्तविक चिन्ता का वैज्ञानिक और समीचीन विश्लेषण है।

वस्तित्ववाद की प्रकृति: वाक्यात्मिक संकेत, अवरोधक, स्फाटिक का संकेत एवं पराभववाद का दार्शनिक स्वयं माना जाता है। वस्तित्ववाद व्यक्ति के व्यक्तित्व की विश्व के विराट् परिवेश की समीक्षा के समान अपनी उत्कृष्ट- बोध की समीक्षा दृष्टि करता है। इस कारण वस्तित्व के प्रति जागरूक व्यक्ति के हृदय में भय, ईर्ष्या, अ-वस्तित्व की भावना व्याप्त हो जाता है। आधुनिक हिन्दी साहित्य में वस्तित्ववादी विचारधारा का प्रवर्धन चम्पियनर होरासंद बालग्यायन कवि की कहानी, उपन्यास और कविताओं के द्वारा हुआ है। कतः हिन्दी साहित्य में वस्तित्ववाद के प्रसार में कवि का विशेष योगदान है। कवि का अपनी अपनी कल्पना उपन्यास वस्तित्ववाद के संघर्ष में प्रमुख स्थान रखता है। वस्तित्ववादी कविता पर कवीश्वर, विजय और व्यक्तिवाद का विशेष प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

हिन्दी काव्य में 'तारुण्य' के प्रकाशन से वैयक्तिकतापस्तक और वस्तित्ववादी कविता का सुधारमान माना जाता है। वस्तित्ववादी कविता के प्रमुख कवि कवि, गिरिजाकुमार माधुर,

१- वस्तित्व - कुछ नयी स्थापनायें - श्यामसुन्दर मिश्र - ज्ञानीदय

कास्त १९६६ पृ० ६

भारतभूषण कृष्णदास, धर्मद्वार भास्ती, मुक्तिबोध, सर्वेश्वर दयाल सबसेना, कृष्ण नारायण, रघुवीर सहाय, विजयदेव नारायण साहो, दुष्यन्त कुमार त्यागी, केशव वाजपेयी आदि हैं। इनकी कविताओं के मूल में मानवीय मूल्यों का विघटन, आत्मन्य संकट एवं परिवर्तित होना हुआ आभावरण है जिसके कारण ऊँचकविता, बोट कविता, रमझानो पीढ़ी आदि के नाम से कविता में विकृतियाँ उभरी हैं। आधुनिक कविता में अस्तित्ववाद की कविता का अपना एक अलग प्राणिम निर्मित ही रहा है। अस्तित्ववाद के संदर्भ में हम क्षुरं अध्याय में विचार करेंगे।

६- समाहार

व्यक्ति क्षुरतियों का पुंव है, प्रत्येक साहित्यकार अपनी व्यक्ति की क्षुरतियों के माध्यम से जीता है। वह दैनिक क्षुब्ध एवं संवेदनाओं के वन्दनार्थ अपनी "स्व" की उद्घाटित करता है, प्रत्येक साहित्यकार पहले व्यक्ति है और कवि बाद में। इसी प्रकार कवि पहले व्यक्ति है और कवि बाद में। इससे यह स्पष्ट होता है कि कवि व्यक्ति को समग्र क्षुरतियों एवं व्यक्ति हस्त धारणाओं की अपनी वापसी समाहित किये हुए है। व्यक्ति का काव्य से कटू सम्बन्ध है। व्यक्ति काव्य के बिना नोरस जीवन व्यतीत करता है। अतः काव्य एवं व्यक्ति एक दूसरे के मूलक हैं।

कवि की काव्य सृजन के हेतु विविध पद्धतियों का संकलन ग्रहण करना पड़ता है। विश्व साहित्य में विविध प्रकार के

बान्दीसन हूर है जो कि अपना विशिष्ट स्थान रखी है। इसी प्रकार काव्य में भी बान्दीसों का प्रसार समय-समय पर होता रहा है। प्रत्येक काव्य को कथ्य (कंटेंट) एवं रूप (फार्म) के द्वारा ही प्रस्तुत किया जा सकता है। काव्य के कथ्य में परिवर्तन होने पर विविध बान्दी-सों का जन्म हुआ है। काव्य में कथ्य के परिवर्तित होने पर व्यक्तिवादो काव्य में व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों का विविध प्रकार से प्रसार हुआ। इसी काव्य में कविवादी, वक्तियार्थवादी, वमिष्यैकतावादी, वस्तित्ववादी आदि प्रसुत काव्यान्वीसन विकसित हूर जो कि अपना जलग-जलग वस्तित्व रखी है। इसी प्रकार काव्य के रूप में परिवर्तन होने पर कलावादी, वमि-ष्यैकतावादी, वक्तियार्थवादी बान्दीसन उभर कर सामने आये हैं। कवि एक जागृत प्राणी है। इसी कारण उसका आन्तरिक व्यक्तित्व अपनी जड़ के प्रति सदा रहता है। जड़ भावना का काव्य में जागमन मनीषिस्ते-षणवादी जन्मजन्मों के द्वारा हुआ है। आत्माविश्वविषय के तिर कवि में जड़ का हीना जग्यधिक आवश्यक है। जब कवि आत्म केन्द्रित एवं व्यक्तित्व-निष्ठ हो जाता है तो उसके विचारों एवं वमिष्यैकता में परिवर्तन आने लगता है। कतः वह कला के विकास के तिर अपनी सज्ज को नूतन दिशा प्रदान करता है। इसी कवि काव्य के प्रति पुर्णतः समर्पित हो जाता है। कवि द्वारा कथ्य में परिवर्तन आने से वमिष्यैकतावाद को नोब फूँ ।

कवि मूर्तः केतना सम्पन्न प्राणी है, वह व्यक्ति-स्वातंत्र्य, वैयक्तिक-शक्ति, व्यक्ति-क्ति आदि के प्रति सदा रहता है। व्यक्ति को निजी अनुभूतियाँ और व्यक्ति-स्वातंत्र्य के प्रति जगम्य साक्ष्य ही उसे विद्विष के प्रति जलपर करता रहे है। ऐसे काव्य में विद्विषात्मकता नकारात्मकता एवं विरोधपरक कविताओं का बाहुल्य

हुवा, वह सर्व स्वार्थ्य के तिर धर्म, समाज एवं देश केवन्हीं की तोड़ कर मुक्त होने का प्रयास करता रहा है। उस मुक्त की भावना ने काव्य में रोमाण्टिसिज्म, स्वतन्त्रतावाद, सामाजिक, प्रयोगवाद आदि काव्यान्वेषणों को विकसित होने में सहायता दी। इसे स्पष्ट होता है कि जो स्वार्थ्य की भावना प्रजातीय की रोद थी, कालान्तर में वही वाधनिक काव्य की प्रवृत्तियों की मुख्य स्तम्भ बनो। व्यक्ति-स्वार्थ्य की भावना काव्य में अपनी तीव्रतर रूप में प्रकट हुई कि धार्मिक काव्य के स्वर भी स्वार्थ्य केना की व्यञ्जना करने लगे। इसे यह सिद्ध होता है कि वाधनिक कवि को मूल प्रवृत्ति स्वार्थ्य के प्रति कटू वास्था है। जब कवि देश, समाज, धर्म आदि की नैतिक, सामाजिक, धार्मिक मान्यताओं को व्यङ्ग्य करना अपना लक्ष्य मानने लगा। इसे काव्य में यौनवाद, भोगवाद, विद्रोह, अनाध, आस्था, कुप्टा आदि के रूप में काव्य-व्यञ्जना होने लगी। कवि निरंकुश है, वह आत्म सिरपी है, वह मुक्त है तथा अपने व्यक्ति-स्वार्थ्य के प्रति सर्व सज्ज है। कवि का व्यक्ति-स्वार्थ्य काव्य में प्रतिबिम्बित हो नहीं होता, अपितु उसकी स्थापित करने के लिए अन्य उपादानों की भी एकत्र करता है, जैसे - वर्ग की स्वीकृति, पापहाजी एवं द्रवियों का विरोध, यौन वर्जनाओं के प्रति कर्तौण, जीवन के प्रति कर्तौण एवं आस्था, नूतन मूल्यों की स्थापना आदि। काव्य में व्यक्ति-स्वार्थ्य आदि कास के प्रकटित है तथापि काव्य में व्यक्ति-स्वार्थ्य का वाग्वन यूरोपीय दर्शन व्यक्तिवाद की उपसृधि है। वाधनिक हिन्दी काव्य भी व्यक्तिवादो विचारधारा के उदय में यूरोप के दर्शन एवं साहित्य का जणो है।

(इ) काव्य में व्यक्तिवादो प्रवृत्तियाँ

व्यक्तिवाद सर्वत्र नूतन युग के प्रति

बाधायमान रहा है। वह बान्धविक एवं सीलसि संस्कारों, विवेकविधियों, कधीभूत परम्पराओं, जबर कदियों के साथ विद्रोह एवं विरोध की मुद्रा में बात करता है। व्यक्ति जहाँ बान्धव संभावनाओं का पुत्र है, वहीं वह सामाजिक, नैतिक, धार्मिक, राजनीतिक बन्धनों एवं परम्पराओं से अपनी स्वतन्त्र व्यक्ति को विकास के पथ पर मुक्त देखना चाहता है। वह समाज की एक स्वतन्त्र इकाई है जिसका अपना एक अस्तित्व है एवं उसकी अपनी एक गरिमा एवं स्वातंत्र्य की भावना है। उसके विकास के लिए सामाजिक, धार्मिक, प्रजा, शासकीय विधि-विधान तथा अनुष्ठान आदि कारीज हैं। वह समाज के सामान्य एवं साधारण व्यक्तियों से अलग एक विशेष व्यक्ति है, इसी कारण वह अपनी मनः सृष्टि तथा मनः स्वप्नों को प्रत्येक स्थान पर साकार रूप में देखना चाहता है। कठ-मुत्तर्ल एवं पुराणपथियों का आभिवात्यवाद, नैतिकता, मान्यता, सुद-वाद, मर्यादा तथा कठोर नियम आदि व्यक्तिवाद के अनुत्पन्न नहीं हैं। इसी कारण व्यक्तिवादो कवि किसी भी शासन समाज एवं संस्था के दबाव आदि की न धक्कर अन्तर्मुखी, सकाकी, कलबोपन का जीवन जीने लगता है। काव्य में व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों का व्यक्ति के अन्तर्मुख, इष्टाष्ट, विद्रोह, विपत्ति, आत्म-केन्द्रीय प्रवृत्ति आदि के कारण विकास हुआ है। इसी कारण काव्य के कथ्य एवं शिल्प में निरन्तर परिवर्तन होता रहा है। व्यक्तिवाद समाज एवं राज्य पर अल देकर व्यक्ति की मर्णा की पूर्ण कराने का पदापाती है। व्यक्ति की मूल प्रवृत्ति विद्रोह है,

जिसकी जीवस्वता की उद्देगलोलता के कारण व्यक्ति में निरन्तर
 वात्म निरोधण, वात्मानुबंधन की भावनाएँ जाग्रत रहती हैं। इसी
 कारण काव्य में व्यक्तिवादी कवि निरन्तर वक्षिण एवं प्रयोग की
 कीर प्रवृत्त रहता है। बाह्य घटनाओं, सम्पर्कों एवं परिस्थितियों से उपेक्षित
 रहकर व्यक्तिवादी कवि की कृपय में नूतन दृष्टि की कीर स्वनिर्मित स्वर्णा
 की कल्पना में हत रहता है। व्यक्तिवादी कवि अपनी वात्म दीप्ति से
 मार्ग प्रशस्त करता है।

बाधनिक युग के काव्य में ऊँच के प्रति लगाव
 या 'मैफ' (मास्के) के प्रति निरन्तर जागृकता प्राप्त होती है।
 काव्य काव्य के काल पर व्यक्तिवादी कवि अपने राग- विराग, दर्श, विचार एवं कृत्यतियों की वक्षिण्यता करने में प्रयत्नशील रहता है। जब
 व्यक्तिवादी चेतना पूर्णतः उत्थान पर होती है तो व्यक्तिवादी कवि
 वात्मचरित्र एवं वात्म कथा के साथ साथ वात्म प्रताप, वात्मानुभव एवं
 वैयक्तिक कृत्यतियों की प्रस्तुत करने के लिए संघर्षरत पाया जाता है।
 इसी परिप्रिप्य में व्यक्तिवादी कवि वात्म निरोधण, वात्म वक्षिण्यता
 कीर वात्म रति की कीर पिशिन प्रवृत्त रहता है। इसी स्थिति में वह
 समग्र विश्व एवं समाज के सम्बन्धों की वक्षिण्यता से देखता है क्योंकि वह
 अपने उदात्त कर्म से निरन्तर प्रेरणा प्राप्त करता है। वह प्रत्येक पौद्धित
 या लीनित व्यक्ति के प्रति खेदना प्रकट करता है कीर समाज में वक्षिण्यता
 उत्पन्न करने वाले नियमों की समुत्त नष्ट करने का वाक्यांश रहता है।

व्यक्तिवादी कवि वात्सल्यिक वाक्यांश
 एवं प्रथम वक्षिण्यता से सम्पन्न होता है कीर सामान्य की वक्षिण्यता

के रूप में ग्रहण करता है तथा साधारण को असाधारण के रूप में अभिव्यक्त करता है। वह समाज एवं साहित्य में निरन्तर अपनी जीवन मूल्यों को स्थापित करना चाहता है। इसलिए वह निरन्तर परिवर्तन करता रहता है। वह काव्य में भी जीवन मूल्यों को निरन्तर परिवर्तित रूप में प्रस्तुत करने का ब्यापारी है। काव्य में सहजानुभूति के साथ सहज अभिव्यक्ति की आवश्यकता है। वह व्यक्ति केतना की महत्त्व देता है। अतएव काव्य में व्यक्ति-केतना, वैयक्तिक वाक्पित्र एवं व्यक्ति-स्वातन्त्र्य की काव्य के रूप में अभिव्यक्ति प्रदान करता है। स्वाभाव एवं वाग्मिवात्क्याद के कुछ नियमों में साम्य है। परन्तु व्यक्तिवादो धरातल पर यह नियम टूट जाते हैं और व्यक्ति के आन्तरिक स्पन्दनों, अनुभवी एवं उसकी अन्तर्दृष्टि की स्वयं महत्ता प्राप्त होती है। व्यक्तिवादो कवि निराशा की स्थिति में समाज से पलायन कर प्रकृति के प्रणिण में अपनी आन्तरिक केतना की साकार रूप प्रदान करता है। वह प्रकृति की अपनी कुछ दुःख के रूप में देखा है और प्रकृति में अपनी मनःस्वप्नों एवं अपनी कल्पना का साम्य प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। व्यक्तिवादो काव्य में विज्रीह एवं अवसाद की मुद्रा निरन्तर प्राप्त होती है। जब व्यक्तिवादो कवि की अभिलाषाएँ क्षुब्ध रह जाती हैं तो वह काव्य के द्वारा अपनी कलौष को व्यक्त करता है। परन्तु जब वह सामाजिक नियमों एवं कुरीतियों से अपनी की अपमर्ष पाता है तो अन्तर्मुखी होकर उधारा से पलायन करता है या एकाकी जीवन की कामना करता है जन्मा अपनी सङ्कल्प का बोध होने पर अवसादग्रस्त या दृष्टिहीन हो जाता है। जब वह अपनी कम में विकसित होता है तो उसे ग्लानि होती है, सब वह दुःख की जीवन का पर्याय मानने लगता है और उसी प्रकार का काव्य पूजन करता है। अब दुःख- दुःख के पूजन में वह कभी अट्टहास

कहा है तो कभी विचकियां मरते हुए सख्त जीवन बिता देना चाहता है। जो कारण व्यक्तिवादी काव्य भावनामय, धृष्टता एवं कल्पित प्रवृत्तियां आदि से युक्त पाया जाता है। कभी-कभी विराट् कल्पनाओं एवं कथाओं की विफलता पर वह आत्म प्रसन्न एवं आत्मपातो बन जाता है। जो कारण काव्य में मृदुपासना, आत्म कथा एवं आत्म-जनन की प्रवृत्तियां भी प्राप्त होती हैं।

व्यक्तिवादी कवि का कर्म ज्ञाना तोष एवं प्रगाढ़ होता है कि उसका लघु दुःख विराट् दुःख बन जाता है और उसका लघु सुख विराट् सुख या विलक्षण सुख में परिवर्तित हो जाता है। ज्यों उसकी जीवनशोखता एवं भावप्रवणता, कल्पना, स्वप्नशीलता अधिक सहयोग प्रदान करती है। व्यक्तिवादी काव्य में जीवन का कन्वेनशन् और ज्ञात के प्रति अधिक उत्सुकता प्राप्त होती है। जो कारण बाधुनिक कविता में बोट कविता, श्फानी पीढ़ी और कभी-कभी सुदूर निरन्तर प्रस्तुत हो रही है।

जब प्रजातामिक व्यवस्था में व्यक्ति की प्रतिष्ठा प्राप्त होती है तब पुरातन , जहाँ सामन्तीय मूल्य विघटित होते हैं और श्रि या मानव श्रि की महत्व प्रदान किया जाता है। बाधुनिक व्यक्तिवादी काव्य में आत्म निष्ठ दृष्टिकोण, व्यक्ति-वस्तु, कल्पना-शोखता, धृष्टदर्शिता, नग्न कथन, स्वप्न दर्शिता, भाव प्रवणता, कदुश्य के प्रति उत्सुकता, आन्तरिक जीवन के अनुष्ठाटित मूल्य स्तरों का कन्वेनशन् विद्रोह, निषेध , फताक, नकारात्मकता, लघुत्व- बोध, लणबोध, कर्म बोध , जीवनपरक प्रतीकों का बाहुल्य, एकाकी जीवनबोध, भाषा

एवं इन्हीं के प्राचीन नियमों का भजन तथा प्राचीन जीवन मूल्यों का भजन आदि की प्रवृत्तियाँ पायी जाती हैं।

काव्य की व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों पर लक्ष्य प्रकार विचार किया गया है :

- नये काव्य की सबसे प्रमुख प्रवृत्ति है,

‘व्यक्ति’ की परिभाषित करने का प्रयत्न।

- व्यक्तिवादी काव्य में कवम् को व्यक्ति-व्यक्ति पर अधिक बल दिया जाता है।

- व्यक्तिवादी काव्य में कवि कव्य की अनुवृत्तियों को अपनी दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है।

- कव्य में पाठ के महत्त्व को महत्त्वपूर्ण माना गया है।

- कव्य में व्यक्ति के अस्तित्व को स्थापित करने का प्रयास किया जाता है।

- व्यक्तिवादी काव्य में धीरे-धीरे व्यक्तिवाद के प्रभाव में यौन भावनाएँ एवं यौनपरक बातों का निवृत्ति प्राप्त होती है।

- व्यक्तिवादी काव्य में ‘व्यक्ति’ की केन्द्र मानकर रचना होती है।

- व्यक्तित्वादी काव्य में किसी कलात के प्रति उल्लेख भी प्राप्त होती है।

- इस काव्य की कहीं कत्यधिक कल्पना प्रधान एवं स्वप्नलोकता से चिन्तित पाया जाता है तो कहीं नम्र वयार्थ का चित्रण भी प्राप्त होता है।

- व्यक्तित्वादी कवि अपनी दुःख के प्रति खेद निष्ठा रखता है और अपने वयार्थ को अपनी लम्बाई में प्रस्तुत करता है।

- व्यक्तित्वादी काव्य में आत्म-पोहन एवं 'दर्द-बीध' प्राप्त होता है।

- व्यक्तित्वादी काव्य में पुरातन परम्परा, पर्याय, श्रुतियाँ एवं नियम आदि का निषेध मिलता है।

- व्यक्तित्वादी काव्य मुक्तः विद्रोह, विपत्ति, विलाप, आक्रोश, नकारात्मकता, कृष्ण, संशय, एवं अस्तित्व का काव्य है।

- व्यक्तित्वादी कवि विचारों की स्वतन्त्र कक्षा घोषित करता है और काव्य में भी स्वतन्त्र कक्षा का पक्षपाती रहता है।

- व्यक्तित्वादी कवि कभी हर्ष लोको पर नहीं बलता, बल्कि लोकों का स्वयं निर्माता है। वह: नीति सिन्धु पर बल देता है।

- व्यक्तिवादी काव्य में नये सत्य के निरन्तर खोज-खोज की प्रवृत्ति प्राप्त होती है।

- व्यक्तिवादी काव्य में व्यक्ति-सत्य की प्रधानता दो गई है। इसी कारण यह काव्य व्यक्ति-निष्ठ होता है।

- व्यक्तिवादी कवि क्रिया-शक्ति की व्यक्ति-व्यक्ति के संबंध में सर्वेक्षण करता रहता है।

- व्यक्तिवाद में वैयक्तिक क्रिया-शक्तियों का महत्त्व है। का. कवि अपनी क्रिया-शक्तियों को नये से नये ढंग से प्रस्तुत करता है और व्यक्ति-व्यक्ति के सम्बन्ध को अन्वेषण द्वारा नया रूप दे सकता है।

- व्यक्तिवादी काव्य में बहुत सारे शिल्प-तंत्रों को नये प्रयोगों की कक्षा में प्रस्तुत किया जाता है, ताकि उनमें 'नवीनता' का खोज-खोज होता रहे।

- व्यक्तिवादी काव्य में मनोवैज्ञानिक यथार्थ एवं व्यक्ति के जीवन की प्रस्तुत किया जाता है, जिससे काव्य में चेतना प्रवाह^१, मुक्त वाणी^२, क्रियात्मक भावना प्रवाह^३, प्रतीक-व्यक्ति^४, छद्म-व्यक्ति^५ आदि प्राप्त होती है।

१- Flow of Consciousness

2. Free Association

3. Emotional sequence

4. Allusiveness

5. Sutile Irony

- व्यक्तिवादी काव्य की एक लक्ष्य प्रवृत्ति है, कवियों के साथ नये सामाजिक सम्बन्ध स्थापित कर उनमें नूतन कथन भरना । इसके वह नये शब्द - विन्यास , प्रतीक, विषय, इन्द्र बादि को निरन्तर जीवन में ला रहा रहता है।

- व्यक्तिवादी कवि ' कवम् ' के प्रेरणा प्राप्त करता है, यही कारण वह अपनी कृष्ण की वैभवं मानता है। इसके प्रतिफल में वह अपनी प्रत्येक रचना में दूर की कोढ़ी लाने का आकांक्षी रहता है।

- व्यक्तिवादी काव्य में पराजयवादी, विफलवादी, निराशावादी भावनाओं का चित्रण भी प्राप्त होता है।

- व्यक्तिवादी काव्य में फलकवादी एवं प्रकृति के प्रति सामाजिकता की भावनाएं भी प्राप्त होती हैं।

- व्यक्तिवादी कवि भीड़ तन्त्र एवं समुह से दूर जननी एवं स्त्री की का जीवन जीता है। इस कारण उसके काव्य में जननीपन, स्त्रीपन एवं समुह से अलग रहने की प्रवृत्तियाँ प्राप्त होती हैं।

उपरिलिखित काव्य में व्यक्तिवादी प्रवृत्तियाँ पर विचार करने से प्राप्त होता है कि व्यक्तिवादी कवि सदैव अपनी व्यक्ति-सत्य के प्रति जागृत रहता है। उसका जीवन स्वयं ही सत्य का जीवन है। उसका कवम् उही सत्य के प्रति उभर रहा रहता है। वह अपनी ही विशिष्ट या असाधारण प्रवृत्ति को जगृत करता जा रहा

है, इसी कारण वह विभिन्न प्रयोग करके समझाकर दिखाना चाहता है।
 यही भावना उपरिलिखित समस्त प्रवृत्तियों में प्राप्ता होती है। यद्यपि उक्त
 व्यक्तिवादी प्रवृत्तियाँ काव्य के विस्तृत फलक के सम्बन्ध में प्रस्तुत की गई
 हैं, तथापि कुछ प्रवृत्तियाँ में विरोधाभास भी हो सकता है। यह कुछ विभिन्न
 एवं काव्य की परिस्थितियाँ तथा दुर्गम सम्बन्धों पर बाधाहित है।

द्वितीय अध्याय

वाधुनिक हिन्दी कविता (सन् १९०१ ई०
से सन् १९३६ ई० तक) में व्यक्तित्ववाद का

वन्द्य

वाधुनिक हिन्दी कविता में व्यक्तिवाद का कन्दुब्य

(सन् १९०१ से १९४० ई० तक)

(क) हिन्दी कुनि काव्य में व्यक्तिवाद

(१) हिन्दीकुनि काव्य में व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का प्राप्ति

भास्तिन्दु कु की वाधुनिकता र्व नवीनता की निवृत्ति पर हिन्दी कु का साहित्यिक प्रासाव निमित्त हुवा । देश-भक्ति, लीकल्याण, समाज सुधार, पात-भाषीदार, व्यक्ति-कार्त्तव्य वादि का प्रसार भास्तिन्दु कु से ही हिन्दी कु के कवियों ने ग्रहण किया । सन् १९०० ई० से सन् १९२० तक वाचाय महावीर प्रसाद हिन्दी का हिन्दी साहित्य पर अत्यधिक प्रभाव रखा है। हिन्दी की " सरस्वती " के सम्पादक के रूप में हिन्दी की में अतर्हित हुए । लः लः हिन्दी के साहित्यिक की में हिन्दी की के व्यक्तित्व की अम्पिट रूप फुले लगी । कार्थ में हिन्दी की कु के प्रमुत व्यक्ति रहे हैं। उनका प्रभाव हिन्दी कु के सभी की र्व विचारों पर विविध रूप से प्राप्त होता है।

उस कु के प्रसिद कवि उस प्रकार हैं- महावीर

- १- हिन्दी की की कु के साहित्य के केन्द्र रहे हैं कीर उस कु के प्रायः सभी महान् साहित्यकार प्रयत्न या परीक्षा रूप से उनके अविचार रूप से प्रभावित हुए हैं। उस कु के हिन्दी साहित्य के सभी की के भाव या भाव पदा पर हिन्दी की की रूप है।

- डा० उदयभानु सिंह - महावीर प्रसाद हिन्दी कीर उनका कु -

प्रभाव दिवेदी, नाथुराम शर्मा 'लंकर', श्रीधर पाठक, जयजीया सिंह उपाध्याय 'हरिवीथ', राय देवी प्रभाव पुर्ण, रामचरित उपाध्याय, लक्ष्मणरायण पाण्डेय, लीजन प्रभाव पाण्डेय, मेफितीकरण गुप्त, रामचरित रिपाठी, विद्याराम शरण गुप्त, मुकुटधर पाण्डेय, राम चन्द्र गुप्त आदि। इस युग की सामाजिक एवं धार्मिक दृष्टीविर्धी की डर करने के लिए राजा रामजीवनराय, केशव चन्द्र सेन, स्वामी दयानन्द, राम कृष्ण एवं विवेकानन्द जैसे विद्वान् कटिबद्ध रहे। बाकि इस से भारतीय जनता कीर्तियों के साम्राज्यवाद, पुनर्वाद, बीपनिविधिक शोचणनोति के संशुत में पुर्णतया जा चुकी थी।

दिवेदी युग में राजनीतिक परिस्थितियाँ निरन्तर बदलती होती गईं। काँग्रेस, नार्थ मिण्टी सुधार द्वारा साम्प्रदायिक निर्वाचन प्रणाली, प्रेस एक्ट, प्रथम विश्व युद्ध, रोलिट एक्ट, अतियाँ वाता वाग हत्याकाण्ड, सिताफत बान्दोतन आदि समस्याएँ प्रसुत इस से सामने आयीं।

सन् १९०० ई० के उपरान्त भारतीय जन-जीवन में सुधार की लहर लगी जिसने समस्त भारतीय जनता की आन्दोलित कर दिया। दिवेदी युग के लिए यह परम सौभाग्य की बात थी। इस युग के प्रारम्भ होने तक कार्य-समाज, प्रस-समाज आदि के सुधारात्मक आन्दोलन विकसित हो गये। इसके अन्तर्गत में नैतिकता, मार्गता एवं वादार्थों के प्रति तीव्र लालसा उत्पन्न हो गई। दिवेदी युग के निर्माता प्रतिनिधि एवं साम्य पी० महावीर प्रभाव दिवेदी हैं। उनका लक्ष्य व्यक्ति

द्विवेदी युग का प्रतिनिधित्व करता है। द्विवेदी जी द्वारा साहित्य में शुद्ध वाच्योक्त का सुवर्णपात हुआ। वे वादार्थों के निर्माता और पुनरुत्थानकार के कट्टर समर्थक रहे। बाफ़ी साहित्य में उन वादार्थों को स्थापित किया जो भारतीय जन-जीवन को मार्ग थे। बाफ़ी कठोर नियम, नैतिकता, वादार्थत्मकता, उन्नता, नीरसता, धर्मप्रियता आदि में उस युग के साहित्य को अत्यधिक प्रभावित किया। द्विवेदी युगीन काव्य बाफ़ी इस वादार्थत्मक नैतिकतापूर्ण अवधारणाओं एवं नियमों से पूर्णतया प्रभावित रहा। द्विवेदी युग के कवियों में क्लृप्त के प्रति मोह है। परन्तु भाषा के परिष्कार एवं संस्कारक प्रवृत्ति ने उन्हें व्यक्तिवाद के समोपसा दिया। नैतिकता और वादार्थत्मकता के मध्य व्यक्तिवाद का स्वल्प वादार्थत्मक व्यक्तिवाद के रूप में उभरा। वादार्थत्मक व्यक्तिवाद से तात्पर्य यह है कि व्यक्ति क्लृप्त के प्रति मोह ली रहे, परन्तु उसके साथ उसमें नवीन वैज्ञानिक उन्नति के विचारों एवं आविष्कारों को ग्रहण करने की तीव्र लालसा रहे। सामाजिक दृष्टिकोण से इतिवादी कृतिवियों का सम्बन्ध करने का प्रयास इस युग में हुआ। इसके व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों को विकसित होने में अधिक समय नहीं लगा।

द्विवेदी युग की कविता प्रीतिवादी तथा सामन्वी वादार्थों से सिक्त है। इस कविता में व्यक्तिवाद, मानवतावाद, नीतिकता तथा कल्याणवाद का भाव प्राप्त होता है तो दूसरी ओर नियम मर्यादा, परम्परा, भाग्य तथा धर्म के प्रति विश्वास दृष्टिकोण भी होते हैं। समानता, स्वतन्त्रता तथा प्राप्ति का भाव भी इस कविता में विस्तार फैला है।

इसका अर्थ यह है कि विवेकी युग में व्यक्तिवादी प्रकृतियाँ बाह्यिक एवं पुरातन संस्कारों के अन्तर्गत स्थितियों में थीं जो कि स्वतन्त्रता, समानता, नीतिवाद एवं बन्धुत्व के रूप में व्यक्ति स्वातन्त्र्य को समाहित करती रहीं।

विवेकी युग में व्यक्तिवाद की प्रवृत्ति धारा प्रवाहित होती रही। इस युग का अधिकतर काव्य वर्णनात्मक एवं प्रबन्धात्मक है, परन्तु प्रकृति एवं जीवन के प्रति इस युग के कवि का दृष्टिकोण परिवर्तित हो रहा था। प्रकृति के प्रति परिवर्तित दृष्टिकोण वर्णन के कारण इस युग में स्वतन्त्रतावाद की प्रकृतियाँ विकसित होने लगीं।

जीधर पाठक ने पारम्पर्य स्वतन्त्रतावाद की जात्मसात् कर हिन्दी काव्य में व्यक्तिवादी विचारधारा के एक नूतन परिवर्तन प्रदान किया। स्वतन्त्रतावादी काव्य इसी युग की देन है, जिसमें व्यक्ति स्वातन्त्र्य एवं व्यक्ति-मुक्त की कामना के चिन्तित व्यक्ति प्रकृति की ओर प्रवृत्त हुआ।

डा० सन्देशनाथ प्रधान इस युग के मुख्य कर्म का मूल्यांकन करते हुए व्यक्तिवादी विचारधारा के तत्त्वों की इस प्रकार उद्घाटित करते हैं, 'उसके संरूप में वृद्धता है, दृष्टि में निश्चयात्मकता है, कर्म में व्यवस्था है, वाचरण में सुदृढ़ता है, मन में उत्साह है, वाणी में गरज है, बुद्धि में विश्वास है, मूर्त्यों में आदर्शवादिता है,

कृपय में शुष्कता है, काव्य में शक्तिवृत्तात्मकता है, विनारी में संकीर्णता है, उद्देश्य में समाज फेस की भावना है।

इससे ज्ञात होता है कि द्विवेदी युग के काव्य में कविवाद, विद्वीह, भीमवाद एवं व्यक्ति-वार्ताव्य का स्वर निरन्तर तोड़ होता रहा है। उस युग का कवि पुरातनता के युग में व्यक्ति-स्वातंत्र्य, व्यक्ति-हित एवं व्यक्ति-चिन्तन की रचना का उद्घोष उपेक्षित नारी को महत्ता, प्रकृति के महत्त्व, विपुलता के महत्त्व आदि में धाराएँ फड़ता है। उसके साथ साथ बलि नार्यों की नूतन दृष्टिकोण से प्रस्तुत किया जाने लगा। द्विवेदी युग का काव्य पुरातनता को फड़ता है वहीं वह पुरातन कथाओं, वाक्यानों और घटनाओं में नयापन प्रस्तुत करता है। उस युग का काव्य प्राचीन परिपाटियों को परिवर्तित कर आधुनिक परिवर्तन में परिवर्तन को गतिशीलता को निरन्तर तोड़ गति देता है। काव्य के साथ सितफल प्रयोगों ने भी व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों को महत्ता प्रदान की। काव्य में लक्ष्मी जीती का प्रयोग भाषा में परिवर्तन का वाग्रह, लोक कवियों का प्रयोग आदि ने प्रयोग को नवीन सितफल भूमि प्रदान की। डॉ. व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों के संक्षेप में द्विवेदी युग ने एक उत्प्रेरक का कार्य किया। उसी काव्य की नवीन भूमिप्रदान की एवं नये प्रयोगों के प्रति कवि को सतत प्रेरित होता रहा।

इसी कारण द्विवेदी युग की व्यक्तिवादी काव्य का शिखर कहा जा सकता है जिसका विकास जायावादी काव्य

के शोध में हुआ और जीक काव्यान्वोसर्गों की विविध वितार प्राप्त हुई। विवेदो युग का व्यक्तिवाद धार्मिक व्यक्तिवाद से अधिक प्रभावित है, इसी कारण इसकी वादशास्त्रिक व्यक्तिवाद के नाम से अभिलिखित किया गया है।

२- विवेदोयुगीन कविता में व्यक्तिवाद का स्वरूप

वादशास्त्रिक व्यक्तिवाद के तत्त्व

विवेदो युगीन कविता का स्वरूप पुनरुत्थानवादी विचारधारा से वादग्रस्त है, जिसके कारण व्यक्तिवादो काव्य-प्रवृत्तियाँ नैतिकतावादी और आदर्शवादी काव्य केतना से अधिक प्रभावि होती रही हैं। विवेदो युग के कवि शुष्कता, वृद्धिवाद एवं मर्यादा का वावरण जीढ़कर वाधुनिकता की ओर उन्मुख हुए। उन कवियों में एक और धार्मिकता एवं अवतारवाद के प्रति तीव्र ललक है जो दूसरी ओर मूल्य वाचिकारों के प्रति गहरी वास्था भी प्राप्त होती है। इसी कारण विवेदो युग के व्यक्तिवाद की वादशास्त्रिक व्यक्तिवाद की रीति दो है।

डा० क्लमण्ड तिवारी ने वादशास्त्रिक व्यक्तिवाद की विवेदोयुगीन व्यक्ति के क्लोस केगोस्व को तुलना में नवीन उन्वति के तत्त्वों के प्रति वाधुनिक होना माना है और सामाजिक कदियों के प्रति वाधुनिकता वाधुनिकता की शुद्ध एवं वात्तिक रूप में ग्रहण करने का वाधुनिक किया है। वाधुनिक परम्पराओं और युगों की

१- डा० क्लमण्ड तिवारी- वाधुनिक वाधुनिक को व्यक्तिवादो मृमिका

जब मान्यताओं एवं कदियों को परिवर्तित करने की महत्ता प्रदान की है। नवीनता एवं धार्मिक आदर्शों के सम्मिलन के फलस्वरूप यह व्यक्तिवाद की आदर्शात्मक व्यक्तिवाद के नाम से अभिहित किया गया है। आदर्शात्मक व्यक्तिवाद के प्रमुख तत्त्वों के संदर्भ में निम्नलिखित रूप से विचार किया गया है।

(क) बुद्धिवाद

द्वितीय युग में नयी वैज्ञानिक विवेक करने के लिए नवीन धारणा का प्रसार हुआ। हिन्दो में जैसे पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित होने लगीं। जैसे व्यक्ति में वैचारिकता का प्रसार हुआ। वह व्यक्ति यूरोप को संस्कृति एवं साहित्य का अध्ययन का प्रयोग विचार की तार्किक तुला पर तोलने लगा। भारतीय समाज में समाज सुधार की संस्थाएं उभर कर आयीं जिनमें ब्रह्म समाज, आर्य समाज एवं रामकृष्ण मिशन आदि। इन सुधारक संस्थाओं ने भी बुद्धिवाद के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। यद्यपि आदर्शवाद एवं बुद्धिवाद की विरोधी धारणाएं हैं, तथापि द्वितीय युग में बुद्धिवाद के द्वारा ही आदर्शवाद की स्थापना किया गया। इसका मुख्य कारण यह है कि आदर्शों का प्रसार एवं प्रसार होने पर बुद्धिबोधी वर्ग उसे अपनी मेधा रूपी निरुप पर उचित-सुचित का ज्ञान कराता है। यह प्रक्रिया द्वितीय युग में सुधारवादी आन्दोलनों ने आदर्शवाद की विवेक करने में अपनायी। इस युग की महत्वपूर्ण उपलब्धि यह है कि बुद्धिवाद- विज्ञान, कलात्मक, सामाजिक जीवन, धार्मिक जीवन एवं राजनीति जीवन आदि में व्यापक रूप से व्याप्त

ही गया । सांस्कृतिक एवं साहित्यिक जीवन में भी हिन्दू समाज ने वैज्ञानिक एवं बुद्धिवादी विचारों को अपनाया । जबकि यह युग है पूर्ण भारतीय समाज क्रांति, प्रगतिवादी एवं तीखी क्रांतियों में जन्मा हुआ था । परन्तु द्विवेदी युग का व्यक्ति ज्ञान की प्रेरणा है सत्य की खोजकर्ता । सत्य के खोजकर्ता की यह प्रवृत्ति ही बुद्धिवाद के रूप में व्यक्त हुई ।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि यह युग में सामाजिक व्यवस्था, नूतन चिन्ता, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक विकास में उत्साह प्राप्त हुआ जो कि बुद्धिवाद का योगदान है।

(ब) वादवाद

भारतवर्ष के राष्ट्रीय जीवन में वादवाद एक आवश्यक घटना है। पुराने को तोड़ने एवं नव-निर्माण के प्रयास ने राष्ट्र के नव-निर्माण को संभव दिया । द्विवेदी युग के कवि उदात्त एवं फलकारी विचारों और भावों की कविता का आवश्यकता जानती है। उन्होंने अपनी ऐसी ऐसी कविता विचारों का जोर विरोध किया, जैसे- जातव्य, पितापिता, बलिदान, वसुधैव कुटुम्बकम्, सामाजिक नैतिक क्रांतियाँ, साम्प्रदायिक द्वेष, व्यापार, धर्मन्याय, संकीर्णता, अन्धविश्वास आदि । इन कवियों ने समाज में उदात्त जीवन एवं मर्यादित और पवित्र वातावरण की प्रतिष्ठा की । उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नई एवं नूतन पर अधिक ध्यान दिया । इसके साथ ही सांस्कृतिक जीवन को नवीन वादवाद का स्वयं प्रदान किया । कविता को महिमा नायक, प्राचीन गीतों को उत्कृष्ट, पौरों की पुजा-कर्मों का कर्म के जीवन और नैतिक-मर्यादित-

सामाजिक- राजनीतिक उत्थ के उत्पन्न का स्वर उनके जीवन एवं कविता में वाचस्प प्राप्त होता है। ये एक आपसी मविष्य को कल्पना में लीन रहे।

बामार्थ विवेदी का व्यक्तित्व विवेदी युग के सम्य साहित्य का पूर्ण रूप है। इस युग में वादसात्मक व्यक्तिवाद की स्मरिता ही प्रकृत को जा सकी, क्योंकि इसके उपरान्त शायवादी काव्य का विरोधमुख स्वर उभर आया। विवेदी युग के काव्य में ईगा-रिक्त बस्तुतः एवं कर्मोक्ति प्रेम को राष्ट्र-प्रेम, देश-प्रेम एवं प्रकृति-प्रेम के रूप में वक्षित किया है। इस युग में राजनीतिक साहित्य, समाज, धर्म आदि में वादसात्मक व्यक्तिवाद का प्रबल प्रसार हुआ।

(क) मानववाद

वादसात्मक व्यक्तिवाद का तीसरा प्रसूत तत्त्व 'मानववाद' है। 'सुखैविज्य' शब्द की उत्पत्ति होमी शब्द से है जिसका अर्थ होता है-मानव। मानववादी धर्म मनुष्य की सृष्टि का केन्द्र मानता है। मानववाद का इतिहास विज्ञान एवं कथ्यधिक बटित है। बीछीं उद्यो के मानववाद की परिभाषा कारसिड सिमाण्ट ने इस प्रकार की है कि वह उसी पार्थिव देश में ईगुर्ण मानवता के मस्तार सित के सिर सेवा-धर्म है जो विवेक-सम्पत्ति और कर्ताजिक पदधियों के अर्था कुरुष है। मानववाद केवल शास्त्र-अमसायी धार्मिकों की सम्पत्ति नहीं है, अपितु सुख पूर्ण और ईदिर्य जीवन यापन के सिर जन सामान्य के चिन्तन एवं कर्म का मार्ग है। वास्तव में मानववाद का

१- नवसक्षितीर- मानववाद और साहित्य १० १३

२- उपसिख

१० १४

सत्य मनुष्य का लौकिक दुःख है, न कि किसी कल्पित विश्व का परलौकिक-
 राज्य प्राप्त होने वाला वानन्ध । यह ऐसा दुःख है जो किसी पराजयित
 पर बाधायित नहीं है। मानव महत्ता के प्रति कूट वाला हो मानववाद
 का मुख्य सत्य है। द्वितीय युग में वायेंमाव , ब्रह्ममाव एवं अन्य सुधार-
 वादी वान्दीसों ने मानववाद को स्थापित किया । महात्मा गांधी के
 विचारों ने भी मानववाद को विचारधारा को विशेष योगदान दिया ।
 उस युग के कवि एवं साहित्यकार ईश्वरि विचारधारा को त्यागने का
 वावाहन करते दिशाएं देते हैं और मानव मानव में समानता, प्रातृत्व
 का भाव बाधते करते हैं। द्वितीय युग में मानवतावादी विचारों के विकसित
 होने से सामन्तवादी विचारधारा को उस पूर्णतः और अश्वित- स्वातंत्र्य,
 राष्ट्र- प्रेम, मानव वादि का प्रसार हुआ ।

(६) राष्ट्रवाद

द्वितीय युग से पूर्व ही राष्ट्र की प्रगति
 और देश के मनुष्य का ज्ञान गया । कश्चित् को स्थापना वायेंमाव ,
 ब्रह्ममाव तथा अन्य वान्दीसों द्वारा भारतीय जन- मानव राष्ट्रीयता
 को और अवलोकन एवं उन्मुख होता रहा । द्वितीय युग में वायेंमाव
 नेताओं का भी राष्ट्रीय नेता के प्रसार प्रमुख योगदान रहा । उन्होंने
 राष्ट्र की नेता प्रदान की और भारतीय जनता में वायेंमाव-विश्वास जगाने
 का कार्य किया । उस समय में स्वामी विवेकानन्द का कार्य स्तुत्य है ।
 उस समय को राष्ट्रीयता सामाजिक अमानता, जाति, वर्ण, भेद, बाल-
 विवाह, पिछाई की दुरवस्था के सुधार एवं राष्ट्रीय शिक्षा के प्रसार

का कार्य किया। बाबू विपिनचन्द्र पास समस्त देश में घूम घूम कर राष्ट्रीयता
राष्ट्रीय शिक्षा एवं नव-भारत वागण का वातावरण प्रसारित किया।
एक प्रकार से १६०० से लेकर १६१८ तक राष्ट्रीयता की भावना में सक्रियता
के प्रसार होता रहा।

एक राष्ट्रीयता के प्रसार में हिन्दुओं की
यह- पत्रिकाओं एवं विभिन्न प्रकार की पुस्तकों ने अधिक सहायता दी।
हिन्दुओं का राष्ट्रवाद धार्मिक उत्थान के रूप में धामनी जाया।
जहाँ एक ओर तो प्राचीन धर्मकृति के प्रति वागवृत्तता परिलक्षित होती
है तो दूसरी ओर वर्तमान भारत की विभिन्न समस्याओं का ऐतान
प्राप्त होता है। विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार एवं स्वदेशी वस्तुओं के प्रति
प्रेम राष्ट्रवाद के रूप में धामनी जाया।

(३) स्वतन्त्रतावाद

हिन्दुओं का स्वतन्त्रतावाद का प्रारम्भ हुआ। एक युग में नवीन की वफा के प्रयास एवं परम्प-
रागत कदियों के बहिष्कार की भावना बहुतायत में मिलती है। पारम्परिक
स्वतन्त्रतावाद पर विचार करते हुए डा० कृष्ण बिकारी शर्मा एक प्रकार
स्वतन्त्रतावाद के प्रतीकों का वाक्यन करते हैं - "प्रकृति और मानव के
सौन्दर्य कीर्ति की गायत्री वादि के कारण काव्य में भी वाक्यार्ण उत्पन्न
होता है उसे 'रोमांच' शब्द से मेली भाँति व्यक्त करता है। रोमांचिक
काव्य के प्रतीक प्रकृति या मानव का सौन्दर्य सुन्दर का वाक्यार्ण- अपनी वाप
में विभिन्न होती है और वे सामान्य परिस्थितियों के पदार्थ से बनी के मार्ग
होते हैं। लेकिन काव्य की जन्म देने वाला रोमांच केवल विभिन्न नहीं हो
सकता। उसमें अनिवार्यता मौल्यता होती है जिसका आधार वेदः वाक्यार्ण
होता है और वेदः वभिन्नता।"

१- एनीन्द्र नाथ दत्त- काव्यावादी काव्य में राष्ट्रीय धार्मिक भक्तता पृ० ३६

२- डा० कृष्णबिकारी शर्मा- काव्यावादी कवियों पर हिन्दु के रोमांचिक
कवियों का प्रभाव पृ० ४८

परन्तु द्विवेदी युग का स्वतन्त्रतावाद सुधारों के प्रति है एवं कवियों के प्रति है। उस युग का कवि प्रकृत को वीर है, निवृत्त को वीर नहीं। कवि फ्रायस नहीं करता, बल्कि समाज में स्वतन्त्रतावादी है वह भी मर्यादित, नैतिकता से बाधित। उस युग का मध्यम वर्ग अपनी स्वतन्त्रता एवं स्वतन्त्रता को अपनी सुविधाओं के अनुसार स्वीकार करता है। समाज, धर्म, शिक्षा, साहित्य आदि में स्वतन्त्रतावाद व्यक्ति की उपयोगिताओं के रूप में विकसित हो रहा था।

(३) द्विवेदी युगीन काव्य में वादार्थिक व्यक्तिवाद का प्रकटन

द्विवेदी युग के कवि एवं साहित्यकार मध्यम वर्ग के थे। उन कवियों ने पहिले की कल्प साधना से काव्य को नयी दिशा प्रदान की। यद्यपि ये अधिक विदित नहीं थे, तथापि विकासार्थक उत्कारी एवं वादार्थिक के नवीन विकास के कारण उन्होंने नवनिर्माण एवं काव्य साधना को नयी दिशाएं प्रदान कीं। जर्म ५० महावीर प्रसाद द्विवेदी, ५० राम चन्द्र शुक्ल, मणिलीलरण गुप्त, वयोध्या सिंह उपाध्याय, मोधर पाठक, रायदेवी प्रसाद पूर्ण एवं नया प्रसाद शुक्ल लोही आदि कवि एवं साहित्यकार प्रमुख रूप से तात्पर्य विस्वासे के साथ काव्य-साधना करी रहे। ये सुधारवादी थे, तब भी उन्होंने नवीन ज्ञान को स्वीकार किया, स्वी कारण उनका स्वर व्यक्तिवाद के वादार्थिक धरातल पर मुड़र हुआ। ऐसे नयी भाषा, नये भाव, नये विचार, नवीन दृष्टि, नूतन चरित्र-दृष्टि एवं कवियों में नये प्रयोगों ने द्विवेदी युग के काव्य को विशिष्ट रूप प्रदान किया जिससे द्विवेदी युग में ही व्यक्तिवाद की काव्य भूमि प्राप्त हुई।

यह काव्यभूमि उसी उर्वर थी कि जगि बल्कर शायवाप, उत्तर काया-
वाप, प्रयोगवाप एवं नयी कविता, नई कविता की काव्यान्दोलन
व्यक्तिवादी काव्य- रचना से बाधित रहे हैं।

(४) द्वितीय गुण काव्य के कथ्य एवं शिल्प में व्यक्तिवाद की स्थापना

(क) प्राचीन के प्रति मोह एवं नवीन के प्रति उत्सुक

द्वितीय गुण काव्य धारा में प्राचीन गीत
एवं संस्कृति के प्रति मोह है। इसके साथ उस युग के कवि नवीन वाणिज्यारी
जीर नये पुरुषों के प्रति बाधित हैं। उस काव्य में प्राचीन एवं नवीन का
साम्यस्य प्राप्त होता है। एक जीर बाध काव्यान्वय रत्नाकर प्राचीन
काव्यधारा के सम्पर्क हैं तो दूसरी जीर हरिवीथ एवं मेघदूतगुण गुप्त
वाधुनिकता की स्वीकार कर नया दृष्टिकोण सामने रखी है। रत्नाकर
की के काव्य में रीतिकालीन शब्द- योजना, भाषा, विषय- उक्ति,
नाप- शीन्धर्य आदि प्राप्त होती हैं। परन्तु उस शतक में नया व्यापार,
नये प्रयोग, नया प्रबन्ध- कौशल, वाक् पातुरी एवं बुद्धिवादी युग के व्यक्ति-
त्व का प्रतिबिम्ब कलकत्ता है। हरिवीथ की एवं मेघदूतगुण गुप्त के
काव्य में राधा का उभाव धृतराष्ट्र एवं वाधुनिकता की देन है जीर राम
का लीकरीय रूप भी नये युग के प्रभाव स्वल्प स्पर्शित हुआ है। इसमें
व्यक्तिवादी विचारधारा स्वतन्त्रतावाद के माध्यम से व्यक्त हुई है।

(वा) चरित्र-दृष्टि में नवीनता का वाग्रह

द्विवेदी युग के काव्य में उनके शान्तिकारी परिवर्तन यह हुआ कि पौराणिक चरित्र नायकों एवं नायिकाओं को पृथ-
 नायों एवं चरित्रों की वाधुनिक रूप में चित्रित किया जाने लगा। हरिबीध
 जो की राधा लय सेविका एवं लोक-कल्याण की भावना से सिद्ध है। वह
 बनी प्रिय नायक कृष्ण की लोक हित में हत देना चाहती है चाहे उसकी
 श्रीकृष्ण के दर्शन भी न हों। हरिबीध की राधा विश्व-प्रेम, विश्व-सेवा
 में हत है। उसका प्रेम एकान्तो एवं निजी स्वार्थ से द्रष्टि न होकर लोक-
 कल्याणकारी है। 'प्रिय प्रजा' राधा का चरित्र मानवीय धरातल
 पर स्थापित है। गुप्त जो की उर्मिता काव्य से उद्भव उपनिषत् रही है।
 उर्मिता का चरित्र उर्मिता में- सामाजिक एवं साहित्यिक दो प्रकारकी शक्ति
 उत्पन्न करता है। उर्मिता का चरित्र प्राचीन संस्कार एवं वाद्यों की भावना
 के अन्तर्गत प्रस्तुत किया है। परन्तु भक्त का चरित्र नये वाद्यों की चित्ति पर
 चित्रित किया है। यशोधरा के चरित्र में रमणों का पूर्ण मातृत्व का ज्ञान
 हुआ है। उस प्रकार राधा उर्मिता एवं यशोधरा के चरित्रों में नये व्यक्तित्व
 की कल्पना की गयी है। यही नहीं कथाओं एवं नायकों की नये रूप से
 प्रस्तुत किया है। विशेष रूप से खतारों की मानवीय धरातल पर प्रस्तुत
 किया गया है।

उस प्रकार काव्य के क्षेत्र में कुतुम्भ चरित्र
 दृष्टि के प्रति द्विवेदी युग के कवियों का वाग्रह दिखाई पड़ता है। यद्यपि
 मैं यह उस युग को आवश्यक माने है।

(क) भाषा में परिवर्तन एवं नया संस्कार

द्विवेदी युग के पूर्व काव्य की भाषा ब्रज-भाषा थी। ब्रज-भाषा के अन्तर्गत परम्परागत इन्दीवद एतद्वै प्राप्त होती है। द्विवेदी युग में ब्रज-भाषा की जगह लखी बोलों की उच्च काव्य भाषा के रूप माना जाने लगा। इसके लिए भगवती प्रसाद वाजपेयी ने 'बाधुरी' में एवं पी० श्याम बिहारी मिश्र ने अपनी भात विनय में लखी बोलों में काव्य रचना हेतु विभिन्न लेख लिखे। बाधुरी द्विवेदी ने भी भाषा की नया संस्कार देने का प्रयत्न किया। बाधुरी काव्य की भाषा की ओर तत्कालीन कवियों का ध्यान आकर्षित कर भाषा का व्याकरण सम्पन्न हुई एवं स्थावुर बनाने का प्रयत्न किया। भाषा की कमजोरी एवं जटिलता को सुलभ कर जीक कवियों की कविता लिखना सिखाया। बाधुरी कवियों की भाषा का परिष्कार कर उसकी नये संधि में ढाल दिया। इस प्रकार बनारसजी, विजयानुसूत शब्द स्थापना, भ्रमानुसार पद योजना आदि में संशोधन किया गया एवं उस युग के कवियों के बाधुरी प्रौढ़ और निश्चल काव्य रचना का मार्ग प्रशस्त किया। द्विवेदी जो ने प्राचीन इन्दी, बीहा, नीपारं, सीठा, फाफारी, इप्पय, लीया आदि के स्थान पर अन्य इन्दी के प्रयोग करने का आग्रह किया गया। ब्रज-भाषा का काव्य की भाषा के निरस्त करना एक बहुत बड़ी शक्ति है। इसके बाधुरिक युग के वैज्ञानिक परिवेश की व्यक्तिवादी विचारों की एक मध्य भित्ति निर्मित होती दृष्टिगोचर होती है। प्राचीन काव्य-व्यवस्था के लच्छरों की त्याग कर नयी भाषा, नये इन्दी एवं नूतन कथाओं के युक्त की उत्कृष्ट द्विवेदी युगीन कवि की व्यक्ति-स्वातंत्र्य एवं काव्य-स्वातंत्र्य की ओर प्रेरित करता है।

(स) व्यक्तित्ववाद का विस्फोट : शायवावाद

प्रथम विश्व युद्ध के उपरान्त देश की स्थिति में परिवर्तन आया। सन् १९१८ ई० से सामाजिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, वार्त्तिक, राजनैतिक गतिविधियाँ की नयी दिशाएं प्राप्त होने लगीं। प्रथम विश्व युद्ध में हुए विनाश के फलस्वरूप देश में जातीयिक प्रगति होने लगी। परन्तु देश का जन - जीवन स्वातंत्र्य की बीर उतना उत्पन्न नहीं हुआ जितना उसे वाकचित होने चाहिए था। यह निश्चित बात देश का मुख्य वर्ग था जो कि व्यक्ति (स्व) ज्ञाना को लेकर सामने आया। एक ओर तो वह मुख्य वर्ग ने पाश्चात्य स्वातंत्र्य के सिद्धान्तों को आत्मसात् किया, परन्तु दुसरी ओर विश्व युद्ध के विनाश का प्रभाव उसके चेतन पर अधिक पड़ा। इसके फलस्वरूप कवि का व्यक्तित्ववादी दृष्टिकोण साहित्य में विविध रूपों में विकसित होने लगा। ज्ञातवियों के भारतीय कवि अपनी वैयक्तिक अनुभवितियाँ एवं संवेदनाओं को स्वतन्त्रतापूर्वक व्यक्त नहीं कर सका, क्योंकि उनके मन पर समाज, धर्म, सम्प्रदाय, रुढ़ियाँ, परम्परा, ईश्वर, सामन्त एवं परम्परागत विचारों आदि का दबाव रहना अधिक रहा कि वह अपने मन की सत्यता को प्रस्तुत नहीं कर सका। आधुनिक युग में कर्त्ताओं के बन्धन ढोते पड़ने लगे। प्राचीन मूल्यों को सम्पूर्ण तौर पर छोड़ने लगे। इन बन्धनों की चरमरूप-रूप का सुधारक शायवावाद युग से होता है। यथार्थ में यह विरोध काव्य में शायवावाद के रूप में विकसित हुआ। शायवावाद काव्य के व्यक्तित्ववादी विस्फोट स्वर में नूतन मार्ग खोजने लगा।

(ब) वह क्याप 'म' : वैयक्तिकता का प्र-फुटन

हिन्दो काव्य में कवि को वैयक्तिक अनु-
भूतियाँ पौराणिक पात्रों तथा धार्मिक प्रयोगों के द्वारा अभिव्यक्त हुई
हैं। शायवादी कविता में कवि को वैयक्तिक अनुभूतियाँ प्रथम बार
सीधे-सीधे प्रकट हुई। इसका मुख्य कारण है- शायवादी का व्यक्ति।
यह व्यक्ति पाश्चात्य साहित्य संस्कृति से परिचित हुआ। उसके मन में
स्वतन्त्रता एवं समानता की भावना उदित हो उठी। आः वह व्यक्ति
स्वातन्त्र्य की ओर झुका। इसी कारण शायवादी काव्य को जीवन-दृष्टि
व्यक्ति-रस तथा व्यक्ति-चिन्तन है। शायवादी पर व्यक्तिवाद का
अत्यधिक प्रभाव पड़ा है। शायवादी वैयक्तिकता का प्र-फुटन दो रूपों
में हुआ है। प्रथम कवि को निम्नो एवं वैयक्तिक अनुभूति को अभिव्यक्ति
के रूप में और द्वितीय कवि के व्यक्तित्व में 'वह' की उपयोगिता के
रूप में। हिन्दो कविता को परम्परागत अभिव्यक्ति को परिवर्तित करने
के दोन में शायवादी कवि ने 'म' शब्दों का प्रयोग किया है।
वास्तव में यह एक प्रयोग ही नहीं था, बल्कि उस युग के युवा कवि का
समग्र व्यक्तित्व है, जो कि स्वातन्त्र्य के हेतु झटपटा रहा था। यह
स्वातन्त्र्य राजनीतिक और सामाजिक जीवन को स्वाधीनता का ज्वलन्त
प्रमाण है। अपनी बात कहने के लिए कवि ने अपनी संकोच को उतार
फेंका तथा वह सीधे सीधे 'म' को शब्दों पर उतरा जाया। इससे
पाठक और कवि के मध्य की दूरी घट गई। अब कवि देवताओं की
प्रणय-कथा न कह कर साधारण व्यक्ति के प्रेम की दुःखानुभूति अपना

दुस्वप्नप्रतियोगी का विमर्श करने लगा । यह साहित्य और व्यक्ति की कलात्मक विषय है, जिसमें व्यक्ति के दुःख सुखों की केन्द्र में मानकर काव्य रूपा हुआ । ज्ञायावाद में व्यक्तिवादो केतना को अभिव्यक्ति है।

ज्ञायावादो - काव्य में वह प्रेमाभिव्यक्ति की वात्माभिव्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जयदेव ने 'जाहि' में वैयक्तिक प्रेम की रहस्यात्मकता का वावरण हाकर प्रस्तुत किया । पेश ने वात्सल्य प्रेम की 'उन्मेषा' 'स्व' 'जाहि' की वात्सल्य 'मे प्रणय को अनुभूतियों की जोषन्त रूप प्रदान किया । कवि ने स्पष्ट जोकारा कि वात्सल्य कल्पना की परी नहीं थी, अपितु 'वात्सल्य मेरी मीठीम मित्र थी' । परन्तु कवि निराशा ने कष्ट रुदियों की सुनीतो दे दी । उन्होंने अपनी पुत्री 'सरोज' की स्मृति में लोक गीत लिखकर सामाजिक और धार्मिक उत्कारों पर घातक चीट की । महादेवो वर्मा में नारोक्त संकोच होती हुए भी अपनी गीतों में 'मे' शब्दों की बफाती हुए वात्माभिव्यक्ति की वैयक्तिक स्वर प्रदान की ।

ज्ञायावादो काव्य का 'मे' शब्द के प्रवाह में 'कह' के रूप में सामने आया । ज्ञायावाद का कवि साक्ष्य है जो कि रुदियों के प्रति विद्रोह करता है। वह परम्परागत हिन्दो काव्य के प्रति भी विरोध करता है। इसका मूल कारण है ज्ञायावाद युग के कवि का 'कह' । 'कह' एक जोर तो 'मे' की शैली में

प्रसफुटित हुआ है तो दूसरी ओर विद्वीह, वात्माभिष्यक्ति एवं व्यक्ति-स्वार्तन्त्र्य के रूप में भी व्याप्त है। क्योंकि ज्ञायावाद के कवि का स्वर वाच्य स्वधीनता के प्रति उन्मुख रहा है। 'निराला' का 'कई' उच्च स्वर पर है। वह कई का सकार रूप है। उनको 'जागी फिर एक बार' कविता स्वार्तन्त्र्य, विद्वीह एवं कई का संगम है।

ज्ञायावादी काव्य में वैयक्तिकता का प्रसफुटन कई नाम 'मैं' के रूप में हुआ है जो कि व्यक्तिवादी काव्य-क्षेत्र का प्रभाव है। ज्ञायावादी काव्य का प्रारम्भ व्यक्तिवादी-क्षेत्र के लक्ष्य स्वयं से होता है।

(वा) प्रेम एवं लीन्य के प्रति नुतन दृष्टिकोण

काम के दो रूप हैं- वासना तथा प्रेम ।

वासना नारी के प्रति मोहात्मक और रागान्धता के रूप में प्रतिक्रिस्त होती है। वासना का लीन नारी है। प्रेम मानव मन को सहज सह भाव लहरियों का संगम है। वासना वनित्य एवं नश्वर है, परन्तु प्रेम नित्य एवं अमर है। प्रेम का लीन विशाल है। प्रेम उदात्त भाव का जीतक है। कवि का हृदय मुक्तः प्रेममय होता है। ज्ञायावादी कविता का मूल विषय प्रेम है। यह वर्णन एवं वस्तुस्थिति है। रीतिकालीन प्रेम विषय नारी को विषय वासना की वस्तु के रूप में प्रस्तुत करता है। द्वितीय युग वर्णनाओं का युग रहा है, नारी के प्रति मर्यादा और नैतिक मानदण्डों का अक्षय था । ज्ञायावाद युग तक जाती जाती नवीन प्रतिक्रिया काफी पुष्ट हो

गर्भ और पुरानी रुढ़ियाँ जबर ही चलीं । इसलिए स्वयं पुराण के सम्बन्धी में नवीन नैतिकता की प्रतिष्ठा होने लगी । द्वितीय युग में प्राचीनता और नवीनता का संघर्ष आरम्भ हो चुका था । जबकि आया-वाद युग में यह संघर्ष की नवीन शक्ति प्राप्त हुई । द्वितीय युग में अच्छा और बुरा, विवेक और संस्कार के बीच की कमीति थी, वह आयावाद युग में बहुत दूर संकुचित हो गई ।

आयावाद की नयी पीढ़ी में प्रेम और शौन्दर्य के प्रति नूतन दृष्टिकोण का उदय हुआ । आयावाद- युग प्रेम और शौन्दर्य को भित्ति पर काव्य भुज्ज करता रहा । आयावाद का प्रेम नारी के प्रति ही उदय नहीं हुआ, अपितु वैयक्तिक प्रेम के साथ - साथ प्रकृति-प्रेम, मानव-प्रेम, स्वदेश-प्रेम और आध्यात्मिक रहस्यवादी प्रेम के रूप में विकसित हुआ । अतः आयावादी कविता में प्रेम का स्वल्प निम्नलिखित प्रकार का प्राप्ति होता है :

१- नारी-प्रेम

२- प्रकृति-प्रेम

३- मानव-प्रेम

४- स्वदेश-प्रेम

५- आध्यात्मिक रहस्यवादी प्रेम

आयावादी कवियों पर प्रेम के जादुई
प्राप्य ने जीक कविताओं की प्रेममय रूप में प्रस्तुत किया । कई कविताएँ

किताबत रूप में ' प्रेम ' पर ही लिखी गई । प्रभाव ने समस्त श्रेय काम-
केतल से मेखित और धारा स्रग् लब्धता या काम का परिणाम माना ।

प्रभाव ने कामायनी में मनु और प्रदा के प्रेम को (काम और रति को)
ऊतन करके प्रदान किया है। निराशा में प्रेम नारी-प्रेम के साथ स्वदेश-
प्रेम, प्रकृति-प्रेम एवं मानव-प्रेम के रूप में व्यक्त हुआ है। पदा और महादेवी
वर्मा को प्रेमाभिष्यक्ति प्रकृति-प्रेम, मानव-प्रेम एवं रहस्यात्मक प्रेम के
उत्कर्ष में वर्णित है।

डा० नागेश्वर सिंह कायावादी कवियों को
प्रेम भक्तता पर एक प्रकार विचार प्रस्तुत करती हैं- ' कायावादी कवियों
ने प्रेम को जो जानी प्रधानता दी, उसी नीति जीवन में सत्ता का
उत्सार हुआ । सुधार- तुम को स्वाभाविक बहुल्यो वृत्ति से हट्टी
मित्री , नीति जीवन यापन के स्थान पर रागात्मक जीवन चर्या का भि
हुं , जाने का स्वाद कुछ और बढ़ गया । साथ ही फलकीन जीर्णो-
रति भावना से ऊपर उठकर मनुष्य प्रेम की उच्च भूमि पर विचरण
करने लगा ।

नारी और पुरुष के प्रेम ने स्वच्छन्द
विचरण तथा मुक्त प्रेम का प्रारम्भ किया । ऐसे कायावादी काव्य
स्वच्छन्दता की ओर विकसित हुआ ।

कायावादी काव्य व्यक्ति-निष्ठन और
व्यक्ति-निष्ठ की जीवन-दृष्टि से से वास्तविक रहा है। इस कारण

यह व्यक्ति-स्वातन्त्र्य और आत्मामिष्यव्यक्ति की ओर उन्मुख हुआ। प्रेम-सम्बन्ध वैयक्तिक धरातल पर विकसित होती है, परन्तु प्राचीन कवि प्रेम के वैयक्तिक रूप की धार्मिकता एवं नायक नायिकाओं के पाठ्य्य से प्रस्तुत करता रहा। शायदादी कवि प्रेम की वैयक्तिकता और वैयक्तिक प्रेम के वैशिष्ट्य की पहली बार व्यक्त करने में सफल हुआ, शायदादी काव्य में पहली बार ही आत्मामिष्यव्यक्ति का रूप देने का साहस किया गया है, परन्तु इसके साथ ही उस पर आवरण हासनी के लिए प्रतीकों का तात्पर्य भी लिया गया है। इस वाक्य के कारणों में सामाजिक बन्धनों, की कठोरता, व्यक्ति विमर्श की अपुष्टता, कवि की निजी कालता, भारतीय वास्तव की परम्परा वापि की गणना ही सकती है। पन्थ तथा निराशा तुल्य अद्वितीय का विरोध करते हैं, फलादेवी में नारी होने के कारण छात्र का ज्ञात है और प्रभाव में भारतीय संस्कृति के उपासक होने के कारण संकीर्ण का भाव है। एक ओर फल जो ने 'उत्कृष्ट', 'वर्द्ध' की वास्तविकता में आत्मगत प्रणय की उन्मुख रूप में व्यक्त किया है और दूसरी ओर प्रभाव ने 'वर्द्ध' के संकीर्ण संस्करण में व्यक्तिगत प्रेम की अमिष्यव्यक्ति पर वाक्यात्मिक आवरण हास दिया है। कवि की व्यक्तिनिष्ठ प्रेम - भावना भिन्न और विरह के नीतियों के द्वारा व्यक्त हुई। इनका प्रेम रसना बन्धुमुंसी और पोद्दाम्य है कि विरहानुभूति की स्थानिक अमिष्यव्यक्ति अनुभव

१- डा० इन्द्र नाथ प्रधान- आधुनिक कविता का मूल्यांकन पृ० ३१

२- निश्चय ही प्रेम, प्रभाव के साहित्य का केन्द्रीय भाव है।

(शिबुनाथ - कवि प्रभाव - जिसकी स्मृति पाथिय कवी सेल से उद्धृत)

धर्मपुरा २० से २६ जून १९८० पृ० २५

वेदना में परिणत होगई है। प्रवाद का 'वीर' 'वीर' महादेवी का सर्वांग काव्य विरहानुभूतियों का लुप्य लुप्य बन गया है। इसी कारण महादेवी का काव्य वेदना काव्य ही गया है। 'उनकी सारी वेदना वीर तद्वय मुख्यः वैयक्तिकता है ही संबद्ध है, जो रहस्यवादी कीटि तक पूर्ण कर उनका जीवन वर्णन बन गया है।' शाय्यावादी कवि का प्रेम अपने को सीधता रहा, वह निरन्तर उन्मुख सर्व स्वच्छन्द भावनाओं को काव्य में स्फूर्ति करता रहा।^२

का: शाय्यावादी प्रेम-भावना ने सौन्दर्य के मानदण्ड परिवर्तित कर दिये। नारी के भव्य रूप का जीवन, भावावेग, नारी के लुप्त सौन्दर्य को अपेक्षा भाव सौन्दर्य का विषय तथा ऐकान्तिक प्रेम की अभिव्यक्ति आदि शाय्यावादी काव्य में व्यक्तिवादो चिन्तन के माध्यम से विकसित हुए।

प्रेम वीर सौन्दर्य व्यक्ति के मन की वैयक्तिक अभिव्यक्ति है, प्रेम के उपरान्त सौन्दर्य कवि का मुख्य विषय रहा है, सौन्दर्य का जीवन कविता का मूल विषय है। यह कवि वीर कविता का प्रेरणा स्रोत भी है। यहाँ से सौन्दर्य का विविध प्रकार से जीवन होता रहा है। हिन्दी काव्य में रीतिशालीन कविता का नारी के सौन्दर्य के प्रति विशेष आकर्षण रहा है। विवेदो युग का कवि आर्यमाजी सौन्दर्य-भावना को

१- डा० अजयरायण त्रिपाठी- नयी कविता में वैयक्तिक कितना पुष्क

२- 'प्रकृति वीर प्रेम के समीप कवि ललित गया कि बन्धनों-कृष्णताओं वीर निराशाओं से धीरे मनुष्य की प्रकृति लीन होती है, उन्मुख कर देती है, आशाएं भर देती है, पराधीन बादलों प्रकृति से स्वच्छ हो जाता है, लेकिन अपनी नयी भावनाओं को संस्कारता-सीधता है, प्रेम के द्वारा।'

विशिष्ट शैली को। शायबाद के कवि ने धरती के पुत्र (व्यक्तित्व) को सबसे अधिक सुन्दर माना। सौन्दर्य-भावना का नूतन रूप इसी भाव से अनुप्राणित हुआ। व्यक्ति के साथ, स्वदेश के सौन्दर्य की प्रकृति-सौन्दर्य की बीर जात-जगत प्रियत्व की सौन्दर्य की काव्य-मातार प्रस्तुत की। व्यक्ति सौन्दर्य में नारी के सौन्दर्य की विशेष स्थान दिया। शायबादी कवि ने नारी की पुनः सृष्टि की। उसने विधाता की सृष्टि को कभी कल्पना के योग से नवीन रूप दे डाला। इस तरह शायबादी कवि की नारी विधाता की सृष्टि से कहीं अधिक कवि सृष्टि है। जोलिये शायबादी नारी बाधी मानवी है बीर बाधी कल्पना। यह कवि सृष्टि ही व्यक्तिवादी चिन्तन के कारण व्यक्तित्व से अनुप्राणित होती रही। नारी सौन्दर्य के क्षेत्र में कवियों ने उपमावी बीर कल्पनाओं का बहुतायत में प्रयोग किया है, परन्तु शायबादी कवि नारी के काव्यनिक स्वरूप में ही मुख्य प्रतिभा गढ़ते बीर सजाते रहे। डा० नामवर सिंह के अनुसार शायबादी कवियों की नारी सौन्दर्य भावना वर्ण है- ' प्रसाद की मठा, पद्म की बगला बीर निराता की रत्नावली के सामने जायसी की फमावली, दूर की राधा, तुलसी की सीता बीर रीतिवादी कवियों की समस्त नायिकाएँ फीकी पड़ बायली।' शायबादी कवि नारी के क्लोन्ड्रिय सौन्दर्य से वभिभूत ही उठा। प्रसाद ने सौन्दर्य का चित्रण भूषण, कलात्मक, सजीव बीर नवीन रूप से किया। प्रसाद ने नारी सौन्दर्य बीर प्रकृति-सौन्दर्य की समान भाव से चित्रित किया है। डा० कुल बिहारो समस्त उनको सौन्दर्य-भावना पर इस प्रकार विचार प्रस्तुत

१- डा० नामवर सिंह- शायबाद पृ० ६२

२- उपरिष्ठ पृ० ६३

कहती है, " उन्होंने सौन्दर्य की विश्वात्मा का एक गुण माना है, और उनको दृष्टि में मानव तथा प्राकृतिक उपादान सौन्दर्य- धारण विश्वात्मा के कण हैं। प्रभाव ने प्रिया के सौन्दर्य का अत्यन्त भावक विमर्श किया है तथा महत्वाकांक्षी उत्कम्भ करने वाले प्रभावशाली सौन्दर्य के विमर्श में भी उन्हें सफलता मिली है। उनका सौन्दर्यांकन बाह्य रूप होता था बाधित नहीं है। बल्कि हृदय पर पड़ने वाले सौन्दर्य के प्रभाव पर बाधित है। " वही प्रकार वे और निराशा के काव्य में सौन्दर्य भावना नूतन स्वस्व लेकर व्यक्तित्व हुईं । निराशा की ' सन्ध्या सुन्दरी ' और ' लुही की लुही ' के माध्यम से प्रकृति-सौन्दर्य और नारी-सौन्दर्य के नवीन चित्र उद्घाटित हुए । प्रकृति सौन्दर्य की प्रभाव, निराशा, पन्त ली महादेवी वर्मा ने विशेष रूप से अपने काव्य में ज्ञापन दिया है। वात-सौन्दर्य, पुरुष- सौन्दर्य तथा हंस्वर-सौन्दर्य के विमर्श में वह कविता के विषय रहे हैं।

समग्र रूप से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि शायवादी कवि ने व्यक्तिवादी रोमान्टिक के स्वच्छन्द भाव को लेकर कविता की । वही सौन्दर्य की प्राचीन परिपाटी टूटी । सौन्दर्य के नवीन रूप व्यक्तित्व हुए । नारी-सौन्दर्य और प्रकृति-सौन्दर्य के क्षेत्र में पूर्व की समग्र रुढ़ियों के प्रति विद्रोह किया । यह व्यक्ति-स्वातन्त्र्य की भावना से अनुप्राणित काव्य का सूत्र है। इन कवियों की दृष्टि मुख्य सौन्दर्य की ओर लगी रही । इसलिए तौकिक और जलौकिक सत्य के रूप में सौन्दर्य का जीवन कहती रहे । परन्तु शायवादी कविताओं के पुनः

१- डा० कुल बिलारो वर्मा- शायवादी कवियों पर लुहो के रोमान्टिक

कवियों का प्रभाव पृ० १६०

२- डा० लुह नाथ प्रधान- बाधनिक कविता का मूल्यांकन पृ० २६

में व्यक्ति-रहित तथा व्यक्ति-चिन्तन की जीवन दृष्टि है। इसलिए इसका सौन्दर्य-बोध एवं जीवन-बोध उस कविता से भिन्न है। यह सौन्दर्य-भावना कालान्तर में वैयक्तिक चेतना की प्रसरता लेकर अस्तित्व में हुई। उत्तर आध्यात्मिक में भोगवादी प्रवृत्तियों का बाधित भाव आध्यात्मिक के आधार पर हुआ। आध्यात्मिक का कवि कल्पना की रीति में प्रकृति-सौन्दर्य और नारी-सौन्दर्य में विभक्त रहा, प्रकृति ही उसकी प्रेमी बन गई। महादेवी का अतीव प्रियत्व ही का में व्याप्त है। यह सौन्दर्यपूर्ण वैयक्तिक चेतना का परिचायक है। अतः आध्यात्मिक का वैयक्तिक चेतना की वास्तव में कवि की कविता के समान समाहित किया गया है। अतः प्रेम ही सौन्दर्य के प्रति जीवन दृष्टिकोण के अन्तर्गत व्यापक है।

(3) विद्रोह की भावना : नयी चेतना का उद्घोष

आध्यात्मिक का बाधित भाव द्वितीय युग में विद्रोह में हुआ। व्यक्ति मुक्तः विद्रोही होता है। कवि उसे भी बलि। आध्यात्मिक मध्यम वर्ग के व्यक्ति का विद्रोहात्मक काव्य है। मध्यम वर्ग का व्यक्ति स्वतन्त्रता के आकर्षण में कवि की विद्रोह पा रहा था। वह आध्यात्मिक की दृष्टि को बारी पर कवि की स्वतन्त्र व्यक्ति को बलि करता है, बन्धनों के विद्रोह में फँसा उठाता है। द्वितीय युग में भी राष्ट्रवादी था, परन्तु विद्रोह की ताज़गी और विद्रोहात्मक भाव का उद्घोष करना अस्तित्व नहीं था किना कि

१- डा० एम्. नाथ प्रधान- आध्यात्मिक कविता का प्रस्तावक पृ० १६५

२- डा० अन्नामारायण त्रिपाठी- नयी कविता में वैयक्तिक चेतना

हायावादी काव्य में प्राप्त होता है। हायावादी कवि की विद्रोह - भावना समाज तथा बाह्य जगत् की रुढ़ियों के विरोध में बम्पी । इसे धार्मिक, सामाजिक, साहित्यिक तथा अन्य प्रकार के बन्धनों के प्रति विद्रोहात्मक त्वर दृष्टिणीकर होती है। हायावाद एक और सामन्तवाद और साम्राज्यवाद का विरोध करता है तौहुरी और नयी जेना का उद्घोष करता है। कवि के मोह के साथ नूतन वागवक्ता और नयी जेना भी इस काव्य का विषय रहे हैं। हायावाद का कवि वस्तु और तत्त्व दोनों के स्तरों पर विद्रोह भाव को व्यक्त करता है। सृष्ट के प्रति प्रश्न के विद्रोह के रूप में हायावादी कविता विकसित हुई है- 'सृष्ट सब कुछ व्यापक है, इसी परिधि में सभी प्रकार के बाह्य रूप, रंग, रुढ़ियाँ आदि सम्मिलित हैं और इसके प्रति विद्रोह का क्या है उपयोगिता के प्रति भावुकता का विद्रोह, नैतिक रुढ़ियों के प्रति मानसिक स्वतन्त्रता का विद्रोह और काव्य के बन्धनों के प्रति स्वच्छन्द कल्पना और टेक्नीक का विद्रोह ।' एक और कवि आत्माभिप्रेक्षित के प्रति साक्षात्कृत है, तौ हुरी और समाज के सम्मुख अपनी प्रेम सम्बन्धों को खर्चा करने में सामा-जिक विद्रोह का भाव व्यक्त करता है, व्यक्ति के सौन्दर्य और प्रेम को काव्य का विषय बनाना- हायावादी काव्य का सांकेतिक स्वरूप है जो निराशा में विद्रोहात्मकता तथा जीव के स्वर उत्पन्न करता रहा । निराशा रुढ़ियों को चुनौती देने में अग्रगण्य रहे, शिवदान सिंह जीशान ने 'हायावादी कविता में अन्तर्लोक की भावना' की महत्वपूर्ण स्थान दिया । हायावादी कवि अपनी चारों ओर बन्धन ही बन्धन पाता है।

१- डा० नरिन्द्र- सुमित्रानन्दन पन्त ५० १

२- हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियाँ- राजकमल मल्लिकान माता - डा०

कालीश गुप्त का हायावाद लेख- ५० ५०-५५

क्तः वह विद्रोह करता है। उसकी वसिहति का केन्द्र मनुष्य है, ईश्वर नहीं। यह लौकिक है, परलौकिक नहीं। शायवावाद बाधुनिक पौराणिक धार्मिक ज्ञाना के विरुद्ध बाधुनिक लौकिक ज्ञाना का विद्रोह था। शायवावादो काव्य में पुराने रूढ़ विषयों के स्थान पर नयी ज्ञाना है लिखत नूतन विषय बफाये गये। भाषणा, छन्द और अक्षरों के परिवर्तन ने रूढ़ काव्य को ताज़गी प्रदान की। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य, सामाजिक विद्रोह, स्वदेश प्रेम, धार्मिक विरोध रूढ़ व्यक्ति-हित ने शायवावाद को विद्रोही या कलन्तीन का काव्य बना दिया जो कि व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों के माध्यम से विकसित हुआ।

(हं) शायवावाद : नैराश्य की भावना

ब्रिटिश शासन की कलस छत्ता, विश्व युद्ध की विभीषिका, नैतिकता और मर्यादावाद के कठोर बन्धनों ने शायवावाद के युवा कवियों के मन में कलन्तीन रूढ़ विद्रोह के भाव उत्पन्न कर दिये। इन कवियों की कविता में विरोधाभास के भाव प्राप्त होती हैं। ये एक ओर विद्रोह और कलन्तीन को मँसो गति हैं और बीच तथा प्रेरणा का भाव फेला करते हैं तो दुसरी ओर कहणा, पोदा, बाधू रूढ़ बाल्य निवेदन का दीनतापूर्ण कीर्तन करते हैं। व्यक्तिवादी होने के कारण यह कवि समूह विश्व की सुनीती धने में भी नहीं फूँसी। समाज के बन्धनों, राजनीति के अधिनायवादी नियमों, प्रेमिका के नकारात्मक भाव-भावों, धर्म के मर्यादावादी और नैतिकतावादी कठोर

१- हिन्दो काव्य की प्रवृत्तियाँ- राकपत मूल्यांकन माला - हा०

कादीश गुप्त का शायवावाद छल पृ० ५६

कहियौ ते लज कहियौ की नैराश्य हो प्राप्त होता है। उनकी निराशा अपनी मनोभूत हो जाती है कि जो प्रेमी को छोड़कर कल्पना के कानन में विचरण करती है। यह प्रेमी को कल्पना के कर्तकारिक जगत्कारों में वायसी लय में या स्वप्नमयी जगत् के लय में ह्माकित करती है। उनके मन में बैठा नैराश्य कई के उगे नास्कार को छिपाकर लपन, पीढ़ा, बर्ब वीर विरहानुभूति के गान गाता रहता है। यथार्थ में यह फलायन समाज है, कर्तमान है और सम्यक्त सच्चाईयों से उन्हें दूर हो जाता है। कवि की वैयक्तिक भावना स्वार्थ का लय धारण करती है। वह विराट् से लघु बने की प्रक्रिया में हो जाता है। कवि निरीह होकर मार्ग वन्धनण करता है। परन्तु मार्ग स्वाकीपन के नैराश्यमयी गीतों में प्राप्त होता है। लज कु-छिन्न गीतों से वह अपने कन्दर में कई की हृदय पाण के लिए लान्घना प्रदान करता है।

वस्तुतः ज्ञायावादो कवि स्वस्थ जीवनानुभूति से फलायन करके स्वार्थ, छेष्टी, बाह्यमरुण वीर नीस फेकार मरी कल्पना में विराम करना चाहता है।^१ स्त्रीतिर ज्ञायावाद की निश्चय, कर्मण्य, स्वप्न प्रेमी, कल्पना लोक का विचरण करती, निर्णय, वायसी काम तथा वैयक्तिक होने के प्रमाण प्रस्तुत दिये जाते हैं। परन्तु वैयक्तिक केतना की नैराश्य भावना ने फलायन की नूतन प्रवृत्ति को जन्म दिया। यह फलायन दार्ष्टिक न होकर जलन्तोष, कलहता, कधीस्ता वीर बाला के साथ हो विकसित हुआ। ज्ञायावाद का फलायनवाद 'सामाजिक स्वाधीनता' के लय में प्रारम्भ हुआ किताकि

डा० नाम्दार सिंह का विचार है, ' जिस शाय्यावाद का वारम्भ सामा-
जिक स्वाधीनता के लिए व्यक्ति के विद्रोह से हुआ, उसी का पर्यवसान
समाज से व्यक्ति के फाटने में हुआ। सभी शाय्यावादी कवि अन्त तक
बाँटे बाँटे या तो अपने जीवन की पराजय अनुभव करने लगे अथवा समाज
की अपेक्षा शत्रु समझने लगे।

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि समाज
से श्रुता केवल व्यक्ति का कर्तृ हो ले जाता है। काः शाय्यावाद की
कलात्मकवादी प्रवृत्तियों के विकास में व्यक्तिवादो भावना अवश्य कार्य
रत रही है। ' शाय्यावाद का सारा स्वार्थन्य- उद्घर्ष कर्त्तृ व्यक्ति का
था। इसी कारण इन कवियों में एकाकीपन और कलात्मक वैयक्तिक
होने की निरन्तर पीनणता रहता रहा। यह वैयक्तिक भावना ने ही
शाय्यावाद को समाज की तत्कालीन परिस्थितियों से सम्मुख नहीं
होने दिया। यही व्यक्तिवाद की सबसे बड़ी विषय रही। प्रत्यक्ष
जगत से दूर वाकाल में विचरण करना शाय्यावादी कवियों का मुख्य
तत्त्व ही गया। इसी जीवन के प्रति मोह मो घट गया और निराशा
के भाव विकसित होने लगे। ' निराशा के यकड़े साते साते वह अपनी
जीवन शक्ति खिन्ने कर चुका था। इसके फलस्वरूप उसके मानस में
जीवन व जगत के प्रति विरक्ति की भावना फैली लगी और वह व्यापक
जीवन से फाटकर किसी घुटपट्ट स्थली की कामना करने लगा। शाय्या-

१- डा० नाम्दार सिंह- शाय्यावाद पृ० १३५

२- उपरिक्त पृ० १४७

३- डा० राम नागपाल - वाधुनिक हिन्दी काव्य में कलात्मकवाद पृ० १७५

बादी कवि कल्याण के साथ-साथ स्वप्नों के निर्माण में भी रस रसने लगा। इन स्वप्नों ने समाज की रक्तपात से कवि को दूर कर दिया। बोधन की समस्याओं के झुझने के विपरीत वह कभी भी हार नहीं मानी। निराशा ही अपना जीवन का स्वर बियाह रस ली। अन्य कवियों ने बोधन में व्याप्त निराशा भावना से ऊपर प्रकृति के कात्पनिक लोक में प्रस्थित किया। वैयक्तिक भावनारं तत्त्वात्मक स्वल्प धारण करने लगे। वह मानववाद, उपर्युक्तता, अर्थात्मवाद के रूप में दार्शनिकता ग्रहण करने लगा। इन सबका कुछ मानवतावादी दृष्टिकोण तो था ही उससे कहीं अधिक व्यक्तिवादी प्रेरणा थी। आत्मवादो कवि प्रत्यक्षवाद के निराशा से धीरे व्यक्तिवादियों की ओर उन्मुख होता रहा।

(क) नियतिवाद : परीक्षा कक्षा की स्थिति

शिव दर्शन के अनुसार 'नियति' नियन्त्रण करने वाला तत्त्व है। वह न केवल वस्तु का ही, बल्कि कदात्मक माना सभी विश्व का भी नियन्त्रण करती है। वह एक ही ओर तो पुरुष का उसके कर्मा की ओर भी नीचे नियोजित करती है, दूसरी ओर दृष्टि में कार्य-कारण सम्बन्ध की व्यवस्था करती है। अतः कुछ व्यक्ति, कुछ काल में कुछ कर्म करे, कुछ भी उस प्राप्त ही, यह सब नियति की प्रेरणा से होता है। प्रभाव का नियति विद्वान्त्व सभी बाधा पर है। वह नियतिवाद की भावना और प्रारब्धभाव से उत्पन्न मानती है। उनके लिए नियति

१- 'नियतिर्यज्यर्थेन स्वके कर्मणिपुनस्तम् ।

- मात्स्न्योपनिषद् १।२६

- डा० राजकुमार गुप्त- कामायनी पर काश्मीरी शिव दर्शन का

प्रभाव पृ० ७४

प्रकृति का नियम तथा विश्व की सन्तुष्टि रही जाती शक्ति के रूप में मानती रहे। 'कामायनी' के प्रथम अर्ध में नियति के द्वारा विश्व का दुरय वर्णित किया गया है। प्रवाद की नियति के अन्तर्ध में कल्पना वैयक्तिक अधिक है। यथार्थ में शाय्यावादी कवि विप्रीत और कर्तौण, समाज की अद्वितीय तथा तत्कालीन समस्याओं से वैराग्य की भावना पाकर अपनी पश्चिमे से फतायन करता है। एक और तो यह फतायन प्रकृति की और होता है तो दुधरी और स्वयं से अविश्वास उत्पन्न होने के कारण नियति तथा परीक्षा कृता की और उन्मुख होता है। नियति और परीक्षा कृता की और बाकर्णित होना विश्व से अन्तर तथा भिन्न होकर निर्मित करना है।

कहीं कहीं वस्पष्ट होत मिलती है कि कौन कदुरय शक्ति है जो अमस्त संसार में परिवर्तन लाती है। जब मानव अपनी को विफल पाता है तब उसको दृष्टि अज्ञात शक्ति की और उठ जाती है जो उसके प्रकृति को समफल नहीं होने दे रही। निराशा के 'राम' की शक्ति पुनः को और प्रेरित होना वह तथ्य का प्रमाण है।

प्रवाद में यह नितान्त व्यक्तिवादी धरातल विकसित हुआ है। परीक्षा कृता की और बाकर्णित होना बाध्यात्मिकता की और उन्मुख होना है। शाय्यावाद की बाध्यात्मिकता कई व्यक्ति की मूल में रहकर विकसित हुई है। शाय्यावाद का बाधक कवि व्यक्ति की स्वातन्त्र्य केतना और बात्म-प्रकार की व्यक्तिवादों केतना से घिरा हुआ है। शाय्यावादी कवि भाषा की वैधायी पर टिका हुआ है। यह 'भाव' -----

१- खोन्ड नाथ दामन - शाय्यावादी काव्य में राष्ट्रीय संस्कृति

केतना पृ० ६३

उसकी वैयक्तिक भाँग भी ही सकते हैं। वैयक्तिक ज्ञान कृष्णति के स्तर पर जायगमय बन जाते हैं जो कि रहस्यमयी भावना को जन्म देती हैं। यहाँ हायाबादी कवि की नियति का बाधा होता है वह अधीन है, परन्तु कृष्णति की बाकायता उसे अधीन और ज्ञात की और प्रेरित करती है। ज्ञात और अधीन की बाकायता कवि की जायगमिता की और से जाती है। जायगमिता साधना निरन्तर वैयक्तिक होती है। विभिन्न रूप से प्रसाद, महादेवी यमाँ में नियतिबाध और ज्ञात अधीन की सत्ता कल्याणमयी होने पर भी व्यक्तित्वविता से अधिक प्रभावित रही है।

(ऊ) राष्ट्र-प्रेम ज्ञान व्यक्ति-स्वातन्त्र्य

हायाबाद प्रेम एवं सौन्दर्य का काव्य होने के साथ साथ व्यक्ति की अभिव्यक्ति का भी काव्य है। हायाबादी कवि समाज धर्म और राजनीति से अपनी अभिव्यक्ति को स्वतन्त्रता का उद्घोष किया। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य मानव जाति के लिए प्रसूत समस्या रहा है। अभिव्यक्ति की स्वाधीनता व्यक्तिवादी काव्यादर्श की विषय है। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य समानता की भावना पर टिका हुआ है। व्यक्तिकी वैयक्तिक कृष्णतियाँ उसे स्वाधीन होने की साक्षात् करती रही हैं। युगाँ से व्यक्ति और कवि स्वाधीन होने की एक साधना करती रहे हैं। हिन्दी काव्य-काल में हिन्दी युग वर्तमान और मर्यादावाद पर टिका हुआ था। 'निषेध' जिसका वास्तविक भाव बन गया। यहाँ हायाबाद व्यक्तिकी प्रति ज्ञान बागलक रहा कि उसने व्यक्ति की काव्य-स्वातन्त्र्य तथा वैयक्तिक कृष्णतियाँ ने ज्ञान पिता प्रदान की।

झायावाद का काव्य व्यक्ति-स्वार्तम्य का काव्य है। व्यक्तिवाद उसका मूल है। झायावाद का कवि पहली बार जात्म-प्रसार और प्रसार के लिए राष्ट्र-प्रेम को काव्य में जीवन करता रहा है। एक और प्रकृति, प्रेम, धीमत्य, कल्पना आदि में विस्तृत रहने वाला कवि दूसरी ओर राष्ट्रीय-जागरण से जتنا प्रभावित होता है कि लोक कविताओं तथा गीतों में झायात्मक व्यक्ति-व्यक्ति के आधार पर राष्ट्रीय उद्बोधन को रचनाएं प्रस्तुत करता है। इन कवियों में एक ओर सामाजिक होने का भाव प्राप्त होता है तो दूसरी ओर देश-प्रेम की जाग्रत भावना दृष्टिगोचर होती है। एहीलिए कुछ बातों पर कहते हैं कि राजनीतिक ढंग से भी कार्य अधिवाद ने किया, साहित्यिक ढंग से पहली कार्य झायावाद ने किया। झायावाद के कवि में नव्य जेतना की छहरीयां तरंगित थीं, जिसके कारण उत्कृष्ट धर्म केवल स्वाधीनता को प्राप्ति के लिए न होकर विद्रोह और क्रान्ति के उद्बोधक के रूप में फिर स्मरणीय रहना। वह उन का कवि देश की दुर्दशा और पराधीनता को देखीयां से जतना ऊंच उठा था कि वह साहित्यिक, धार्मिक-विक धर्म राजनीति के दुर्गों के आधार पर खोलने करने लगा। उसकी वैयक्तिकता उसे निरन्तर प्रेरित करती रही। इन कवियों का राष्ट्र-प्रेम जागरण, कर्मण्यता, स्वावलम्बन की ओर प्रेरित करता है। राष्ट्र-प्रेम की भावना सामाजिक, राजनीतिक, एवं साहित्यिक कदियों के विरोध में भी प्रत्यक्षित हुई। काव्य-स्वार्तम्य का प्रथम-धोषाद भावना

१- डा० नाम्दार सिंह- झायावाद पृ० ७०

२- लोन्ड नाथ दत्तन - झायावादी काव्य में राष्ट्रीय धार्मिक

जेतना पृ० ६४

काव्य- स्वातन्त्र्य का प्रथम लोपान भाषा एवं भाव के स्तर पर प्राप्त होता है। स्वाधीनता प्रेमी कवि कविता की भी बन्धनों से बाहर निकलने में सफल हो गये। शायकादी कवियों ने उद्बोधन गीत लिख कर भारतीय जन मानस को पुष्ट भावनाओं की जाग्रत कर दिया। नवी शिक्षा और स्वातन्त्र्य की भावना से जीत-प्रीत जन गीतों ने भारतीय युवक निरीह व्यक्ति को राष्ट्र के प्रति ज़्यादातर होने के लिए उत्थापित किया। 'उद्बोधन गीतों में कहीं कहीं चुनौती देकर उत्थापन कानि का प्रयत्न किया गया है। चुनौती व्यक्ति को समस्त शक्तियों में एक ऐसा व्यक्तित्व पैदा होता है कि कई बार कर्मचारी कार्य भी सहज-संभव बन जाते हैं।' यह राष्ट्र-प्रेम कल्याण और समन के विरोध में संघर्षशील रहने के लिए भी जाह्यान करता है। ऐसे साम्राज्यवादी शक्तियों के विरुद्ध संघर्ष की चुनौती प्राप्त होती है। यह संघर्ष को जोधित रहने के लिए जन कवियों ने कतिपय का गीत गान किया। निराशा की 'जागी फिर एक बार' रचना का दुबरा भाग कतिपय के गीत को प्रस्तुत करता है। यह राष्ट्र-प्रेम एक वीर प्रकृति के रूप में भी सामने आता है तो दुबरी वीर देश को धरती के बेचोकरणा के रूप में भाव भी नि प्रस्तुत करता है। प्रसाद की स्वाधीनता और निराशा की स्वाधीनता में अन्तर है। 'प्रसाद स्वाधीनता के साथ समता का स्वा-त्मक बोध (समरता) लाती है, क्योंकि उनमें राष्ट्रीय सामाजिक जागरण का भाव निहित है। निराशा में लुका एक विप्लव वीर संघर्षशील स्तर फूटा है, जबकि प्रसाद में गहन निम्नतम स्तर।'

१- खीन्द्र नाथ दग्गन - शायकादी काव्य में राष्ट्रीय सांस्कृतिक

काला १०० १००

२- धर्मका २० से २६ जून १९८०, लखनऊ का लेख कवि प्रसाद :

जिनकी स्मृति पाथिय की १० २६

यह राष्ट्र-प्रेम व्यक्ति-स्वातन्त्र्य की नीति पर टिका हुआ है। शायानाद का कवि काव्य की कल्पना से ही राष्ट्र प्रेमी बना रहा, कहीं भी निर्भय होकर जाति-उत्ता के विरोध में नहीं आया। यह साम्यिक राष्ट्र प्रेम भावना से जुड़ा हुआ है। अतः यह व्यक्ति-स्वातन्त्र्य, व्यक्ति-हित बना तथा व्यक्तिवाद की समाप्ति करता रहा।

(६) शैली-शिल्प में नवीनता

शायानाद की शैली विषयि प्रधान-व्यक्तिनिष्ठ काव्य शैली है। इस युग में काव्य रचना की समस्त काव्य दृष्टि ही परिवर्तित हो गई। विदेशी युग्मभाषा की ^{प्रिय} में परिवर्तन आया। नये भावों को प्रस्तुत करने के लिए शायानाद ने नवीन शैली का आविष्कार किया। यह विषयि प्रधान-व्यक्तिनिष्ठ काव्य-शैली के साथ साथ आत्मामिथ्याक शैली भी रही है। शायानाद प्रेम एवं सौन्दर्य को भावना लेकर विकसित हुआ। इसमें रूप-रज्जा, वर्णकार-पादित रीतिकालीन कविता से भिन्न है। इस रूप-विन्यास ने भावों को महत्व दिया। भावों के बाहुल्य के कारण इस कविता में प्रतीक-त्वकता तथा चित्रात्मकता के भी दर्शन होते हैं। शायानाद ने उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, स्मरण आदि वर्णकारों का तीव्र प्रयोग किया ही साथ में अप्रस्तुत योजना का भी प्रयोग किया जो उसके पूर्व के काव्य में प्राप्त नहीं होती। शायानाद की कविता की प्रमुख विशेषता चित्रात्मकता है। चित्रात्मकता वैयक्तिकता के आधार पर विकसित हुई। शायानाद

यह सामान्यता के विपरीत वैयक्तिक वैशिष्ट्य का प्रस्ताव था, व्यक्ति-
 वाद उसका बीज मन्त्र था। इसलिए वह सिद्धान्ततः निवमयता का
 परापाती था। यह प्रकृति-विमर्श, नारी सौन्दर्यात्मकता आदि में
 विश्वात्मक रूप में प्रतिफलित हुई है। शायवादा ने नये नये उपमानों
 का प्रयोग किया जिससे कि प्रतीकात्मकता में नाविन्य के दर्शन होते हैं।
 शायवादा वैयक्तिक अनुभूतियों को अभिव्यक्ति का काव्य है। इसलिए
 इन कवियों ने कौमलकान्त, मधुर भाषा का प्रयोग किया है। तत्सम
 शब्दों के साथ सामान्यता, नयी अवस्था तथा व्यंजना भी दृष्टिगोचर
 होती हैं। शायवादी कवियों ने लड़ी बोली को काव्यमय कौमल अनु-
 भूतियाँ प्रदान कीं। उन्होंने शब्द-संगति, धीरे सक्ति पर विश्वास,
 अनुभूतियाँ में बहिष्कार बहिष्कार सांसारिक प्रतीकों के माध्यम से भाषा-
 शैली के क्षेत्र को सजाया। शायवादा ने अपनी से पूर्व प्रचलित शब्दों
 के विरोध में उर्दू के इन्द, रोला, क्यमासा, सती आदि प्राचीन
 शब्दों का भी प्रयोग किया। उन्होंने मुक्त-इन्द, को विकसित किया
 तथा लोक-शब्दों के आधार पर लोक गीतों के शब्दों का प्रयोग किया।
 बाल्हा, लावनी, कजली, चिरहा आदि लोक-शब्दों को नयी भाषा
 में ढाल कर प्रस्तुत किया गया। मुक्त-इन्द का प्रयोग काव्य के प्रति
 विद्रोह का प्रसूत उदाहरण है। शायवादा में गेयता और जीटे जीटे
 गीतों का बहुत प्रचलन हुआ। गीतों में संगीतात्मकता ने भावविन को
 प्रेरित किया। शैली शिल्प भाषा, इन्द, अलंकार, प्रतीक, निरात्मकता
 आदि के आधार पर शायवादा विद्रोहात्मक रूप में उभरा जो कि व्यक्ति-
 वाद के समीप है।

वाधुनिक सिन्दो काव्य व्यष्टि और

समष्टि के फलस्वरूप की ओर अवतरित हुआ है। शायानवाद काव्य व्यष्टि के प्रति अधिक समर्पित रहा है। शायानवाद के कवियों की भावना व्यष्टि-स्वातंत्र्य और व्यष्टि-शक्ति के मूल आदर्शों से संवाहित होती रही है : वह काव्य व्यष्टि पर आधारित है। किन्तु यह व्यष्टिवाद संकुचित स्व-स्वार्थानुसृत नहीं है, बल्कि अपनी में एक उदात्त समष्टि-केतना की समाप्ति किये हुए है। यह सत्य है कि शायानवाद ने व्यष्टिवाद की अपनी तरह से ग्रहण किया, उसको काव्यात्मक अभिव्यक्ति यौगो-पीय व्यष्टिवादो धारणाओं से कुछ भिन्न रखा है। यहाँ व्यष्टिवाद समष्टि के साथ व्यष्टि की स्थापित करता है। परन्तु शायानवाद काव्य में व्यष्टि के माध्यम से ही समाज अभिव्यक्ति हुआ है। अपनी अन्तर्मुखी प्रवृत्ति के कारण यह धारा सामूहिक संघर्ष का प्रबल हुनम्य स्वर न बन सकी। कवि ने समाज की अपनी अन्तर में छोट ली का प्रयत्न किया। काः संघर्ष का समस्त ढाँचा वैयक्तिक हो रहा। कवि की सम्भवतः अपना आत्म-विश्वास भी था कि वह अपनीलक्ष्य स्वाधीन समाज की रचना कर लेने में सफल है। व्यष्टि स्तर पर यह संघर्ष शायानवाद के विभिन्न परवृत्तियों में समान रूप से दृष्टिगोचर होता है। चाहे वह वह कि प्रेम की कविता हो या आध्यात्मिक प्रेम की, चाहे, राष्ट्रीय हो या मानवतावादी, उनमें कवि वैयक्तिक स्तर पर ही बन्धनों का विरोध करने में सतत दिक्ताहं पड़ता है।^२

१- लॉन्ड नाथ दामन - शायानवाद काव्य में राष्ट्रीय शक्ति

केतना पृ० ६१-६२

२- वही पृ० ६२

शायबाद के कवि को वैयक्तिकता निरन्तर
 नुवन मार्ग प्रस्तुत करती रही ।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि
 शायबाद मूलतः व्यष्टि का काव्य है। उसमें अभिव्यक्ति समष्टि भाव
 व्यष्टि के माध्यम से विकसित हुआ है। शायबाद कलात्मक काव्य के
 रूप में भी प्रसिद्ध है, शैली-शिल्प को रूप सज्जा व्यक्तिवादो काव्य-मूल्यों
 पर बाधाहित है। यह व्यक्ति-स्वातंत्र्य और व्यक्ति-शक्ति का काव्य है,
 वस्तुपूर्वो प्रेरणा ने उसकी प्रेरणा दी। शायबाद में पहले बार व्यक्ति-
 वादो विचारधारा से सम्पृक्त विरोधों और नकारात्मक शक्तों को कु-
 रूप धुनाई फैलती है। शायबाद भारतीय व्यक्तिवाद का कलात्मक रूप
 है और व्यक्ति उसकी वास्तवता का ईश्वर ।

(ग) व्यक्तिवाद का कारणों को और उद्गमन : उत्तर शायबाद

शायबादो काव्यनिक स्वप्न जेहार राज-
 नैतिक और वार्तिक समस्याओं के सामने खिसरने लगा । शायबाद का
 नेराश्य और फतायन समसामयिक परिस्थितियों के कारण विकसित होती
 रही । यह परिस्थितियों सन् १९३० ई० से सन् १९३५ ई० तक राजनीतिक
 परिस्थितियों के रूप में उभरीं । राष्ट्रीय बान्दीलन का दमन द्वितीय
 गोलमेक सम्मेलन का असफल होना तथा देश स्वातन्त्र्य की वाता का
 निराशा में बदलना आदि ऐसे कारण थे जिसने मध्यमों को फाकफनीर
 दिया । सामाजिक और वार्तिक स्थिति को निरन्तर बालीय हुआ के
 युवा कवि के लिए अक्षय्य ही उठी । उन्ने स्वप्नों से निर्मित शायबाद

के लबादे को उधार फेंका । कवि धरती पर क्यायवादो केना लेकर
 जागे जाया । इस क्यायपरक केना से प्रातिवादी काव्य का विकास
 हुआ और इस कवियों के रोमानो भाव ने उत्तर शायवादी काव्य
 को विकसित किया । उत्तर शायवाद का वागमन शायवाद के विरोध
 में हुआ । यह विरोध केला शिल्प के साथ कथ्य तथा प्रस्तुतीकरण में
 भी प्राप्य होता है।

उत्तरशायवाद की वैयक्तिक प्रतीत कविता^१
 कथा वैयक्तिक कविता^२ के नाम से अभिहित किया गया है। इस कविता
 में गोर्बा का प्राचुर्य है। परन्तु सामाजिक ऐतिहासिक, पारिवर्तनिक तथा
 साहित्यिक परिप्रित्य में यह कविता वैयक्तिक ब्रह्म है। डा० नरेन्द्र के
 अनुसार, ऐतिहासिक सामाजिक कारणों में सने प्रसुत ती यो तत्कालीन
 जीवन में व्यक्तिवाद की प्रतिष्ठा । वह दर्शन, राजनीति, कार्यवस्था
 तथा समाज कल्याण सभी में व्यक्तिवाद का रूप था । मध्यम का रूप
 वर्ग इस रूप का कवि था जो कि अतिशय व्यक्तिवादी मूल्यों को समा-
 हित किये हुए था । शिखा, साहित्य और राजनीति में व्यक्ति की
 प्रसुक्ता बढ़ी, इस कारण काव्य में भी व्यक्तिवादी भावना प्रबल रूप
 से विकसित हुई । व्यक्ति अपनी स्वातंत्र्य का महत्व समझने लगा ।
 व्यक्ति की प्रसुक्ता ने कवि को अपनी अस्तित्व के प्रति सचेत होने का
 वाह्वान किया । बल्बन, नरेन्द्र शर्मा, केवल वादि ने काव्य का विचार
 अपनेप्रिय, विरह, प्रियता वादि को बनाया । यह व्यक्तिवादो दर्शन
 के विकास को प्रथम उद्दी यो ।

१- हिन्दी साहित्य का वृक्ष ऐतिहास (कर्तुर्गत भाग) पृ० ११०

२- डा० नरेन्द्र- वाधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ पृ० ६७

३- वही पृ० ७०

(ब) वैयक्तिकता को सहज अभिव्यक्ति

उत्तर शाय्यावादो काव्य में वैयक्तिकता को विशेष रूप से व्यक्त किया गया है। इसलिए इस कविता-विशेष को 'व्यक्तिपरक' कविता भी कहते हैं। शाय्यावाद का काव्य भी व्यक्तिपरक है, परन्तु उस कविता में रोमान्टिक की प्रत्यक्षा और सहज अभिव्यक्ति नहीं है। शाय्यावाद का कवि प्रेम एवं शीन्दयों की पीड़ा काव्यता है उसमें शंकोष और सामाजिक मोहता है। वह अपने अभिव्यक्ति को घुमा फिरा कर सूक्ष्म रूप में प्रस्तुत करता है। उत्तर शाय्यावाद के पूर्व और पश्चात् ऐसे कोई अभिव्यक्ति नहीं है जो कवि के पुनः दुःख, राग-द्वेष, विद्विह एवं विरह को अपने सूक्ष्म रूप में प्रकट प्रस्तुत कर सके। इस कवि का 'व्यक्ति' सामान्य (जाम) है। वह समस्त जीवनार्थों को निरक्षीक प्रस्तुत करता है। उत्तर शाय्यावाद के कवियों की अनुभूति जानने सहज और प्रबल है कि जोसे वास्तव में बसोत्सा और पायिष्णुता को और बढ़ जाती है।

उत्तर शाय्यावाद और शाय्यावाद को वैयक्तिकता में अन्तर हो अन्तर है कि शाय्यावाद की अनुभूतियाँ प्रत्यक्ष, प्रबल, स्पष्ट और स्पष्टान्वारो से व्यक्त नहीं हुईं जबकि उत्तर शाय्यावाद को सहज अभिव्यक्ति, प्रबल वास्तव, स्पष्ट अनुभूतियाँ, यथार्थ चित्रण की छोटी-छोटी बातों से वैयक्तिक चेतना की अतिशय रूप में विकसित किया। इन कवियों में अत्यधिक वैयक्तिक चेतना वाले कवि बन्धन, जेल और

नरेश्वर शर्मा हैं, जिनकी वैयक्तिकता अपनाव है फलान कर, उसकी विचित्रता और कठोरता है विमुक्त ही मस्ती और भावकता में हुबो हुबे नज़र आती है। इन कवियों ने गीतों के द्वारा अनुभूतियों की कसूरता, वायवीयता, रहस्यमयी शाधना और संकीर्ण के विरोध में अपना स्वर मुक्तित्व किया। अनुभूतियों की सीधी, सरल और सहज अभिव्यक्ति ने इन कवियों में वर्त-करण और सजावट के प्रति लोभ नहीं दिखाया। इन कवियों में वैयक्ति-कता जतनी पनी, ठीक, स्पष्ट और प्रकट होकर सामने आते हैं कि यह कवि कवन्तोष, विप्रीह और अनास्था की ग्रहण करने लगे। उत्तर हायाबाद की व्यक्तिपरक कविता ने व्यक्ति को व्यक्ति के अस्तित्व के प्रति जागृत कर दिया। 'स्व' के प्रति समर्पण यह कविता की मूल भावना रही है।

(बा) प्रेम की स्मृत एवं माहित अभिव्यक्ति : चायी रोमांच

उत्तर हायाबाद का मूल विषय प्रेम है। यह कविता ने हायाबाद के स्वप्नमयी, वायवी, भावनात्मक प्रेम के विरोध में स्मृत प्रत्यक्ष प्रेम की अपना विषय बनाया। यह कविता का प्रेम विस्तृत लौकिक और वैयक्तिक है। यह युग के समस्त कवि अकृत्रिम, प्रत्यक्ष और मुक्त अभिव्यक्ति की ओर अवतरित हुए। उन्होंने प्रेम का अपूर्ण मुक्त, बाधा रहित, कव्धहीन और निस्सीकोष माना है। यह समा-प्रेत, धर्म, धैर्य, ईश्वरों और पर्यादाओं की अवहेलना करते हैं :

‘जब कहें मैं प्यार, ही न मुझ पर कुछ निर्भय

१- डा० अमर नारायण त्रिपाठी - नयी कविता में वैयक्तिक कला १९८८

कुछ न सोचा कुछ न बंधन, तब हर्षु बच
प्राण प्राणों से करे बलिभार । १

जैसे यह प्रमाणित होता है कि इनका
कवि मन किसी भी नियंत्रण की बंधन नहीं मान सकता । इसी-
लिए प्रेम की अभिव्यक्ति में इनके विरोध में समाज की मान्यताओं ने
असह्य उत्पन्न किया । उन्होंने समाज के अनुचित बन्धनों, मर्यादाओं
के विरोध में काव्य रचना किया । वह अपनी वाचनात्मक तृप्ति के
लिए समाज का विरोध करते हैं। इनका प्रेम लौकिक धरातल का है ।
इसलिए इनको कविताओं में चुंबन, वासिगन तथा रति- क्रियाओं के
विविध विवरण प्राप्त होते हैं। प्रणय की विविध क्रियाओं का काव्य में
सूक्ष्म रूप से चित्रण इन कवियों के लिए संभव रहा है। बारूची प्रभाव
की कविता का एक दृश्य नग्नता को प्रस्तुत करता है। देखिए-

‘मन हीन लज्जा घर में निमग्न,
कर दे कुछ नीची ग्रन्थि भग्न ,
बाबाजी, वा भीरु समीप,
सम्पूर्ण नग्न स्कीत नग्न ।’ २

जैसे अधिक प्रणय की अस्सीत विधिति का
चित्रण किया है जो केवल वैयक्तिक ही हो सकती है। इन वैयक्तिक प्रणय
विधियों ने उत्तर आधुनिकता की व्यक्तिवादिता को बलिभार पर पहुँचा

१- बन्धन - स्कान्त संगीत पृ० ५७

२- बारूची प्रभाव - संकलित पृ० २६४

दिया । केवल भी प्रणय की वैयक्तिक क्षुब्धियों को निरर्थकीय प्रस्तुत करने में क्षणी रहें हैं। उनका समग्र काव्य वैयक्तिक केतना की भोगवादी प्रवृत्ति का परिणाम है :

‘ वाच निरुक्त मन्त्र गेह में यही कल की तो केला
माना कटि प्रीति में गुरुता, पर मुक्तं यत् कलकल ॥१

नारी के कर्णों का चित्रण करना । रोमांच के प्रति अधिक सज्ज रहने के कारण यह कविता ‘सायो रोमांच’ की कविता भी रही गई । वास्तव में प्रेम का काना ऐन्द्रिक स्वरूप इन कवियों ने प्रस्तुत किया, जो कि प्रेम के क्षेत्र में हृत्पणता का परिणाम है। सायो रोमांच के प्रति ये कवि अत्यन्त आसक्त रहे । प्रणय के क्षेत्र में असफल होने पर इन कवियों के लिए विश्व नीरस दृष्टिणीयर होता है। इनकी प्रियतमा विश्व की सुन्दर नारी है, इनका प्रेम विश्व का परमपूर्ण प्रेम है। ये प्रेम के क्षेत्र में अपनी ‘व्यक्ति’ के वैशिष्ट्य की काल्पनिक परम्परा देते हैं। यह युग के कवि होने विशिष्ट है कि इनका प्रत्येक कार्य वैश्व है। यह वैशिष्ट्य और वैश्वता इन कवियों की अति व्यक्तिवाद को धीमा में ले जाता है। इनका प्रेम वैयक्तिक केतना, व्यक्ति-स्वातंत्र्य और व्यक्ति-हित के पूर्ण रूप में प्रिय है।

(४) साय की आत्म-स्वीकृति : कृतुवाद नाम कृतुपाक्षता

असफल प्रेम और धार्मिक जीवन की

१- केवल- अपराधिता पृ० ४०

२- हिन्दी साहित्य का पुस्तक इतिहास (अन्तर्गत भाग) पृ० ११६

विकसताओं ने इन कवियों को कथ्यक निराश कर दिया। इनके काव्य में निराशा खानी प्रतीत होकर सामने आती है कि उनके परिणामस्वरूप यह कवि राय की आत्म-स्वीकृति पर विश्वास करने लगे। निराशा का आध्यात्मिक व्यक्ति को मृत्यु की ओर ले जाता है। उत्तर-शायवादी कवि भी मृत्यु का आलिंगन करने की तत्पर दिखाई देते हैं। हिन्दी काव्य में मृत्युपाशना या मृत्युवाद की भी प्रवृत्ति नहीं थी, परन्तु बल्लभ, नरेन्द्र शर्मा आदि कवियों ने मृत्यु की कामना के गीत लिखे। बल्लभ की "मृत्युवादा" काव्यकृति का प्रमाण है कि वह मृत्यु का आलिंगन करने के लिए तैयार हो नहीं, बल्कि अपनी प्रकृति प्राणप्रिय की श्राव करने के लिए कहती है तथा श्राव को श्रावों के प्रति उल्लेख करती है। बल्लभ आदि कवियों में मृत्युवाद कथ्यक व्यक्तिवाद की प्रेरणा के कारण उभरा है। उत्तर शायवादी काव्य में भी व्यक्तिवाद की प्रवृत्ति प्रतीकित हुई है।

(उ) जीवन की राणी मृत्युवादा के प्रति निष्ठा : निराशा

आशा और निराशा व्यक्ति के मन की दो धारें हैं। आशा के राज्यों में व्यक्ति कथ्यक प्रवृत्ति का सर्व प्रथम दृष्टिकोण होता है और निराशा के राज्यों में उसे समस्त विश्व नीरस और निरर्थक दिखाई पड़ता है। उत्तर शायवादी के कवि शाय ही यही हुआ। जब वह प्रेयसी के रूप धीनन्दन में मग्न रहा, तब तक वह प्रसन्न रहा। परन्तु अकस्मात् प्रेम और सामाजिक बन्धनों से विकल होकर

निराशा के झोड़ में काव्य रचना करने लगा । निराशा के कारण यह कवि संसार की साणभंगुर और अपनी जीवन की व्यर्थ मानने लगे । ये कवि निराशा के कारण स्वान्त जीवन जीने का स्वान्त प्रिय होने का भाव भी अपनी काव्य में बिखिर कर देने लगे । उनके वैयक्तिक जीवन की भाँति भावों के रूप में फलती फूलती रही और ये निराश मन से बहिष्कृत विरही प्राचीनभूत काम का सूजन करते रहे । इसी कारण यह फलान-वादी ही गये । धीरे धीरे उनके मन में, काव्य में कुण्ठा का स्वर दृष्टि-गोचर होने लगा । बल्कन , नरेन्द्र शर्मा की जीक काव्य कृतियों में निराशावाद और जीवन के प्रति साण भंगुरता की भावना के दर्शन होते हैं। यह निराशावाद व्यक्तिवादी दर्शन का परिणाम है।

(ऊ) फलानवाद

जीवन के ऐश्वर्य एवं संघर्ष से जब यह व्यक्ति विश्व से फलान करता है। वह नये लोक की संरचना करता है। कवि प्रेम से असफल होकर और संघर्ष से हार कर अपनी ताप की परा-जित और सफलता अनुभव करने लगा । यह पराजय ने उसको स्फूर्ति सक्त एवं शरण सक्त लोको की विवश किया । मदिरा और सीन्दूर का कवि रचना निराश ही गया कि तत्कालीन परिस्थितियों और समस्याओं का सामना भी नहीं कर सका । वह अपनी पश्चिष्ठ से फलान करने लगा । हायावाद में फलान का स्वल्प रचना फल और प्रकृत नहीं था किना कि उत्तर हायावाद में व्याप्त रहा । बल्कन , जेष्ठ, नरेन्द्र शर्मा फलान-

बाद से प्रक्षिप्त रहे । बल्कन का हालावाद में परिणत हो गया और
नरेन्द्र शर्मा कायात्म को और मुँह । यह फलान व्यक्तित्ववाद का परि-
णाम है जो कि उत्तर हायावाद में व्याप्त रहा ।

(२) नियतिवाद और भाग्यवाद

उत्तर हायावाद कवि प्रणय, मविष्य,
संघर्ष और अपनी बाप से कसकल होकर निराशा और फलान को और
मुँह । इन्होंने विश्व से फलान कर रकान्त में रहना चाहा । तब भी
लनके मन में कसकलता के भाव बाग्रत रहे । जब यह चकित और निरीह
होकर नियति की अपना सर्वस्व मानने लगे । अपनी कसकलताओं का
कारण नियति माना । लनके मन और काव्य में नियति घर कर गई ।
" रेखा होना हो पा " का वाक्य लनके काव्य में गुंथने लगा । अपनी
आपों की प्रति न होती देख नियति और भाग्य के प्रति ये कवि अधिक
सका हो गये । बल्कन, बल्ल, नरेन्द्र शर्मा ने नियतिवाद और भाग्यवाद
को अपनी काव्य में स्थान दिया । लो कारण लो काव्य में आत्मसीनता
में वृद्धि हुई और उत्तर हायावाद में व्यक्तित्ववादिता व्याप्त होगी ।

(३) भोगवाद नाम हालावाद

उत्तर हायावाद की समस्त कविता भोग-
वादी आधार पर विकसित हुई है। हालावाद और मदिरा के प्रति
आकर्षित के कारण लो काव्य में स्पष्ट स्वरूप भोगवाद के वर्तन होती

हैं। यह व्यक्ति के निजी दुःख को महत्व देता है। यह इन्द्रियबन्धु वर्तमानकालीन दुःख को महत्ता प्रदान करता है। इसका परम सत्य-
 'साजी फिजी पीब उठावी है'। उत्तराश्रयावादी कवि भी मदिरा
 और नारी-सौन्दर्य में खतने डूब गये कि यह प्रणय के साथ साथ सुवन,
 वासिना तथा बन्धु बरहोत विभण करने लगे। इनका समस्त दुःख प्रेयसी
 के मणित शरीर पर केन्द्रित हो गया। इनका कृतवाक्य दुःख को चरम
 स्थिति को व्यक्त करने लगा। वेणु, नीन्द्र सर्पा, बन्धन और बाराही
 प्रभाव ने अपने काव्य में स्पष्ट स्वयम्भू भोगवाद का विभण किया। इस
 भोगवाद प्रवृत्ति के दुःख में वर्तमान का निजी दुःख है। भोगवाद व्यक्ति-
 वादी काव्य को महत्वपूर्ण प्रवृत्ति है। अतः उत्तराश्रयावाद पर व्यक्ति-
 वाद का पूर्णतः प्रभाव है।

(बी) विद्रोह की भावना

उत्तराश्रयावादो काव्य में विद्रोह के स्वर
 विद्यमान है। अनु २० के सन्तान भासवर्ण में दुःखवाद का प्रसार होने
 लगा जिसके कारण उस युग की सभी धाराओं में विद्रोहात्मकता के बल्ले
 हुए तेवर स्पष्ट दृष्टिगोचर होती हैं। जैसे रुदियी, परम्पराओं और
 पर्यायवाची के प्रति नये रूप में विद्रोह के स्वर सुसंज्ञित हुए। इनकी इस
 प्रकार की कविताओं में न तो इनकी अनुभूतियों का वास्तविक योग हो
 है और न दृष्टिकोण अपना मान्यताओं की दुबला। वे मान एक हलके

विशेष की ही परिभाषिका है।^१ परन्तु दुधरी और लका विद्रोह समाज, संस्था, जाति वर्ग, वर्ण और व्यक्ति के प्रति व्यक्तिवादी स्वल्प लेकर व्यतिरिक्त हुआ है। वही वर्णन ही व्यक्ति के प्रति, समाज के प्रति, संस्था के प्रति, नियति के प्रति और ईश्वर के प्रति विद्रोह करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। डा० नगेन्द्र ने अपनी ग्रंथ 'बाधुनिक हिन्दो कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ' में विशद रूप से इसका विवरण किया है। व्यक्ति का ईश्वर के प्रति विद्रोह का भाव देखिए।^२ -

प्रार्थना मत कर, मत कर, मत कर ।

सुख पीय मैं दिखता मुझ मत ,

एकर बविकित, बविकित प्रतिफल ।

मृत्यु - पराजय के स्मारक हैं मठ,

परिवद, गिरजाघर ॥^३

इसी प्रकार नगेन्द्र जमा, बाराही प्रभाव एवं केवल ही ईश्वर का विरोध करते हैं। बाराही प्रभाव का वह ईश्वर की सत्ता और ईश्वर के मृत्यु की घोषणा करता है -

मैं अपना वाप विधाता हूँ मेरा भगवान नया है पर ।^४

१- डा० शिवकुमार मिश्र - नया हिन्दी काव्य पृ० ११६

२- डा० नगेन्द्र - बाधुनिक हिन्दो कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ पृ० ७७

३- वर्णन - स्वान्तरीणीत पृ० १०४

४- बाराही प्रभाव - देखिये पृ० ४८

बालीय युग के कवियों का विद्विह विरोध रूप से समाज के प्रति उभर कर सामने आया । कवि अपनी प्रणय के नशे में समाज की पर्यादाओं का विरोध करता है। उसके समक्ष नैतिक्ता और मान्यताओं की बात करना लीलात्मक है। सारा समाज उस कवि का शत्रु ही जाता है वह समाज से विद्विह करके अपनी जड़ की और ऊंचा उठाना चाहता है। वह धार्मिक संस्थाओं के विरोध में काव्य रचन करता है। वास्तव में बालीय युग का कवि घोर व्यक्तिवादिता से पीड़ित है, उसके मन में खना जाड़ोस है कि वह संसार की प्रत्येक शक्ति को चुनौती देता है। वह अपनी भुल के लिए व्यक्ति, समाज, संस्था, धर्म, नियति, ईश्वर और मान्यताओं से लोहा लेने को तैयार है। पर्यादा-भेद के रूप में उत्तर आयावादो काव्य व्यक्तिवाद के अत्यन्त समीप है। इस युग का समग्र विद्विह व्यक्तिवादी दर्शन के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इस-लिए उत्तर आयावादो काव्य का विद्विहात्मक स्वभाव व्यक्तिवादो दर्शन का परिणाम है।

(बी) कविवाद

उत्तर आयावाद 'व्यक्ति' को निजी अनुभूति का काव्य है। इस काव्य में व्यक्ति के अस्तित्व और उसके जड़ की वो कर्वाँ विलस रूप में प्राप्त होती है। उत्तर आयावाद का 'व्यक्ति' अस्तित्व और जड़ के प्रति आगम्य है। उसका जड़ उसके प्रणय, प्रेम्सो, भुल एवं दुःख की विशिष्ट मानता है। प्रेम्सो की श्रेष्ठ और अपनी अनुभूतियों को महत्ता प्रदान करने के कारण इस युग के कवियों का जड़ भाव

व्यक्ति बर्णित है प्रस्तुतित हुआ है। जो कई भाव के कारण बन्धन में व्यक्ति, संस्था, नियति, समाज तथा संसार है विद्रोह किया। वह अपने कई के कारण समाज की रीतियों, रुढ़ियों, मर्यादाओं और नीतियों के विरुद्ध विद्रोह का स्वर मुहर करता है। आयावाद का कवि कहीं-कहीं काव्य है, परन्तु उसका कई-भाव ज्ञाना वेगवान प्रवृत्ति एवं विद्रोहात्मक नहीं है।

कतः स्पष्ट रूप से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि उत्तर आयावादी कवि व्यक्तिवादो वर्जन और प्रवृत्तियों से पूर्णतः सम्बद्ध था। उसका कई व्यक्ति का कई है, इसलिए उसकी कई भावना व्यक्तिवाद की ठीक भूमि पर विकसित हुई है।

(बी) व्यक्ति-स्वातंत्र्य बनाम व्यक्ति और समष्टि का संघर्ष

आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यक्ति स्वातंत्र्य के विविध स्वल्प उद्घाटित होते रहे हैं। भातिन्दु युग का व्यक्ति - स्वातंत्र्य ज्ञाना विकसित नहीं था जितना कि द्विवेदी युग का। परन्तु द्विवेदी युग का व्यक्ति-स्वातंत्र्य सुधारवाद और कार्य समाजो नेतिस्ता में केवल राष्ट्रीय जागरण को और ही प्रभावित हुआ। आयावाद में कवि ने पहली बार व्यक्ति-स्वातंत्र्य का स्वर मुहर किया। आयावाद का व्यक्ति-स्वातंत्र्य सर्वात्मवाद और रहस्यवादों का व्यापकता में बल्लुत होता रहा। परन्तु उत्तर आयावाद का व्यक्ति-स्वातंत्र्य पूर्णतः विकसित स्वल्प लेकर अवस्थित हुआ। इस युग के कवि व्यक्ति को ज्ञाना और उसके हित के प्रति विस्तार रूप से जागरूक हो उठे।

‘व्यक्ति’ के स्वातंत्र्य ने व्यष्टि और समष्टि के संघर्ष को तेज कर दिया। व्यष्टि-स्वातंत्र्य की भावना ने उत्तर शाय्यावाद के कवियों को विद्रोह करने के लिए प्रेरित किया। ये कवि समाज और उसके नियमों, रीतियों, कानूनों एवं पर्यायवाची से विद्रोह कर उठे। बल्लभ, हरिन्द्र वर्मा, अंबल, आरसी प्रसाद आदि ने व्यष्टि को अपने केन्द्र का मुख्य आधार माना और सामाजिक रीति-रिवाजों, कानूनों एवं कदियों के विरोध में आवाज उठाई।

उत्तर शाय्यावाद के समग्र कवि समाज से विद्रोह कर रहे थे। इसलिए समष्टि भाव से निरन्तर दूर होती गयी। उन्होंने व्यष्टिभाव की महत्ता को और व्यष्टि समष्टि के संघर्ष की गति प्रदान की। व्यष्टि भावना की महत्ता देने वाले कवि ही उत्तर शाय्यावाद में रहे अन्य कवि प्रातिवादों ही गए। इस संघर्ष ने व्यक्ति की महत्ता, व्यक्ति की स्वतन्त्रता, व्यक्ति के अस्तित्व और व्यक्ति भुक्त की विशेषता रूप से व्यक्त किया। अतः इस काव्य में व्यक्ति-स्वातंत्र्य के साथ व्यक्ति की गरिमा का अन्वेषण हुआ जो कि व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्वपूर्ण कार्य है।

धृष्ट और सरल अभिव्यक्ति प्रणाली

उत्तर शाय्यावादी काव्य में अभिव्यक्ति का प्रयोग हुआ है। यह प्रायः गीतात्मक काव्य है। गीतों की भाँसा सरल एवं धृष्ट है। इसी कारण इन कवियों की सीधी अभिव्यक्ति प्रणाली और सरल कथन मँगिया पाठक के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध बनाती रही। इनका काव्य

में गीत काव्य को सम्यक् विशेषताएं प्राप्त होती हैं। उत्तर छायावाद व्यक्ति की अनुभूतियों को ही सर्व श्रेष्ठ के प्रस्तुत करता है। इन वैयक्तिक अनुभूतियों को वह स्वीकरी देता है। व्यक्तिवादी दर्शन को नकारात्मकता प्रभुवाद तथा हातावाद ने कवि को अभिव्यक्ति-प्रणाली में कलात्मकता के स्थान पर उच्च एवं श्रेष्ठ अभिव्यक्ति की प्रयोग किया जाने लगा।

अन्की भाषा संस्कृत प्रभावशाली है। उस पर भी ये जीतनात के शब्दों का प्रयोग करते हैं। उनके बोधि और श्रेष्ठ मुहावरों अन्की रचना का विशेष गुण है। अन्की शब्द विधान बोधा शब्दा है कठिन शब्दों का प्रयोग नहीं करते ताकि गेयता में अवरोध उत्पन्न न हो। इसी कारण अन्की भाषा श्रवण, श्रेष्ठ और मानवीय जीवन के निकट है। अन्की गीतों में वरुणों- फलशुओं के श्रेष्ठ शब्दों का प्रयोग भी प्राप्त होता है किसी समय- स्थान में लीज एवं स्वर में वाचार्थ उत्पन्न होता है। अन्की गीतों में स्वर और समय का तात्पर्य ज्ञान समीपता है कि अनुभूति और अभिव्यक्ति का समन्वय ही गया है। इसीलिए अन्की समय स्थान शब्दों, श्रेष्ठता तथा अनु श्रेष्ठ वेग से विकसित होता है। स्वर योजना में वारिक लीज नहीं है, अपितु बोधापन प्राप्त होता है।

अन्की विधान की दृष्टि से भी यह काव्य में विविध शब्दों के प्रयोग प्राप्त होते हैं। अन्की 'मृगाता' में हजारों शब्द का प्रयोग किया है। अन्य रचनाओं में हिन्दी के विविध शब्दों एवं गेय पदों का प्रयोग प्राप्त होता है। श्लोकों एवं बिम्बों की दृष्टि से अन्की वैयक्तिक सुत - सुत के चित्र उठते हैं। बिम्बों की दृष्टि से अन्की ने जीव स्वरों पर उपाता और विशेषणों में बिम्बात्मकता का प्रयोग

महत्त्वपूर्ण है। कर्त्तारों में उपमा, रूपक का बहुतायत में प्रयोग प्राप्त होता है। डा० उनकी कल्पना ऐसी कल्पना कह्य वीर धरत है जो कि शायबाद के अधिक प्रभावोत्पादक बन गई है। इसका दूसरा कारण वैयक्तिक गुण-दुःख, राम विराम पर लिखी गई कविताएँ हैं जो कि नितान्त वैयक्तिकता की उपाधि किये हुए हैं। अतः हम ये उत्तर शायबाद की अभिव्यक्ति प्रणाली कह्य, धरत एवं वैयक्तिक है।

उत्तर शायबाद का 'व्यक्ति' सामान्य व्यक्ति है। वह यथार्थ को धरती पर लड़ा कर समाज, संस्था, नियति वीर संसार को लुकाता है, जबकि शायबाद का कवि व्यापक, संस्कृति का रहस्यात्मक वावरण ब्रीद कर जन्तुसंसार को लुकाता है। उत्तर शायबाद की प्रमुख व्यक्तित्ववादों प्रवृत्ति यह है कि वह अपनी व्यक्तित्व की संकोच रखित होता है, वह अपनी कथाओं की प्रति के रूप में व्यक्तित्व की प्रत्यक्ष व्यक्तित्व को लुकाता है। 'उत्तर व्यक्तित्ववाद बाह्य जीवन के बीच धरि हुए निजीजी को लुकाता है वीर अपनी सोमार्थों का बीच उस बाह्य जीवन को करा देना चाहता है।' शायबाद का व्यक्तित्ववाद जन्तुसंसार के चिन्तन का परिणाम है जबकि उत्तर शायबाद का व्यक्तित्ववाद जन्तुसंसार के प्रवृत्ति के काव्य में प्राप्त हुआ है। उन कवियों ने 'स्व' की अभिव्यक्ति को धरत धरत धरत के को है। अतः उत्तर व्यक्तित्ववाद बाह्य व्यक्तित्व नहीं अपितु भीतिवाद के लुकाता है। उनके व्यक्तित्ववाद में बाह्य व्यक्तित्व, नैतिक वीर सामाजिक कल्पना के प्रति विद्रोह का भाव प्राप्त होता है। डा० नीन्द्र ने इस अवधि में उक्ति को कहा है- 'उत्तर व्यक्तित्ववाद मान्य वास्तवों के प्रति संवेद वीर विद्रोह को लेकर बना है।' वास्तव में

१- डा० कल्याण प्रसाद पाण्डेय - शायबादी उत्तर हिन्दी काव्य की सामा-

जिक वीर धरतित्वक प्रवृत्ति १० १०२

२- डा० नीन्द्र- बाह्य व्यक्तित्व हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ १० ७

जका व्यक्तिवाद किसी वास्तिक दर्शन पर आधारित न होकर नास्तिक और नकारात्मक दर्शन पर आधारित है। अतः इस काव्य में सन्देहवाद, नियतिवाद, भाग्यवाद, नास्तिकता, भोगवाद तथा निरीक्षवाद भी प्राप्त होते हैं। उत्तर शायवाद, मूलतः व्यक्तिवाद पर आधारित है। यह व्यक्तिवाद और कई भाव एवं व्यक्ति-स्वातन्त्र्य की भावना से विकसित हुआ है। इस काव्य को अनिव्यक्ति गेय गीतों के माध्यम से हुई है, अतः वैयक्तिकता को और परिणति इस काव्य का महत्वपूर्ण का रहा है। इस काव्य में व्यक्ति-तत्त्व कभी स्वतन्त्र भाव से विकसित हुआ है। उत्तर शायवाद का केन्द्र व्यक्ति है और व्यक्तिवादो दर्शन उसका भावात्मक फल। इस कविता को प्रमुख प्रवृत्ति वैयक्तिक-भेदना है जो कि समस्त काव्य में विविध रूपों में निरन्तर प्रकाशित होती रही है। अतः उत्तर शायवाद व्यक्तिवादो दर्शन का एक विकसित और स्वतन्त्र काव्यात्मक स्वयं है।

निष्कर्ष

वाचनिक हिन्दी कविता में व्यक्तिवाद के विविध रूप प्राप्त होते हैं। भारतीय युग में व्यक्ति के प्रति और व्यक्तिवाद के प्रति दायिक भावना परिलक्षित होती है। परन्तु द्वितीय युग का व्यक्तिवाद सुधारवाद नैतिकता एवं पर्यादावाद में परिवर्तित हो गया। ऐसे व्यक्तिवाद की अधिक विकसित होने का मार्ग नहीं प्राप्त हो सका। शायवाद व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों के विस्फोट के रूप में हिन्दी काव्य को प्रभावित करता है। शायवाद में 'मैं' की स्वाकृति ने व्यक्ति के मुक्त होने का उद्घोष किया। उसने व्यक्ति कर्तृत् 'स्व' को केन्द्र माना और प्राचीन परम्पराओं से विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह में

व्यक्ति के विकास का नया मार्ग हुआ- "व्यक्ति विकास के लिए यदि उन समस्त बन्धनों का धीरे धीरे विरोधी है जो इस विकास की अवरोध करती हैं। यह विरोध जो सभी में व्यक्त हुआ है- एक प्रतीकात्मक कविता के रूप में और दूसरे अद्विगत मान्यताओं, आदर्शों तथा यह काव्य बन्धनों की तोड़ कर मुक्त एवं स्वतन्त्र रूप में।" का: हायावाद में व्यक्तिवाद वात्मा-मिथ्यात्व तथा अन्तर्मुखी भावों के उद्गार के रूप में विवक्षित हुआ है। जहाँ व्यक्तिवाद की वाक्यात्मकता एवं रहस्य भावना के आवरण को तोड़ कर जीवन से फलाक्य करना पड़ा। हायावाद व्यक्तिवाद के काव्यात्मक रूप में उत्कृष्ट सफल काव्यान्वीक्षण है।

उत्तर हायावादी काव्य में व्यक्तिवाद का वित्तिय स्वरूप रूप दिशाएं देता है। जहाँ हालावादी, मधुसूतादी स्वरूप अन्वय का चिन्तन प्राप्त होता है। जायो रोमसि और मृत्युपासना ने इस काव्य की फलाक्यवादो, निराशावादो और अज्ञानादि घोषित कर दिया। मुक्त: यह काव्य 'व्यक्ति' की गरिमा और उसके 'जहाँ' की शक्ति काव्यात्मक रूप में प्रस्तुत हुआ। इस काव्य का चिन्तन व्यक्तिवाद है।

१- डा० इन्दु नाथ प्रधान- वाधुनिक कविता का मूल्यांकन पृ० ३०

तृतीय अध्याय

समकालीन काव्य (सन् १९४१ ई० से सन्
१९७० ई० तक) में व्यङ्ग्यवाद के नूतन

प्रतिज्ञा

समकालीन काव्य में व्यक्तिवाद के नूतन प्रतिष्ठित

(सन् १९४१ से १९७० तक)

(१) प्रयोगवाद

(क) 'प्रयोग' शब्द का अर्थ और उसकी प्रामाणिक व्याख्या

हिन्दी साहित्य में प्रयोगवाद का सम्बन्ध एक काव्यान्वीक्षण के रूप में हुआ । 'प्रयोग' शब्द नवीन नहीं है, परन्तु भारतीय साहित्य में प्रयोगवाद शब्द एक नयी प्रवृत्ति का बोधक है । प्रयोग शब्द वाग्लि भाषा के 'एक्सपेरिमेंट' का पर्याय है और प्रयोगवाद भी वाग्लि भाषा के 'एक्सपेरिमेंटलिज्म' का पर्याय माना जाता है । 'प्रयोग' शब्द का वास्तव सम्बन्ध या सीध है 'प्रयोग' का अर्थ प्रत्यक्ष + एवम् 'किसी चीज या बात की वास्तविकता क्या सम्भावना काम में लाना । विज्ञान में यह शब्द का प्रयोग सम्बन्ध कार्यविधि के रूप में होता रहा है और विज्ञान के ही साहित्य में इसकी अवधारणा हुई है। किसी वस्तु में कुछ नये प्रयोग करके नवीन अनुभव एवं उपलब्धियाँ प्राप्त की जाती हैं। प्रयोग के द्वारा निर्धारित एवं प्रामाणिक तथ्योंका पुनः प्रयोग करके नयी उपलब्धियाँ प्राप्त करना प्रयोगकर्ता का लक्ष्य होता है। प्रयोगकर्ता प्रयोग द्वारा प्राप्त उपलब्-

१- हिन्दी साहित्य कीज भाग १ प्रयोग ६० हा० पीरेन्द्र वर्मा १९५२

२- मानविकी पारिभाषिक कीज- साहित्य सप्ताह -हा० नगेन्द्र १९६६

३- मानक हिन्दी कीज - ६० राम चन्द्र वर्मा १९६३

४- हा० श्रीराम नागर- हिन्दी की प्रयोगशील कविता और उसके प्रेरणा-
श्रोत १० व

कियाँ को महत्व देता है। तबः प्रत्येक प्रयोग का अपना महत्व होता है। 'प्रयोग' का सत्य मान्य सत्य का परीक्षण एवं पुनः परीक्षण करके सत्य के नये आयामों को खोज करना है। संक्षेप में कह सकते हैं कि प्रयोग का उद्देश्य सत्य का तन्वीक्षण है और 'प्रयोग' परीक्षण एवं तन्वीक्षण की प्रक्रिया है। विज्ञान के अन्तर्गत वस्तु की परिचिप्ति, व्यवहार जादि का अध्ययन करना ही 'प्रयोग' माना जाता है।

एक प्रकार वस्तु को वास्तविक प्रकृति एवं सीमाओं का ज्ञान होता है जिससे उन्हीं सम्बन्धों में उक्ति निष्कर्ष प्राप्त किये जाते हैं। इन निष्कर्षों पर पुनः विचार करके सत्य के नये आयामों को स्थापित किया जाता है विज्ञान के अनुसार कोई सत्य अस्तित्व नहीं होता। तबः किसी भी वस्तु पर कभी भी पुनः प्रयोग किया जा सकता है। वैज्ञानिक व्यक्ति किसी भी मान्यता को तब तक स्वीकार नहीं करता, जब तक कि वह प्रयोग को क्वांटो पर पूरी तरह नहीं कर लेता।

परीक्षण प्रयोग को विज्ञाता है। तन्वीक्षण उपसर्ग है। प्रयोग नये सत्य के नये आयामों को जानने का माध्यम है। प्रयोग की मूल प्रकृति नये तन्वीक्षण के द्वारा नये मूल्यों को स्थापित करना है। प्रयोग व्यर्थों की जीवन में देखने का साधन है। प्रयोग में विवेक महत्वपूर्ण होता है। विवेक की प्रकृति ही परीक्षण एवं तन्वीक्षण में अत्यधिक सहायक होती है। यद्यपि प्रयोग जीवन की उदात्त भावनाओं का प्रतिनिधित्व करता है। इसी कारण परम्परा विवेक होन होने से

सत्य को स्वीकार नहीं कर पाती। प्रयोग यह भी स्वीकार करता है कि हृदयीं द्वारा स्थापित सत्य जीवन को विकास नहीं देता और न ही बच्चे बिना तक स्थापित रह पाता है। जिज्ञासा, दृष्टि एवं विक-
सित यथार्थ प्रयोग के साधन हैं, जिनके द्वारा सत्य का अवलोकन पूर्ण होता है। "प्रयोग" के सम्बन्ध में हिन्दो साहित्य कील में निम्नलिखित पाँच अवधारणाएँ रेखांकित हैं :

(क) "प्रयोग" किसी भी निर्धारित सत्य को अन्तिम सत्य स्वीकार नहीं करता। सत्य का वैज्ञानिक परी-
क्षण एवं परिशोधन किया जा सकता है। इसी कारण सत्य का जीवन-
तत्त्व देल, कात और कार्य के साथ विकसित होता है। इस विकास को ज्ञात करने की प्रक्रिया को ही "प्रयोग" के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

(ख) प्रयोग किसी वस्तु के व्यवहार और उसकी प्रकृति का परीक्षण करके उसकी सीमाओं और सम्भावनाओं का बोध कराने वाली प्रवृत्ति है।

(ग) प्रयोग प्राचीन पर्यादाओं की उस तक तक ही स्वीकार करता है जब तक कि वे नये पर्यादाओं के विकास में सहयोग देती रहती हैं। अन्यथा पुराने मान्यताओं को बर्बाद कर

देता है। इस प्रकार प्रयोग की पुष्ट प्रवृत्ति है- नवीन के प्रति आस्था ।

(घ) प्रयोग किसी अन्य विश्वास एवं

नकार की क्रायक नहीं स्वीकारता क्योंकि अन्य विश्वास एवं नकार को मानव मूल्य विघटित होते हैं। नकार विवेक एवं वापुनिकता की स्वीकार करने स्थापित होता है। अतः प्रयोग एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है और यह वैज्ञानिक प्रक्रिया नकार एवं अन्य विश्वास का पूर्णरूपेण लपटन करती है।

(ङ०) प्रयोग ज्ञान प्रतिपन्न की अनु-

प्रति का फल देता है, ताकि प्रयोग में गत्यात्मकता रहे । प्रयोग में पूर्ण सत्य को और जागृकता को रखते हैं उसको नवीन दिशाओं को जानने को प्रेरित रखते हैं। अतः प्रयोग की गति प्राप्त होती है।

प्रयोग कभी पूर्ण नहीं होता । यह एक

प्रक्रिया है जिससे किसी वस्तु या सत्य का व्यावहारिक एवं वैज्ञानिक कार्य या सम्पर्क ज्ञात किया जाता है। किसी वस्तु की प्रकृति, व्यवहार एवं परिस्थितियाँ निरन्तर परिवर्तित होती रहती हैं। प्रयोग उनके प्रति नया दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। उनके द्वारा ही प्रयोग अपना अन्वेषण करता है अतः सत्य अन्वेषण है और प्रयोग एक पाठ्य है। पाठ्य को यह एक विशेषता है कि उसके द्वारा ही अन्वेषण ज्ञान प्राप्त करता है। वापुनिक वैज्ञानिक ज्ञान में प्रत्येक प्रकृत आन्ति के लिए प्रयोग इसलिए आवश्यक है कि वह इसके द्वारा प्रकृत मान्यताओं, मर्यादाओं एवं कदियों का विवेकपूर्ण लपटन कर ले। इसलिए यह कहा

जो ऊँचा है कि प्रयोग सत्य का अन्विषी है। प्रयोग एक प्रक्रिया विशेष है, तथ्य विशेष नहीं, प्रयोग केना एवं विकास का मूलक है। प्रयोग विध्वंसात्मक नहीं होता, अपितु जीवन की उदात्त भावनाओं को उदयीन करता है। अतः प्रयोग विकासशील एवं उदात्त भाव से प्रेरित एक प्रक्रिया है। वास्तविक युग में प्रयोग का अत्यधिक महत्व है। जीवन के सभी क्षेत्रों में विविध प्रयोग की गयी हैं जिनका उद्देश्य सत्य को उद्घाटित करना है। जब प्रयोग व्यक्ति के वास्तविक एवं वास्तविक जीवन के एक प्रकार का मूला है कि उसके बिना नये मूल्यों को होय करना उपलब्धि असम्भव है।

(आ) काव्य में प्रयोग

प्रयोग का क्षेत्र विस्तृत है। प्रयोग व्यक्ति के जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा कोई क्षेत्र नहीं जिसमें प्रयोग न किया जाते हों, प्रयोग प्रत्येक युग में हुए हैं और होती रहेंगे। विज्ञान के साथ साथ काव्य में भी प्रयोग का महत्व है। विश्व का कोई ऐसा काव्य साहित्य नहीं है जिसमें प्रयोग न हुए हों। उसका मुख्य कारण यह है कि एक ही शब्द, भाषा, रूप-विधान एवं कथ्य की अनन्त पद्धति ऊँच हो जाती है कवि मन विपरीत होता है, वह नित्य नवीन को और प्रवृत्त रहता है। काव्य में कवि अत्यधिक स्वतन्त्र होता है, परन्तु उसे काव्य को कुछ मर्यादाएँ बधि रहती हैं। युग एवं परिवेश को ध्यान कवि को काव्य के बन्धन तोड़ने पर विवश करता है। उसी कारण, विश्व काव्य साहित्य में कथ्य, शिल्प, अभिव्यक्ति, लय, शब्द, कर्तार,

भाषा, प्रतीक, विषय आदि को लेकर नये नये प्रयोग हुए हैं। प्रतिभा-
शाली एवं मौलिक कवि काव्य के उन्नेत उपादानों को लेकर नये नये प्रयोग
करते रहे हैं। जब भी कवि ने काव्य में प्रयोग किये, नये काव्यान्वीतनों
ने जन्म लिया। प्राचीनो काव्य में प्रयोगों को भूम रही है। उसका
प्रायः विभिन्न काव्यान्वीतनों पर पड़ा। वहाँ प्रतिध्वनि नये 'वाद'
विकसित हुए जो अपने प्रायः के दूधरे देनों के काव्य की भाषा भी प्रभावित
करे हुए हैं। प्रयोग की वास्तव्यता की समझ कर ही कविय ने काव्य में
प्रयोग के संदर्भ में अपने विचार एवं प्रकार प्रस्तुत किये हैं :

“ जो लोग प्रयोग को निम्न करते हैं
सिधे परम्परा को दुहाई देते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि परम्परा, कम
से कम कवि के लिए कोई ऐसी पीटली बाध कर उत्पन्न रही हुई जोड़ नहीं
है जिसे वह वह उठाकर धिर पर साद से वीर बल निकसे। (कुछ वालो-
कों के लिए नती हो बैसा ही) परम्परा का कवि के लिए कोई बंध नहीं
है, जब तक उसे ठोक बजाकर तोड़ मरोड़ कर देखकर आत्मसात् नहीं कर
लेता जब तक वह एक स्वनामधरा संस्कार नहीं बन जाती कि उसका
केष्टापूर्वक ध्यान रखकर उसका निर्वाह करना स्वावश्यक न हो जाये।
यदि कवि को आत्मनिष्पन्न एक संस्कार विशेष के केष्टन में ही
सहज घामने जाती है। तब तो वह संस्कार देने वाली परम्परा कवि को
परम्परा है नहीं तो वह इतिहास है, शास्त्र है ज्ञान भण्डार है जिससे
व्यपारिणित भी रहा जा सकता है। स्पष्टे ज्ञात होता है कि काव्य में
प्रयोग की महत्ता अधिक है।

कवि मुक्त है वह मुक्त रहना चाहता है। काव्य कदियों एवं शास्त्रीय परम्पराएँ उसकी और उसी सेवन की कड़ी हुई शीर्षों में चलाने का प्रयत्न करती हैं। किन्तु सर्वत्र कवि को इन बन्धनों को तोड़ कर कदियों को लंघित करके सिंह की भाँति नये मार्ग निर्मित करता है। और स्वतन्त्र होकर नये मानदण्ड स्थापित करता है कवि का प्रयोग ही काव्य है और उसी प्रयोग करने के माध्यम छन्द, लय, भाषा, कंठकार एवं रूप विधान आदि हैं जिनके द्वारा काव्य को नये रूप और नये विधान को और प्रेक्षित करता है।

प्रत्येक युग के सच्चे कवि ने अपनी पूर्व की काव्य परम्पराओं को अवलोकित किया और प्रयोग करके काव्य के नये मानदण्ड स्थापित किए हैं जिनका अपना विशेष महत्त्व है।

(२) हिन्दी कविता में प्रयोग - १८००-१९००

कविता के लिए प्रयोग करने महत्त्वपूर्ण है कि प्रयोगों के सम्बन्ध में सिद्धा है-कि प्रयोग निरन्तर होती जाते हैं, और प्रयोगों के द्वारा ही कविता या कोई भी कला, कोई भी रचनात्मक कार्य, जागे बढ़ सका है।

(१) इसका वास्तव है कि प्रयोग प्रत्येक युग

१- लोक लोक कायर नहीं, लोक लोक कूट ।

लोक लोढ़ी लोनी नहीं, सायर सिंह सज्ज ।।

में होते रहे हैं और कविता में प्रत्येक युग के कवि ने प्रयोग किये हैं। संस्कृत साहित्य भी प्रयोगों से बहुत नहीं बना। 'मेघदूत' में मन्सा-कान्ता को मन्द-मन्दर गति कालिदास का प्रयोग नहीं तो क्या था ? संस्कृत के अन्य कवियों ने अपनी काव्य में विविध प्रयोग किये हैं। वादि काल के सिद्ध, नाथ एवं पैम कवियों का कथ्य एवं शिल्प उनके पूर्व की रचनाओं के बीच में भी भिन्न है, यहाँ तक कि वादि काल के कवियों ने इन्द्र, तप, कर्तार वादि नये प्रयोग किये। बौद्ध सिद्धों का भाषा-विद्रोह एवं साधना की, रत्नार काव्य में प्रयोग के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। अपनी से पक्षी की सम्य मान्यताओं के प्रति विद्रोह करना सदा उद्देश्य था। आः हिन्दू कविता के आदिकाल में प्रयोग हुए जिनको अपनी विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं। मध्ययुग की कविताओं में विद्रोह की भावना प्राप्त होती है। इस युग के साधकों, भक्तों एवं संतों ने सामन्तो-सौन्दर्य बोध की चली जाती परम्पराओं का विरोध कर कविता की एक नवीन दृष्टिकोण प्रदान किया है।

(2) कबीर की भाषा एवं सहज बहि-

व्यक्ति के उदाहरण प्रयोग के सबसे उदाहरण हैं। महाकवि तुलसीदास ऐसे ही प्रयोगकर्ता हुए हैं जिन्होंने कि उस काल में चली जा रही काव्य की सम्य शैलियों में रत्नार करके सभी चीजों का अवलोकन किया है। मस्ति-काल में सौन्दर्य बोध के साथ खिदनाई तथा अनुभूति के सीपान परिवर्तित हो रहे थे और साधारणकरण की परिस्थितियाँ भी भिन्न थी। पद्य

कुल के साथ-साथ उसी साधना में व्यक्तिवादी रहे किन्तु उनको साधना की अभिव्यक्ति समष्टिपरक ही रही। रीतिकालीन कविगी में भक्तिकाल के सौन्दर्य बोध एवं छेदनाजी की पुराना छिद कर दिया। रीति में बोध एवं धारार प्रेम के स्वच्छन्द मुक्त झूलने लगी। परन्तु आधुनिक काल में विशेष रूप से द्विवेदी कुल ने रीति कालीन भाषा, हृन्द, कर्त्तार, रूप-विधान आदि की कस्ती को नीति उतार दिया द्विवेदी कुल की कविता में नारों के प्रति दृष्टिकोण परिवर्तित हो गया। जब नारों 'लक्ष्मी' का प्रसंग बनो। वह 'काम्यता पुस्तिका' नहीं रह गयी थी। प्रस्तुत सन्दर्भ में डा० खोन्ड्र प्रमर का कथ्य विचारणीय है :

“ वस्तुतः रीतिकाल के प्रति द्विवेदी कुल का विरोध बहुमुखी था। भाव, भाषा, हृन्द, शैली, आदि सभी दिशाओं में सुललित हुआ। ”

द्विवेदी कुल में ब्रज भाषा के स्थान पर लड़ी बोली में कविता की जाने लगी। यह बहुत बड़ी उपलब्धि थी। लोक गीतों की धुनों का लड़ी बोली की कविता में प्रयोग किया गया। ऐसे हृन्द, तय तथा काव्य विषय में नवीनता का जन्म हुआ।

शायवाद का जन्म द्विवेदी कुल के विरोध में हुआ। द्विवेदी कुल उपयोगितावाद, बुद्धावाद, बौद्धिवा, रतिवृत्ता-स्पष्टता, रसुक्तता आदि से कथ्यधिक प्रभावित था। शायवाद ने इन सबका विरोध किया।

इस सम्बन्ध में डा० फ़ुलविहारी शर्मा का
व्यक्तित्व विचारणीय है :

“ द्विवेदी युग के सन कवरीधी ने नये
कवियों को विद्रोह के तिर विवृत किया क्योंकि ये कवरीध उनकी
स्वतन्त्रता का अपहरण कर रहे थे । प्रत्येक शाय्यावादो कवि ने द्विवेदी
युग को इतिवृत्तात्मकता, बोधिकता, तर्कवाद और सुझाव के विरुद्ध
अपनी भावनाएँ तथा विचार व्यक्त किए हैं। उन्होंने रोमान्टिक प्रे-
तियोगों- परिपाटी के दृष्टिगत, सुख संन्यस्य भावना का भी विरोध
किया ।”

द्विवेदी युग में नारी- सौन्दर्य का चित्रण
वर्णन का विषय था शाय्यावाद ने नारी- सौन्दर्य को विविध रूपों
में नयी दृष्टि प्रदान की । शाय्यावाद में रोमाण्टिक प्रवृत्ति प्रधान
रहो । इस काव्य में वस्तुपरकता के प्रति गहरा विद्रोह मिलता है।

शाय्यावाद में प्रयोग प्रवृत्ति विकसित हो
रही थी । शाय्यावाद के प्रायः सभी कवि प्रयोगों के प्रति सज्ज थे वे
सामान्य एवं उच्च शब्द का प्रयोग करने में सफल रहे । उन्होंने काव्य
के विविध चीजों में प्रयोग किये ।

डा० फ़ुलविहारी शर्मा ने बाह्य अर्थों पर
प्रभाव डाल कर किये गये प्रयोगों पर इस प्रकार विचार व्यक्त किये हैं :

“ जब तक प्रभाव को सामान्यतया शाय्यावाद

१- डा० फ़ुल विहारी शर्मा- शाय्यावादो कवियों पर लीजो के रोमाण्टिक
कवियों का प्रभाव पृ० ६४

का प्रसक्त माना जाता है। उन्होंने काव्य के क्षेत्र में लोक प्रयोग किए और वस्तु में मनोबुद्धि माध्यम पाकर साहित्य की प्रीति की।
शायवादी में नारो के प्रति विचार परिवर्तित हुए।

जब नारो की प्रेमय क्षम में व्याप्ति किया गया। शायवादी में नारो के बाह्य एवं आन्तरिक सौन्दर्य का विमल अभिव्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया। इस धारा के कवियों द्वारा किये गये अप्रस्तुत विधान, प्रतीकात्मकता, लालाणिकता आदि के प्रयोग निरन्तर क्रमपूर्ण हैं। शायवादी में नवीन प्रयोग होने के कारण लोक उपलब्धियाँ हुईं।

शायवादी काव्य में यथार्थपरक जीवन-दृष्टि नहीं थी। शायवादी कवि विश्व को अपनी जैसी से देखते थे। उत्तर शायवादी कवियों ने शायवादी की आत्मिकता तथा सृष्टि के प्रति आग्रह तथा सक्रियता आदि को लौकिक धूमि पर अवलम्बित किया। उत्तर शायवादी में सौन्दर्य के स्फुट, चिन्म, मलिन सौन्दर्य, कृष्ण निराशा, अश्रुताप, सभी रीति-रिवाज आदि का विकास हुआ। जब शायवादी जीवन एवं लक्षणा के स्थान पर अभिधा का प्रयोग होने लगा। भाषा एवं शब्दों के प्रति भी नवीन प्रयोग किये गये। शायवादी कृत विधान एवं शब्द-विन्यास को त्यागकर सहज भाव से प्रणय की अभिव्यक्ति हुई। शायवादी युग में ही वर्ग-संघर्ष की बात

१- डा० फूल बिहारो शर्मा- शायवादी कवियों पर अंग्रेजी केरीमा-
टिक कवियों का प्रभाव पृ० ६४

उठने लगी थी। शीघ्रित, पोद्दित क्माव के प्रति उदार दृष्टिकोण
 और शीघ्र के प्रति विद्रोह के भाव ज्यों प्राप्त होते हैं। प्रातिवादी
 कवियों ने शायबाव के काल्पनिक लोक एवं प्रयोगवाद के व्यथित तथा
 उत्तर शायबावो सभी रोमांच के विरोध में वर्ण-वर्ण का विषय
 करने पर अधिक बल दिया। प्रातिवाद की कविता का नायक, किसान,
 मजदूर दलित, पोद्दित एवं सर्वहारा बना। प्रातिवादी कवियों ने शाय-
 बावो कव्य को त्यागकर जनजीवन की यथार्थ क्रियाओं को महत्व दिया।
 शायबावो दृष्टि का निमित्त सौन्दर्य-प्रतिमा एवं कल्पना को हृ-
 मार उचितिकता के बिना हृष्ट हो गये। अब दोन दुःखी किसान, मजदूर
 की मीठी, रस-सीता एवं रूप का मुख्यविषय होने लगा। प्रातिवाद
 में सादिक मोह, काल्पनिक दृष्टता एवं वात्सल्यता के स्थान पर
 यथार्थ जीवन दृष्टि की स्थापना हुई। प्रातिवाद में कव्य एवं शिल्प
 दोनों में प्रयोग हुए। रस, उद्बोधनात्मक, वर्णनात्मक, व्यंग्यात्मक
 प्रयुक्त हुए। शब्दों में मुक्त शब्दों का भी प्रयोग हुआ। भाषा को
 नयी विषय वस्तु पर बना गया और प्राचीन जीवन तथा लहरी जीवन
 के अद्वैत स्थल का विषय जन-मानस की भाषा में किया जाने लगा।

नयी कविता का अन्य प्रयोगवाद की पोट
 पर हुआ नयी कविता का उद्देश्य- प्राचीन जर्जर, प्राणहीन, अदिग
 उत्कारी का उन्मूलन कर नये प्रयोगों की प्रतिष्ठा करना। नयी कविता
 के कवि ने प्रतीक विम्बों का यथार्थ जीवन के साथ सम्बन्ध स्थापित
 किया और उनका सम्बन्ध उस भाव-बोध से हुआ जो सत्य के साथ

आन्दोलित होता है। नयी कविता का फलक विस्तृत है। विचार-वस्तु की दृष्टि से नयी कविता में जीवन सत्य आरोपित नहीं, मानव अनुभूत है। इस प्रकार शिल्पात्मक प्रयोग के साथ साथ जीवन सत्य स्थिति विशेष की अभिव्यक्ति भी नयी कविता में होती है। नयी कविता ने इन्द्र में प्रयोग किया, वर्ग की सत्य का उन्विक्षण, स्व विधान में नयी मनःस्थिति का उन्विक्षण आदि में नयी विचार प्रदान की। नयी कविता ने परम्परा से गृहीत विविध छिटे उपमानों, अप्रस्तुत विधान प्रतीकों को नकार कर नये ताने सटके उपमानों एवं प्रतीकों का प्रयोग किया। नयी कविता का शब्द विश्वास में विभिन्न प्रकार के शब्दों का प्रयोग हुआ है। नयी कविता की पोट पर कविता यौनाचार एवं अज्ञात चिन्तों को लेकर चली। उत्तर शायवाद की नीति शैली में पुनः प्रयोग हुए और नवगीत, गीत, कविता के रूप में स्थापित हुआ। इसमें शायदीय चित्र, नये मुहावरे, लोक-गीतों की धुनों का पुनः सम्भार किया गया और नये विषय, नये प्रतीक नवगीत में प्रयुक्त हुए। जब नवगीत में पारिवारिक टूटन, सामाजिक उपेक्षा, शोचण, अयोग्य आदि की धारणा विकसित हुई। जब नव-गीतकार वैयक्तिक प्रणय की अभिव्यक्ति के साथ साथ सम्कालीन समाज एवं राजनीति से भी प्रतिक्रिया होकर व्यक्त हो गया। नवगीत ने लोक-भाषा लोक इन्द्र एवं लोक गीतों की वात्सल्यता किया जिससे भाव एवं शिल्प में मौलिकता स्थापित हो सकी। नवगीत ने सत्य तथा सुरु में भी प्रयोग किये। यह इन्द्र से भी विग्रोह करने लगा।

इन तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि हिन्दी कविता में प्रयोग युग में हुए हैं। हिन्दी कवि परम्परा की

नये रूप से, अपनी तरह से निरूपण पर करता है और नवीन दृष्टि से उसका काव्य में प्रयोग करता है। आधुनिक कविता में प्रयोगों का आधिपत्य है। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि हिन्दी कविता प्रयोग की दृष्टि से सदैव अग्रणी रही है। नयी कविता के विविध काव्यान्वितन इसका प्रमाण है कि कविता में निरन्तर प्रयोग ही रहे हैं। इस सम्बन्ध में कुछ कान्दीसर्गों के नाम प्रस्तुत हैं- अनाजन सुर्यादयो कविता, अपरम्परावदी कविता, विप्रीहो कविता, सोमान्त कविता, युक्तुसवादी कविता, वस्वोक्त कविता, कविता, वीर कविता, ठोस कविता, ताजो कविता, सहज कविता, नगी कविता, वसि कविता, सङ्को कविता आदि । हिन्दी साहित्य के प्रत्येक युग की भाँति प्रयोग रहा है। नये काव्य युग ने अपनी से पुराने प्रतिमानों को झुठका दिया है। प्राचीन भाषा, शिल्प, उपमान, प्रतीक विषय आदि की नये रीति ने वस्वोकार कर उसे अपनी तरह से नयी दृष्टि देकर ताजो प्रमाण को है। कविता में जब नो प्रयोग हुए उनका अपना मतलब है। आदिकाल, मन्तिकाल एवं रीतिकाल की कविता की आज के काव्य से तुलना की जाये तो महान् अन्तर प्राप्त होता है। इस अन्तर का मूल प्रयोग है। वीर प्रयोग ने कविता को नित्य नवीन रूप से सुसज्जित किया है। इसी कारण आधुनिक हिन्दी कविता के शिल्प- विधान में निरन्तर परिवर्तन मिलता है।

(हं) आधुनिक हिन्दी कविता में प्रयोगवाद

वाग्द एवं कवरीकी कविता में लगभग सन्

१- डा० जगदीश गुप्त- नयी कविता : स्वल्प वीर समस्या १० १७६

१९१२ ई० में प्रयोग की प्रवृत्ति ही गयी थी ।

इस सन्दर्भ में बी० एन० श्रीरामचन्द्र का विचार है कि प्रयोगवाद का प्रारम्भ सन् १९१२ ई० में स्वरा पाउण्ड के 'रिपोस्ट' के द्वारा और टी० एच० हॉलिस्ट ने उसका संवादन किया था । सन् १९१७ ई० में प्रयोगात्मक काव्य की पत्रिका 'स्वैम्प्ट' का प्रकाशन भी होने लगा था । हिन्दी कविता में प्रयोगवाद का वाणिर्माण कतिपय विद्वान् विवेकी के वायातित नहीं मानते ।

डा० नाम्बर सिंह कीजणा करते हैं कि 'प्रयोग' शब्द यद्यपि नई शैली कविता के 'स्वसपेरिमेंट' के बजन पर हिन्दी में आया था, फिर भी शैली कविता में 'स्वसपेरिमेंट-सिज्म' नामक कोई बाद नहीं जाता और हिन्दी में 'प्रयोगवाद' जन्म नहीं पाया । उसे ज्ञात होता है कि डा० नाम्बर सिंह ने 'फैक्ट न्यू' के वाच्योक्तन के सिद्धान्तों एवं हिन्दी कविता में व्याप्त 'प्रयोगवाद' का वाच्योक्तन के पूर्ण पर विचार नहीं किया । 'प्रयोगवाद' में प्रयोगों का जो वाग्रह था, उसको ज्वनि 'फैक्ट न्यू' की नारों में पुनी का सकती है वह नारी का वाच्योक्तन स्वरा पाउण्ड प्रयोग की वाच्य नहीं मानता था । उसे अनुसार महान् कविता में वाच्योक्ति को वाच्योक्तन वाच्योक्तन विवमान रहती है और वह जीवन या वाच्योक्ति पद्धति के वाच्योक्तन से सम्पन्न रहती है।

१- डा० जगदीश कुमार - नयी कविता वितायकी सन्दर्भ पृ० ११

२- हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियाँ- राजकमल प्रकाशन माता- डा० नाम्बर सिंह का 'प्रयोगवाद' सेल से उद्धृत पृ० ७६

३- डा० जगदीश कुमार- नयी कविता वितायकी सन्दर्भ पृ० १६

..

AN closer analysis I find that mean something like maximum efficiency of expression, I mean that the writer has expressed something interesting in such a way that one can not re-say it more effectively. I also mean something, either if life or if the means of expression. '1

सबसे ज्ञात होता है कि पारम्परिक कविता में प्रयोगवाद किसी न किसी रूप में अवश्य अस्तित्व रखता था। परन्तु आधुनिक हिन्दी कविता में ऐसा कोई "वाद" नहीं था। हिन्दी साहित्य में "प्रयोगवाद" का वाकिर्भाव होने से पूर्व ही प्रयोग भावना का प्रसार हो चुका था। शायवाद में नये शब्द, नये प्रतीक, विधात्मकता, अप्रस्तुत विधान, आदि के द्वारा परिवर्तन आया। परन्तु "निराशा का कुहलुमुत्ता" प्रयोग की दृष्टि से हिन्दी कविता का नया जन्मजन्म है। "नकिन" में अपने प्रपञ्चाद के "फसफा" में प्रयोगवाद का प्रारम्भ सन् १९३६-३७ ई० माना है। नकिन का कथन द्रष्टव्य है, "प्रयोगवाद पर इतना कुछ लिखे जाने के बाद भी शायद यह कह देने की जरूरत है कि हिन्दी कविता में प्रयोगवाद का वास्तविक प्रारम्भ १९३६-३७ में सिली गई नखिल विलीनन लम्पों की कविताओं से होता है, जिनमें से कुछ ही पं. सम्पादकों के हस्तक के नीचे उतर चके।^१ नकिन के "प्रपञ्च" ग्रन्थ का प्रथम प्रकाशन काल एक दिसम्बर सन् १९५६ ई० है और उनके द्वारा पीणित प्रयोग बस सुबो का प्रकाशन सन् १९५२ के "प्रकाश" में हुआ। जो कि एम्बेनि स्वयं ही स्वीकारा है। एष

१- सिटीरी सीबु बाक चारा पाउण्ड पृ० ५६

२- नकिन के प्रपञ्च - फसफा पृ० ११३

३- उपरिष्ठ पृ० ११४

क्षेत्र में नस्ति विलोचन जगों की उन्मील कविताई छहोत है परन्तु पुस्तक में कहीं भी रत्ना चुन को लिपि नहीं प्राप्त होती है। अतः हिन्दी कविता में 'प्रयोगवाद' का प्रारम्भ 'कविय' द्वारा सम्पादित 'प्रतीक' को कुछ रत्नाजों से वीर 'तार सप्तक' (१९४३ ई०) से माना गया है। इन 'सप्तकों' के प्रकाश को यीजना सन् १९४१ ई० में दिल्ली के 'वलिष्ठ भारतीय लेख सम्मेलन' में निम्ति हुई थी। उसी एक निष्कर्ष निम्नता है कि सन् १९४३ ई० से पूर्व ही प्रयोगवादी रत्नाई रची गई थी परन्तु उनका प्रकाशन नहीं हो सका था। 'कविय' द्वारा सम्पादित 'तार सप्तक' का प्रकाशन सन् १९४३ ई० में हुआ जिसमें सात कवियों की कविताई वस्तव्य सल्लि प्रकाशित की गई। ये सातों कवि निम्नलिखित हैं- गवानन माधव मुक्तिबोध, नेमिकन्द जैन, रामविलास जगों, कविय, भारत भूषण अग्रवाल, आकर नाथी, गिरिजाकुमार माथुर। विद्वानों ने हिन्दी कविता में प्रयोगवाद का प्रारम्भ 'तार सप्तक' (१९४३ ई०) से माना जाता है। 'कविय' द्वारा सम्पादित 'द्वारा सप्तक' का प्रकाशन सन् १९४१ से हुआ उसमें सात कवियों की रत्नाई वस्तव्य सल्लि प्रकाशित की गई है। सातों कवियों के नाम इस प्रकार हैं - गवाननी प्रसाद मिश्र, अकृन्त माथुर, हरिनारायण अग्रवाल, जगदीश बहादुर सिंह, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय, धर्मवीर मास्ती, बिहार के तीन कवि नस्ति विलोचन, केवरी कुमार, नील के संयुक्त एवं संजुष्ट संविदा नाम से नस्ति के प्रपण (प्रपण - तादश हूँ तथा फलफला संविदा) का प्रथम संस्करण १ दिसम्बर १९४६ ई० में पटना से प्रकाशित हुआ। इसमें प्रयोगवाद के सन्दर्भ में विविध प्रकार से विचार हुआ है। अतः वास्तविक

हिन्दो कविता में प्रयोगवाद तार सप्तक, दुसरा सप्तक एवं त्रैलोक्य के प्रथम तक व्याप्त है। इसमें सम्पादित कवितारं प्रयोगवाद दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इन ग्रन्थों में प्रकाशित बलात्कृत विवाद का विषय जाना जाता है।

वाचनिक हिन्दो साहित्य का सबसे पहला विशुद्ध साहित्यिक बान्दीतन प्रयोगवाद को माना गया है। प्रयोगवाद में प्रयोग को प्रवृत्ति को अधिक महत्व दिया गया है।

(उ) प्रयोगवाद का वाचनिक

(कालावादी युग और कालावादीतार कात के सामाजिक, राजनीतिक एवं साहित्यिक परिस्थिति में)

प्रथम विश्व युद्ध के उपरान्त देश का विपत्ति में परिवर्तन आया । सन् १९१८ ई० से सामाजिक, साहित्यिक, एवं सांस्कृतिक, वाचनिक, राजनीतिक, नैतिकविधियों को नयी दिशाएं प्राप्त होने लगी थीं। द्वितीय विश्व युद्ध में हुए विनाश के फलस्वरूप देश में वीर्यात्मिक प्रगति होनेलगी । परन्तु देश का जन-जीवन स्वातंत्र्य को और बाधित होने लगी था । यह विपत्ति वर्ग देश का मुख्य वर्ग था जो कि व्यक्ति (स्व) केअनार को लेकर सामने आया । एक और तो इस मुख्य वर्ग में पाल्वात्य स्वातंत्र्य के सिद्धान्तों को वात्पसात् किया । परन्तु दुसरी ओर विश्व युद्ध के विनाश का प्रभाव इसके अन्तर्गत पर अधिक पड़ा । इसके फलस्वरूप कवि का व्यक्तिवादी दृष्टिकोण साहित्य में विविध रूपों में विकसित होने लगा । स्थावदियों से भासोय

१- डा० लीठार सुन्दर- साहित्य के विविध सन्दर्भ पृ० ३०

कवि अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों एवं विद्वानों की स्वतन्त्रतापूर्ण व्यक्त नहीं कर सका क्योंकि उसके मन पर समाज धर्म, सम्प्रदाय, रुढ़ियाँ, परम्परा, रीतिर, सामन्त एवं परम्परागत विचार आदि का दबाव जतन अधिक रहा कि अपने मन की सत्य रूप से व्यक्त नहीं कर सका। वास्तविक युग में बर्जनों के बन्धन ढोते फूटने लगे। प्राचीन मूल्यों की लक्ष्मण रेखा भी फूटने लगी। इन बन्धनों की चमराकट का पुनारम्भ शायबाद युग से प्रारम्भ होता है। 'म' की वात्मस्वीकृति ने काव्य को नया मोड़ प्रदान किया। इसी कारण शायबादो कवि ने व्यक्ति को स्वतन्त्रता का मुक्त उद्घोष किया। उसने 'व्यक्ति' 'व्यक्ति' 'स्व' की केन्द्र माना और प्राचीन परम्पराओं से विद्रोह कर दिया। व्यक्ति विचार के लिए कवि उन समस्त बन्धनों का पीर धिरीधी है जो उस विकास को बरूद करती है। यह विद्रोह भी सभी में व्यक्त हुआ है- एक प्रतीकात्मक कविताके अन्त में और दूसरे अद्विगत मान्यताओं कादर्श तथा बहु काव्य बन्धनों को तोड़कर मुक्त एवं स्वतन्त्र रूप में। प्राचीन परम्पराओं से कवि ने विद्रोह तो कर दिया परन्तु उसके सम्मुख और नयी परम्परा एवं नया समाज गठित नहीं हो सका। इसके फल-स्वरूप कवि तन्तुमुरी होकर व्यक्तिवादो होता चला गया। इसी कारण शायबादो कविता को प्रमुख विशेषता व्यक्तिवाद है। व्यक्तिवाद का दूसरा पक्ष वात्माभिर्व्यक्त कर्मात् अपने दुःख-दुःख, उतार चढ़ाव आदि की व्यञ्जना करता है। शायबादो कवियों में वात्माभिर्व्यक्त भी लक्ष्य कर हुआ^१। शायबाद युग में देश की सांस्कृतिक एवं राजनीतिक प्रगति देखी सामन्तवाद एवं पाशात्य साम्राज्यवाद के दो शिष्टा सण्डों के मध्य फिर

१ डा० हन्ड नाथ प्रधान - वास्तविक कविता का इत्यादिन पृ० ३०

२- डा० अवकिश प्रसाद लण्डेनवाद - हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ

रही थी। छोट्टिस इस युग का इतिहास पारम्परिक रोमाण्टिक काव्य ब्राम्चीसन से भिन्न है।

बाधनिक काव्य का पूर्वाभि सुधार ब्राम्ची-
सन से अधिक प्रभावित है। जायावाद भी इसके भिन्न नहीं। राजनीतिक
एवं सामाजिक प्रभावों से जायावाद का कवि ने राज्य एवं कुण्ठा में जोता
है। यद्यपि राजनीतिक जीवन में गंधी जी का ब्राम्चीसन बरफल रहा था।
परन्तु स्वार्थ्य को सनन के कारण राष्ट्रवाद का स्वर काव्य में मुखरित
होता रहा। जायावाद में कल्याणवाद, प्रकृतिवाद, नियतिवाद,
कनिराजावाद, फ्लायनवाद वादि को प्रवृत्तियाँ प्राप्त होती हैं। इसके
साथ उदात्तावाद, मानवतावाद, राष्ट्रवाद को विचारधारा भी इस
काव्य में मिलती है। यद्यपि में जायावादों युग परिवर्तन का युग था।
भारतीय जन-जीवन में उफल फुल्ल व्याप्त थी। राजनीतिक, सामाजिक,
वार्तिक, सांस्कृतिक वादि जीवन में उद्वान्ति हो रही थी। परन्तु इस
युग का कव्यमन अपनी भावनाओं, आकांक्षाओं तथा आवर्णों को व्यक्त
नहीं कर पा रहा था। स्वर क्लेशवादी व्यवस्था दुर्बल होती जा रही
थी। इसके फलस्वरूप कव्यमनीय जेतना ने अपनी वर्तमान के प्रति विद्रोह
कर दिया। इस काव्य में सामाजिक श्रान्ति, वैयक्तिक मुक्ति जेतना,
विद्रोह भावना वादि प्राप्त होती हैं। यह युग आत्मानुभूति एवं आत्मा-
भिव्यक्ति का है। इसमें नैतुर्दिक व्यथित को आत्म जेतना का प्रसार प्राप्त
होता है।

सन १८३५ ई० का वर्ष ऐतिहासिक दृष्टि
से श्रान्ति का समय था। देश में एक वीर परतन्त्रता व्याप्त थी वीर

दुसरो वीर गीतमय सभाओं में हंगैड का व्यापारी वर्ग भासवर्ण के प्रति उदास्ता दिता रहा था। सन् १६३० से प्रारम्भ गरम एवं गरम दल के बान्दीसन से कुछ परिणाम प्राप्त नहो हुए। ततः देश का नव-युवक वर्ग फताफत करी लगा। वह विदेशी सत्ता के साथ साथ नैतिक बन्धनों को भी खण्डित करी लगा। "बन्धन" को नैतिकता काव्यक लगी। इसी कारण "बन्धन" ने सम्पूर्ण सामाजिक जीवन के विरोध में हातावादी - उन्मूलक आवाज उठायो। हायावादी प्रणयीद्वारा ने दार्शनिक एवं वाक्यात्मिक परिधान फल सिर मे। सौन्दर्य को प्रतिमा नारी का कठोरी शरीर रूप एवं कार्त्तिक ही गया था। इसके विरोध में उत्तर हायावाद में "माधुलवाद" या शुद्ध सौन्दर्य को स्थापना हुई। इन इसके मूल में परिवर्तित होती जीवन दृष्टि थी। इस युग का कवि-हृदय से गंधीवाद, मानववाद, फरीषि विचरणवाद से प्रभावित होरी लगा था। इसके प्रभाव के फलस्वरूप उनकी रचनाओं में इन विचारों का सम्मिश्रण प्राप्त होता है। बन्धन, जैतल, नरेन्द्र शर्मा, बिनकर आदि कवियों को रचनाओं में रोमानो स्वच्छन्दता एवं दायो रोमानि प्राप्त होता है। इस काव्य में हायावादी मान्यताओं के प्रति विद्रोह को भावना प्राप्त होती है। जिस प्रकार हायावाद दिवदी युग के विरोध में विकसित हुआ था। उसी प्रकार उत्तर हायावादी काव्य भी हायावादो काव्य के विरोध में विकसित हुआ। इस सन्दर्भ में डा० छन्द नाथ पन्तन के विचार प्रस्तुत हैं :

“ उत्तर हायावादी काव्य उसी प्रकार
वादों के प्रति कथार्य का विद्रोह, भावुकता के प्रति बोधिका की प्रति-

श्रिया, पुष्पता के स्थान पर मखिलता की स्थापना, उपात्तता के स्थान पर लघुता के मोह, शाश्वत के स्थान पर क्षण का महत्व जालीबिम्बता के स्थान पर लीबिलता एवं मानवीयता के प्रति वाग्रह है ।

जब युग की सामाजिक एवं धार्मिक मान्यताओं में गंधी, प्रजापद, माध्व, रसिक आदि के विचार व्याप्त थे। इसका प्रभाव कविता पर भी पड़ा। दिनकर, गंधी, माध्व, तिलक एवं रसिक से प्रभावित थे जबकि इनको 'रसमन्त्री' काव्य श्रेष्ठ में मनीषिस्तम्भणवादों के माना जा रहा था। बल्कन पर उमर शैयाम का प्रभाव, नरिन्द्र तर्कावर गंधीवाद एवं माध्ववाद का प्रभाव है।

उत्तर आधुनिक कवियों का काव्य

निराशावाद, हाताशावाद, फ्यामवाद, भोगवाद, क्षणवाद, मौलिकवाद आदि से परिपूर्ण है। इसमें क्षुब्ध ही क्षुब्ध दृष्टिगोचर होती है। इस पर व्यक्तिवाद का अत्यधिक प्रभाव है। इस युग का कवि पीर व्यक्तिवादी ही गया। इस काव्य में व्यक्ति का अत्यधिक महत्व है। इस युग का व्यक्ति समाजगत व्यवहारों, नीति, रीति रिवाजों एवं तत्कालीन वादों को तोड़ता है। समाज, संस्था, नियति एवं संस्कार के प्रति विद्रोह करता है। इस युग के काव्य पर नार्वाक दर्शन के सुझावों, हिदयवाद का भी प्रभाव है। इस काव्य का वाधाभूत दर्शन व्यक्तिवाद है। इसमें सन्देहवाद, नास्तिकवाद आदि नकारात्मक विचार भी प्राप्त होते हैं।

१- डा० इन्द्र नाथ प्रधान- आधुनिक कविता का मूल्यांकन पृ० ४६

२- डा० नरिन्द्र- आधुनिक हिन्दी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ पृ० ७७

३- वही पृ० ८०

दूसरी ओर मानवतावादी विचार धारा प्राप्त होती है। यह काव्य सक्षम निश्चित, वात्सल्यमय्यक्ति के रूप में सामने आया। कवि की वात्सल्य-सुभक्ति की निश्चित अभिव्यक्ति गीतों के माध्यम से हुई। इस युग के कविता में वैयक्तिक भुक्त-भुक्त अधिक चित्रित हुए हैं। डा० नगेन्द्र इस कविता को 'वैयक्तिक कविता' की संज्ञा देते हैं। इस युग में व्यक्ति के मन में बल्यन को खनारों में अधिक प्राप्त होती है। गांधीवादीवादीतनों का इस नये मानव की प्रतिष्ठा एवं स्वराज्य था। परन्तु भुक्त एवं वात्सल्यिक भुक्तियों की महत्व देने के कारण यह भारतीय जन जीवन में प्रेरणा देने में असमर्थ था होने लगा। सन् १९३०-३२ की विश्व व्यापी मन्दो, बेरोजगारी एवं प्रोबोवाद के कारण शीघ्रित वर्ग में प्रोबोवाद के विरुद्ध आक्रोश पैदा होने लगा। और पाश्चात्य विद्या से मार्क्सवाद का प्रसार हुआ।

सन् १९३४ ई० में समाजवादी दल की स्थापना हुई जो कि मार्क्सवादो विद्वान्तों का सफल क्रियान्वयन चाहता था। मजदूरों ने 'ट्रेड यूनियन' स्थापित किये। सन् १९३६ के प्रथम शार्वजनिक निर्वाचन में प्रोबोवाद के विरुद्ध पीर बनाया एवं आक्रोश व्याप्त था। सन् १९३६ ई० में 'प्रगतिशील लेखक संघ' का आयोजन तत्काल में हुआ जिसकी अध्यक्षता सुलो प्रेमचन्द ने की। सन् १९३७ ई० में कवि सुमित्रानन्दनपन्त ने अपने 'युगान्त' में 'जीर्ण पुरातन' को नष्ट करने का आह्वान करने लगे। सन् १९३८ ई० में 'युवावर्ग' द्वारा नये विचारों का उद्घोषण हुआ। इस प्रकार सन् १९४० ई० के

समय प्रातिवाद का प्रारम्भ हो गया । इसका प्रारम्भ शायवाद की भावनात्मकता, कल्पनिकता, मुख्य दृष्टि, वादार्थिकता के विरोध में कार्या दृष्टि, बोधिकता, शुद्धता एवं सामाजिकता के रूप में हुआ । प्रातिवाद को अवतारणा मान्यवाद से हुई । अतः इसके प्रारम्भ में मान्यवाद से और इसका मुख्य तथ्य समाज में व्याप्त शोषण का उन्मूलन करना है। शायवाद, उत्तरशायवाद में 'व्यक्ति' की अत्यधिक महत्ता प्रदान की गई थी । अतः इसके विरोध में 'समाज' की महत्ता देने की दृष्टि से धारा मान्यवाद के सिद्धान्तों पर विकसित हुई । इसमें मजदूर, किसान, शोषित वर्ग को केन्द्र बनाया गया । प्रातिवाद का शिल्पविधान वस्तुनिष्ठ एवं शक्तिहीन था । कल्पना की कितनी रंगीनी एवं सुकुमास्ता शायवाद में थी, प्रातिवाद में उतनी ही रहस्यता एवं शुद्धता व्याप्त हुई । शायवाद का फल वन्तानुंती प्रवृत्तियों के कारण हुआ प्रातिवाद का प्राप्ति बलिष्ठ बलिष्ठ द्वारा हुआ ।

द्वितीय विश्व युद्ध के विस्फोट से सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में प्रभावित हुई । साहित्य भी इससे नहीं बच सका । लोकतांत्रिक एवं स्वातन्त्र्य का भी शक्तियों से विद्रोह करके वर्गों और वर्गों ने पीछे पर अधिकार प्राप्त कर लिया था । छिटकर व सुधोसिनो को सुदान्त विषयविषय ने अधिनायकवाद की महत्ता दी । सुधोसिनो ने स्वीडिश को उत्था का उपकरण कर लिया ।

एन एनबी ने भारतीय जन-जीवन को प्रभावित किया । द्वितीय विश्व युद्ध से मानसिक अवस्था, वैराग्य, शान्ति-

वादों नीतियों को अफस्ता वादि प्राप्त हुए। इसके साथ साथ मार्क्स-वादी सिद्धान्तों को वैयक्त्यो कहराने लगी। इसके भारतीय नेता अफस्ता या प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हुए। भारत कीही आन्दोलन की गंधों ने घीनणा कर दी। दूसरी ओर नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में 'आजाद हिन्द' को सेना का संगठन हुआ। युद्ध को इस विधोमिका ने भारतीय जन-बोधन को बार्थिक रूप से विपन्न बना दिया।

काल का काल, मुद्रा रफोति, दैनिक वस्तुओं का आव, पैराना, विदेशी सत्ता का अत्याचार वादि परिस्थितियों ने राष्ट्रीय भावनाओं पर अपना प्रभाव बर्णित कर दिया। इसके साथ साथ मनोविश्लेषणवाद एवं मार्क्सवादो विचारों का प्रभाव कवियों पर पड़ा। एक काव्य धारा 'प्रगतिवाद' के नाम से प्रसिद्ध हुई और दूसरी को प्रयोगवाद का रूप दिया गया। उत्तर आयावाद, प्रयोगवाद, प्रगतिवाद, नयी कविता, नवमोत वादि के विकसित होने का मूल कारण 'प्रयोग' है। कवि को एकीक परिस्थितियों एवं सांस्कृतिक गतिना ने प्रयोग के प्रति उत्साहित किया। आयावादोत्तर काव्य को प्रयोगात्मक कारसाने का काव्य कह सकती हैं। शिल्प-विधान, कथ्य, पैरिमा, उपमान, प्रतीक, विम्व वादि सभी दिशाओं में नए रूप से प्रयोग हुए। इस सबका मुख्य कारण परिवर्तित होता हुआ सांस्कृतिक एवं सामाजिक बहतावरण है।

आयावाद का 'व्यक्ति' अपनी अनुभूतियों को अभिव्यक्ति प्रदान करता है। इसमें उसका अहम्ताहुवा व्यक्तित्व स्पष्ट

भक्तता है। परन्तु उत्तर कायावाद काव्यव्यक्ति निराश एवं वाकुल होने पर भी मृत्यु तक की गति लगाने के लिए साहसो दितारें पड़ता है। प्रगतिवाद का व्यक्ति समाज की महत्त्व देता है वह राजनीति के नारे को ही उठाता है, स्वयं एक राजनीतिक बल का प्रचारकर्ता है। परन्तु प्रयोगवाद का व्यक्ति 'व्यस्य, दुर्दमनोय है, उसके कुछ वीर्य की पुकार है सामाजिक मान्यताएँ टूट जाती हैं। उसका जड़म् उसे किसी मर्यादा दोष को भाँति जाने बढ़ने की प्रेरणा देती है। इसीलिए उसके प्रयोग नवीनता धारण किये हुए है। वह अपने को विशिष्ट मानकर प्रयोगिक कार्य में ताकती एवं नवीनता प्रस्तुत करता है। कायावादी-र काव्य के सिल्प विधान की एक नया एवं ताजा मीढ़ देने का कार्य 'वर्गीय' ने किया। 'वर्गीय' ने कायावाद उत्तरकायावाद एवं प्रगतिवाद के कथ्य एवं सिल्प-विधान को उन मान्यताओं पर प्रहार किया जो बर्बर ही चुकी थी। इन्द्र, कर्त्तिकार, उपमान, प्रतीक, भाषा, कविता के सभी उपमान कितने लुप्त हो गये थे। इसको 'वर्गीय' ने सफलता। प्राचीन प्रतिमान उन्हें कुंठे लगे। अतः कायावादी काव्य सिल्प के विरोध में उन्होंने नये प्रयोगों की महत्त्व दिया। उनका सत्य प्रयोग करना था और वे इसमें सफल भी हुए।

(अ) प्रयोगवाद की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

प्रयोगवाद के सन्दर्भ में कई प्रकार की धारणाएँ सामने आयीं। प्रयोगवाद की प्राकृतिक भावना को कविता कहा गया।

१- हिन्दू काव्य की प्रवृत्तियाँ - राजकमल मृत्याञ्जल पासा- डा०
नाम्बर सिंह का प्रयोगवाद लेख

प्रारम्भ में इसका कथ्यधिक विरोध हुआ, तदुपरान्त इसी महत्त्व की सम्झना
गयी। इसका उक्ति प्रत्यक्षित किया गया। प्रयोगवाद को कुछ प्रसृत
प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत की जा सकती हैं :

(१) प्रयोगवाद काव्य में प्रयोग की महत्त्व
देता है। प्रयोगवाद का कवि कविता में नूतन सत्य का अन्वेषण करता है।
सत्य के अन्वेषण के लिए प्रयोग करना आवश्यक है। उन कवियों ने काव्य
को प्रयोग का आधार बनाया और काव्य के कथ्य एवं शिल्प में विविध
प्रकार के प्रयोग किये।

(२) प्रयोगवाद 'व्यक्ति' की महत्ता
प्रदान करता है। प्रयोग भावना व्यक्तिनिष्ठ होती है। अतः यह व्यक्ति-
सत्त्व एवं 'व्यक्ति' तथा स्वतन्त्र चिन्तन पद्धति की अनिवार्य मानता
है। व्यक्ति-स्वातन्त्र्य, वैयक्तिक-दायित्व, व्यक्ति-चिन्तन, व्यक्ति-
निष्ठा आदि प्रयोगवाद के महत्वपूर्ण पक्ष हैं। अतः स्वयं व्यक्ति को
विशिष्ट माना जाता है।

(३) प्रयोगवाद परम्परा को स्वीकार नहीं
करता। वह परम्परा को नये रूप में या अपनी रूप में प्रस्तुत करता है।

(४) प्रयोगवाद का मूल दर्शन व्यक्तिवाद
है। प्रयोगवादों कवितारं व्यक्तिवाद से प्रेरित हैं।

(५) इसमें नवीन जीवन दृष्टि ग्राह्य है
और मौलिकता की विशेष स्थान दिया जाता है। प्रयोगवाद का कवि

अपनी अनुसृतियों की अभिव्यक्ति में ईमानदार है, क्योंकि वह अपनी अनुसृतियों की नवीन अभिव्यक्ति के आशय देता है।

(६) प्रयोगवाद मौलिक अनुसृतियों को महत्व देता है और उन अनुसृतियों को समझ रूप से पाठकों तक प्रेषित करना चाहता है।

(७) प्रयोगवाद पर बौद्धिकता का अधिक प्रभाव है। वह प्रत्येक वस्तु को बौद्धिक दृष्टि से देखता है।

(८) प्रयोगवाद बौद्धिक कृष्णार्थ एवं वर्णार्थों की अभिव्यक्ति प्रदान करता है। व्यक्ति के अन्तर्जीवन का परीक्षितकरण करके उसे प्रस्तुत करता है। इस पर प्रत्येकवाद का अधिक प्रभाव है।

(९) इसमें विशिष्ट पाणों की अनुसृतियों को महत्व दिया गया है। पाण का महत्व या पाणवाद की धारणा इसी सम्बन्ध से जुड़ा हुआ है।

(१०) प्रयोगवाद व्यक्ति को कहीं सपु एवं कहीं अतिमानव के रूप में वर्णित करता है।

(११) प्रयोगवाद काव्य को नयी भाषा प्रदान करके प्रकृत सत्त्वों में नया रूप प्रदान करता है। इसी कारण काव्य में प्रतीकों को महत्व देता है। यह कम से कम सत्त्वों में अधिक रूप प्रदान करता है। और इसके लिए प्रयोगवादी कवि अनन्य रूप काव्य से उपेक्षित (नपेक्ष) सत्त्वों का भी प्रयोग करता है।

(१२) प्रयोगवाद का कवि अपनी प्रत्येक कार्य की विशिष्टता प्रदान करना चाहता है ताकि वह अपनी व्यक्ति एवं कृतियों की विशेष रूप से प्रस्तुत कर सके ।

(१३) प्रयोगवाद का कवि वाक्य- सत्य एवं कई- निष्ठा को महत्व देता है।

इसीमें मैं प्रयोगवाद के महत्व के सम्बन्ध में यह क्या वा कहता है कि स्वर्ण वास्तुनिक कविता की नयी प्रयोग करने की दृष्टि मिली । उन्ने साथ साथ व्यापक शिल्प - कौशल, प्रयत्न साधन एवं संपादनता , सोन्दर्य का वाग्रह, साधनानुसृति , लौकिक बीषा का पला- उपर्जन , व्यंग्य भाव , कई भाव वादि का योगदान भी प्रदान किया ।

(४) प्रयोगवाद में व्यक्तिवादी दर्शन का स्वस्व

सन् १९४० ई० के लगभग विश्व में उक्त पुस्तक के बादल फैला रहे थे । ' बन्धुकी ' कवि के लिए परिस्थितियाँ मार्ग दर्शन करती रहीं , जिसे फलस्वरूप सन् १९४३ ई० में अजय के सम्पादन में ' तारुण्यक ' का प्रकाशन हुआ । कवि अपनी पुस्त प्रवृत्ति ' कई ' की कविता के रूप में व्यक्त करता है। व्यक्ति का वहम् एवं व्यक्ति - ज्ञाना दुर्गा के केद सामन्ती, धार्मिक एवं सामाजिक गत्यावरोधों की बोद्धता हुआ पुस्त कीता है, उन्ने ' कृद बोध ' की प्रकार ' दर्पकपीत ' है।

प्रयोगशील कवि व्यक्ति के अन्तर्भूत की क्रियाओं की वात्सा, आत्सा, जीवन के प्रति तटस्थता, व्यक्तित्व के लोकोपेक्ष को स्वीकृति, दर्द को तिक्ता, बर्ह को स्वीकृति, कृष्ण का विवर्ण, निष्क्रियता को क्रियाति आदि रूपों में अभिव्यक्त करता है। इस काव्य प्रवृत्ति को ऐतिहासिक उपलब्धि यह है कि प्रयोगवादो कवि अपने व्यक्ति मन से सामाजिक स्थिति को प्रस्तुत करता है।

इस जुग का कवि व्यक्ति- चेतना की वैकित करने के लिए तत्पर है। वह काव्य में व्यक्तिवादो भिन्नता को रंगान देता है तथा प्रयोगात्मक तत्त्व को प्रतीकात्मक रीति प्रदान करता है। कवि वस्तु एवं शिल्प के प्रयोग एवं प्रकार में बोद्धिस्ता, साधनावाद, प्रतीकात्मकता, व्यक्तित्ववाद, भागवाद, पलायनवाद, दुःखवाद, साधनावाद, कल्याणवाद आदि को अपने काव्य का माध्यम बनाता है।

प्रयोग का इतिहास व्यक्तिवाद को सोमाजी से घिरा हुआ है। एक और मध्यमगीय वैयक्तिक अस्तित्व का तथा दूसरा भगवद्गुप्त व्यक्ति को आत्म रक्षा का है। अतः प्रयोगवाद का केन्द्रविन्दु वरम व्यक्तिवाद है जो कि विविध राजनैतिक, सामाजिक मान्यताओं के सन्दर्भ में संकीर्ण व्यक्तिवाद का प्रकार करता है।

१- प्रयोगवादो कवि शास्त्र के साथ अपने व्यक्ति मन तथा उसके माध्यम से परीक्षा रूप में सामाजिक स्थिति का उद्घाटन करता है। यह इस काव्य प्रवृत्ति को ऐतिहासिक देन है।

- डा० सन्तानाम पणन- आलोचना तथा काव्य पृ० १०१

२- प्रयोग के पन्त्रह वर्षों का इतिहास व्यक्तिवाद के दो सोमान्तों के बीच फैला हुआ है- जिनमें से एक सोमान्त है मध्यमगीय वैयक्तिक के प्रति मध्यमगीय कवि का वैयक्तिक अस्तित्व और सोमान्त है, जन-जागरण से डरे हुए कवि को आत्मरक्षा को माधना ।

प्रयोगवाद में व्यक्तिवाद विभिन्न रूपों में व्यक्त हुआ है, वह कहीं वस्तुपरक हो जाता है तो कहीं सिल्प में नवीनता के ध्यान के वर्णन में होता है। यह मुक्त कल्प की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाकर कविता में व्यक्तिवादों विचारों का उद्घोष करता है। प्रयोगवादों कविता व्यक्तिवाद एवं कल्पवाद से सम्बन्धित है। प्रयोगवाद में व्यक्तिवादों विचारधारा का कलात्मक स्वरूप अधिक प्राप्ति होता है।

सारंशितः कहा जा सकता है कि प्रयोगवाद व्यक्ति के अस्तित्व के प्रति सजग है और व्यक्ति के व्यक्तित्व के प्रसार के प्रति सचेत है। 'व्यक्ति' का अर्थ उच्च निरन्तर काव्याभिव्यक्ति के लिए प्रेरित करता है उसको अनुभूतियों वैयक्तिकता से सम्बन्धित है। अतः प्रयोगवादों काव्य व्यक्तिवादों वर्णन का काव्यात्मक स्वरूप है जिसमें व्यक्तिवादों केना को पूर्णरूप से अभिव्यक्ति हुई है। प्रयोगवाद पर लक्ष्य कारण व्यक्तिवादों होने के कारणों समायोजित हैं। अतः प्रयोगवाद में व्यक्तिवादों वर्णन के विविध रूप आन्तरिक स्तरों तक विद्यमान हैं, जिसके फलस्वरूप काव्य में वैयक्तिक केना, व्यक्ति-स्वातंत्र्य एवं व्यक्ति के भाव अधिक दृष्टिगोचर होते हैं।

(2) व्यक्तिवाद बनाम समष्टिवाद : प्रगतिवाद

अष्टि एवं समष्टि को केन्द्र में मानकर कवि काव्यधाराएँ प्रगति हुई हैं। आयावाद, उत्तरआयावाद का केन्द्र 'व्यक्ति' रहा है। समष्टि को केन्द्र में मानकर चलने वाली काव्य धारा प्रगतिवाद के नाम से विख्यात हुई है। इसमें समाज की सर्वोपरि

स्थान दिया है न कि व्यक्ति को। समष्टिवाद तथा प्रातिवाद पर भावसंबादी दर्शन के परिप्रेष्य में सामाजिक जीवन और कथार्थ भाव बोध को समाहित करके व्याप्त हुई। प्रातिवाद के आविर्भाव के कई कारण हैं। राजनीतिक संदर्भ में ब्रिटिश भारतीय कंग्रेस सन् १८३५ ई० तक वार्षिक प्रश्नों को लेकर किसान मजदूरों का पत्र ग्रहण करने लगी। सन् १८३४ ई० में कंग्रेस सोसलिस्ट दल का निर्माण हुआ जो समाजवाद पर केन्द्रित था। सन् १८३४ ई० में कम्युनिस्ट दल पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। भारत में औद्योगिकरण के कारण मजदूर और फौजदारी को समस्याएं सामने आईं। एक ओर राजनीतिक परिस्थितियां भारतीय जनमानस में व्याप्त थीं तो दूसरी ओर समाज वार्षिक, सामाजिक धार्मिक समस्याओं के संकट से गुजर रहा था। अतः समाज भावसंबादी विचारधारा को और उन्मुख होने लगा।

सन् १८३५ में सन्देश में 'प्रातिभोत लेख संघ' की स्थापना हुई जिसमें भारत को और से मुल्करान वानन्द तथा सज्जाद अहोरे ने भाग लिया। इस संस्था का भारत में प्रथम अधिवेशन सन् १८३६ में सत्यनगर में प्रेमचन्द की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इसका दूसरा अधिवेशन सन् १८३८ में कलकत्ता में तथा तीसरा अधिवेशन दिल्ली में सन् १८४२ में हुए। इनमें प्राति एवं फासिज्म के विरोध में विचार किया गया। संघ का चौथा अधिवेशन १८४३ ई० में बम्बई में हुआ जो अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इसके बाद इस संघ के विभिन्न सम्मेलन का समय होती रहे।

आयानादी कवियों में विराता और की प्रातिवाद को और उन्मुख हुए। अन्य प्रातिवादी कवियों में - नागार्जुन

श्लिष्ण, केदारनाथ कृष्णलाल, डा० रामचिरास शर्मा, विष्णुलाल सिंह
धुमन, नवीन, ओस, रणिय राघव एवं सुश्रुतिबोध आदि प्रमुख हैं। इन
कवियों के बाद भी अनेक प्रगतिवादी कवि हुए हैं जिनमें से माधवसिंहवादी
पंथों की काव्य का विषय बताया है।

(ब) व्यक्ति और समाज

प्रगतिवाद माधवसिंहवाद का साहित्यिक संस्करण माना जाता रहा है।

जब व्यक्ति और समाज के संबंध में माधवसिंहवाद विचारधारा के अनुसार ही चिन्तन करना उत्तम है। व्यक्तिवाद में 'व्यक्ति' प्रमुख है। समाजवाद जैसा माधवसिंहवाद में 'व्यक्ति' के स्थान पर 'समाज' की प्रमुखता प्रदान की गई है। प्रगतिवाद में 'समाज' की महत्ता प्रदान करता है। प्रगतिवादी 'व्यक्ति' समाज सापेक्ष है और वह सामाजिक शक्तियों के द्वारा संश्लिष्ट होता है। प्रगतिवाद के अनुसार 'व्यक्ति' अपनी समाज के प्रति दायित्वों के प्रति जागरूक रहें। यदि वह कवि जैसा होता है तब वह अपनी लक्ष्य में अनुत्तापित रहें। प्रगतिवाद कवि एवं लेखक आदि 'व्यक्ति' की स्वतन्त्रता में समाज सापेक्ष मानता है। समाज के विरोध में व्यक्ति के कार्य विरोधी होने के प्रमाण हैं। ऐसा व्यक्ति समाज के लिए घातक माना जाता है, क्योंकि माधवसिंहवाद में समाज सर्वोपरि है व्यक्ति नहीं। जब कोई व्यक्ति समाज के विरोध में 'स्व' की स्वतन्त्रता को और बढ़ाता है, तब ऐसा 'व्यक्ति' अपनी सामाजिक दायित्वों के विरोध में ही मुक्त होता है साथ में अपनी 'सह' की पराकाष्ठा पर पहुँचा जाता है।

व्यक्ति का यह 'कर्म' समाज निर्मित व्यक्तिवादी जीवन दर्शन का परिणाम है। यही कारण है कि प्रातिवाद व्यक्ति और कलाकार को स्वतन्त्रता को मानता है और दूसरी ओर व्यक्तिवादी और व्यक्तिवादी जीवन दर्शन का कटोरा है विरोध करता है। प्रातिवादो साहित्य को वैयक्तिक उपलब्धि नहीं मानती बल्कि वे उसे सामूहिक पूर्ण मानते हैं।

प्रातिवाद में समाज का प्रत्येक व्यक्ति समाज में रहकर पि तब कर सकता है, परन्तु समाज के विरोध में रहकर नहीं। समाज में व्यक्ति को स्थिति फलन के एक पुरखे के रूप में माना जाता है। अतः व्यक्ति समाज का एक पुरखा बन कर रहा गया। उसको वैयक्तिक जितना सामाजिक जितना के सम्मुख निरन्तर दबती रही। अतएव प्रातिवादो कवियों को वैयक्तिकता सामाजिकता को प्रतिष्ठा में तब ही गयी। प्रातिवाद में समाज का यथार्थ चित्रण और व्यक्ति तथा समाज का संघर्ष निरन्तर प्रस्तुत रहा है। यह व्यक्ति को जितना महत्त्व नहीं प्रदान कर सके जितना कि व्यक्तिवाद ने महत्त्व दिया।

(क) सामाजिक यथार्थ चित्रण का मोह

प्रातिवादो काव्य का समाज के प्रति अत्यन्त मोह रहा है। आयावाद को भाँति गलन में विवरण न करके इन्होंने धूलो कठोर यथार्थ को चित्रित किया है। इन कवियों ने समाज के उपेक्षित दल- दल, निरोह किसान- मजदूर, अछूत एवं नारी वर्ग के प्रति सद्भावना काव्य के द्वारा प्रकट की है। गीत और शीघ्र के संघर्ष तथा

१- प्रस्ताव- साहित्य का उद्देश्य पृ० ११

२- डा० जगन्नाथरायण त्रिपाठी- नयी कविता में वैयक्तिक जितना पृ० ६२

शीघ्रित वर्ग पर हुए कल्याणकारी का कार्य विनियमित किया है। काव्य में पन्द्रहवीं बार किसान पञ्चरूप उपेक्षित कृषक वर्ग की कविता का विषय बनाया गया है। उनके पारिवारिक जीवन की यथार्थ भाँकी प्रतिवादों काव्य का मुख्य विषय रही है। सामाजिक क्लेशों की तीव्रता के कारण इन कवियों ने समाज का यथार्थ चित्रण करने का तत्पर साक्ष्य दिखाया है। इनका यथार्थ बोध प्रशंसा योग्य है। समाज की समग्र कुरूपता की समाज के सम्मुख रहने का काव्य प्रतिवाद ने किया है। इसी कारण ये कवि वर्गहीन समाज को कल्पना करती हैं जिसमें शोचक और शोचित का भेद समाप्त हो जाये। किसानों-कर्मचारियों का संघर्ष, पञ्चरूप और प्रेक्षितियों का संघर्ष, अशिक्षित गरीब समाज के प्रति उदात्ता इस काव्य में चित्रित होती रहे हैं। इस सीरो के विरोध में प्रतिवादों कवियों के उद्गार स्थापनोय हैं।

इस सामाजिक यथार्थ दृष्टिकोण से जाया-वादों का को स्वप्नमयी निद्रा समाप्त होने लगी। समाज में जनः क्लेश का संसार पैदा हुआ। जायावाद के समाज में प्रेरणादायक काव्य का निर्माण अधिक नहीं हुआ। वास्तव में 'जायावाद वह समय था जिसमें युद्ध तथा संकट के दिनों में विप्रादियों को बर्दों नहीं बन सकते थे।' परन्तु प्रतिवाद के सामाजिक यथार्थ बोध ने भारतीय समाज में विद्रोह की भाँति के भाव उत्पन्न कर दिये। व्यक्ति ने प्रथम बार समाज के सत्य चित्र की हस्तो दृष्टि दे देता। प्रतिवादों 'व्यक्ति' समाज के लड़ा हुआ था, फिर भी उसने सामाजिक क्लेशों को नया स्वर

प्रदान किया जो स्वयं स्व प्रगति को दिशा में व्यस्यर हुआ ।

(६) क्रांति एवं विद्रोह की भावना

प्रगतिवाद ने सामाजिक क्रांति का स्वर प्रदान किया । यद्यपि ये मार्क्सवाद व्यक्तिवाद और पूँजीवाद के विरोध में प्रस्तुत हुआ । मार्क्सवाद ने पूँजीवादो रुक्तियों का एवं साम्राज्यवादो रुक्तियों का डटकर विरोध किया । अपने मजदूर और किसान के आर्थिक और सामाजिक पक्षों को काव्य के द्वारा प्रस्तुत किया । किसान मजदूरों की पूँजीपति, बमोदार आदि के प्रति विद्रोह के स्वर प्रेरित किया । यह क्रांति और विद्रोह समाज सापेक्ष होकर करता जाती है। जबकि व्यक्तिवाद का केंद्र 'व्यक्ति' ही अपने स्वार्थ की संघर्षशील है। इसलिए प्रगतिवाद को अधिक मान्यता मिली । यह प्रचार और प्रसार का काव्य भी है। इसलिए क्रांति और विद्रोह की भावना विकसित होती रही । भारतीय सामानस में यह भावना कवय विरचित हुई परन्तु कोई क्रांति नहीं हुई । यह केवल काव्यात्मक आक्रोश एवं प्रचारात्मक साहित्य के रूप में ही विकसित होता रहा ।

(७) राष्ट्र प्रेम

प्रगतिवादो कवियों ने धरती के गीत गाये हैं। इसलिए इनको वैयक्तिक केना राष्ट्र प्रेम को और सुद गहं । इनके धरती के गीत राष्ट्र प्रेम एवं स्वदेश प्रेम की भावना से चिन्तित हैं। नगीन, निरकर, नागार्जुन, सुभद्रा कुमारी चौकान, शोस, केदारनाथ अग्रवाल आदि कवियों को अनेक काव्य रचनाएँ देश प्रेम की भावना से ओत प्रीत

है। इस प्रकार यह उल्टी है कि प्रातिपादों काव्य जितना में राष्ट्र प्रेम की भावना सामाजिक जितना है प्रेरित होकर नये स्वल्प में व्याप्य हुई।

(3) नूतन सौन्दर्य बोध

प्रातिपादों काव्य ने समाज के शोणित, गरीब, मजदूर किसान की अपने काव्य का विषय बनाया। समाज से उपेक्षित, सामाजिक दुस्मता को वीढ़े हुए समाज का चित्रण करना, उन कवियों का लक्ष्य था। उन कवियों ने वर्तमान समाज की दुस्मता को नये सौन्दर्य की दृष्टि से देखा। यह सामाजिक बोधन के कार्यों को नूतन सौन्दर्य के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

प्रातिपादों काव्य में विविध प्रकार की प्रवृत्तियाँ प्राप्त होती हैं। परन्तु यहाँ व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों की दृष्टि से प्रातिपादों को समष्टिगत भावना का विवेचन किया गया है। वर्तमान के प्रति जागरूकता, खोए लाल विज्ञान के प्रति आकर्षित, व्यंग्य प्रधान काव्य का पुनः, जाति की भावना, सामाजिक कार्यों बोध राष्ट्र प्रेम, व्यथित गरीब समाज का संघर्ष, नूतन सौन्दर्य बोध, जनभाषा का जाग्रद, वर्गविहीन समाज की स्थापना, प्रबोधितियों का विरोध आदि अनेक प्रवृत्तियाँ इस काव्य में दृष्टिगोचर होती हैं। हठर के प्रति कनास्था, एवं हास्य व्यंग्य के माद भी प्रातिपादों काव्य में चित्रित किये गये हैं।

उत्तर शायबाद पर बरसोस्ता का जितना आरीष लगाया गया है उतना ही प्रातिपाद पर प्रचारारूपकता का।

बर्तीसता के विविध दृश्य एवं काव्य में प्राप्त होती हैं जो उत्तर जाया-
वादी काव्य से पीछे नहीं हैं। यद्यपि ये प्रगतिवादी सामाजिक कौतुह
का काव्य हैं और व्यक्ति की सत्ता एवं समाज सापेक्ष हैं। व्यक्ति
समाज निर्पेक्ष होकर कुछ नहीं हैं। कुछ कवि व्यक्तिवादी और मार्क्स-
वादी दोनों चिन्तनों को समाहित किये हुए हैं। सुखितबोध के संदर्भ में
डा० बलभद्र तिवारी का मत है- ' इस प्रकार गजानन माधव सुखित में
दोनों स्वर (व्यक्तिवादी और मार्क्सवादी) की प्रधानता है। अन्य
किस प्रकार प्रगतिवादी चिन्तन से विवृत हैं।

संक्षेप में इस काव्य पर दृष्टिपात करने
पर ज्ञात होता है कि इस काव्य का विकास कितनी तीव्रता से हुआ
था उतना ही जारीपाँ से चलता रहा। इसका कारण है- ' एक ओर
प्रगतिवादी एवं में पानी बरसती भास में जाता लगाकर चलने वाले हैं,
दुसरी ओर शोश पदार्थों में लक्ष को टट्टियाँ से सुसज्जित प्रकोष्ठ में
पटकती सीपक छेटी में बैठकर ग्रीष्म के वातप से मुसलसे हुए किसान
की पैरना के गीत गाते हैं। ' इनकी कल्पना और करनी में अन्तर है, ये
प्रायः सभी पूर्व संस्कारों से ग्रसित रहे हैं। प्रगतिवादी काव्य से व्यक्ति-
वादी कौतुह के स्वर विकसित नहीं हो पाये और वैयक्तिक कौतुह अन्त-
र्धारा प्रगतिवादी चिन्तन से निरन्तर जीवित रहे।

(३) नयी कविता

(अ) नामकरण

नयी कविता के नामकरण में यह दृष्टव्य

- १- डा० गणेश शर्मा- वाधुनिक काव्य प्रवृत्तियाँ : एक पुनर्मूल्यांकन पृ० २२
- २- डा० बलभद्र तिवारी- वाधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका पृ० ३०३
- ३- डा० गणेश शर्मा- वाधुनिक काव्य प्रवृत्तियाँ : एक पुनर्मूल्यांकन पृ० २२

है कि कविय का कृतित्व और व्यक्तित्व में नयी कविता की विशेषता क्या है प्रभावित किया है। डा० विप्रसाद सिंह का मत है कि नयी कविता का नाम एवं व्यक्तित्व सिद्ध करने का श्रेय कविय को है। उन्होंने 'नयी कविता' एक अवनि वार्ता ७ नु १९५२ ई० के अन्त में वाकालावाणी स्तम्भावार में प्रकाशित की थी। उक्त अवनिवार्ता 'नये फल' पत्रिका में जनवरी - फरवरी १९५३ ई० के अंक में प्रकाशित हुई। कविय के अनुसार नयी कविता का नाम, रूप, गुण एवं लक्षण इस प्रकार है :

“ हम प्रयोगशाला, प्रगतिशाला आदि नहीं बनना चाहते। यही है कविय नयी कविता, क्योंकि प्रगतिवाद राजनीतिक विज्ञान है और प्रयोगवाद वादीय। नयी कविता, नयी मनःस्थिति का प्रतिबिम्ब है, एक नये मूक का, एक नये राग सम्बन्ध का। नयी कविता को मूल विशेषता है मानव और मानव जाति का नया सम्बन्ध और वह मानव जाति और सृष्टि मान के सम्बन्ध के परिपार्श्व में।”

एक अन्यश्रेणी में 'नयी कविता' पर विचार करते हुए कविय वात्स्यायन के नाम से लिखते हैं :

“ फलतो स्थापना में यह कहना चाहूंगा कि नयी कविता सबसे पहले एक नयी मनःस्थिति का प्रतिबिम्ब है- एक नये मूक का- एक नये राग सम्बन्ध का।”

१- डा० विप्र साद सिंह- वाचनिक परिवेश और नवतत्त्व पृ० १०१

२- उपरिपत्र पृ० १०१

३- सच्चिदानन्द वात्स्यायन - वाचनिक हिन्दवी साहित्य पृ० १५६

उक्त प्रसंग में बोध जो ने एक ही बात स्पष्ट की है। वह है नयी मनःस्थिति एवं नया मूढ । स्वतन्त्र्योत्तर प्रथम दशक के प्रारम्भ में कवि का मन नयी परिस्थितियों एवं नये चीजों के प्रति खोल होने लगा । अपने देश, समाज और साहित्य में एक नयेपन की अनुभूति अनुभव की । बोध ने खरा पाउण्ड के 'मैक लु न्यू' के नारे से प्रभावित होकर स्वतन्त्र्योत्तर हिन्दी कविता को 'नयी कविता' नाम से अभिहित किया है । बाबू नयी कविता एक विशेष काव्यान्वीक्षण को कविता का नाम है। नयापन नयी कविता के 'नये' से बहुत बारीक हुआ है। बाबू नयी कविता के नामकरण के संदर्भ में समय-यात्री का समाधान ही हुआ है। प्रत्येक युग की कविता अपनी पूर्ण की कविता है नयी जन्मा नयापन सिद्ध होती है, चाहे वे वादिकालीन कविता की पुनरावृत्ति ही । परन्तु नयी कविता अपनी है पूर्ण की कविता के किसी काव्य प्रक्रिया से अधिक प्रभावित नहीं है।

(बा) नयी कविता : पृच्छभूमि एवं प्रेरणाश्रोत

द्वितीय विश्व युद्ध कीविभीषिका ने भारतीय जन मानस में क्रांतिकारी परिवर्तन किये । सन् १९४० ई० के उपरान्त राजनीति के क्षेत्र में निराशा, मोक्षार्थ एवं तत्स्थित्य के प्रति भय आदि व्याप्त हो गये । भारतीय जीवन में पैलगाहें प्रष्टाचार, संघर्ष, दमन, गतिहीनता आदि से पर्याप्त व्यक्ति व्यथित होने लगा । कवि के मन में पराजय, वृत्ति धर कर गई । स्वतन्त्र्योत्तर काल में बोद्धिबद्धता एवं तात्पुनिकता का निरन्तर आगमन होता रहा । ऐसे व्यक्ति के मन में

नये के प्रति मोह जाग्रत होने लगा ।

वैचारिकता एवं नीतिज्ञता परिष्कृत विचार धारा से भारतीय जनमानस में व्याप्त हुई । राजनीति के क्षेत्र में लोक-ता का विकास हुआ । व्यक्ति के व्यक्तित्व के प्रसार में कल्याण योगदान मिला । व्यक्ति की सत्ता और व्यक्तित्वनिष्ठा के प्रति मोह-मत्ता का प्रसार हुआ । व्यक्ति की सत्ता के प्रति नया आकर्षण और स्वातंत्र्य के प्रति मोह विकसित होने लगा । एक और स्वातंत्र्य के लिए संघर्ष चल रहा था जो सफल हुआ । भारत का संघर्ष संविधान समता, प्रातृत्व एवं स्वातंत्र्य को बाधासुमि पर बनाया गया । भारतीय व्यक्ति की समानता का अधिकार प्राप्त हुआ । अभिव्यक्ति के अधिकारों ने सुगम से पोषित विभिन्न जातियाँ एवं सम्प्रदायों में स्वतन्त्र जीवन जीने की तात्काल उत्पन्न कर दी । समानता सार्वजनिक जीवन में फैलने लगी । जर्मन मूल्यों की चरमराहट ने मध्यमगीय व्यक्ति को नये "छोटे" के प्रति आकर्षित किया । शीघ्रता, शीघ्रक, किसान, मजदूर, कमोदार और औद्योगिकी को संविधान के अनुसार समान माना गया । धर्म, जाति और समाज के बन्धन शिथिल हुए । फलस्वरूप भारतीय व्यक्ति ने स्वतंत्रता को हाँस लिया ।

स्वाधीन भारत का जनमानस विदेशी शासित्व धर्म, व्यापार में भाग लेने लगा । उसके पश्चात्त में आधुनिकता, नये धर्म एवं नीतिज्ञता के विचार फैलने लगे । एक युग का कवि अज्ञात व्यक्ति नीतिज्ञता को और बढ़ने लगा । उसका "छोटे" विशेष दर्शन की ओर बढ़कर हुआ । नीतिज्ञता समाजों में बन्द थी वह नये कवियों में नये रूप

से विकसित होने लगी। सामाजिक एवं धार्मिक जीवन मूल्यों के नज़र से फलसंगीय एवं प्रयोगवादी व्यक्ति प्रमुख हुआ। नये युग के नये कवि के सामने यह समस्या उत्पन्न हुई कि काव्य के प्राचीन मूल्यों को जीवित रखे ज़रूरी नये काव्य का भूतन करे। प्रयोगवाद के प्रयोगों को भीड़ तथा प्रतिवाद के कारणों बोध ने नये व्यक्ति को नया काव्य लिखने की प्रोत्साहित किया। नये कविता सामाजिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक एवं वार्तिक परिस्थितियों की उपज रही है। इसी बोद्धिगता एवं समाज के प्रति परिवर्तन के स्वर मूख। नये कविता मुक्तः वैयक्तिकता के वाङ्मय-मयी स्वर की अनुगुण है जो व्यक्तिवादो दर्शन की अधिकतमः समाहित किये हुए है।

(४) विकासयान

‘इष्टरा सप्तक’ का प्रकाशन सन् १९५१ ई० में हुआ। इसी फलसे ज्ञानीदय का प्रकाशन सन् १९५६ ई० में तथा प्रतीक का प्रकाशन सन् १९५७ में प्रारम्भ हुआ। ‘प्रतीक’ पत्रिका के संपादक बनीय थे। उन्होंने प्रयोगवादो काव्यान्वेषण में ‘प्रतीक’ के द्वारा महत्वपूर्ण योगदान दिया। प्रयोगवाद की नयी कविता के रूप में विष्णु स्वल्प द्वारा लिखित ‘कल्पना’ काव्य १९५४ ई० लेख में स्वीकारा गया। उन्होंने का एक अन्य निबन्ध ‘प्रयोगवादो कविता का लिखन विधान’ अंतिका, कास्वरो १९५४ ई० में प्रकाशित हुआ जिसमें कि नये कविता के ‘नये फलसे’ तथा सन् १९५५ में प्रकाशित ‘निकषण’ ने नये कविता में विशेष योगदान दिया। सन् ५७ में ‘कविता’ नाम के व्यक्तिद्वारा जीर देवी और जयस्यो कविताओं का संकलन प्रस्तुत किया।

नयी कविता के समग्र काव्यान्दोलन की दृष्टि में रही हुए 'कल्पना' १९५६ ई० में धारावाहिक रूप से विचार किया गया। कल्पना, अक्टूबर १९५६, नवम्बर १९५६ में भी नयी कविता पर लेख प्रकाशित हुए। बालकृष्ण राव की कल्पना १९५६ में निबन्धक माता प्रकाशित हुई। डा० एम० ए० का 'नई कविता की सम-धार्मिक भावभूमि एवं नित्यानन्द विचारों का 'बाव का सामाजिक उत्कार और नई कविता' के लेख प्रकाशित हुए। इन लेखों में नयी कविता के आधुनिक भाव-बोध एवं परिणति जीवन मूल्यों पर विचार प्रकट किये गये। जून १९५६ ई० में 'लहर' का प्रकाशन हुआ। यह पत्रिका द्वारा नयी कविता के संदर्भ में बहुत कार्य हुआ। इन पत्रिकाओं के अतिरिक्त बालीष्ठा, पाटल, क्रांतिका, ज्वन्ता तथा मातादि के द्वारा नयी कविता की सहयोग प्राप्त होता रहा। 'नयी कविता' का महत्वपूर्ण योगदान बाठ वकी में प्रकाशित ग्रंथों में किया जा सकता है।

डा० जगदीश गुप्त के सम्पादन में 'नयी कविता' स्तम्भाकार से प्रकाशित हुई। इन बाठ वकी के द्वारा नयी कविता के अनेक विषयों पर विचार हुआ और नयी कविता के विविध काव्यान्दोलनों का ज्ञान हुआ। 'नयी कविता - १' की जून १९५४ में डा० जगदीश गुप्त एवं उनकी मित्र मण्डली द्वारा छुद्र प्रकाशित हुआ। यह सम्बन्ध में डा० रामविलास शर्मा के विचार उद्धृत हैं :

“ पहले की नयी कविता पर फेरा का

लेल गया। दोनों बात फलसे रेडियो गीष्ठी में फन्त ने प्रयोगवाद पर जो कुछ कहा था, वही शोर्णांक बस कर अब नयी कविता पर हाथ दिया गया। विनय मोहन शर्मा के लेख में रेडियो गीष्ठी वाला बयतव्य जैसा उद्भूत किया गया है, उससे नयी कविता वाले फन्त के लेख को तुलना की जा सकती है। फन्त का कार्य उचित था क्योंकि वाग्य में नयी कविता की उसके सिद्धान्तकार प्रयोगवाद से जतन जतन न करती थे।”

इस प्रकार नयी कविता प्रयोगवाद से जतन हुई और नयी कविता पर स्वतन्त्रापूर्णक विचार होने लगा।

सन् १९५२ में 'नयी कविता - २' में जगदीश गुप्त का 'नयी कविता : नया जैसन तथा सत्सोक्तान्त वर्ण' का 'नयी कविता : मनीषितानिक पुच्छमि' निबन्ध प्रकाशित हुए। नयी कविता-४ सन् १९५६ में गजानन माधव गुप्तिगोप का 'काव्य की रचना प्रक्रिया पर अत्यन्त महत्वपूर्ण लेख प्रकाशित हुआ। नयी कविता ५-६ (संस्मृतिक) सन् १९६०-६१ में हुआ, इसमें 'नयी की वर्तमान स्थिति' पर परिचर्चा वायोकिा की गई। इसमें कवि गिरिधाराकुमार माधुर एवं अनुनाथ सिंह तथा सपोदाक डा० देवराज और रामस्वल्प ज्युर्वदो ने भाग लिया। इसी क्रम में विजयदेव नारायण छाहो का वर्णित निबन्ध 'लघु मानव के बहाने हिन्दी कविता पर एक बल' प्रकाशित हुआ। नयी कविता में पौराणिक प्रतीक 'अत्यन्त का लेख भी इसी क्रम में हुआ। सन् १९६३-६४ में नयी कविता- ७ में 'वायुनिष्ठा स्वल्प और प्रयोजन' पर परिचर्चा में रामस्वल्प ज्युर्वदो, मलय, विपिन कुमार ज्यवात, नित्यानन्द तिवारी एवं जगदीश गुप्त ने भाग

लिया और सन् १९६६-६७ नयी कविता - तब मैं कविता के नये प्रतिमान के विषय पर परिचर्चा आयोजित की गई। इस परिचर्चा में नागेश्वर साहू, रमेश चन्द्र साहू, तथा प्रवीण सिन्हा ने भाग लिया। डा० जगदीश गुप्त का 'किञ्चिद किञ्चिद की कविता' से नयी कविता को ऐतिहासिक विकासवादात्मक विश्लेषण एवं महत्वपूर्ण उपलब्धि है। नयी कविता के संदर्भ में अनेक पत्रिकाएँ प्रकाशित होती रही। इनके इस काव्यान्दोलन के विकास में विविध प्रकार से सहयोग प्राप्त होता रहा।

पत्रिकाओं के साथ नयी कविता के संदर्भ में विविध ग्रन्थ प्रकाशित होती रहे। अग्रणी ने नयी कविता के संदर्भ में महत्वपूर्ण योगदान दिया। प्रस्तुत गीत निम्नलिखित हैं :

१- सामीकान्त वर्मा- नयी कविता के प्रतिमान, भास्वी प्रेस प्रकाशन, १० दरभंगा रोड, लाहाबाद।

२- डा० रमार्देकर तिवारी- प्रयोग-वादी काव्यधारा (तमील नई कविता), श्रीलम्बा विद्याभवन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, १९६४ ई०।

३- डा० कुमार विमल - नई कविता : नई वास्तविकता और कला, भास्वी भवन, पटना, प्रथम संस्करण १९६३ ई०।

४- सुरेश चन्द्र सक्सेना- नयी कविता और उसका मूल्यमूलक, वात्साराधन एण्ड सम्प, काश्मीरी गेट, दिल्ली, प्रथम संस्करण १९६३ ई०।

५- श्यामसुन्दर घोष - नयी कविता का
स्वयं विवेचन , हिन्दी साहित्य संघार, पटना , प्रथम संस्करण ,
१९६५ ई० ।

६- डा० जमुनाय सिंह - प्रयोगवाद की
नयी कविता , समकालीन प्रकाशन, वाराणसी , प्रथम संस्करण ,
१९६६ ई० ।

७- डा० नाम्दार सिंह - कविता के नये
प्रमाण , राकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण १९६६ ई०

८- परमानंद शीवास्तव - नयी कविता का
परिचय , नीताम प्रकाशन, स्ताहाबाद, प्रथम संस्करण १९६६ ई०

९- डा० जगदीश गुप्त - नयी कविता :
स्वयं कीर समस्याएं , भारतीय ज्ञानपोथ प्रकाशन, प्रथम संस्करण ,
१९६६ ई० ।

१०- डा० देवेश ठाकुर - नयी कविता के
सात कथाय , मौलिक साहित्य प्रकाशन, कपला नगर दिल्ली , प्रथम
संस्करण , १९७० ई०

११- गिरिधरकुमार माथुर - नयी कविता :
सोमा कीर संभावनाएं , नंदार प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण ,
१९६६ ई० ।

नयी कविता प्रयोगवाद से जूझ रहे थी।

सन् १९५५ में नयी कविता से जूझ 'नव लेखन' का पल दृष्टिगोचर हुआ। श्रीकान्ता शर्मा एवं नरेश मेहता के सम्पादन में सन् १९५५ में 'नवलेखन अभिनव हिन्दो पाठिक' कृति का प्रकाशन हुआ। इसमें कविय, प्रातिवादियों पर एवं नयी कविता के ब्लाहावादी गूट पर विविध वार्ताप लगे थे। डा० रामविलास शर्मा ने इस संघर्ष में विस्तृत विवेचना की है। उनका मत है कि 'एक तरफ 'कृति' ने प्रातिवाद, प्रयोगवाद और नयी कविता तीनों से कानों की जूझ कर लिया। वहीं नव-लेखन का सम्बन्ध उसने स्वाधीनता प्राप्ति के बाद की उस कविता से जोड़ा जो 'सुखित की छवना' 'बातोंका और राष्ट्रोंका को जानना', 'मृत्यु पर मृत्यु की और दाऊता पर स्वाधीनता को विजय के रणरत्न' अनुभव को कविता थी। 'राधोव समरना ने सन् १९६१ में नयी कविता के युग को समाप्ति की घोषणा 'कल्पना' में हुई परिवर्तन में कर दी। परन्तु सन् १९६७ में सभी ने मान लिया कि नयी कविता की मृत्यु हो चुकी है।

इस प्रकार स्वतन्त्रता के उपरान्त नयी कविता का प्रवृत्त रूप से विकास हुआ और सन् ६० से विकासक्रम, विस्तार, एवं विद्वानों में क्वरीथ जाने लगे।

कविता के क्षेत्र में छाठोत्तरी पीढ़ी ने

१- रामविलास शर्मा - नयी कविता और अस्तित्ववाद पृ० ३३

२- कृति - अगस्त १९५६ - नयी कविता और अस्तित्ववाद से उद्धृत पृ० ३२

३- कल्पना - फरवरी १९६६ - नयी कविता और अस्तित्ववाद पृ० ३४

विशिष्ट भूमिका प्रस्तुत की। छाठोत्तरी कविता के नाम से काव्य के क्षेत्र में विविध प्रयोग हुए। गीत, सष्टीगीत, नवगीत आन्दीलित विकसित हुए, जिसमें नवगीत अपनी विविध उपलब्धियों सहित आज भी नूतन मार्ग प्रकट कर रहा है। नयी कविता ने छाठोत्तरी कविता, नवगीत आदि काव्यान्दीलों को विशा प्रदान की है।

(हं) व्याख्या

नयी कविता की व्याख्या समोनाकों और कवियों ने विस्तृत रूप से की है। नयी कविता सम्बन्धी घोजणाजी, भूमिकाजी, कवय्या तथा परिचर्चाजी द्वारा सैदान्तिक व्याख्या के विविध पक्ष प्राप्त होते हैं। वजिय द्वारा सम्पादित 'तार सप्तक', 'तुघरा सप्तक' एवं 'तोघरा सप्तक' में नयी कविता के लिए मार्ग एवं व्याख्या के विचारणीय पक्ष प्राप्त होते हैं। वजिय 'तोघरा सप्तक' की भूमिका में नयी कविता के कवियों को अपना दायित्व सम्भालते हुए लिखते हैं -

'हमने फिर भी नयी कविता अगर एक कास की प्रतिनिधि और उत्तरदायी रचना प्रवृत्ति है, और सम्भालीन वास्तविकता की ठीक ठीक प्रतिबिम्बित करना चाहती है, तो उसे स्वयं जाने थककर यह किण्व दायित्व बौद्ध लेना होगा। कृतिकार के रूप में नये कवि को साथ-साथ बकीर और जल दोनों होना होगा (और सम्पादक होने पर साथ-साथ बमियोजता भी)।'

नयी कविता की विविध रूप से व्याख्या

सम्पूर्ण कान्ता वर्मा ने अपनी गीत 'नयी कविता के प्रतिमान' में की है।
बापू नयी कविता सम्बन्धी प्रान्तीय एवं बारीकी के विरोध में अपनी
का प्रकट किये हैं। सम्पूर्णकान्ता वर्मा ने नयी कविता को स्थापित करने में
निम्नलिखित व्याख्या की है ।

भारत यह है कि जब हम 'नयी कविता'
को स्थापित करते हैं तो उसके पीछे विभिन्न सामाजिक, धार्मिक एवं
ऐतिहासिक स्थितियों का संकलित रूप भी हमारे सामने होता है जो आज
के व्यापक जीवन का कागज का टुकड़ा है। अतः, नयी कविता का पूरा गुण
उन चिन्तकों का समूह है जिनमें वे सभी तत्त्व सम्मिलित हैं जो नये शीर्षकों
की ओर से विकसित होते हैं।

'नयी कविता' से हमारा वास्तव होता है,
उसको नयी परिभाषणीयता, अनुभूतियों के नये स्थापना और उनके
नये अनुभव- सीमा, शीर्षकों की ओर के नये धारातल, परम्परागत विद्वत् प्रत्यक्षों
के परिष्करण, मतवादी प्रान्तीयों से मुक्ति पाने की कामना और तादात्म्य
सत्य को वे परिधियाँ जिनमें हमारा राजात्मक संबंध नये वास्तवों का
व्यञ्जना करने की सामर्थ्य पाता है।

- उसके साथ ही नयी कविता और आज
को नयी कला- अभिव्यक्ति प्रत्यक्ष अनुभव देश, काल, मानविक स्थिति,
तथा विद्वत्ति के आधार पर स्वीकार करती है। आज का नया कवि उस
धारातल पर है जहाँ वह प्रत्यक्ष अपना प्रत्यक्ष विषयता को स्वीकार करता

१- सम्पूर्णकान्ता वर्मा- नयी कविता के प्रतिमान पृ० २२

२- उपरिष्ठ

----- हुआ जीवन के सन्त परमाणुओं को एक निष्ठ करने में प्रयासशील है।^१

- 'नयी कविता' मिय्या बाइसवाव

(बसुन्दाहीरीक सवैन्वरिण्ण) कीर ज्ञावत्य बाइसवाव के विपरीत व्याख्या है। प्रत्येक मानव की नैतिक वास्था के अन्तर्गत मानव जीवन के उपकरणों से पूर्ण बनना चाह रही है का प्रयास कर रही थी, उस की कृशति को भेदकर एक नए बालीक को स्वोक्ति ही नयी कविता में मिली है जो हमारे जीवन से सृज्य कालों की बापिल धीन्दयान्भुति से द्रवि।^२

- 'नयी कविता' में सामाजिक पैना

का स्तर भी यथार्थ को परिधि स्वीकार करती हुए बलिवाली प्रवृत्तियों से पूर्ण है। नयी कविता सामाजिक स्तर पर भी मानव की व्यक्ति-निष्ठा स्वीकार करती है। व्यक्ति की निष्ठा, व्यक्ति की अनुभूति तथा व्यक्ति की विनिष्टता (सेन्कडिटी) की प्रत्येक कला की ज्ञान, शक्ति है उन सभी भाव- स्तरों को अपना निचो स्वर प्रदान करती है।^३

- 'वस्तुतः' नयी कविता को विषय वस्तु

मानव कर्तकार न होकर एक बाधात्कार किया हुआ जीवन सत्य है। नयापन उसको विषय- वस्तु में है जो शास्त्रों में निरूपित पुनः प्राय मान्यताओं के प्रति विद्रोही है। यही नहीं, बल्कि छोटे बाल्य बाधात्कार

१- सप्तोक्तान्त वर्षा- नयी कविता के प्रतिमान १० ४०

२- उपरिष्ठ १० ४०

३- उपरिष्ठ १० ४०

के कारण नयी कविता अल्पकाल रुढ़ियों और प्रयोगों की अपेक्षा बहुमत कृत्रुति को कुण्ठारहित अभिव्यक्ति है।

- नयी कविता सक्रिय मानव ज्ञान का प्रतिनिधित्व कहती है, क्योंकि उसमें यह साम्य है कि स्वतन्त्र व्यक्तित्व पर जोर देने के साथ साथ उसके वाक्यत्व की भी रक्षण कर सके। व्यक्ति-स्वातंत्र्य की बात वह कतिर बार बार उठती है कि मानव भी ऐसी मनुष्य बोधित है जिसका सारा जीवन केवल अध्यात्मिक होती हुए भी समाज-ज्ञान की सीढ़ी में फैलाया हुआ जीवन रहा है। नयी कविता क्योंकि समन्वय की अपेक्षा व्यक्तिपर देखती है क्योंकि समन्वय में उक्ति कृत्रुति की बात नहीं उभरती, बल्कि उस बन्दर की बात आती है जो व्यापक कहती कहती सारी रीटों को एक स्वर में कर पाता है।

एक अन्य स्थान पर लक्ष्मीकान्त वर्मा नयी कविता के संदर्भ में अपना मत प्रकट करते हैं :

- मानव की नयी कविता भी परंपरा और रीति के विरोध में जीवन सत्य के उन वाच्यता और धरातलों की होती है, जो नित्य प्रति जीवन में वास्तव कृत्रुति के बाधों पर व्यक्त होती है। नयी कविता के लिए मन में यही ऐतिहासिक, वैयक्तिक, सामाजिक, और वास्तव व्यक्त सत्य के वे वाच्यता और धरातल विकसित होती है, जो परंपरा के विरुद्ध होती हुए भी सारे सत्य समर्थ रूप में नयी अभिव्यक्ति की अवसरित्व करती है।

१- लक्ष्मीकान्त वर्मा- नयी कविता के प्रतिमान पृ० ४१-४२

२- उपरिष्ठ

पृ० २६१-२६२

३- नयी कविता- २ अन्तर्गत पृ० १६५५ ई० पृ० १७

नयी कविता के प्रथम समर्थक स्व. नयी कविता ' पञ्चादश्यादक डा० जगदीश गुप्त के मत अब संदर्भ में अत्यन्त उपयोगी है। कुछ उनके विचारों के निम्नलिखित हैं :

- नयी कविता के प्रति मेरा दृष्टिकोण अविवश्याय और संदेह का नहीं है। मैं उसमें उन संतुष्टियों को पाता हूँ जिनके द्वारा जय और भाव की विशेष शक्ति मिलती है। नया कवि इन्द्र की उभारने की अपेक्षा वस्तु-तत्त्व की व्यक्तिकरण, उसके स्व (काम) की उभारने और अनुभूति के मूल ढाँचा (स्वरूप) को सतत बनाने का विशेष प्रयत्न करता है।

- नयामनुष्य यदि प्रस्तुत जितना है मुक्त, मानव मूल्य के रूप में स्वातंत्र्य के प्रति सजग, अपने भीतर जारी रखे सामाजिक दायित्व का स्वयं अनुभव करने वाला समाज की समस्त मानवता के हित में परिवर्तित करके नया रूप देने के लिए कृत संकल्प, कृत्रिम स्वार्थ भावना से विरक्त, मानव मान के प्रति स्वाभाविक सह-अनुभूति से युक्त संकीर्णताओं एवं कृत्रिम विनाशनों के प्रति विरोध का अनुभव करने वाला, हर मनुष्य को सम्मिलित समान मानने वाला, हर मानव व्यक्तित्व की उपेक्षा, निरर्थक और नगण्य छिद्र करने वाली किसी भी वैयक्तिक शक्ति या राजनीतिक अस्तित्व के वागे कबलत, मनुष्य की अन्तर्गत सद्वृत्ति के प्रति वास्थावान्, प्रत्येक व्यक्ति के स्वाभिमान के प्रति सजग हुए एवं संगठित अन्तःकरण संयुक्त, सक्रिय किन्तु अपोहक, सत्यनिष्ठ तथा विशिष्ट सम्पन्न होगा ।

१- नयी कविता -२ स्ताडावाद सन् १९५५ पृ० ५०-५२

२- नयी कविता -४ स्ताडावाद सन् १९५६ पृ० १२-१३

नयी कविता के संदर्भ में विविध विद्वानों को आलीष्मारी परा एवं विपन्न में प्रकाशित हुई है, यहाँ कुछ विद्वानों के मत प्रस्तुत हैं :

- बाबू प्रफेस^१ 'नया' कवि अपनी को नये मानव का जन्म सिद्ध प्रवृत्ता समझता है।' (डा० देवराज)

- नयी कविता परिस्थितियों को उपाय^२ है। (विश्वम्भर मानव) ।

- नयी कविता का उद्देश्य जीवन को नवीन परिस्थिति , उन्ने नवीन स्तरों एवं धरातलों की आवृत्ति उत्पन्न को दृष्टि से अभिव्यक्ति देना है।' (डा० छन्द नाथ मानव)

- नयी कविता उस प्रकार को बाँधों टावर को रोमांटिक स्वप्नलोत्ता को स्फूर्त प्रिय आत्म रतिमय आध्यात्मिकता की कविता नहीं है, जैसी कि पुराने रोमांटिक कृति को हुवा कहती थी। वह प्रकृतः एक परिस्थिति के मोलर फली हुए मानव हृदय को पर्यन्त विमुक्तन की कविता है।' (मुक्तिबोध) ।

- नयी कविता का उच्चा, आधुनिक, स्वतन्त्र स्वर व्यक्ति का स्वर है, समूह का कोलाहल नहीं, पर उच्च व्यक्ति के स्वर में ही समूह मुक्ति की उठा है।' (बाबूष्माराज)

१- नयी कविता- ५-६ स्माराबाद सन् १९६०-६१ पृ० २५

२- विश्वम्भर मानव- नयी कविता नये कवि पृ० १६

३- डा० छन्द नाथ मानव - आधुनिक कविता का मूल्यविन पृ० ८७

४- नवानन माधव मुक्तिबोध - नये साहित्य का औपन्यासिक पृ० ५४

५- कल्पना- नव० १९५६ पृ० १

- नयी कविता भारतीय साहित्य के बाद

लिखी गयी उन कविताओं को कहा गया जिनमें परम्परागत कविता के
वाग्वै नये मूल्यों , नये भाव- बोधों और नये शिल्प विधान का उन्मेषण
किया गया है। (डा० रामधर मिश्र)

- वाज को समारो नयी कविता में स्वतन्त्र

भौतिक प्रातिबादी की प्रकृत प्रतिक्रिया स्वयं जी फिर है स्वतन्त्र
वस्तुसंज्ञा और निरति वैयक्तिक कृतृति का कुरीय दिखाई पड़ रहा
है, उसका मूल प्रीत बहुत हद तक नवोन परिष्करी कविता के उभ वस्तुसंज्ञी
रूपमान में हो है, जिसका तुल्यतात दुधरे महायुद्ध को संज्ञा में हो ही
हुका था। (बोरिन्द्र कुमार जैन) ।

- नया कवि श्रमानदार है, उसी वही एक

के विषयन को भी व्यक्तित्व को है पर उसका व्यक्तित्व विघटित
नहीं हो गया है। व्यक्तित्व पर उसे वास्था है। -- वास्था उसे घसी
है, पर वह वास्था को तोड़ना चाहता है, उसमें टूटकर गहोद बनना
नहीं चाहता। (कुमदीर सायस और भागीरथ भागव) ।

- नयी कविता को वाकिर्भूत में प्रत्यक्ष-

स्मरण एक और समाकमन्य परिस्थितियों का कहा हाय रहा है। बीषा
के वैयक्त्य वेदन- प्रतिवेदन , कृष्ठा, सुदन, ऐषर्ण एवं अन्यथाय , उही

१- रामधर मिश्र - हिन्दी कविता - तीन बरक ५० ६७

२- बोरिन्द्र कुमार जैन- वागत की वलि - मुम्बिका ५० २६

३- कविता- १ सन् १९६१ कलबर ए० कुमदीर सायस और भागीरथ
भागव प्रस्ताविका भाग है

गद्य- कवी विष्णु उपाध्याय का लेख जोला नयी कविता की पहलव-
पूर्ण उपलब्धि है। (श्रीचन्द्र सिंह देव)

- नयी कविता एक और यदि जीने के लिए
आवश्यक शर्तों को लीज यो तो दुधरी और एक नयी जीवन भाषा को
लीज यो ।

उपरिलिखित सभी व्याख्यानों पर गम्भीरता
पूर्वक विचार करने पर एक निष्कर्ष प्राप्त होता है कि सभी 'नया'
शब्द प्रायः सभी में समान रूप से व्याप्य हैं। नया मूढ, नया भाव शोध,
नये मूल्य, नयी परिस्थितियाँ, नये सम्बन्ध, नयी सामाजिक अनुभूतियाँ,
नया व्यक्तित्व, नये अनुभव-शोध, नया सौन्दर्यशोध, नये धरातल आदि ।
एक 'नये' शब्द से क्या ज्ञात किया जा सकता है ? क्या इसके फलस्वरूप 'नयापन'
नहीं था ? क्या इसका अन्वेषण करना 'नया' था कि नहीं फलस्वरूप
के कवि उस 'नये पन' से अभिन्न रहे ? यद्यपि नयी कविता ने
एक नूतन भावभूमि प्रदान की है। विचार्य वस्तु एवं हित्य को दृष्टि से
भी नयी कविता में नवीनता है। सौन्दर्य के प्रति नूतन दृष्टिकोण नयी
कविता का आन्विकारी कार्य है।

नयी कविता से फलस्वरूप इन्द्र, तप, सुख आदि
में इस प्रकार के प्रयोग नहीं हुए थे । अतः नयी कविता नये व्यक्तित्व के
व्यक्तित्व को बोधन कथारणाओं की अभिव्यक्ति है जिसमें व्यक्तित्व

१- कविताई - १७ सम्पादक श्री श्रीचन्द्र देव पृ० ७

२- डा० परमानन्द जीवास्तव - नयी कविता का परिचय पृ० ३२

को गरिमा के साथ उसको सम्यक् अनुसृतियों को ज्ञानमार्गों से कथार्थ रूप में प्रस्तुत करने का सफल प्रयास है। यही नयी कविता को 'नयी' के प्रति वात्सल्य है।

(उ) नयी कविता में व्यक्तिवादों दर्शन को अभिव्यक्ति

नयी कविता का युग संघर्ष और विजयवादी का युग है। व्यक्ति परिवर्तित एवं वैयक्तिक समस्याओं में खूना उत्कृष्ट गया कि उसकी पास संघर्ष, विद्रोह, व्यंग्य एवं जनबोध ही दृष्टि-गोचर होता है। उसकी सौदनाई उसकी हुई प्रतीत होती है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति तनाव के बोधन को जोता है। नयी कविता का कवि परिस्थितियों में खूना उत्कृष्ट गया कि उसके पास संघर्ष एवं मानसिक तनाव ही अवस्था रहे हैं। बाधुनिकता एवं शहरोकरण को जनानों मोह में नया कवि अपनी को 'लघु' अनुभव करता है। वह निरन्तर अपने अस्तित्व के प्रति सजग है। नयी कविता प्रयोगवादों का व्यावस्थित का विकसित रूप है। प्रयोगवाद का मूल 'प्रयोग' रहा है, परन्तु नयी कविता का विचार व्यक्ति के बोधन का विज्ञान संसार है। नयी कविता का कवि भोगे हुए सत्य के प्रति सजग है। उसकी अभिव्यक्ति कथार्थवादों केतना से सम्पृक्त है। नयी कविता का व्यक्ति अपने सौदनाओं को अभिव्यक्ति के प्रति सजग है। उसने पाठसंवाद के विरोध में व्यक्ति निष्ठा पर बल दिया। व्यक्ति की अनुसृतियों को व्यक्त करता उनकी प्रकाशित कराना वादि व्यक्तिवादों प्रवृत्ति की विकसित प्रवृत्ति है। नयी कविता पर व्यक्तिवादों होने का आरोप समालोचकों ने प्रारम्भ में ही लगा दिया था। वास्तव में व्यक्तिवादों प्रवृत्तियाँ नयी कविता में इस प्रकार व्याप्त

है कि बि बादलों में पानों को झूट रखी है। यद्यपि अनेक विद्वानों ने इस बात को नकारा है कि नयी कविता व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों के कारण विकसित हुई, तथापि नयी कविता में व्यक्तिवादो चिन्तन की काव्यात्मक अभिव्यक्ति अधिक माना में हुई है।

कविता व्यक्ति के द्वारा सृजित कला है। कला में व्यक्ति के द्वारा कलाकार के व्यक्तित्व का प्रभाव अवश्य होता है। नयी कविता नये व्यक्ति की प्रतिस्थापित करने को मांग है। व्यक्ति का व्यक्तित्व समास्था, अव्योहार, अधिश्वास से कलना उत्प्रेरित रहा है कि मनोवैज्ञानिक पद्धति से व्यक्तित्व में निराशावादो, तर्कावादो, भोग-वादो, जाणवादो, लघु मानव, विद्रोही, अस्तित्ववादो, नास्तिकता आदि की प्रवृत्तियाँ विकसित होती रही हैं।

इन प्रवृत्तियों का नयी कविता में विविध प्रकार से प्रतिफलित होता रहा है। नया कवि जीवन की समग्र कटुताओं और विषमताओं को अपनी तरह से भोगता एवं जीता रहा है। उसका संघर्षपूर्ण जीवन तन्मात्र और विद्रोह की लड़ाई धारण करता रहा। वर्तमान युग में व्यक्ति की "लघुता" का बोध होता है। वह सामाजिक, राजनीतिक एवं वार्षिक परिवर्तन के कारण सृजित और उसका विकास सृजित ही जाता है। वह मुक्तः वैयक्तिक कृष्ण है वस्तु है। नयी कविता के सभाज को स्फूर्ति "लघु मानव" है, वह जीवन के प्रत्येक क्षण को महत्ता प्रदान करता है। क्योंकि वह जाण बोध के प्रति संजग है, उसके

अनुधार किं तु साधना में अनुभूति साधक सिद्ध हो जाय । नयी कविता में वैयक्तिक-स्वातंत्र्य तथा व्यक्ति-स्वातंत्र्य पर विविध रूप से विचार किया गया है। नया कवि कल्याण, भोगवाद तथा निराशावाद से अलग है। कृतिर वह एकाकी, कमजोर वीर वैयक्तिकता के प्रति उत्तक रखता है। व्यक्ति स्वातंत्र्य नयी कविता की मुख्य प्रवृत्ति है जो कि वैयक्तिक निराशावाद, माधुर, अंधार भावों, सुखीयों एवं नीच फलता आदि में विविध रूपों से व्यक्त हुई है।

नयी कविता में परम्परा - भजन, आदिकों के प्रति विद्रोह आदि वैयक्तिक-भेदना के आधार पर विकसित हुए हैं। नये कविता में व्यंग्यात्मकता, फलप एवं तटोली उक्तिों का बाह्य प्राप्त होता है। वास्तव में नयी कविता में व्यंग्य का प्रयोग नयी प्रवृत्ति प्रदान करता है। नयी कविता का वैयक्तिक दृष्टिकोण होने के कारण व्यंग्य में फलप प्राप्त होता है।

निष्कर्ष रूप में नयी कविता में व्यक्तिवादों दर्शन की अभिव्यक्ति विविध रूपों में प्राप्त होती है। मानवीय दृष्टिकोण के लिए व्यक्ति उत्पन्न, व्यक्ति-वस्तुत्व, व्यक्ति-स्वातंत्र्य आदि नयी कविता में नया रूप लेकर अभिव्यक्ति हुए हैं।

(४) नवगीत

(क) नापकरण

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य में नाप-

निकिता का प्रभाव कथ्यार्थिक माना में व्याप्त है। कविता, कहानो, कालो-
पना, उपन्यास तथा गीत सब को 'नये' विचित्रता से अभिविष्ट हुए।
नयी कविता, नयी कहानो, नयी कालोपना, नया उपन्यास आदि नाम
हिन्दी साहित्य में प्राप्त होती हैं। गीत को 'नव' विचित्रता से लु-
का 'नवगीत' नाम से पुकारा जाने लगा। 'नवगीत' शब्द के प्रथम
प्रयोगिता के रूप में ऐतिहासिक सर्वसाधारण अनिवार्य है।

सर्वप्रथम रवीन्द्र प्रभर के विचार 'ज्योत्स्ना'
दिसम्बर सन् १९६१ ई० में प्रकाशित उनके लेख 'नये गीत नये कविता के
परिपार्श्व' में देखी है। रवीन्द्र प्रभर का दावा है कि 'नयी कविता
के समानान्तर नये गीत को क्या उन्नीस कहें हैं।'

एक अन्य दाविदार डा० शिव प्रसाद सिंह
है। बापू 'कल्पना' (१८४) में 'नवगीत : एक प्रतिक्रिया' में
'वासन्तो' (वाराणसी) में प्रकाशित एक टिप्पणी को महत्वपूर्ण
कहाया है- 'उक्त टिप्पणी से प्रेरित होकर 'वासन्तो' ने नवगीत
वाच्योक्त कहा।' उक्त तथ्य का सत्यापन करने पर ज्ञात होता है कि
उक्त टिप्पणी अक्टू १९६० ई० में प्रकाशित हुई।

यद्यपि में रवीन्द्र प्रसाद सिंह ने सन् १९६५
ई० में प्रकाशित गीत संकलन में 'नवगीत' का प्रथम प्रयोग किया है।

१- सतिश शुक्ल- नया काव्य नये मूल्य पृ० २३८

२- कन्तरास २६ जुलाई ७१, नरस प्रसाद सागर का लेख (सको जीपुडो
को तलार : नयी कविता बनाम नवगीत पृ० २३-२४)

३- डा० विनीत गोदरे - ज्ञानावादीतर हिन्दी प्रगीत पृ० २२६

राबिन्द्र प्रसाद सिंह ने 'नवगीत' संज्ञा देने के संदर्भ में अपना पक्ष इस प्रकार प्रस्तुत किया है :

“ गीतांगिनो के सहयोगियों ने- वायु-
निकार गीत, बिम्ब गीत, सात्त्विक गीत आदि कुछ नामों का सुझाव
दिया था, किन्तु ये गीतों की संभावना की काल प्रवृत्ति और गीत
की सांस्कृतिक सोचा में नहीं धिखा जा रहा था, तभी 'नवगीत' संज्ञा
दी। ”

इस प्रकार 'नवगीत' शब्द के प्रथम प्रयोग-
कर्ता के रूप में राबिन्द्रप्रसाद सिंह का विशिष्ट योगदान रहा है। वास्तव
में नयापन काल सापेक्ष विशेषता है। कोई भी नवीनता अपने ही उस
परिस्थितियों के आधार पर निर्धारित होती रहती है। नये कानों पुराने
कहानों के अतिरिक्त यह है कि हमें भीगे हुए व्यर्थ का जीवन है। वायु
साहित्य पर कार्य करना आ गया है कि कल्पना और भावों के स्वयं
में उत्तर पड़ा है। मूल्यों के टूटने से साहित्य के पुराने प्रतिमान परिवर्तित
हो गये। नयी कविता के अविज्ञात तक विविध प्रकार के बदले, असा-
म्य रूप कृतज्ञपूर्ण काव्यान्वेषणों का प्रसार होता रहा है। गीत पन
और संगीत की स्वतन्त्रता का अन्वीक्ष्य स्वरूप है। नयी कविता की भाँति
यह भीगे हुए व्यर्थ को व्यक्त करने की अभिलाषा गीतकार के मन में
जन्मी, तभी वह गीत के नये पक्ष को बरिष्ठ प्रेरित हुआ। अस्त, गीत,
'नवगीत' संज्ञा से अभिलिखित हुआ। यद्यपि कुछ विद्वानों ने गीत की
'वायु का गीत', 'नया गीत' आदि नामों से अभिलिखित करने का

प्रयास किया जो कि असंभव था ।

(वा) प्रेरणा श्रोत

नवगोत को परिस्थितियाँ नयी कविता को परिस्थितियाँ से भिन्न नहीं हैं। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक वातावरण से देश में संघर्ष, बौद्धिक, बौद्धिकता तथा मानसिक प्रतिक्रियाएँ व्याप्त थीं। नयी कविता का आविर्भाव व्यक्ति को वैयक्तिकता एवं मानसिक संवेदनाओं को लेकर विकसित हुआ। परन्तु नवगोत के प्रेरणा-श्रोत नयी कविता के प्रेरणा श्रोतों से भिन्न हैं। नयी कविता को बौद्धिक बौद्धिकता से कवि के मन में वैयक्तिक राग विराग और सामाजिक राग विरागों के प्रति उदासीनता व्याप्त थी। व्यक्ति कविता के अकालत तय विह्वल तथा अन्तर्मुख वातावरण से दूर फलाफल करने लगा। नवगोत एवं नयी कविता का रचनाकार मध्यम का व्यक्ति है जो कि परिवर्तन वातावरण से सुबुध है। उसका व्यक्तित्व सँकटित है। उस सँकटित व्यक्तित्व को सामान्यता प्रदान करने के लिए गीत में 'नरिष्य', 'ताज्जो' एवं सॉफ्टके बिम्बों का प्रयोग किया गया। नवगोत सामाजिक यथार्थ को अपनी तरह कहने का माध्यम बन गया। वैयक्तिक राग-विराग, निराशा-वाला आदि सामाजिक राग-विराग, निराशा आला के रूप का नवगोतों ने प्रसार किया। जीवन को जाण भंगुरता एवं जीवन को अक्षय बिकल्पताओं ने नवगोतको व्यक्तित्ववादी दर्शन को और उन्मुख किया। नवगोत में जीवन के नूतन दृष्टिकोण का आविर्भाव हुआ। गीत का प्रमुख वैयक्तिकता है। अतः स्थानिक दुःख-सुख के विषय नवगोत

में प्राप्त होती है। इसी कारण व्यक्ति के सुख-दुःख के प्रति नवगोतकार अधिक चिन्तनयोग्य है। नवगोत में महानगरीय जीवन के चित्र हैं तो कुछरी वीर ग्राम, कस्बे तथा बादिगावियों के वास्तविक जीवन के चित्रों को संक्षिप्त करने का सफल प्रयास है। कारण है, नये कविता-रुचि वास्तविक जीवन के प्रति नवगोतकारों में जादिव गीतकार को आत्मा जोड़ित हो उठी। नवगोत नया क्लेश लेकर भीमहर यमार्ग वीर व्यक्ति के सुख-दुःख के गीत गाते लगा।

(इ) नवगोत : विकास-यात्रा

दो दशकों के यात्रा 'नवगोत' के काव्य ध्रुव को विविध प्रकार से व्याख्या करता है। स्वतंत्रता के उपरान्त गोति काव्य के रचना विध्य में अत्यधिक परिवर्तन हुआ है। 'नवगोत' का अपना इतिहास है जो कि स्वतंत्रता के उपरान्त देश की रचना एवं 'गीत' को व्यक्त करता है। इस संदर्भ में नवगोत के विकासात्मक परिमिष्य पर विचार करना ज्ञान है :

सर्वप्रथम नवगोत के संदर्भ में सन् १९५१-५२ में काशी में नौका-गोष्ठी सम्पन्न हुई- सन् १९५१-५२ में काशी में सुरक्षावित्तिक संघ के अधिवेशन में हिन्दुओं के नये गीतों पर चर्चा हुई थी। जादिव रात में गंगा की धारा परहुँ नौका-गोष्ठी में उस दिन धर्मवीर भारती, नरेश मेहता, जगदीश गुप्त, रामदल मि, सर्वद्वयारा

सम्प्रेषणा, सम्पुनाय सिंह, नावर सिंह तथा अन्य कितने ही नये कवि उप-स्थित थे--- सम्पुनाय सभी कवियोंने अपनी छुकण्ट से नये गीत गाये थे । कास को तरंग में यह पुरी रात बहकर किसी कवयाने घाट लग गई ।

उसके उपरान्त १४ जुलाई अन् १९५५ ई० के 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' में ग्वालियर की साप्ताहिक संस्था 'खलीकन' की ओर से उसके अध्यक्ष बोरिन्द्र मिश्र का एक वक्तव्य प्रकाशित हुआ जिसमें साहित्य अकादमी के प्रकाशन 'सम्कालीन भारतीय साहित्य' के अन्तर्गत हिन्दो साहित्य पर प्रस्तुत निबन्ध में गीत की उपेक्षा का विरोध किया गया था । अन् १९५५ - ५६ में हिन्दो साहित्य सम्मेलन के प्रयाग अधिवेशन में गीत या नये गीत की चर्चा की आवश्यक नहीं सम्झा गया । परन्तु दिसम्बर अन् १९५६ में आठवाँवाँ के साहित्यकार सम्मेलन की कविता गोष्ठी में श्री बोरिन्द्र मिश्र ने 'नये कविता नया गीत : मुत्स्याकन की सोपार' निबन्ध प्रस्तुत किया । अग्रे नवगीत के मुत्स्याकन पर अच्छी प्रतिक्रिया बिचार किया गया । एक उदाहरण प्रस्तुत है :

“ जब मैं गीत के सम्बन्ध में कुछ लिख कर आ रहा हूँ । हिन्दो में एक नये गीत का जन्म हुआ है। यह नया गीत 'फार्म' और 'काप्टेन्ट' दोनों ही पदों में समृद्ध हुआ है। यह विचार-णीय है कि आज की विभिन्न साहित्यिक काव्य शैलियों की आलोचना से कहीं हम गीत को जिहा में सम्पन्न ही रहे प्रयोगात्मक वागवक् विचार शक्ति की तो नुसार नही दे रहे हैं। ”

- १- ठाकुर प्रसाद सिंह- हिन्दोगीत कविता - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दो साहित्य विविधा १ बालीन्ना जून १९६५ पृ० ६६ से उद्धृत
 २- प्रेमलकर - नवगीत : विकासवादा - साध्यापिना-२ ६० बोरिन्द्र मिश्र पृ० ४४

बोरिन्द्र सिंह ने सन् १९२६ से १९६४ तक
जयपुर से प्रकाशित 'संहर' के वर्षा स्तम्भों में भी कई बार गीत के
बदली हुए लेखों को जोर दिया जाकर्णित किया ।

५ फरवरी १९५८ ई० को श्री राबिन्द्र
प्रसाद सिंह ने अपनी संपादन में 'गीतांगिनो' का प्रकाशन किया ।
यह नवगीत का प्रथम संस्करण है, जसमें राबिन्द्र प्रसाद सिंह ने नये गीत
को 'नवगीत' को रंग दे अभिविष्ट किया । अपनी अपनी सम्पादकीय
लेख में 'नवगीत' के फार्म को आकृष्ट सुनी- 'सम्कालीन हिन्दी कविता
को महत्वपूर्ण और महत्वपूर्ण रचनाओं के विस्तृत आन्दोलन में गीत-
परम्परा 'नवगीत' के विकास में परिणति पाने की कोशिश है। नवगीत
नये अनुभवों की प्रक्रिया में अवस्थित। मार्मिक सम्यक्ता का आत्मोन्मादपूर्ण
स्वकार होगा, जिसमें अभिव्यक्ति के आधुनिक विकासों का उपयोग और
नवों प्रविधियों का संयुक्त होगा ।

'गीतांगिनो' के प्रकाशन से पूर्व नवगीत
का पृथक् नाम प्रारम्भ ही हुआ था तथा 'गीतांगिनो' के प्रकाशन
की योजना सन् १९२६ ई० में ही निर्मित हो गई थी । श्री बोरिन्द्र
संकर के संपादन में प्रकाशित 'वाचस्वो' ने नवगीत के संदर्भ में प्रचुर सामग्री
दी है। 'वाचस्वो' अगस्त १९६० ई० के अंक में डा० जिवप्रसाद सिंह को
एक टिप्पणी 'गीत कविता के प्रति ऐसी बड़ी नृकृति क्यों ? प्रकाशित
है । सन् १९६२ में मासिको वाचस्वो में 'नये गीत : नये स्वर'

१- श्री राबिन्द्र प्रसाद सिंह- गीतांगिनो - सम्पादकीय लेख पृ० ३

२- लेख- नवगीत अंक जुलाई १९६६ पृ० ५३

शोचक के अन्तर्गत सेल्माला का आयोजन किया गया। इस सेल्माला में भाग लेने वाले सभी गीतकारों ने गीत की आवश्यकता एवं नवगीत आन्दोलन की गति देने पर बल दिया। श्री देदार नाथ सिंह ने गीत के प्रवर्धन 'फ़्टन' को परिचरित करने पर बल दिया - 'गीत दिल्ली को बड़ा बख़्तर होती है। पर गीत का वह जलता हुआ फ़्टन जो हिन्दो में सब को अपना लिया गया है, न जाने क्यों अपना अर्थ खो गया है।'

श्री वीरेन्द्र मिश्र ने अपनी एक सिल में गीत वर्ग के नवगीत का अभिनन्दन करने का वाक्यान किया :

" मैं स्वयं मौन छोड़ लेखों की उमसियों के गीत बोलों की मुखरित होने देने के लिए कुतूहल और उत्कण्ठा को भुजिका पर अपनी पाठकों और श्रोताओं के नये गीत के अभिनन्दन का अनुरोध करता हूँ।^{१२}

डा० रामदत्त मिश्र ने अपनी विचार एक प्रकार प्रस्तुत किये हैं :

" नयी कविता लिखी हुए भी अभी कुछ ऐसा अनुभव होता है कि कुछ ऐसा छूट गया है जो गीत के माध्यम से व्यक्त होने के लिए अनाकूल है।"

डा० खोन्द्र प्रमद परिभाषा की बदली

१- देदारनाथ सिंह- नये गीत की दिशा- वास्तव्यो त्रिभू ६२ पृ० १३

२- वीरेन्द्र मिश्र- लोकप्रियता और कलात्मक अभिरुचि - वास्तव्यो

दिसम्बर १९६२ पृ० २३

३- रामदत्त मिश्र- गीत और भी गीत - वास्तव्यो, मार्च ६२ पृ० १२

के पदा में थे- 'जाय तो कै गीत को परिभाषा हो बस गई है ।
 सम्प्रामाणिक कविता की नवीन पद्धतियों से परिष्कृत वाच का गीतकार
 गीत को एक तबिय सहज परिभाषा बाँधता है। उसकी दृष्टि में, गीत
 रचना के लिए व्यक्ति निष्ठा एवं रागात्मकता की रूढ़ समझना व्यर्थ
 है। इसी प्रकार तुल्यग्रह जय्या अन्त्यानुप्रास पेशित जय्या फावलीगत
 लयात्मकता तथा हृन्मगत संगीत के बन्धन भी छुलकर दोस पड़ गये हैं ।

गीत की अनिवार्यता के प्रतिपादन हेतु श्री
 जानकीबस्सन दासजी, डा० शम्भुनाथ सिंह, गिरिजाकुमार माथुर तथा
 विभीषण शास्त्री के लेख भी प्रकाशित हुए ।

'नवगीत' का प्रथम पृष्ठ संस्करण सन्
 १९६४ में उत्तरा के जीम प्रभार एवं नागोरथ भार्गव के सम्पादन में
 'कविता १९६४' के नाम से प्रकाशित हुआ । 'वासन्तो' के उपरान्त
 यह नवगीत - यात्रा का दूसरा पोस का फरार है। डा० शम्भुनाथ सिंह
 ने नवगीत का ऐतिहासिक लेखाजीला प्रस्तुत किया है। खोन्ड प्रभार ने
 नवगीत के विशिष्ट व्यक्तित्वके सन्दर्भ में विचार प्रस्तुत किये । डा०
 रामदत्त मिश्र ने नवगीत की उपलब्धियों का विमीक्षण किया और डा०
 रमेश कुन्जस मेघ ने नवगीत की सम्भाव्य पितावर्ग पर प्रकाश डाला ।
 इसके यह संस्करण नवगीत का 'तारुण्यक' कहा जा सकता है।

सन् १९६४ में प्रकाशित कविता संग्रह में -
 'कादम्ब निर्वाचन तथा अन्य कवितारं -में राजेश्वर सम्मोहन ने 'एष्टोमीत'
 का गारा लगाया लेकिन 'वातायन' (बोकनिर) के शरीर भावनाओं

१-खोन्ड प्रभार - गीत की परिभाषा बसत नहीं है- वासन्तो पृष्ठ ६२

विशेष महत्वपूर्ण पदा सिद्ध हुआ। परन्तु, 'पाठ्य' वर्ष १९६६ में ही ७५७ दीप सिंह के लेख नवगीत नाम माधुसूता बन्तिम वीर में नवगीत की झुठलाने का हास्यास्पन्न प्रकटन किया है। इसके विपरीत 'पाठ्य' कुतार्ह १९६६ में श्री गोपी कृष्ण शुक्ल का 'नवगीत : कुछ बाधाएँ' में नवगीत की प्रगतिशीलता का उत्तेजनीय विवेचन किया गया। जनवरी १९६७ के में 'नवगीत समानान्तर स्थापना वीर उभरे प्राण बिहूँ' नाम के जीम प्रकार तथा वीर सम्प्रेषण के दो निबन्ध प्रकाशित हुए। सन् १९६१ में 'समिधा - २' में श्री केदारनाथसिंह का 'नया गीत : कुछ प्राण कुछ रेतार' लेख प्रकाशित हुआ।

उक्त पत्रिकाओं के साथ साथ निम्नलिखित पत्रिकाओं ने भी नवगीत सम्बन्धी लेख प्रकाशित की हैं जिनका कि नवगीत आन्दोलन की विकासत्मक भूमिका में अपना विशेष महत्व है :

ज्योत्स्ना (पटना), सितम्बर १९६१, वाचक (दिल्ली), अगस्त १९६१, कल्पना (इंदौराबाद), अक्टूबर १९६३, ज्ञानीदय (कलकत्ता), अक्टूबर १९६३, मुख्यमन्त्रि (लखनऊ) जनवरी १९६४, सम्बोधन (लखनौ) अक्टूबर १९६४, मोरा (जयपुर) पुनः- अगस्त १९६६, साहित्य परिषद, जनवरी १९६७, हरिम, कविता-६ (अजमेर), ज्ञानदो (जयपुर) वर्ष १९६६, नई धारा (पटना), जून १९६६, राष्ट्र वाणी (पुणे) जनवरी १९७१, अन्तराल (लखनौ) कुतार्ह १९७१, सय (जलौगढ़), परिवर्तन -५ (गाजियाबाद) १९७५, जवा -२० (अजमेर) १९७६, जवा -२१ (अजमेर) अक्टूबर १९७७,

कन्या-२ (कलिंग) , अक्टूबर १९७७ , साप्ताहिक -२ (बम्बई) ,
 दिसम्बर १९७६ , कन्या -२ (कलिंग) , मार्च १९७८ , साप्ताहिक-२
 (बम्बई) १९७८ , उत्तर- २ (मोरवापुर) , १९७६ , कला-१२-१३,
 १४, १५ (कन्दौर) १९७८-७९ आदि ।

कन्य प्रसिद्ध पत्रिकाओं में ' धर्मयुग ' एवं
 साप्ताहिक हिन्दुस्तान के लेखों में नवगीत ज्ञानदीप्तन की स्वीकार हो
 नहीं, अपितु नवीनतापूर्ण विचार भी किया है। इस सम्बन्ध में सन् १९६५
 के ' धर्मयुग ' में जो वीरेन्द्र मिश्र (१६ दिसम्बर १९६५) , वासुदेव
 रावो (१६ मई १९६५) , नोरज (५ दिसम्बर १९६५) के प्रकाशित
 वस्तुओं में गीत की मास्यताओं पर विचार किया गया । ' ज्ञानीदय ' (अक्टूबर १९६५) में नवगीत के सम्बन्ध में ' गीत के पक्ष में ' जोर्ज
 से वीरेन्द्र मिश्र का कथ्यन्त सत्य निबन्ध बहुवर्ति रहा । धर्मयुग (२०
 मार्च १९६६) की वासुदेव रावो का लेख ' नया गीत ' तथा विष्णु
 कान्त शास्त्री का एक लेख दो किस्तों में गीत और नवगीत (२५ फरवरी
 ३ मार्च १९६६) प्रकाशित हुआ । गीतकार ' नोरज ' का लेख ' प्रत्यक्षिणी
 की पौढ़ में पिरा गीत ' ३० अक्टूबर १९६६ के साप्ताहिक हिन्दुस्तान
 में प्रकाशित हुआ । २७ नवम्बर १९६६ के साप्ताहिक हिन्दुस्तान में ज्योन्म
 भटनागर का निबन्ध ' आधुनिक गीत का द्वि- विधान ' नवगीत के सित्त
 पक्ष की उद्घाटित करता है।

वीरेन्द्र मिश्र के सम्पादन में बम्बई से प्रकाशित
 ' साप्ताहिक ' प्रीति दिसम्बर १९७६ में नवगीत पर तीन लेख प्रकाशित
 हुए । उन लेखों द्वारा नवगीत के विकास का नये रूप से विवेचन किया

गया। श्री राबिन्द्र प्रसाद सिंह का 'नवगीत जन बोध' की दिशा में 'जीव प्रकाश' का 'स्वातन्त्र्योत्तर गीत काव्य' एवं डा० कौस्तुभ का 'जाय का हिन्दो गीत' जैसे नवगीत की दिशा देने के लिए प्रविष्ट हैं। गीतकार मधुर शास्त्री के सम्पादन में दिल्ली से प्रकाशित 'गीतस्त्रिनी' के ग्रीष्म ऋतु में (१९७७) कुछ महीनेय गीतकारों का प्रश्नोत्तर स्तम्भ विशेष महत्वपूर्ण रहा। 'जवा-१०' में डा० परमेश्वर गुप्ता का 'नवगीत एक दृष्टि' सद्य नवगीत के विकास की प्रस्तुत करता है। 'जवा-११' (सतना) क्यूटबर १९७७ में प्रकाशित डा० नारायणलाल परमार का लेख 'नवगीत : प्रारंभिकता और सामंजस्य के परिप्रेक्ष्य में' विशेष उपयोगी हो नहीं, बल्कि नवगीत के रचनात्मक प्रयोग में उत्पन्न हुए नये खोजों का सूचकांक है।

वापराकालीन स्थिति के उपरान्त नवगीत वास्तविकता को मन्दिर गति के विरोध में 'तन्मया' (नवगीत विशेषांक) कलौगढ़ क्यूटबर १९७७ में प्रेमलोक का 'जब मठाधोर फूटकर बने' (नवगीत : वीरतापमान) सम्पादकीय लेख प्रकाशित हुआ। इस लेख में नवगीत के उन्मादकों द्वारा सन् १९७० के उपरान्त नवगीत के सम्बन्ध में अपनायी गयी उपेक्षा एवं अज्ञानता की नीति के प्रति वाक्योक्त व्यक्त किया।

नवगीत पर नयी पीढ़ी के लेख भी प्रकाशित हुए। 'जवा-१२' में कलाक बरक का लेख 'वाधुनिस्ता के संकर्म में- नवगीत की प्रारंभिकता' प्रकाशित हुआ। 'जवा-१३' में डॉ० लेख देवेन्द्र कुमार जाय का 'नवगीतों का जनवादो रुझान - कुछ प्रश्न' और शैल पंडित का

१- डॉ० प्रेमलोक - तन्मया -१ नवगीत विशेषांक पृ०

२- डॉ० वाग्नेय साहित्य - जवा -१२ पृ० ११ से १४

‘नवगीत’ : रास्ता खर से है ‘ प्रकाशित हुए। कथा-२४ में प्रेमलोक
का सैल ‘नवगीत’ : बाझीर के नये स्वर ‘ प्रकाशित हुआ। कथा-२४
में कलक बन्धन का ‘नवगीत’ : वर्तमान तैवर ‘ प्रकाशित हुआ। उत्तर-
३ (पोरनापुर) से प्रेमलोक का ‘नवगीत’ : नयी ऊर्जा का विस्फोट
सैल हमें। साहित्यमित्रा -२ (बम्बई) १९७८ में ‘ गेयात्मक : नये के
साहित्य के अन्तर्गत तीन सैल प्रकाशित हुए। प्रथम सैल वीरभद्र जर्मा
का ‘नवगीत’ : विकास यात्रा ‘, दूसरा प्रेम लोकर का ‘नवगीत’ :
विकास यात्रा ‘ एवं तीसरा वीरभद्र मि का ‘ स्वातंत्र्योत्तर नवगीत’ :
नई कविता के संघर्ष में ‘ प्रकाशित हुए। ‘ वाङ्मा’ १५/१६ में रत्नाकर
वर्मा ‘ का नवगीत वीर कबीर ‘ तथा प्रेमलोक का ‘नवगीत- शिल्प
के नये प्रतिमान ‘ सैल प्रकाशित हुए। इन सैलों के द्वारा नवगीत की
ऐतिहासिकता पर प्रकाश पड़ता है एवं उसके मूल्यों के प्रति अभिरुचि
बढ़ती है।

कथा गोष्ठियाँ

नवगीत वाङ्मयीन की गति की तोड़ करे
है समय समय पर कथा परिषदों एवं गोष्ठियों का वायोजन विविध नगरों
में होवा रहा, वाकि नवगीत की स्वस्थ साहित्यिक एवं नूतन दिशा प्राप्त
हो गई। रायपुर से प्रकाशित मध्य प्रदेश के प्रख्यात हिन्दी दैनिक ‘ नव-

१- कथा- १३ पृ० ६ से १६ तथा पृ० १६- २२

२- कथा -२४ पृ० ६ से १४

३- कथा- २५ पृ० ८-६

४- सै० कलक बन्धन- उत्तर-३ पृ० १७-२३

५- वीरभद्र मि- साहित्यमित्रा-२ पृ० ४० से ४४

६- सै० राधेन्द्र प्रसाद सिंह- वाङ्मा १५/१६ पृ० ३३-३७

भारत के साप्ताहिक संस्करण के अन्तर्गत कई बार गीत और नवगीत के सम्बन्ध में व्यापक चर्चा हुई और तत्कालीन प्रकाशित हुई।

दिल्ली की हिन्दी साहित्यिकी द्वारा १६ अप्रैल से २२ अप्रैल १९६७ तक पाँच काव्य संयोगों के चौथे दिन गीत - गीतों में रामानंद दीक्षी की अध्यक्षता में डा० खोन्दा प्रमद एवं बात-सम्बन्ध राहो ने नवगीत पर लेख लिखे। कलकत्ता में सन् १९६६ में नवगीत पर दो विचार गोष्ठियाँ सम्पन्न हुई। जहाँ ठाकुर प्रसाद सिंह द्वारा पठित निबन्ध पर डा० बच्चन, बीम प्रभाकर, भवर लाल कल्याणमल्ल लोढ़ा, विष्णु कान्त शास्त्री एवं श्रीधर सिंह ने चर्चा की। दिल्ली की 'प्रज्ञा' की फरवरी बैठक में २ जनवरी १९६६ को नवगीत पर उषा भान सिंह ने लेख पढ़ा और समीक्षक बहादुर सिंह, डा० रामदत्त सिंह, सुधा राणा ने विचार प्रस्तुत किये। फटना में हिन्दी साहित्य संघ के तत्कालीन अध्यक्ष ने २ नवम्बर १९६६ को 'नवगीत वैचारिकी' गोष्ठी आयोजित की गई। भारतीय हिन्दी परिषद् के २२ वें अधिवेशन में भी नवगीत पर गोष्ठी सम्पन्न हुई। बम्बई महानगर में २६ अप्रैल १९७० को 'लोक' द्वारा डा० धर्मवीर भारती की अध्यक्षता में 'युनिवर्सल और हिन्दी गीत' विषय पर गोष्ठी सम्पन्न हुई। इस गोष्ठी में धर्मवीर भारती, गिरिजा-कुमार माधुर, वारिन्द्र सिंह, ठाकुर प्रसाद सिंह, जम्पूनाथ सिंह, राम फरीदर जिपाठी आदि प्रमुख बने।

परिचय

सन् १९७६ में उत्तर को कई वार्षिक 'कविता'

के कठे के में नवगीत गीच्छी (पृ० ६०-६१) विभिन्न महत्वपूर्ण थी। देश-नर को जेक पत्रिकाओं में नवगीत को बालीम्पार, सेल, टिप्पणी वस्तव्य प्रकाशित होती रहे हैं। जमें कल्पना, ज्ञानीदय, धर्मगुण, शास्ता-धिक हिन्दुस्तान, कादम्बिनी, मृगशी, बाक्स, नई धारा, रविवार लहर, प्रगति, उत्कर्ष, रश्मि, इन्द्र, वभिमान, सय, कविता, ज्ञातृदो, वन्दारल, वातायन, ज्ञा, वभिना, प्रीतस्विनी, लुक्क, सज्जिमिया, ज्ञान्या, उत्तर वादि।

उत्तर

नवगीत पर कई पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, जमें प्री० विष्णुकान्त शास्त्री को 'गीत और नवगीत : स्वातन्त्र्योत्तर साहित्य' डा० कपला प्रसाद पाण्डेय को 'जायावादीत्तर हिन्दी काव्य की साप्ता-धिक और सांस्कृतिक प्रवृत्ति' (प्रथम संस्करण १९७२), डा० खोन्ड प्रमर को 'समकालीन हिन्दी कविता' (प्रथम संस्करण १९७२), डा० विनीत गोदरे को 'जायावादीत्तर हिन्दी प्रगति' (प्रथम सं० १९७५) तथा ललित श्रुति को 'नया काव्य नये मूल्य' (प्रथम सं० १९७५) वादि प्रयोगों में नवगीत पर व्यापक रूप से विचार किया गया है। विद्याविनासकों में नवगीत पर शोधकार्य भी हो रहा है।

स्वतन्त्र संस्थाओं में खोन्ड प्रसाद सिंह का 'बाकी लुट्टी नयार' (१९६२), खोन्ड सिंह का 'विराम लक्ष्मी' (१९६५), खोन्ड प्रमर का 'खोन्ड प्रमर के गीत' (१९६३), वासुदेव रावो का 'जीतान्त मेरो है' (१९७२), जीम प्रभाकर का

पुष्प बलि (१९७३) , रिफ रिफ के तीन संग्रह , " गीत विक्रम उतरा " (१९६६) , किरन के पाँच (१९७०) और हराफन नहीं टूटेगा (१९७३) , उपाध्याय मालवीय का " मेकदी और महावर " हरिश्च मादानी का " एक उबलते नगर को कुछ " , हुंवर बैन के " फिर बहुत धरि " और " भीतर सक्ति : बाहर सक्ति " , बकििता का " बादमन्द लवरी " महेश उपाध्याय का " बाँधी बाँधो " बादि बकि बक्ति रहे । पूर्व प्रकाशित कविता संग्रह देखो बेलो, मेरा रूप तुम्हारा वर्णन , किनारे के फे , तथा प्यारीली शीर में " बादि ये नवगीत को महत्वपूर्ण भूमिका है।

कुछ नवगीतकारों के सम्पिल नवगीत-संकलन भी प्रकाशित हुए हैं। इनमें कविता- १९६४ (बल्लभ राजस्थान) , गीत- १ एवं २ , १९६५ एवं १९६७ (दिल्ली) , सातवें पलक के उभरते नव-गीतकार, सम्पादक लक्ष्मीकान्त शर्मा (मद्रास, १९६६) , पाँच बीड़ बाँहुरी श्री ० चन्द्रदेव सिंह १९६६ (कलकत्ता) , परिचित -५ सम्पादक कृष्ण कुमार शर्मा -१९७५ (गाजियाबाद) , अनन्या - १ एवं २ सम्पादक प्रेम शंकर १९७७ एवं ७८ (बल्लभ) बादि प्रमुख रूप से बक्ति हैं।

एक प्रकार की पलकों के फल्य उभरता हुआ नवगीत बान्दीस निरन्तर नई ऊँचाईं छेकर जागृत हो रहा है। नवगीत-कार निरन्तर लिख रहे हैं और गीत में नये नये प्रयोग कर रहे हैं। निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि नवगीत काव्य के क्षेत्र में अपना बक्षितत्व

१- प्रेरक- नवगीत विकास यात्रा - सवित्रियाना-२ (बम्बई) १९७४ है

४८ के आधार पर

स्थापित कर चुका है और उसका विशेष महत्व है।

(६) व्याख्या

नवगीत की परिभाषा एवं व्याख्या विद्वान् समोदायों एवं नवगीतकारों ने विविध प्रकार से की है। प्रारम्भ में नवगीत की विरोध की स्थिति से गुजरना पड़ा। इसलिए नवगीत के विरोध में बलवत्तम प्रयास होते हैं। नवगीत की पुरानी पोढ़ों 'नवगीत' की नयी कविता से निःशुद्ध मानती रही है, जब नवगीत की नयी पोढ़ों 'नवगीत' की नयी कविता से बल। वस्तु 'नवगीत' के संदर्भ में कुछ व्याख्याएं प्रस्तुत हैं :

- 'नया गीत' या 'नवगीत' आधुनिक जीवन बीध की एक ऐसी ही अभिव्यक्ति है जिसे युगीन स्थिति-संदर्भ में कही हो स्पष्टता - सहजता के साथ पहचाना जा सकता है।

- नवगीत एक आधुनिक शब्द है। 'नव-गीत' की नवीनता युग-अपेक्ष्य होती है। किसी भी युग में नवगीत की रचना हो सकती है।

गीत रचना की परम्परा पद्यति और भाव-बीध की होकर नवीन पद्यति और विचारों के नवीन आवाजों तथा नवीन

१- बन्धुविम सिंह - पाँच बीड़ बाँधुरी पृ० ६

२- लक्ष्मण सिंह - कविता ६४ पृ० ७- ७६

भाव- धराणिनी की वसिष्ठता करी वरि नोत जब भी वीर विर युग मे भी लिखि बाकी नवगीत कहलायी ।

- नवगीत के दो विकल्प है, प्रथम- लोक- संस्कृति वीर जनभाषा के बली नोर से नागर भाषा को नितार देना, अर्थात् एक विकसनीय शैली को पुरी को पुरी वसिष्ठता का उत्पन्न कर डालना । दूसरा विकल्प है कि हमारे सम्प्रदायिक बोध में एक सौन्दर्यात्मक स्थानान्तरण (एस्थेटिकशिफ्ट) हो जाये ।

- कृतुति की सज्जार्द काश्च कृतुति की अपनी विशिष्टता, नवीन- सौन्दर्य- बोध, आकार- लुप्ता , नवीन विषय, प्रीति, उपमान योजना इनको (नवगीत) सामान्य विशिष्टता है। ये गीत वहाँ से उठे हैं, वहाँ को जमाने के लक्ष के लिए हुए हैं। काः इन गीतों के लहरी, गवर्न, व्यक्तिगत, सामाजिक, प्रेम, प्रेक्षार प्रकार की सम्भवनाओं के विभिन्न स्वरूप कविता के व्यक्तित्वों वीर मानस- उत्कारी के अनुसार लपित होती हैं। दूसरी बात यह है कि नवगीत में बाते लक्ष पिच्छता नहीं है, अन्तर की दमक है।

- नवगीत वात्साभिष्यक्ति तो है, पर वह अपनी रान- विरानी का भाव उत्पन्न नहीं है। नवगीतकार प्रीति, व्यक्ति, देश वीर देशतर विषयों का संस्पर्श करते हैं। उनका विषय- बोध उदात्त है, इसलिए सम्पूर्णता की व्यक्ति की सोचावों में बाध होती है।

१- डा० रमि कुन्नाल मेव - कविता ६४ पृ० १२८

२- डा० रामदत्त मि- कविता ६४ पृ० १२७- १२८

३- डा० कपला प्रभाद पाण्डेय- आयावादीतर हिन्दी काव्य की सामा-

मिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पृ० १७७

- 'नवगीत' भाषा का सख्त उच्छ्वास नहीं है। वह बच्चों की लीरियाँ के लिए नहीं लिखा जाता। वह विचार-शीलता और बुद्धि विज्ञान है। वे शारीरिक और मानसिक दोनों की सामर्थ्य के प्रतीक हैं। वह आयावादी गीतकारी और उर्दू शायरी की नीति से पर नज़ाब नहीं डालता। वह कथार्थ और संयुक्त मानव का आदर्शकार है।

- 'लक्ष्मी' के नये प्रयोग नवगीत की एक नया रूप देती हैं, सभी तो नवगीत विन्ध्यी धरातल पर होती हुए भी आयावादी गीत नहीं और आधुनिक बोध के समावेशी होती-हुर भी ये नये कविता नहीं हैं। यह पूर्णतः सत्य है कि नवगीत में मौलिक लक्ष्मी से आविष्ट, लीक्युनी से विभिन्न बोधन की कल्पनाएँ ही नहीं नगरबोध में भीगे जाने वाले बोधन की कलास्था, कृष्ण, छुटन, लोभ आदि विभिन्न हैं।

ये बहुत ही स्पष्ट होकर यह कहना चाहता हूँ कि 'नवगीत' को 'नये कविता' की 'कथार्थ भाषा' और 'कथार्थ' को विस्तारक विधा है।

- 'नवगीत' गीत का ही उद्गारकारी परिवर्तित रूप है। काव्य महानगरी की महामारी बता है प्रत्येक लम्बाकार परिवर्तित है। गीत भारत की व्यवस्था से उत्पन्न संसार, छुटन, मातंग

१- डा० कला प्रभाव पाण्डेय- आयावादीस्तर विन्ध्यी काव्य की सामाजिक

सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पृ० ३७७-३७८

२- नवगीत - अन्तराल २६ जुलाई १९७१ पृ० १०

३- और कथार्थ- लहर - विद्यम्बर जनवरी १९६७ पृ० ५६

की उपमा है। गीतकार उसी यवार्ण की वाणी प्रदान करता है।^१

- "नवगीत कठिन वस्तु में विकसित हिन्दी कविता का वह नया फल है जिसके रचनाकार एक ही समय में प्रतिकूल और तटस्थ दोनों हैं। ये रचनाएँ शिल्प विशेष के प्रतिवाग्रही नहीं हैं। निजी परिवर्तित और अनुभूति विशेष के अनुसार जो भी काव्य रूप ही संभव है, ये कवि उसी का प्रयोग करते हैं।"

- डा. : नवगीत, अपनी विविधताओं वस्तु तथा सहज स्थाकृति में, वह सब तो है ही, जो नयी कविता है, अतिरिक्त उसके नवगीत वह भी है जो नयी कविता नहीं है। नवगीत में तब एक परिवर्तित तब, सहजता, जातीय बोधन से सीधे सम्पृक्ति, अद्वितीय भावीपूत हृदय, ताजगी पर विम्व प्रतीक उपमान तथा टटकी भाषा और व्यक्तित्व पर पड़ी युग की गति के दबावों की अभिव्यक्ति है।^२

- नवगीत नयी कविता या परम्परावादी गीतों की प्रतिक्रियास्वरूप नहीं आया है। वह हिन्दी गीतों तथा नयी कविता को सभी समर्थताओं एवं सम्भावनाओं से समृद्ध शिल्पकृत तथा विचारकृत नवीन बोध है।^४

- नवगीत अनुभूत्यात्मक स्तर पर भाव को

१- बीम आकर - स्वार्थन्योत्तर गीत काव्य - अध्यायिका-२

६० बोरिन्द्र मिश्र १०६

२- वही १०६

३- महिस्वर तिवारी - कविता ६ (कलर) १० ६४-६५

४- सुभाष प्रसाद पोष- कविता -६ (कलर) १० ६७-६८

भीनी जा रही चिन्दनी को सख और स्यात्मक अभिव्यक्ति है। बोधन और बोधनगत परिवर्तन की निश्चिन्ता लक्ष्मी संभावनाओं का दिशा बिन्दु है। यह राणी को उस अन्तर्गत संस्थिति से भी संश्लिष्ट है कि भीती में वीर्य नहीं किया जा सकता और न उसे पता चले तथा सम्पूर्णता में अभिव्यक्ति करे का अन्तम माध्यम ही सम्भव गया ।

- नयी कविता की तरह यद्यपि नवगीत एक जगत तो नहीं है, तथापि वह भी एक वाच्योक्त के रूप में हो जाना जा रहा है^२।

- नवगीत ने किसी भी धारणा को गले नहीं लगाया, वह समय के अनुरूप अपना स्वल्प धारण करता रहा । इसीलिए नवगीतकार सख हीकर मार्ग चीट कर जाता है, क्योंकि उसके पास वैचारिक भूमि एवं चिन्तक नयापन है।^३

- नवगीत सम्कालीन भारतीय कविता को एक ऐसा पहलान है, जिसने गीत की संभावना की विज्ञान और टेक्नालाजी के निरन्तर बढ़ते अमानवीय दबावों में भी तद्रूपण बनाये रखा है- लेकिन अन्तः तात्पर्य यह नहीं है कि नवगीत सम्कालीन चिन्दनी को क्लृप्ताष्ट, राक्षसोक्ति के पारिस्थिकि इस, वार्तिक विहङ्गनाओं और अनुनातन तत्त्वोक्तियों के साथ साथ देह और भोगवादी संस्कृतियों से उसकी कृष्ठा, पुष्टन, संवास, याचिका महानगरों का मोह मरा जीतापन और

१- रघुनाथ प्रसाद घोष- कविता -६ (तत्त्वर) पृ० ६७-६८

२-नारायणलाल परमार- नवगीत : प्राथमिकता और सामंजस्य के परिधिष्य में - ६० वाच्योक्त साहित्य - कथा -११ (अन्तः) पृ० ००

३- प्रेम लंकर- नवगीत : वाङ्मय के नये स्वर- कथा-१४ पृ० १२

मानसिक तनावों के परिधारी से होकर गुजरने में परिलक्ष्य करता है, और वह मान मनुष्य को कोमलतम, मार्मिक रोमानो, वीरसि भावनाओं को अभिव्यक्त करने वाली श्रृंखला को है।

- नवगीत अपनी परम्परा से जुड़ी हुई एक जीवनी शक्ति है। नयी कविता को तरह पश्चिम के दर्शन पर आधारित जायावित्त मूल्यों का प्रतिबिम्ब नहीं वास्तविक नई अनुभूतियों का निबन्ध समित स्वर है।

- नवगीत वाधनिक है। न वह किसी को अनुकूल है और न वह ज्ञात बोधो है। अपनी मिट्टी अपनी मौसम में खिलने वाला एक पुष्पवर्ति है। साहित्यिक ज्ञात के कोलाहल में गुंजी वाला शनि गंधार है। जीवन में जो कुछ टूट रहा है, जड़ रहा है, गीत में वह भी है। जो बन रहा है, सब रहा है, वह भी है। व्यस्तता और संसार का विचार गीत में झलकता मिलता तो अन्तर्कला का व्यूह रूप भी है।

उपरिलिखित समग्र व्याख्याओं से निष्कर्ष प्राप्त होता है कि नवगीत की विरोध की स्थिति से गुजरना पड़ा है। प्रथम तो नवगीत की नयी कविता को गीत परम्परा से विकसित माना गया। कुछ विद्वानों ने जायावादी गीतों का परिष्कृत रूप माना। कुछ ने नयी कविता के समानान्तर काव्यधारा का स्वरूप माना है।

१- स्वच्छ बच्चा- नवगीत की प्रारंभिकता - कला - १२ पृ० ११

२- वीरेन्द्र मि- स्वातंत्र्योत्तर नवगीत : नयी कविता के उदय में
संक्षिप्त- २ पृ० ५१

३- वीरेन्द्र मि- स्वातंत्र्योत्तर नवगीत- नयी कविता के उदय में-
संक्षिप्त- २ पृ० ५२

परन्तु वाच के नवगीतकार नवगीत की नयी कविता, शायानादी गीत तथा परम्परागत गीत से बलग मानते हैं। उनका मत है कि वह किसी को नकल नहीं है और न उस पर विदेशी प्रभाव है। नवगीत लो धरती की सीपी गंध को उपज है। वह व्यक्ति की टूटन, छूटन, राग-द्वेष को सशक्त व्यक्ति है। ग्राम, कंधे, नगर तथा वादिय बातियों के वास्तविक गीतों की ताजा स्वरुहरी है। नवगीत महानगरी सभ्यता से लेकर व्यक्ति एवं समाज के संघर्षों की गाथा है। व्यक्ति की वैयक्तिकता स्वर्ण वस्तुपुष्प है। प्रेम के प्रति नया दृष्टिकोण सर्ववर्ध-वी के ताजा संदर्भ नवगीत के विस्तृत फलक पर उक्ति रहती है।

वस्तु, नवगीत व्यक्ति के राग-विराग, श्वास, छूटन, टूटन, वाङ्मय, रोमानियत तथा वास्तविक एवं महानगरीय जीवन की यथार्थ अनुभूतियों का सत्य रूप में प्रकाशक है। इसमें जीवन की विजयता तथा दैनिक जीवन की समस्याओं की लता जीता प्राप्त होता है।

(४०) नवगीत में व्यक्तिवादो दर्शन का स्वरूप

नवगीत नयी कविता की परिस्थितियों की उपज है। अतः व्यक्ति की स्थापित करने की समस्या नवगीत में भी उपस्थित रही है। व्यक्ति-सत्ता, व्यक्ति-हित, वैयक्तिक वास्तव्य, वास्तव्य, व्यक्ति-स्वातंत्र्य आदि नवगीत में भी नयी कविता की भाँति विकसित हुए हैं। डा० कमला प्रसाद पाण्डेय ने नवगीत के पाँच तत्त्व

घोषित किये हैं- ये तत्त्व- समय, गेयता, संकल्पता, वसिष्ठता, वैयक्तिकता तथा रागात्मक बाँधिकाता वादि हैं। नवोत्पन्नः व्यक्ति-वादी रचना है। नवगोत भी उसी भिन्न नहीं। नवगोत में वैयक्तिकता व्यक्ति की जेतना का नूतन उद्घोषण है जो कि ज्ञेयः ज्ञेयः व्यंग्यपरक नवगोतों के रूप में विकसित हुई है।

नवगोतों में अनुभूति की ईमानदारी व्यक्ति के निजी अनुभव पर आधारित है। नवगोत में अनुभूतियों की वैयक्तिकता नितान्त स्वाकोष कास्था, टूटन, छूटन, निराशा वादि लेकर प्रकटित हुई है। नवगोत में व्यक्ति के व्यक्तित्व के प्रति नूतन स्थापनाएं प्राप्त होती हैं। जैसे नयी रोमानिया, तावा टटके उपमान, प्रोक्त एवं विम्वरों का प्रयोग वैयक्तिकता की भूमि पर हुआ है।

संक्षेप में नवगोत में व्यक्तिवादी दर्शन नयी रोमानिया, सौन्दर्य-बोध, नये व्यक्ति के व्यक्तित्व का स्थापन, टूटन, छूटन, व्यंग्य, विद्रोह, वैयक्तिक जेतना का नूतन स्वर, जहाँ के प्रति वास्था वादि लोक रूपों में विकसित हुआ है। नवगोत व्यक्तिवादी दर्शन की सामाजिक अभिव्यक्ति के रूप में विकास प्राप्त करता है। यद्यपि में नवगोत वैयक्तिकता को सहज अभिव्यक्ति है।

(५) कविता तथा अन्य काव्य प्रवृत्तियाँ

(क) पृष्ठभूमि

हिन्दी कविता सन् १९६० ई० के उपरान्त

१- डा० कृष्ण प्रसाद पाण्डेय- हायावादीतार हिन्दी काव्य की सामा-
जिक और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पृ० २२

विभिन्न रूपों में प्रतिकल्पित हुए। इस कविता ब्रह्मगीतों को 'साठो-
त्तरी कविता' के नाम से विलिखित किया गया। सन् ६० के उपरान्त
कविता ब्रह्मगीतों को बाद से जागई। कविता का बहुत बड़ा
उठा और पूरे को तरह भारत में व्याप्त हो गया। तदुपरान्त 'विशिष्ट
विशिष्ट को कविता' का दर्जा प्राप्त हुआ। इसी प्रकार: अस्वीकृत
कविता के नाम से भी विलिखित हो गई। सन् साठ के बाद नये नये
कविता का कवि अपनी पुरानी बातें बताता रहा। 'वाग्विद के पार
दार पर लई होकर उसे बाद का मुँह टेढ़ा हो दिखाई पड़ा। इसी
सन् ६० के बाद पास को नये कविता के बाद को कविता उसे उसकी
उपलब्धियों पर निदान, कुरूपने लगी। सन् ६० के बाद पास को कविता
और नये कविता में प्रतिद्वन्द्विताकी स्थिति है। नये कविता ने उसे
कविता मानने से स्वीकार किया, पुराने पौढ़ों ने इस पौढ़ों के भाव बीध
को मुँठलाना चाहा, राजनीतिज्ञों ने उसे युवा आक्रोश स्वरूप बनाने का
प्रयास किया, साहित्यकारों ने उसे अस्वीकार किया (ये अपना अस्वी-
कार भूल चुके थे) परन्तु नये कविता को तिरपी नवीनता ने उनके भाव
पक्ष को स्वीकृत किया, प्रजातंत्र ने अपना दृष्टिकोण स्वीकृत किया, पुराने
पौढ़ों ने अपने आदर्श के लोकोपदेश दिलाये और साहित्यकारों ने हट-
बाजो करने पर विवश किया। उन्होंने समस्त रूपों में उत्पन्न हुआ। सन्
६० के बाद पास का अस्वीकृत साहित्य- अस्वीकृत कविता।

साठोत्तरी कविता, कविता, अस्वीकृत

१- सतिश शुभत- नया काव्य : नये मुख्य १० २५६

२- वही १० २५६

३- डा० जीम प्रकाश कदम्बी- नये कविता के बाद १० २६

कविता नाम सन् ६० को कविता के लिए प्रचलित हुए, परन्तु उनकी परिस्थितियाँ समान ही हैं। सन् ६० के उपरान्त भारतीय राजनीति ने कवि को बोधव्यक्तता प्रदान करने के लक्ष्य पर उसके चरित्र को बंध दिया। कश्मिर को योक्नार और नरिबाजी के सम्बन्धों ने आजादन के लक्ष्य लौट्टे पुन बनाये। धीरे धीरे वस्तुओं, भावनाओं का हस्ता हस्ता गया। जनता को आर्थिक स्थिति बंधी हो रही। इसी देश में गरीबी, भूकम्प, बेकारों भुक्तमरी, काल, नाद, साम्प्रदायिकता, बातिवाद, नेताओं का फकीर, विदेशी कण, बोनी बाहुमण बादि विकसित हुए। बोन से हुए संघर्ष ने भारतीय जनमानस का मोर्चन हुआ। तालकंद और कच्छ के सम्बन्धों कागजों निकले, इसी बुद्धिजीवियों के मन में आन्तरिक और बाह्य कुरक्षा की भावना व्याप्त होने लगी। राज्यों को संविद सरकारों के कारण राजनीतिक अव्यवस्था काया राम गया राम को गंदी गलियों में उतर आई। इसी जनता दुःख होने लगी। धार भूकम्प, बेकारों दिन प्रतिदिन बढ़ती रही। राजधान, बिहार, उड़ीसा, पूर्वा उत्तर प्रदेश में बनावृष्टि से फसल नष्ट हुई। इसी काल को स्थिति उत्पन्न हो गई। किसान, मजदूर पिता रहा। उधर कश्मिर के 'सम्बन्धिता', गरीबी हटाओ नारी भी फूट निकले। सरकार का प्रत्येक कार्यालय प्रचटानार का गढ़ बन गया। प्रचटानार की की मंत्रियों का सहयोगी बन गया। गुलाबी बना काण्ड (मध्य प्रदेश), लोरा पीटाता (उत्तर प्रदेश), सादही काण्ड (राजस्थान), भाँकटा बांध में दरारें बादि ने भारतीय प्रचटानार का मुल दिलाया। मंत्रियों के विरोध में 'जन कमोशन' बने। लसोमद, कलमदावाद, फिरोबाबाद, बिहार बादि में साम्प्रदायिक दंगे हुए। आम व्यक्ति

फुट पाय पर जीवन खिताने लगा और शेष तथा विगन आत्मा के सदस्यों के मत्तों में निरन्तर वृद्धि होती रही । पहिले के नाम पर भुली मरना कई पिलों का प्रतिवर्ण का कार्य हीनया । इसके फलस्वरूप इतिवोधियों को विचार करने का समय छोड़कर बस्योका एवं नकार के प्रति बाधना प्रकट हुई । साहित्य की विविध विधाओं में विद्रोह के तैयार दृष्टिगोचर हुए । लठे जस्वीकृत कविता, कविता वादि विविध प्रकार के काव्य वाच्योक्तों का जन्म हुआ । इन कविता के नये वाच्योक्तों ने व्यक्तिवादी जीवन-दर्शन को अपना मुख्य आधार बनाया ।

जमरोका से प्यारि गुमा कविस्तेन गिषर्क ने विद्रोह की कविता में नयी प्रेरणा दी । उनके परम्परा-मंचक कपीरी जीवन से गुमा कवियों के मन में आकांक्षा जागी । वे मुल्लो पोढ़ो, नाराय पोढ़ो, हूड पोढ़ो, मुकुन्द पोढ़ो, बीट पोढ़ो वादि रूप में व्याप्त होने लगे । इन्होंने नामों से कविता को अभिविष्ट किया जाने लगा । लुका प्रमाण यह है कि सन् १९६२ में कलकत्ता में गिषर्क जाता है और रातों-रात में कलकत्ता साहित्य में दो दरारें कड़ जाती हैं। इसके प्रमाणित होता है कि साठोत्तरी कविता, परम्परान्त साहित्यकार की ज्ञा, कला, कनाष्टी, प्रीपति, परम्परान्त पोढ़ो को नैपुण्य, ज्ञा-धुनिक व्यवस्थाप्रिय मानती है। वही अपने को वाधुनिक और परम्परा-मंचक के रूप में परिचित कहती है। कविता के इन काव्यान्वोक्तों में कविता विशेष बर्धित रही है, तथा समस्त वाच्योक्तन को प्रायः उची निम्नन से प्रेरित है। अतः यहाँ 'वक्त्रिता' के स्तर में वर्णों को पा रही है।

(वा) कविता : प्रेरणाश्रोत

‘कविता’ (एष्टो पीयूषो) नहीं है, अपितु नये काव्य वास्तुसूत्र का स्वयम् है। इसके प्रेरणाश्रोत वह परिस्थितियाँ हैं जिनमें ‘जीव’ है जो समाज एवं व्यक्ति के आनुवंशिक व्यास है। वास्तुनिष्ठा के कारण नगरीय जीव ने मूल्यों, परम्पराओं और मर्यादाओं को तोड़ा है। इसके कारण कथार्थ, वादिम वाचना का विप्लव, नारी-पुरुष के यौनाचार का कुपुनित स्वयम्, यौन संदर्भों का उद्घाटन आदि इस कविता में विकसित हुए। सामाजिक वास्तव से गोपनीय स्तरों को सामने लाना। नगरीय समाज ने काम-कृष्ठा, वास्तुनिष्ठा, नारी-पुरुष के गुणगानों को उपाट भाषा, कुकान्त, विचारी काव्य गहन भाषा जन्मा जन्म बन गई। इनको भाषना सामाजिक यौन कृष्ठा के वैयक्तिक भाग के भागी हैं। अतः ये व्यक्तिवाद एवं वस्तुवाद से भी प्रेरित हैं। इनके काव्य का मूल दर्शन भोगवादी दर्शन है। ये मूल्य रूप से भोगवाद, व्यक्तिवाद एवं नकारात्मक दर्शन से प्रेरित रहे हैं।

(ब) कविता : नामकरण

कविता के नामकरण के संदर्भ में डा० अयाम परमार का ग्रंथ ‘कविता और कला संदर्भ’ में कुछ विचार प्रामाण्य होते हैं। उनका मूल निम्नलिखित है :

“ ‘कविता’ शब्द जहाँ तक मुझे लगता है, नयी कविता के पदाधारों के बीच बोटनोक डर को उत्पन्न कविताओं

का उपहास करने की दृष्टि से पहले फल प्रस्तुत किया गया है। इस बात में फिर भी कोई मजबूत नहीं कि इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग किसी, कब और क्यों किया। जालीजना के स्तर पर नाम का उपयोग मात्र पारंपरिक प्रामाणिक करने के लिए है, और 'कविता' शब्द का पूर्वार्थ कविता से निश्चय हो उस क्षणावधि की स्थिति की पुष्ट करता है। पारंपरिक के नाते कविता समग्रता विद्वान, विद्वान, जगद् एवं वीरमान्तक अनुभूति की अभिव्यक्ति है।

उक्त कथन से यह तथ्य प्राप्त होता है कि डा० जयाम परमार इस विषय की टालना चाहते हैं, जबकि 'कविता' पत्रिका का नाम जयाम स्वयं डा० परमार ने किया है। इसके यह परिणाम प्राप्त होता है कि सम्भवतः डा० जयाम परमार ने ही 'कविता' नाम अभिहित किया है। 'कविता' पत्रिका २० दिसम्बर १९६६ में प्रकाशित हुई। विषय के प्रवर्तनकार डा० जयाम परमार तथा प्रस्तावक के रूप में गिरिजाकुमार माथुर, भास्वर्णना कृष्णास तथा भास्कर माथुर हैं।

(हं) वस्वीकृत कविता : नामकरण

हावड़ा से दिसम्बर १९६६ ई० में 'कैप्टन' नाम की पत्रिका प्रकाशित हुई जिसका सम्पादन राहो ईकर ने दिया। इसमें जनश्याम रैन का लेख 'वस्वीकृत कविता : प्रश्न और समाधान' में वस्वीकृत का मुख्य नाम 'कविता' पत्रिका में दिया, बताया गया है।

१- डा० जयाम परमार- कविता और कला संदर्भ पृ० १३

२- डा० जीम प्रकाश कवस्थी - नयी कविता के बाद पृ० २३

एक सम्बन्ध में पराम्याम रत्न का विचार है- 'क्योंकि वाच का वस्वो-
कारित कभी तो स्वीकार हीना हो। जिस रत्ना में इस प्रकार की
स्वीकृत को पृथक्ता निहित है, वही वस्वोक्त - रत्ना है- चाहे
कविता ही चाहे कथानो।' इस धारा का प्रसृत ग्रन्थ श्रीराम श्रुत के
'स्वीकृति वस्वकार' की स्वीकार किया है।

(उ) कविता एवं वस्वोक्त कविता : व्याख्या

सन १९६० के बाद यथार्थ जीव का यह
वाग्रह और भी बड़ा और वर्तमान को विवेकति की उद्योग में विभिन्न
करी के उद्देश्य से कविता का जन्म हुआ और युक्त्या, सुप्ता, वि-
म्वत्ता वादि कथाधुनिक प्रवृत्तियाँ सिन्धी कविता के क्षेत्र में उभरी
लगी। यह वास्तव में वराकता की स्थिति है जिसके लिए नई कविता
के वास्तविक में विज्ञापित निजीधात्मक सिद्धान्त जिम्मेदार है।

- कविता ने अब तक जो भी दिया है,
उसे कितना ही तटस्थ रहकर मूल्यांकन करे यही कहना पड़ेगा कि दरअसल
कविता कृकविता है, धीला है, जहृयम्भ है, विज्ञापन है, प्रतिदि पाने
के लिए लगाया गया एक पीया नारा है और समाज की परिम-लया
करने का पृथित प्रयास है।

‘व’ में कुरणा की प्रतीति भी कतही

१- केवटस- दि० १९६६ पृ० २१

२- डा० गिन्द्र- नयी समोदा : नती संवर्ध

३- डॉ० गविन्द्र तिवारी - डा. म. न. नववरी १९६६

ख्यात से अधिक भाषित नहीं होती। किन्तु तथ्य यह है कि कविता सम्पूर्ण रूप से निजीय काव्य नहीं है। समस्त बारीकी के बावजूद वास्तविकता यह यह है कि 'कविता' शब्द कृष्णः हिन्दी कविता में उसी तरह नये क्षेत्र के लिए एक पारिभाषिक शब्द हो जाता है। काव्य कविता कविता विरोधी शब्द नहीं रह गया। उसे 'एष्टी' या 'नान-पीष्टी' कहना उतना ही गलत है जितना कि यह बारीकता करना कविता में कविता नहीं है।

- कविता व्यापन की प्रक्रिया नहीं है।^१

- कविता उन तीनों घटकों के योग से उत्पन्न है। यह कालधर्मी कविता है, जिसके लिए कई कारण उत्तरदायी हैं। उनका बोधा प्रभाव कविता की व्यंग्यारिक्ता से विलग करने की प्रतिक्रियाओं में घटित हुआ। कविता ने अपनी समय की प्रकृति उन काव्योपचारिकताओं को नष्ट किया जो 'नयी कविता' में शब्द हो गयी थी।^३

- कविता घाट के बाद की उस व्यापक प्रकृति का बोध कराती है जिसे चिन्तित करने के लिए समय समय पर नये नाम दिये जाते रहे हैं। नया कवि पूर्ववर्ती काव्य परम्परा से कई मानों में कट गया है। उसकी देखभाल अनुसृति किन्तु भीतर हीतर से उत्पन्न हो

१- डा० श्याम परमार- कविता और कला संघर्ष - पृ० १

२- उपरिष्ठ १० ३

३- उपरिष्ठ १० १३

गयी, बल्कि वह जानी उच्छ्वस नहीं, स्वीकृत मान्यताओं के नाते जानी उपराधी होगई कि उसमें उसका स्निग्ध पदा सदा के लिए समाप्त होगया। कामुक विह्वलता तीसरे व्यंग्य और आर्क विह्वलनाओं में बदल गई। अब काव्य को महरो सत्ता वादिम कण्ठता और विद्रुप को और जाने लगी।

- कविता काव्य का उपरुक्त मूढ है। अपनी पोछे की कविता के पाठ्यक्रम में यों है कि तार सप्तकोय स्वर को ताशोर की कुछ समय तक 'वेरिंग' प्रभाव देती रही और बाद में मन्त्रसंयोजक में आकर निरर्थक कलाबाजियाँ दिलाने लगी, वह कविता में आकार वनिषद और निरर्थक होगई। उसका 'टेका' बदल गया। उसका प्रभाव बदल गया। इसलिए अधिकतर नयापन काव्यक हर्षाधि और धेड़ंगा लगता है, क्योंकि वह परम्परा-विच्छिन्न है।

- धोपने पर 'कविता' और 'नयी कविता' बाधारण उच्च प्रतीत होती हैं। कविता शब्द में 'व' शब्द कीदने के उक्त दोनो शब्दों के बाधोपन से मुक्ति मिलती है। लेकिन वस्तु तथ्य यह है कि कविता का 'व' निष्पीड बोधक नहीं है। 'कविता' शब्द अपनी जाय में पाठिमाणिशकशब्द के रूप में स्वीकृत किये जाने की स्थिति में प्रयुक्त किया जा रहा है।

- कविता वस्तुतः कविता के ऊँचे हुए

१- डा० श्याम परमार- कविता और कला संदर्भ पृ० १२

२- उपरिषत् पृ० २२

३- उपरिषत् पृ० २५-२६

लोगों की अभिवृत्ति है। यह जब वैराग्य बाधा नहीं, नहीं ऐसे लोगों की प्रतिक्रिया है- किन्हीं 'वाइन्स्टेडी' की वास्तविकता है।

- अस्वोक्त कविता की कविता में विषय का बोध, मानवीय भविष्य वास्तविकता, वास्तविक स्थितियाँ, यन्त्रण की यातनाएँ और निराशा, विह्वलता की अभिव्यक्ति, विकृत परिस्थिति व्यंग्य और वास्तव संसार की भयावहता जानना यदि है, तो वह विस्तृत पोढ़ी या बोटमिकों की विषय चोटकार या नष्टक सिक्काइस्ट नहीं है, बल्कि अपनी परिस्थिति में मूल्यों के सीखेपन, दृष्टियों के व्यापक विचारों एवं जनमों की स्थितियों की तटस्थता के कारण है।

- अस्वोक्त कविता में वास्तविक वास्तविकता को पहचान है उससे पराक्षिप्त होने की स्वोक्ति नहीं--- वास्तविकता की परिस्थितियों का अनुभव है, वास्तविकता की सत्यता नहीं, भूके रहने की विवशता का बोध है विवशता की स्वोक्ति नहीं।

उपरिस्थिति अस्वोक्त कविता एवं अस्वोक्त कविता की व्याख्या की जा सकती है कि ये वास्तविकता परम्परागत सामाजिक पर्याप्तता, कविता के परम्परागत वास्तविकता, तत्कालीन परिस्थिति, वास्तविकता एवं समाज से विद्रोह करते हैं। इनमें व्यक्तिवादो वर्तन का नकारात्मक, भोग-वादो एवं विद्रोह का भाव अधिक स्पष्ट हुआ है। अस्वोक्त एवं अस्वोक्त

१- डा० रम्याम परमार- अस्वोक्त कविता और कला संकल्प १० २६

२- अनन्ताम रज- अस्वोक्त कविता : और समाधान केन्द्र दिनांक ६६

१० १६

३- विमल पाण्डेय - वर्ष- ३ , डा० वीमलकांत कवस्थी- नयी कविता के बाद १० २६

का जलन जलन बान्दीसन जला, परन्तु कानपुर के श्यामभारायण ने जनवरी १९६६ में 'साम्प्रतिक कविता' के अन्तर्गत कविता, अस्वीकृत कविता, छिन्न कविता, विद्रोही कविता, अन्यथा कविता, गौर कविता, कोलाहल कविता आदि की रचना किया है। ऐसे कविता और अस्वीकृत कविता का संघर्ष होता है। अतः कविता नयी कविता नहीं है, बल्कि नयी कविता से जलन एक वास्तविक 'नयेपन' का उन्निष्ठाण है, जिसमें बरसोस यौनपरक दृष्टिकोण के संघर्ष में मुक्त प्रयोग है।

(ऊ) विकास-यात्रा

कविता का प्रमुख ग्रंथ डा० श्याम परमार द्वारा रचित कविता और कला संघर्ष' है। सन् १९६३ में जगदीश कर्तुर्वदी ने 'प्रारंभ' नाम का काव्य संकलन प्रकाशित किया। जिसमें जगदीश कर्तुर्वदी, केशव वाजपेयी, राजकमल चौधरी, के. श्याम परमार, राजेश सक्सेना आदि कवियों की कवितारें उपस्थित हैं। ग्यालियर के गोविन्द राय के सम्पादन में 'कविता' पत्रिका प्रकाशित हुई जिसके बाद में डा० कोमल सिंह चौधरी भी सम्पादक रहे। जयपुर के ललित कुमार की वास्तव के सम्पादन में 'कृति परिचय' का कवितार्किक जून १९६७ में प्रकाशित हुआ। सतोश बपाली का कविता संकलन 'एक और गंगा बादमी' मार्च १९६७ में प्रकाशित हुआ। इसके उपरान्त डा० जगदीश कर्तुर्वदी के सम्पादन में विषय एवं 'निजीय' काव्य संकलन प्रकाशित हुए। इस प्रकार कविता सन् ६० के बाद उभरे काव्य बान्दीसन का एक स्वयं है।

वस्वोक्त कविता के सम्बन्ध में हावड़ा से प्रकाशित राहो रीकर के सम्पादन में 'कैवट' नाम की पत्रिका का नाम बर्तित है। यह दिसम्बर १९६६ से प्रारम्भ हुआ जसमें राजकमल जीधरो रघुनाथ घोष, कलकत्तावासी आदि कवियों की कविताएँ प्रकाशित हुईं। जो राम तुलस के 'मरी हुई बीरल कैसाय सम्भोग', तथा 'लकीसर्वा अन्धकार की महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। तत्पश्चात् से सुशील कुमार ने 'न' नाम की पत्रिका प्रकाशित की जिसमें वस्वोक्त का प्रचार किया। विमल पाण्डेय ने 'जय-३' तथा बबरीन विस्नीई और नोत्तम ने 'जो' विशिष्ट 'क' में वस्वोक्त एवं वस्वोक्त पर विचार किया है। इस प्रकार वस्वोक्त कविता का भी अपना वैशिष्ट्य है।

(२) समकालीन कविता के अन्य नाम तथा परिचय

सन् १९६० के उपरान्त कविता के विविध नामों की बाढ़ी आई। ये कविता के नामों की बाढ़ी लगभग जालोस की संख्या में है- सनातन धर्मवादी कविता, उपरम्परावादी कविता, सोमान्तक कविता, युक्तवादी कविता, वस्वोक्त कविता, वक्त्रकविता, वक्त्रकविता, वक्त्रकविता, विद्रोही कविता, झुत्कावर कविता, कबीर पन्थी कविता, समाहारात्मक कविता, उत्कृष्टकविता, विकृष्टकविता, वक्त्रकविता, वक्त्रकविता, वक्त्रकविता, नूतन कविता, नाटकीय कविता, ऐष्टी कविता, निर्दिशायामी कविता, लिङ्गादत्तमीतवादी कविता, ऐक्य कविता, गीत कविता, नवप्रगतिवादी कविता, साम्प्रतिक कविता, बोट कविता, ठोस कविता, (कठिण कविता), कीलास

कविता, बोध कविता, मुकुट कविता, दोषान्तर कविता, बलि कविता, टटको कविता, ताजिकविता, जगली कविता, प्रतिबद्ध कविता, शुद्ध कविता, स्वस्थ कविता, नंगी कविता, गलत कविता, उही कविता, प्राप्ता कविता, उल्लव कविता, बाँस कविता --- ।

यहाँ कुछ कविता बान्दीसों का परिचय मान ही दिया जा रहा है।

(क) बोट और मुसी पोढ़ी

इस कविता का प्रारम्भ एलेन गिंसबर्ग के भारत वागमन से माना जाता है। 'बोट कविता' का फलतः प्रयोग गिंसबर्ग के साथो कि कहवाक ने अमेरिका के अस्था जिले में किया। सन् १९५२ में 'न्यूयार्क टाइम्स' के रविवारोय परिशिष्ट में 'दिस एव र बोट केरिबन' लेख प्रकाशित हुआ। सन् १९५५ में उन्ने 'रीड' उपन्यास में प्रयोग किया। इसके उपरान्त इस नाम का प्रचार बढ़ा। गिंसबर्ग का काव्य पुस्तक 'हाउस' नाम से सन् १९५४ में छपा। भारत में उसके कलकत्ता वागमन से बोट कविता का प्रचार हुआ। गिंसबर्ग के संसर्ग में मुसी पोढ़ी के मलयराम जीधरो तथा हिन्दी के राजकमल जीधरो आये। इसके अक्षर प्रचार बढ़ा। इन कविताओं में अश्लीलता एवं वय-वितक संभोग, नारो-पुरुष के गुणों का यथार्थ चित्रण किया है, इनकी अभिव्यक्ति को शैली कविता जैसी ही है।

१- हाउस जगदोज गुप्त- नयी कविता : स्वप्न और समस्याएँ पृ० १७६

२- ललित हस्त- नया काव्य : नये मुख्य पृ० २७०

(क) रमलानो पोढ़ी

“रमलानो पोढ़ी” पत्रिका के सम्पादक निर्भय मल्लिक ने इठि कंक में लिखा है कि रमलानो पोढ़ी कविता सुनने मोड़ रुकसि हरी होगी; जबकि बाबाक बीस्त के तिर कोरं प्रीति अप्ता धन लुटा जस्ता है। इ: कौं में “रमलानो पोढ़ी” पत्रिका कलकत्ता में प्रकाशन हुआ। इसमें भी विमोह और बलीस्ता के क्लामाजिक तत्व उभर कर सामी आयि। निर्भय मल्लिक की एक कविता का निदर्शन प्रस्तुत है जो कि उनके “वीर” का प्रतिनिधित्व करता है -

सुनी बीस्ता

मरने के बाद

मेरी सात पर वीर्यपाव कर मुत देना

वीर किसी रजस्वला बीस्त

के कपड़े में लपेट कर

पार्सियामेंट के घर में फेंक देना

कहीं मिलिगो जानो बड़ी मुर्दा की मोड़

वीर जानो बड़ी कलगाउ हिंदुस्तान में। २

(ग) ताढ़ी कविता : क्लाम टटको कविता

आशावाद की पुष्पिका वाधुनिक कविता में

१- रमलानो पोढ़ी - ६ पृ० १०-१२

२- निर्भय मल्लिक - रमलानो पोढ़ी - ६ पृ० २७

महत्वपूर्ण रही है। 'प्रयाग की एक साहित्यिक गीच्छी में श्री लक्ष्मी-
कान्त वर्मा ने एक ताजा रसनिष्ठ कौड़ा है- ताजु की कविता, यह
टिप्पणी 'वातायन' में प्रकाशित हुई। उपर 'कलम' के जूलाई
१९६५ तक में लक्ष्मीकान्त वर्मा को 'ताजु की कविता' के नाम का प्रचार
करी पाये जाते हैं। अन्य पत्रिकाओं में 'ताजु की कविता' जर्जित न
ही की।

टटकी कविता (प्रज्ञा पीछड़ी) , प्रणी-
गायन , फटना से पहले सन् १९६६ ई० में सम्पादक रामचन्द्र राय द्वारा
प्रकाशित हुई। सम्पादक ने 'उन कविताओं के टटकीछन के बाद वाप
छन्द टटका नहीं उठे। ज्यों में लका टटकाया है। का: यह टटकी
कविता (प्रज्ञा पीछड़ी) को ताजु की कविता के स्वल्प में ही सीप की
गई।

(घ) सुसुखावादी कविता

एक कविता की कलकत्ते से प्रकाशित सुसुखा
पत्रिका ने महत्वपूर्ण योगदान दिया। वर्ष १९६५ की 'व्याख्या' में
में प्रारम्भ के वन्तर्गत स्वर्ण भाष्यो ने कलम का यह उदाहरण प्रस्तुत
किया - ' मैं साहित्य भुवन को इस प्रेरणा के रूप में उद्यो जालिम
सुसुखा की स्वीकारता है जो कहीं न कहीं प्रत्येक क्षान्ति, परिवर्तन,

१- वातायन तक ६ पृ० ५२

२- डा० जगदीश गुप्त- नयी कविता : स्वल्प कीर समस्या ५०१६६

३- उपरिष्ठ पृ० १६६

जबसा विघटन के मूल में प्रभुत्व रहने के। वह युक्तवादी विधोविजावादी, मुसनावादी, विद्विहात्मक जबसा सीटोनि कृष्ण भी हो सकते हैं।^१ युक्तवादी कवियों का जन्म १९६६ में 'व्याम्वरा' का 'कुमातन' के 'प्रकाशित' हुआ। २६ जनवरी को १९६६ की तस्मज से 'मुत्तीटे' उत्तीव युद्ध 'काव्य संकलन' प्रकाशित हुआ। इसमें चन्द्रमौलि उपाध्याय, उमेश, राजाव संकेता, नासम आदि को रत्नाई है। १५ जून १९६६ को 'युद्ध युद्ध युद्ध' संकलन प्रकाशित हुआ। चन्द्रमौलि उपाध्याय का 'युद्ध युद्ध' काव्य संकलन पहले ही प्रकाशित हो चुका था जिसमें 'बीर' पूजा 'को विशेष महत्व देती है। उनका विचार है- 'उत्तरे उम्मा किस्म' के पूर्व युद्ध के ही फेला होती है, किन्तु 'युक्तवादी' हाभारा का सबसे कायर और होन पाया था। 'इस प्रकार ये एक बीर 'श्री के मन' के उच्चम्य जोड़ते हैं जो दूसरों की जापानी मल्ल विद्या के दाव 'बुद्धिधृ' के भाव के युद्ध के लिए तैयार है। उपर्युक्त रूप के 'युक्तवादी' कविता 'वराजवादी' एवं 'व्यक्तिवादी' प्रवृत्तियों का ठोस एवं कथामाजिक रूप है।

(ह०) निर्दितावादी कविता एवं वतिकविता

इन दोनों कविताओं का कोई विशेष वैचारिक आधारभूमि नहीं थी।

डा० रणधीर सिन्हा ने वतिकविता को पर व्यवहार तक ही सीमित रखा और यह नाम भी तोप ही गया।

१- डा० जगदीश गुप्त - नयी कविता : स्वल्प और समस्यार्थ पृ० १६१

२- चन्द्रमौलि उपाध्याय - युद्धयुद्ध पृ० ३

निर्दिशायामो कविता राबो से प्रकाशित

‘तय’ प्रथम त्रैक १९६५ में सम्पादक सत्यदीप राजर्षि ने उसको जमाने वाधुनिक्ता को निर्दिशायामो दृष्टि ‘सिद्ध को । ‘तय’ के समाप्त होती ही निर्दिशायामो कविता भी लीप होगई जो कि ‘विता’ , ‘दृष्टि’ एवं ‘परो’ को लेकर ग्लो यो ।

(न) अनातन सूर्यदियो कविता

सन् १९६२ में ‘मासो’ के मार्च त्रैक में बोरेंद्र कुमार झा ने ‘अम अनातन सूर्यदियो नूतन कविता’ को धीमण्टा करती हैं। नारा लगाया जा । तीन वर्ष के अन्दर यह भी विचार समाप्त होगया ।

(ङ) जगती कविता तथा सत्य कविता

‘जगती कविता’ सन् १९६५ में वीणानंद भारस्वत ने बल्लभ विधानगर गुजरात से प्रकाशित पत्रिका के द्वारा नारा उठाया गया । ‘जगती कविता’ ने नाम के बाद कोई चर्चित कार्य नहीं किया ।

मार्च १९६७ ई० में ‘सत्य कविता’ ज्योत्सु से डा० रवीन्द्र प्रमर ने प्रकाशित की, जिसमें रवीन्द्र प्रमर ने अपनी वस्तुस्थ के साथ जगतासीय कवियों को बाध कवितारं (सत्य कवितां नहीं)

संस्कृत की। इस संस्करण के प्रथम अंक के उपरान्त कुछे संस्करण की योजना की घोषणा जाट गई तथा कई सहयोगी सम्पादक एवं कवि 'अवस्था' बनकर रह गये।

(ब) साठोत्तरो कविता

यह कविता न तो सठियाये कवियों की है और न ही अनु ६० के नाम से विभिन्न समय की हो। वास्तव में, नयी कविता का अन्त कार्यान्वित हो अनु ६० के उपरान्त 'साठोत्तरो कविता' के रूप में उभर कर जाये। वैसे 'साठोत्तरो कविता' अनु ६० के उपरान्त कविता में हुए नये प्रयोग- नामों की समग्र रूप से भी समाहित किये हैं। उन सभी कविताओं की 'साठोत्तरो कविता' के नाम से भी पुकारा जाता है। परन्तु, मार्च १९६६ में उत्प्रेषण पत्रिका के द्वारा 'साठोत्तरो कविता' पर विचार किया गया। साठोत्तरो कविता का सलिल गुप्त ने सामूहिक संस्करण प्रकाशित किया जिसमें डॉ॰ कवियों- सलिल गुप्त, सलिल गुप्त, सुरेश सलिल, चन्द्रिका गुप्त, वैष्णव गुप्त एवं जीवन गुप्त ने अपनी वस्तुओं की क्यूठा निलानी लगाकर पुष्टि की है। साठोत्तरो कविता के सलिल गुप्त ने ग्यारह छंद भी दिये। साठोत्तरो कविता ने जो छंद दिये वह 'नैमिषाद' की भाँति हैं, परन्तु उनको कविताई किये जो उनसे प्रतिबद्धित हैं, यह विचारणीय प्रश्न है। संक्षेप में 'साठो-त्तरो कविता' भी समय के गर्त में डूब गई।

१- सलिल गुप्त- नया काव्य : नये मूल्य ५० रु०

२- डा० बीम प्रकाश अवस्था- नयी कविता के बाब ५० ४२-४३

(१) कविता तथा अन्य कविता विधाओं में व्यक्तिवादी दर्शन का

स्वल्प

तत्कालीन परिवेश एवं भीम हृदय कवियों ने अनु ६० के उपरान्त के व्यक्ति को टूटन, छूटन, टूनास, विद्रोह एवं नकार को प्रकृतियाँ प्रदान की। व्यक्ति समाज से विद्रोह करके अपनी व्यक्तित्व का प्रसार करना चाहता है। एक ओर कविता, अन्योक्त कविता, ज्ञानान्तर पद्यों, बाट कविता आदि हैं जो व्यक्ति को यौन-परक बलशक्तता को ओर उन्मुख करती हैं। व्यक्ति-स्वातंत्र्य, समाज, देश, धर्म, परिवार, मर्यादा आदि को साँप कर 'विराजक', 'काम बुधुदित' हो जाता है। इन कविताओं में भीमवादी प्रकृतियाँ उभर कर सामने आते हैं। व्यक्ति का स्वतन्त्र व्यक्तित्व वास्तविक जीवन काम हुआ एवं व्यक्ति हित में हो लिख है। दूसरी ओर व्यक्ति को वैयक्तिक जल्दारी है, जो निरन्तर सम्पन्न के मार्ग दिखाती है। 'मरी हुई की हड्डी के साथ सम्पन्न' तथा 'एक नीला बादल' जैसे कविताओं के नामकरण कवियों एवं आत्मात्मिक व्यक्ति का रेखांकन है। अतः इन कविताओं में व्यक्तिवादी दर्शन का स्वयं भीमवादी स्वरूपक रचनाओं के रूप में उभरा है। युक्तवादी कविता में कवि व्यक्तिवादी हो गया है उसमें 'युक्त' हो 'जड़' द्वारा परिभाषित है। अन्य प्रकार की कविताओं का दर्शन 'नकार' अपना नकारात्मकता है। वह समाज, धर्म, व्यवस्था, मर्यादा, सबको नकारने को मुद्रा धारण किये हुए है। यह भी व्यक्तिवादिता का सफल काव्य प्रयोग है।

संक्षेप में साठोत्तरी कविता में व्यक्तिवाद तोड़ता है विद्वीह, नकार, भोगवाद, वर्तवाद, वराकक्षावाद, यौन-परक चिन्तन आदि के रूप में उभर कर आया है।

(बी) निष्कर्ष

वास्तविक हिन्दी साहित्य में प्रयोगवाद

‘प्रयोग’ की निम्ति पर आधारित एक महत्वपूर्ण काव्यान्दोलन है। ‘प्रयोग’ शब्द का अर्थ अन्वेषण एवं खोज है। इस शब्द का प्रयोग विज्ञान में अन्वेषण कार्यविधि के रूप में होता है। प्रयोग व्यक्ति के जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा कोई चीज नहीं जिसमें प्रयोग न हुए हो। काव्य में विविध प्रकार के प्रयोग होते आये हैं। कविता में प्रत्येक युग के कवि ने प्रयोग किए हैं। आदिकाल, मयिकाल, रोहि-काल, भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, श्यामावाद, उत्तर श्यामावाद, प्रगति-वाद, नयी कविता तथा अन्य काव्यान्दोलन प्रयोग का परिणाम हैं। प्रयोगवाद में प्रयोग की महत्व प्रदान किया गया। प्रयोगवाद व्यक्ति की महत्ता देता है इसलिए यह काव्य व्यक्ति निष्ठा पर आधारित है। अर्थ अस्तित्व-बोध, सत्य बोध पर विचार किया जाता है। प्रयोगवाद का मूल दर्शन व्यक्तिवादी चिन्तन पर आधारित है। नयी कविता में व्यक्ति उत्था, व्यक्ति-स्वातंत्र्य एवं अस्तित्व-बोध की महत्व देती है। वह नो व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों को काव्य में समाहित किए हुए है।

वाधुनिक हिन्दी कविता में सन् ३६ के उपरान्त वाधुनिकता के विविध विचार प्रसृत होने प्रारम्भ हो गये। प्रयोगवाद से लेकर साठोत्तरी कविता तक कविता में वैचारिक क्रान्ति के साथ नये प्रयोगों के प्रति जल्दम्य साक्ष्य रहा है। 'वारुण्यक' सन् १९४३ के प्रकाशन में ही व्यक्तिवादिता के लक्षण प्राप्त होते हैं। प्रयोगवाद का मुक्त व्यक्तिवादों दर्शन है। वह व्यक्तिवाद के आधार तत्त्वों पर ही विकसित हुआ। नयी कविता का व्यक्ति भी व्यक्तिवादी है, वह सामाजिक कार्यों की पीछणना करता है। वह वैयक्तिकता से प्रभावित है। वह अजनबीपन, स्काकीपन, राजनीति, लघु मानव आदि से ग्रसित है। वह अनास्था, हूँठा, बिछोई एवं संघर्ष के चिर भेदन है। नयी कविता का कवि अनाव से ग्रसित है। उस व्यक्तिवादों काव्य रचना में संलग्न रहता है। उसका व्यक्तिवाद वर्तमान के स्तर पर टिका है।

नवगीत तथा कविता में व्यक्तिवादों दर्शन को वैयक्तिकता के दर्शन होते हैं। व्यक्ति के सुख-दुःख, राग-विराग आदि ही नवगीत के विषय हैं। नवगीत भी नये कार्यों की नीतात्मक अभिव्यक्ति है। व्यक्तिवाद नवगीत में व्याप्त है। कविता एवं साठोत्तरी कविता आन्दोलनों में व्यक्तिवादिता बरम सीमा की लक्ष्य गई है। कविता, बोट कविता, शमशानी पीढ़ी आदि की कवितारें व्यक्तिवादी दर्शन तथा नकारात्मक सामाजिक प्रवृत्तियों से पूर्णतया निवृत्त हैं।

आः सन् १९३६ सन् ७७ तक की हिन्दी कविता में व्यक्तिवादी दर्शन विविध रूप से विकसित हुआ है। आलोच्य युग का समग्र काव्य 'व्यक्ति' की केन्द्र में मानता है तथा व्यक्तिवादी चिंतन के समीप है।

चतुर्थ अध्याय

प्रयोगवाद में व्यक्तिवादो निस्तन वीर

अभिप्यक्षित

प्रयोगवाय में व्यक्तिवादी चिन्तन और

व्यक्ति

कवि की वैयक्तिक अनुभूतियाँ भाव-बोध के विविध वायाम निरूपित करती हैं। प्रत्येक कवि की वैयक्तिक परिस्थितियाँ उसकी वैयक्तिक अनुभूतियों को रंगम देती हैं। अनुभूतियाँ ही व्यक्ति का स्वरूप धारण करती हैं। व्यक्ति का माध्यम स्थाकार को सर्वत्र प्रेरित करता है और सक्रियता की ओर डे जाता है। स्वरूप में शक्ति के विचार प्रस्तुत हैं :

“ व्यक्ति सक्रियता है, स्वरूप धारणा का एक उपसिद्धान्त यह है कि स्था की कृति व्यक्तिगत होती है। प्रत्येक व्यक्ति किसी व्यक्ति होती है। एक वैयक्तिक स्था में भावों का समन्वय सक्रियता होती है। जो व्यक्त करने की इच्छा सदा स्वरूप धारणा की प्रतीक्षा करती है कि स्थाकृति में स्था होनी चाहिए क्या अनिष्टा में स्था होनी चाहिए । व्यक्ति विविध क्या अनिष्ट का एक में समन्वय है। ”

वास्तव में अनुभूति की विविधता का एक में और एक का विविध में समन्वय है। अनुभूति एवं व्यक्ति के लिए भावभूमि का होना निश्चित है। कवि क्या स्थाकार फिर भावों, स्थितियों एवं अनुभूतियों का अनुभव करता है, यह उस रचना-रूप के ऊपर निर्भर करता है। जो कारण कवि उन परिस्थितियों को अपनी रचना में निरूपित वैयक्तिक रूप में उठाता है। वास्तविक रूप में

बुद्धिवाद, वैज्ञानिकता, तार्किक पद्धति एवं विविध विचारधाराओं के कारण कवि को भावभूमि के विभिन्न स्तरों से गुजरना पड़ता है। कहीं उसे कृष्ण, ईश्वर, वेदना, शोध, नास्तिक चेतना, क्लेशावन, अज्ञानबोध, तनाव, घृणा, अनावृत्त स्थिति आदि विविध स्थितियों से गुजरना पड़ता है। ऐसे भावभूमि के व्यक्तिवादों परास्त निर्मित होने में सुविधा हुई। वेद - अस्तित्ववाद, अज्ञानवाद, भोगवाद, फलानुवाद, दार्शनिकता, अज्ञानता एवं विद्रोह आदि भावभूमि के इन व्यक्तिवादों स्तरों के संदर्भ में नीचे विचार किया जा रहा है।

(ब) अस्तित्ववाद

अस्तित्ववाद का तुहारम्भ दार्शनिक कीर्तिगाह (जन्म १८१३ ई० और मृत्यु १८५५ ई०) के दार्शनिक चिन्तन से होता है जिसमें उन्होंने व्यक्ति की नूतन वैयक्तिकता का उपयोग कर वैचारिक शक्ति उत्पन्न कर दी। उनके उपरान्त फ्रेडरिक नीत्शे, कार्ल यारस्प, प्रियन्त मार्शल, डा० मार्टिन हेडगर, ज्या पास सार्त्र तथा अल्बेयर कामू ने अस्तित्ववाद को अपनी चिन्तन से नूतन दिशाएँ प्रशस्त की हैं। अस्तित्ववाद को व्याख्या करने के लिए कीर्तिगाह ने इस शब्दों में प्रस्तुत की है -

“ अस्तित्व ” शब्द का उपयोग यह दावे पर और देने के लिए दिया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में स्वयं कहीं (यूनिक) है और सामाजिक या वैज्ञानिक प्रक्रिया के

सम्बन्ध में अविलक्षणणीय है। यह वह अस्तित्वमय है जो स्वयं चुनाव करता है, स्वयं स्वयं चिन्तन करता है, यह कि वह स्वतन्त्र है और यदि वह स्वतन्त्र है, इसलिए एहन करता है, यह कि उसका पवित्र्य कुछ कीर्ति में उसके स्वतन्त्र चुनाव पर निर्भर है। अतः उस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता ।

अस्तित्ववाद के सम्बन्ध में मानव की संपूर्ण पार्थिव ज्ञान के उपयोग के प्रति जागरूक है- अस्तित्ववादी दर्शन चिन्तन का वह पार्थिव रास्ता है, जो सम्पूर्ण पार्थिव ज्ञान का उपयोग करता है और उसे इस रूप में परिवर्तित करता है जिसे मानव पुनः स्वयं ज्ञान बन सके । बोधवां शताब्दी के अस्तित्ववादो चिन्तकों के चिन्तन के ज्ञात होती है- अस्तित्ववाद की प्रकार का है - एक तो ईश्वरवादी तथा दूसरा अनिश्चरवादी अस्तित्ववाद । ईश्वरवाद में जहाँ पात सार्न, कार्ल मार्क्स, ग्रिफ़िथ मार्स है और डा० हेडगर नील्स तादि प्रगतिशील चिन्तक अनिश्चरवादी अस्तित्ववादो हैं। यद्यपि जहाँ पात सार्न का निम्नलिखित कथन उसे अनिश्चरवादी चिन्तक सिद्ध करता है- अस्तित्ववाद अनिश्चरीय और अनास्थात्मक सहजीवन स्थितियों के परिणामों की

१-

The word is that used to emphasis that claim that each individual person is unique and is explainable in terms of any metaphysical or scientific system, that he is being who chooses as well as a being who thinks or interfructues, that he is free and that become he is free. -- predictable.

2. - Encyclopedia Britannica, Pt-8, Page, 968A.

प्रस्तुत करने के प्रयास के बिनाय और कुछ नहीं है। अस्तित्ववाद के
सन्दर्भ में भारतीय विद्वान् के० के० मोनिवास की मान्यता है :

“ साधारणतः अस्तित्ववाद को अन्ध
समानिकरण और अतिशयोक्तिपूर्ण की प्रतिक्रिया कहा जा सकता है जो
प्रागैतिक और प्रातिवादो तत्त्वों की अतिरिक्तता के कारण याँकि
ज्ञानि के प्रभावों से उत्पन्न व अस्तित्व का नैपुण्यीकरण करते हैं। अस्तित्व-
वाद को व्याख्या करते हुए डा० जयाम सुन्दर मिश्र के विचार अधिक
सार्थक हैं। अस्तित्ववाद कुनात्मन जीवन के विभिन्न विषयों (सामाजिक,
नैतिक, आर्थिक, राजनीतिक) और उपसब्धियों की याँकिता के बीच
आवृत्ति व्यक्ति स्वार्थ को अधिक चिन्ता का वैज्ञानिक और समीचीन
विवेचन है। अस्तित्ववाद को मूलतः आध्यात्मिक संकट, अवरोध,
ज्ञानि का संकट एवं परामर्शवाद का दार्शनिक स्वयं माना जाता है।

अस्तित्ववाद व्यक्ति के व्यक्तित्व की
विश्व के विराट् परिवेश को अलोपता के समस्त अपने तत्त्वबोध को
अवेदना- सृष्टि करता है। इस कारण अस्तित्व के प्रति जागरूक व्यक्ति
के हृदय में पथ, जैसा जादि की भावना व्याप्त हो जाती है। व्यक्ति

१- Existentialism is nothing else than an attempt to
draw all the consequences of a coherent atheistic
position.

2. Existentialism, Jean Paul Sartre, p 61

2. In every general terms existentialism may be
described as a reaction against the blind equalization
and vulgarisation brought by the excesses of the
democratic revolution and the progressive emasulation
of body and mind effected by the technological revo-
lution.

- The Adventure of Criticism, K.K. Shrinivas Iyengar
p670.

३- अस्तित्व : कुछ नयी स्वाफ़ाहरी- जयामसुन्दर मिश्र-ज्ञानीदय कानून १९९१

के जीवन की बटिस्ताबी की देखी हुए कोर्कगार्ड की प्रतिक्रिया नितान्त वैयक्तिक रही। उसने व्यक्ति को सत्य मानते हुए मानव जीवन की बटिस्ताबी के समाधान करने के उपाय ढींढी पर बल दिया। उसने मय की भावनाओं की अस्तित्व एवं मृत्यु-बोध के रूप में बताया। वास्तव में अस्तित्व का बोध व्यक्ति को अन्तर से होता है। व्यक्ति विविध तथ्यों का मालिक है जबकि तथ्य व्यक्ति में अन्तर्भूत रहते हैं।

यास्पर्स के अनुसार समूह के सदस्य होने के कारण व्यक्ति सामाजिक है। वह समाज एवं राज्य द्वारा परि-
चाहित है। व्यक्ति को अपनी आत्मा के निर्देश पर कार्य करना चाहिए।
मार्टिन हेगल की प्रवृत्ति विद्रोहात्मक रही। वह व्यक्ति को विशेष
स्थिति पर बल देता है। अस्तित्ववादी विचारधारा के संघर्ष में एक-
एक हाटेमैन का मत विचारणीय है- कोर्कगार्ड और यास्पर्स हेगल-
वादी दार्शनिक थे, लेकिन हाजं हाळेगर के समान नास्तिक हैं। उसके
अनुसार हेगल पर लुका है और यदि वह जीवित है तो उसके कोई
अन्तर नहीं पड़ता। क्योंकि हेगल का अस्तित्व प्रदर्शित नहीं दिया
जा सकता। वह नैतिक व्यवस्था को स्वीकार नहीं करता। सर्वाति-
शायी सत्त्व में उसे विश्वास नहीं है। देवी विधान में भी उसकी आस्था
नहीं है। उसका दृष्टिकोण इतना नकारात्मक है कि उसे दुनिया में कहीं
भलाई व सम्मदारी नजर नहीं आती। वह दुनिया की दुरी और नदर
मानता है। दुरावस्था की सफलता में उसे विश्वास है। वह मनुष्य की
अदिकता के विरुद्ध प्रतिबद्ध है, फायर, शरीर और यौन आनन्द के

१- डा० फुलविहारी शर्मा- पाश्चात्य समोक्षा के सिद्धान्त पृ० १३६

२- एक० एक० हाटेमैन- एन्जिस्टैलियसिज्म एण्ड द माहर्न प्रेडिकामेंट

प्रति प्रतिक्रिया । इसे ज्ञात होता है कि अस्तित्ववादियों ने समूह की अपेक्षा व्यक्ति पर अधिक बल दिया है। उन्होंने यह माना कि समूह व्यक्तियों को कृष्ण रहा है एवं उस पर छावी ही रहा है। यह विचार धारा का नास्तोय जनबोधन पर भी प्रभाव पड़ा । द्वितीय विश्वयुद्ध को निमीषिका, जर्मनों का उपनामय कर्तव्य एवं विविध विधेयतियों के कारण व्यक्ति को नय, देखा एवं अस्तित्व के प्रति संकट का बोध होने लगा । स्वराज्य को पाणि, वेल्हाई विश्वयुद्ध में वादुनिक नारक शक्तियों के प्रयोग आदि ने नास्तोय व्यक्ति को अस्तित्व के प्रति सज्ज रहने के लिए तैयार कर लिया । सन् १९४० के उपरान्त अस्तित्व के प्रति हिन्दी का साहित्यकार सक्रिय हो गया । वादुनिक हिन्दी साहित्य में अस्तित्ववादो विचारधारा का प्रभावत सच्चिदानन्द हारानन्द वात्स्या-या जैय का कहानी उपन्यास और कविताओं के द्वारा हुआ है। अतः हिन्दी साहित्य में अस्तित्ववाद के प्रसार में जैय का विशेष योगदान है। जैय का ' अपनी अपनी कवनको ' उपन्यास अस्तित्ववाद के तदन में प्रमुख स्थान रखता है।

वैज्ञानिक उपसर्गधियों एवं युद्ध को निमी-षिका ने व्यक्ति को आन्तरिकता को पूर्णतः सक्रिय कर दिया । सुविशेष ने अनुभव किया कि व्यक्ति का अस्तित्व किन्हीं कारणों के विकसित हो गया और कि अस्तित्व के सफ़र के गोल माने को उचित हो उठा :

ये कौनसे गोल

दब लुको जी पर लुको है आत्मा,
रूप जी ही गहं वाकाला,

व्यक्ति में व्यक्तित्व के लण्डहर
गान कर उठते उठी के गीत ।
ये झँसे गीत, स्वर लय होन गीत । १

नेमिचन्द्र जैन की व्यक्तित्व की केन्द्र बिन्दुन बताते हैं :

जो फड़ गया फोला विरह निरखार
सब कुछ प्राण बोधन, अरुण हृत्कम्पन ।
असम्पन्न अनेक तपि है
हृदय है निरस्त कर
होते भी हैं निष्प्रायीजन हो किसी सुनसान है मैं लान

जीर केन्द्रबिन्दुन- सा मन
बन्धित है,
कुछ कहा सा नी है । २

वर्तमान जीवन की विपरीत परिस्थितियाँ एवं भविष्य की चिन्ता ने
व्यक्ति मन को एक नीराह पर लड़ा कर दिया जहाँ वह अपने को विनाश
एवं शिरस्कृत पाता है :

विवश में डार जाता हूँ मर्यकर मीन है,
बेमाय अपने प्राण में डाले हुए स्कान्त है,
सतत निर्वासित हृदय है

१- ६० अक्षर - तारसप्तक ५० ३४

२- ६० अक्षर - तारसप्तक - नेमिचन्द्र जैन ५० ६१

गिरस्कृत व्यक्तित्व के
 योगी जरीगत वपं ने मन को
 सख्य जनमान स्वाभाविक ज्ञात धार को
 का दिया है कृपित्ता । १

व्यक्ति का कौताफ वासन्त जित्तारी
 से प्रस्त हो गया । भास्वज्जण ज्ञात का एक उदाहरण प्रस्तुत
 है :

कृता को ज्ञोरी में ज्ञात भीत हृदय
 हिम - श्ती मृत्तु के ज्ञात-रूप है
 वाज का निर्वाज ,

गणित, कृद का का ज्ञान । २

मानववादी विचारधारा ने व्यक्ति को
 कथ्यस सौष्ठ गति से बाकनिर्जित किया, किन्तु उसका सौष्ठव ज्ञान
 उससे ऊंच गया । ' सास्वज्जण ' के पुनरुक्त : ' में भास्वज्जण ज्ञात
 ने कविता को कथ्य मानने वालों को सही उत्तर दिया है- कविता
 कथ्य नहीं है- न मृत्तुमान, न ज्ञुत्तु । कविता को कथ्य मानकर ज्ञात
 हो या (जागते रही) कि मैं स्वयं कथ्य बन गया और मेरी कविता
 ऐसी कथ्य सिद्धि कि उसमें अपने मन का स्पन्दन जुनाई हो नहीं पड़ता

१- सौ० ज्ञाय - सास्वज्जण- नेमिचन्द्र ज्ञे ५० ६६-७०

२- उपरिखल - भास्वज्जण ज्ञात ५० ६०

पा ।^१ लोसिर व्यक्ति का मार्ग निश्चित नहीं है-

है शान्त तन, है अशान्त मन
मे बाज है निष्प्राण ।^२

बोसकी सदो के बागमन पर उपलब्धियों
को गणना करी हुए प्रभाकर पावरी उस बरहित जीवन का उद्घाटन
करती है जिसमें व्यक्ति का अस्तित्व बीध छेद में रहता है :

बोसकी सदो ने यही दिया
मानव की मानव का मयाण
मानव की निज-संस्था का
परवाना छक्की बट दिया-
जीवन संघर्ष बढ़ा या तक
उस हाथ दिया, उस हाथ लिया ।^३

जीवन संघर्ष की इस बाधाधामो में
कापातिक कविता एक जीवन सत्य की सामने रहती है :

जीवन या अस्ता है
मरना यही नहीं हँसता है
कापातिक हँसता है।^४

इस जीवन की संस्कृति का म्तिना एक
गतिशेष प्रवाह है निरन्तर कुछ निश्चित की रहा है और कुछ समाप्त

१- ६० वीज- तारुण्यक- पुनरु ५० १००

२- उपरिपु ५० ६३

३- .. प्रभाकर पावरी ५०१५५

४- उपरिपु ५० १५६

हो रहा है :

संस्कृतियों पर संस्कृतियों के मस्त म्छिन्दये,
 लौह नौव पर लीं हुए गढ़, दुर्ग पिनारी ।
 हृदय स्तम्भ बाधार भंग ही
 गिरि, विभिन्न निजान, तारितके केतन हूँ । १

माधुर को कविताओं में मानवोप राग
 एवं प्राकृतिक सौन्दर्य का सम्मिश्रण प्राप्त होता है। तब भी जीवन के
 आकर्षक क्षणों के प्रति भी कवि का हृदय विगलित है :

हृन्दर चीखें ही म्छितो हैं सबसे फली,
 यह फुल, चाँदनी, रूप, प्यार,
 बाँध के जगिन वाजमल्ल
 रागी को ठहरो मूँव,
 जलम्बव सफाई को हृन्दर मिठास -
 धृष्टा तक म्छिता है स्थाकार के म्छिन्दे से
 पर गीतों के लज पिरामिडों,
 लज धौलमिरि, सुमेरुओं पर
 म्छि जाती स्वयं म्छु बाधर । २

वस्तित्व बोध का एक अन्य उदाहरण दर्शनीय है :

धृष्टो को धृन्दरतम ।
 धृष्टि जनान है

१- सं० बाल्य- तारसप्तक पृ० १८२

२- उपरिक्त पृ० १८५

कलय, मय, पुष्पा ।

मुद्र, सिन्धु, शैतान है

सांस्कृतिक मृत्यु, मास ।

कृष्ठा, दमन, कलदाद,

हुनिया पर मावादी के जघन्य जाणार । १

कृत्य के प्रति मय एवं व्याकुलता ने समग्र
आधुनिक चिन्तन को मरकभीर दिया है। ज्ञेय भी ऐसे नहीं बने हैं।
कवि के हृदय में अस्तित्व का प्रश्न टंगा है जो उसे सज्ज रखता है :

किन्तु अब निस्तब्ध- संस्कृत

सीमों का भाव- संकुल, व्यक्ता का मोह

फटा - सा तश्तीस- सा विस्फार

भूठ यह आकाश का निखरि गहन विस्तार । २

वाक्ता के उपद्रुते सागर में ज्ञेय की
अस्तित्व का विचार जाता है, चिन्तन की रियसि में अस्तित्व- जीध
सज्ज रखता है :

बता ये उत्तम, पर अस्तित्व के उस सन्त्रास के बीर,

नहीं करना चाहती ये

निरे मानव जीव की रक्त- फण मुसुका के

कृतास्त का वाक्फातन । ३

१- ज्ञेय - तार सप्तक पृ० २१५

२- उपरिषत् पृ० २०१

३- उपरिषत् पृ० २६६

मानव बाधुनिक वैज्ञानिक परियोजना एवं
विष्टनकारी तत्वितयाँ से खना भयाकृत हो गया कि वह प्रलय के स्वप्न
बैसी लगा-

२० दिन होगी प्रलय भी ।

मर रहगी फाँफड़ों ,

मिट जायेगी नौसम- निलय भी । १

ज्यों प्रकार बोलते हुए दिन उसे प्रलय के
दिन लगती है और " कात- नायक " घोषित से गीत गाता है^१ जीवन
में इन घटनाओं से प्राणियों की भयावह स्थिति का बोध होता है :

गर्मी की दीपकरी में

तपे हुए नम के गोथे

कातो लड़के ताकाल को

बगार हो जलो फड़ो धो

जोह जलो धो फड़ों की मो-

फली फुलस गये थे ।

नी- नी दीर्घकाय, कंकाती से वृषा लड़े थे ।

हो लकात के ज्यों अवतार । २

रुन्त माणुर की " चिन्तनो का बोध "

१- ६० वक्रिय- दूसरा अष्टक पृ० १६

२- वही पृ० १७

३- वही पृ० ३२

कविता मानवीय विष्टन एवं अस्तित्व-बोध को उजागर करती है :

भारी है जीवन ।

भूँटे बोझों से जो नहीं छूँती है ।

भरा भी जीवन । १

इसी प्रकार 'ताजा पानी' में भी मानवीय विष्टन के वर्णन होते हैं :

धरा पर गन्ध फैली है ।

हवा में ससि भारी है,

रमक उस गन्ध की है

जो उड़ती मानवी की

बन्द फैली में । २

श्री हरिनारायण व्यास ने अपने काव्य को परिचितियों पर विचार किया है, क्योंकि फासिज्य अपने निरान्तरीय स्वल्प से बीभत्स प्रस्तार करता हुआ दूसरा महायुद्ध लेकर फिर परवा खार हुआ था । उस समय व्यक्तिवादो बातों में ताज्या के लिए स्थान उपलब्ध होना कठिन था । 'तार सप्तक' का कवि एपीलिर कुहरे इसके बाद में अपने व्यक्तित्व के प्रकाश के दर्शन करता है। 'दिन का सुतार' और 'रात्रि की मृत्यु' की जेतना उसे कष्टवित करने लगती है। वह स्वार्थ को लपट लपट होता हुआ देखकर शक्ति ही उठता है और आत्म-विस्मृत ।

१- अक्षय्य दूसरा सप्तक . शकुन्तला भाग १ पृ० ४२

२- वही पृ० ४७

३- हरिनारायण व्यास - अक्षय्य भाग १ पृ० ४२

एक उदाहरण प्रस्तुत है :

दुधरे पथ पर फड़ो है हड्डियाँ
फंता हुआ भीत जहाँ का स्वतः
द्रीफो- सी नीत्सी है नारियाँ निर्वन्ध । १

इसी प्रकार व्यास जी की 'पराधर्मी'
कविता युद्ध की भयावह स्थिति की वृत्ति कहती है :

'ये हमारी नील के फँस लगे हैं
रुण्ड - मुण्डों के भयानक चित्र से ।
नील और पुकार, हाहाकार
सब तरफ विज्वल की बहों उठी है
सत्य जित्ता है हमारी जिन्दगी की बाढ ।' २

उस विज्वल का सत्य व्यक्ति का बोध
है और उस काल की स्थिति की भी मनुष्य का संसार कहता रहता है।

'नरिष मेकता को 'समय देवता' रचना
में अस्तित्व-बोध का व्यापक रूप से दर्शन होता है। द्वितीय विश्व
युद्ध के शुरुआत में 'हिरोशिमा' में मनुष्य मर गया 'और मरल फंटेडो
हमो हुआ गये -

दूर हिफसो- सा वह झोटा टापुर है जापान देश का,

१- हरिनारायण - वसन्तकाल भाग पृ० ६४

२- स० ज्ञान-दूधरा सप्तक, हरिनारायण व्यास पृ० ६

३- वही पृ० ७२

जो कि मर चुका स्टम बन्द है ।

हुब गयी छूटी की टांग, चिढ़ रहा कीड़ी का जीवन,
विज्ञान धूल के बज्रगर सा है तोल रहा सब रण- रेणु
मनु मरता का ।

हिरोशिमा में मनुब मर गया । १

कस्तूरता में फुटपाथों की स्थिति देखिए-

कस्तूरता की फुटपाथों पर

मनुब हून में लथपथ हुआ, अपनी चारों संस्कृतियों से

ऊब ऊब । २

एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत है -

वीर छितलरी फौजों छूटी ने कुल्ला टेन्कूब लहर की
लंगोनों से कभी नहीं गह्र उगता है।

कल पुर्जों के तैलों में हो बम की फायल हुआ करता है।

०

०

०

मनुब नहीं कैंडेट चलता है। ३

धर्मवीर नातों का अवित्तत्ववाद आमानिक

एवं सौन्दर्य- विरचना में परिवर्तित हो गया है। तब भी एक ही उदाह-
रण दर्शनीय है :

१- सं० वीर्य- दूसरा सप्तक, नरित मेहता पृ० १२३

२- .. पृ० १२५

३- .. पृ० १२६

हर घर में सिर्फ़ किराग नहीं, बल्कि सुखी
लेकिन फिर भी
जाने कैसा हुनसान कथिरा
रह रह कर पुसु बाता है । १

०

०

क्यूँ जाती है तस्लीफ़ कबि तक लेने में ।
हर घर में मक्का होगाया । २

‘कविता को पीत’ वस्तित्व- बोध का
वस्तित्व- संकट का हुन्दर निर्वर्तन है :

मर गया हुरब खितारे मर गये
मर गये धौन्दर्य सारे मर गये
दृष्टि के वारम्भ से कस्तो हुई
प्यार की हर लसि पर फस्तो हुई
बादमोख्त की कहानो मर गयी । ३

‘मकेन के प्रपण’ काव्य संकलन में भी
वस्तित्व बोध की रत्नारं प्राप्ति होती है। कैवरी कुमार द्वारा रचित
‘प्राक भाष’ कविता का उदाहरण प्रस्तुत है :

‘मेरा किराये का मकान है,
तंग है ।

१- डॉ० जयिव- दुधरा सप्तक- धर्मवीर भारती पु० १८२-८३

२- वही

पु० १८२-८३

३- वही

पु० १८७

सूर्यमुख्य स्तोत्रो

दिन सा लौटा हूँ

तुम्हीं से ।

देगा ही जाय तो ?

जग हिंदू जाय तो ?

दुनिया उसट जाय तो । १

जः निष्कर्ष रूप से यह कहा जाता है

कि प्रयोगवाद के कवियों ने अस्तित्ववाद की अपनी कविता में तात्का-
लिक परिस्थितियों एवं संकट बोध को आँकड़ा के रूप में प्रकट किया
है।

(आ) अर्थवाद

अर्थ की वांछ मांगना में 'हंगी' नाम
से अर्थ अभिव्यक्ति किया गया है। अर्थ से तात्पर्य उस शक्ति से है जो
चेतन को स्वरूपा एवं प्रकृत के प्रति प्रेरित करती है। अर्थ अर्थात् वृत्ति
या प्रकृत को और जागृत करता है। जिजीविषा का दूसरा नाम
ही अर्थ है। चेतन को वृत्ति पर में विकास हो अर्थ का विस्तार है।
अर्थ का ऐतिहासिक स्वरूप अत्यधिक महत्वपूर्ण है। धार्मिक ग्रन्थों में
अर्थ के उत्पत्ति हेतु अनेक प्रकार के व्याख्यान, प्राणायाम, नियम, उपवास,

१- नरैण के प्रपञ्च-देवरी कुनार पृ० ४३

२- डॉ० डा० हरदेव बाहरी- बृहत् कौजो हिन्दी कोश भाग १ पृ० ६७

३- डा० गोविन्द रज्जो- हिन्दी साहित्यः आधुनिक परिचय पृ० ११६

साधना के विविध सोपानों का विचित्र प्राप्त होता है। नास्तोय दर्शन में समग्र दृष्टि के अन्तर्गत दो तत्त्वों की कल्पना की गई है। एक को जड़ (भूतना, विषयी, नीचता) दूसरे का हृद (विषय ज्ञान, समग्र चित्त) के नाम से जाना जाता है। नैयायिक आत्मा एवं मन के सादात्म्य पर ' जड़मात्रिम ' (मैं हूँ) कहकर जड़ का शुद्ध चैतन्य के रूप में अनुभव व्यक्त करते हैं। शास्त्र दर्शन बुद्धि से जड़कार को उत्पत्ति पर विश्वास करता है। उनका सिद्धान्त है- सब विषय भी तिर ह और वे ही कार्य करने का अधिकारी हैं। यही विचार जड़कार के रूप में विकसित होता है। जड़त दर्शन के मतानुसार जीव को वृत्ति अभ्यस्तो है जो वृत्ति के अन्तर्मुखी होने पर जड़ का रूप मानो जाती है। जड़त दर्शन और शास्त्र, दर्शन बार्हिक जड़वादो चिन्तन के अत्यधिक निरुद्ध है। ज्ञान में जड़ व्यक्ति के अन्तर्मुखी होने पर ही उत्पन्न होता है और वह बुद्धि-तत्त्व के कारण ही अभिव्यक्ति का स्वरूप धारण करता है। जड़ महान् व्य-क्तिता में अत्यधिक माना में उपस्थित रहता है। व्यक्ति में जड़ जीव प्रजा के प्रकारका संकेत है।

जड़ के सन्दर्भ में सुप्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक थिमसण्ड फ्रायड के विचार अत्यन्त उपयोगी हैं। उनके अनुसार जड़ को मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं का एक ऐसा जटिल संगठन मान सकते हैं, जो हृद् तथा आत्मा जगत् के बीच मध्यस्थ के रूप में कार्य करता है। उसने माना है कि जड़ कार्य- सम्पादन कुशलता से करता है तो सन्तुलन बना रहता है। यदि जड़ की मान में बाधित या कमो जा जाती है

तो अस्तित्व ही सामयिकता की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। वह है कारण ही सामयिकता की भावनाएँ कला, साहित्य आदि में व्यक्त होती हैं। प्रायः ही सामान्य व्यक्त व्यक्तित्व को ही (हृदय) वह ही उत्पन्न वह है सम्पत्ति ही निर्मित माना है। वह है उत्पन्न सामयिक उस वह कला ही है ही निर्णय, अनुभव और संकल्प की शक्ति रखती है। उत्पन्न वह (हृदय ही) व्यक्तित्व की समाप्तिपूर्ण करने वाली वह शक्ति है ही संकल्प, नैतिकता ही आदर्श द्वारा बदलती ही विकसित होती संशयानुगत नैतिक प्रवृत्ति के द्वारा निर्मित होती है।

प्रायः ही उपरान्त कार्य प्रोद्गम में वह सम्पत्ति धारणाओं पर ही विचार प्रकट करते हुए कहा-

“ वैयक्तिक प्राणों का उत्पन्न, नैतिक, मानसिक, आध्यात्मिक तथा अन्य शक्तियों संपत्ति हृदय उत्पन्न तथा उत्पन्न ही कि एक मानव है, में उसके वह ही उत्पन्न तथा उत्पन्न उत्पन्न मानता है, और उत्पन्न ' दि हृदय ' के नाम से संशोधित करता है।^१

उत्पन्न वह ही व्यक्तित्व के मन ही उत्पन्न पर उत्पन्न प्रभाव पड़ता है। वह व्यक्तित्व ही प्रत्येक वैयक्तिक कार्य की विशेष रूप है विशेष सिद्ध करने का प्रयास करता है। ही उस व्यक्तित्व के जीवन पर मनोवैज्ञानिक रूप है प्रभाव पड़ता है। यदि कोई

१- डा० गोविन्द रमणील- हिन्दो साहित्य : आधुनिक परिदृश्य ,

कलाकार उन्मुख है वह है प्रशिक्षित है तो वह अपनी प्रत्येक कृति को मासता देने का प्रयास करता है। वह उस कृति को बुटियों को भुलकर अपने कृतित्व को विशिष्ट बनाने का प्रयास करता है।

अहंवाद का भाव अस्तित्ववाद पर अधिक पड़ा है। उष्ण अस्तित्ववादी दर्शन अहंवाद से परिचालित है। नोल्ते का दर्शन भी अहंवाद को व्याख्या है। वह भावना मनोवैज्ञानिकवादो वचनवादी के मध्य से गुजरती हुई साहित्य में व्याप्त हो गई। क्रमशः के अहंवाद ने साहित्य पर अपनी छाप लगा दी जिससे कहो 'स्व' का उद्घाटन हुआ है जो कहो पर उसको अभिव्यक्ति हुई।

साहित्य में अहंवाद का महत्वपूर्ण स्थान है। भारतीय साहित्य में अहंवाद आत्मवाद के रूप में प्रचलित हुआ है। प्रयोगवाद में अहंवाद विशेष रूप से सामने आया। 'तार सप्तक' 'दूसरा सप्तक' में अहंवाद का नया स्वरूप वैश्वित हुआ है। सुबितबीध के बोधन के सन् १९३८ ई० से १९४२ ई० तक के दिनों में अभिव्यक्तिवाद के थे।

अहंवाद 'आत्म-संवाद' में देखा जा सकता है। एक निदर्शन प्रस्तुत है :

सत्य को व्याख्या समझें हैं (जो सदा है जीवनीय)

सफल हैं (पर प्रष्ट हैं) अविवेक हैं (जागृत हैं में) । २

१- स० वचन- तारसप्तक पृ० ६

२- वही पृ० ३२

एक अन्य रचना ' नुतन उर्ध्व ' में आधुनिक उर्ध्व पर व्यंग्य किया है :

उर्ध्व भाव उड़ा हुआ है तोरे पल में
जैसे घड़ी पर छट्ठा है
धृष्ट हृष्टरुक्ता उन्मत्त । १

इससे ज्ञात होती है कि सुकितवीर ने रचना आत्मसात् कर लिया था कि वह काव्य रचना में आत्मवाद, आत्म ज्योति के रूप में व्यक्तित्व हुआ है। नेमिचन्द्र की कविताओं में उर्ध्व का दर्पचिह्न रूप सामने आया है। ' हृक्ता उन्मत्ता ' का एक विन प्रस्तुत है :

हृक्ता उन्मत्त कर गीं जल्ले लड़े रहने का
कर्मगत दर्प ,
उन्मत्ता का गर्व
अपनी पूर्णता का वह निरन्तर मान । २

भारतभूषण अग्रवाल ने ' मे जीर मेरा फिट्टू ' रचना में अर्थवाद का प्रभाव है -

एक दोरही वाली मेरी एक दिह में
हो ' मे ' है ।
एक मे
जीर एक मेरा फिट्टू ।
मे तो, हेर, पागली सा बतर्क है
पर , मेरा फिट्टू ?

वह जोनियस है। १

कुछ लैखित कई को खनारें भी प्राप्त होती हैं। जैसे- 'सोमार', 'आत्म स्वोक्ति' आदि। इसी प्रकार श्राकर मास्वी को 'मे और तालो' का को प्यालो 'कविला मे लण्डित कई का स्मरित प्राप्त होता है। गिरिजाश्रम मास्वी का एक उदाहरण द्रष्टव्य है :

'मे कस्तता बाजिंगा इतिहासों के ऊपर
कमपि पाषाण हुआ जाता।' २

उक्त निर्वर्तन में भी कई के प्रति निष्ठा का स्वर विद्यमान है। प्रयोगवादियों में इसे ऊँचा कल्यादी स्वर 'वर्ण्य' का है। वर्ण्य जहाँ विद्रोह करने हैं, वहाँ वे अपने कई को विभिन्न रूपों में प्रस्तुत करती हैं। उनकी आत्मविश्वासिता जानी तोत्र 'हृद' 'वोर्य' को पुकार देता है कि 'आत्मवायो' ठहर ही नहीं पाता-

ठहर ठहर आत्मवायो ।

बरा हुन ते

मे हृद वोर्य को पुकार बाज हुन बा
रागातोत, वपस्फोत, आत, कृतनीय ।

मेरो अवहेलना को टक्कर सहार ते-

पाण भर स्थिर लड़ा रह ते-

मेरे हृद पीरुण को एक चोट सह ते। ३

१- सी० लजिय - तार सप्तक पृ० १७

२- वही पृ० ११५

३- वही पृ० १२६

विभिन्न स्थानों पर ज्ञेय का ज्ञानाद
ज्ञानाद की वात्सल्य कर गया है। एक निदान उद्धृत है :

मैं ही हूँ वह पदाज्ञानाद रिरियाता कृता
मैं ही वह मोनार निरार का प्रार्थी मुत्ता
मैं वह सम्पद-तल का जर्तनीन निरु-मिन्तुक
कौर ही, निन्तय
मैं ही वह ताक-सुम्प ,
अपस्तक मुति , अनयकथ गति, बर निरयति
जो पार दिये जा रहा नील मरु-प्राणिज मन का
मैं ही ये तब, ये सब मुक्तमैं जोषित
मेरे कारण जगत् - मेरे ज्ञान में अस्तित्व प्राप्त । १

ज्ञेय ने जहाँ की अपनी काव्य-रम्भा-प्रक्रिया
के दाजों में जाना वात्सल्य कर लिया है कि वह वात्सल्यनिष्ठा
वात्सल्य, वात्सल्यनिष्ठा, ज्ञानाद, वात्सल्य दुःख एवं वात्सल्यरति के रूप में
स्मायित होता रहा है।

‘दुःखरा सप्तक’ वाते-जाते क्षण का वह
अपने प्रत्येक कार्य की विशिष्टता प्रदान करता जा रहा है। भवानो प्रसाद
कि ‘कमल के फूल’ ‘अपने प्रिय की’ तीर पर के ‘न बनाकर
‘मानस’ के बोध के जाता है।

उसी प्रकार जम्हीर बहादुर सिंह की अपनी

१- सं० ज्ञेय - तारुण्यक पृ० २५-२६

२- सं० ज्ञेय - दुःखरा सप्तक पृ० ६

प्रेम की विविध रूप देती है जिससे उनके कल्याणों स्वयं का उद्घाटन होता है :

‘ बस कहेंगा प्रेम
फिस्त उठेगा ।
कुर्सी के मुहर ।
उफान उठेगा ।
घात बाग़र । ’ १

नरेश फिस्ता का कल्याण प्रणय में परि-
वर्तित हो गया । इस संदर्भ में उनको ‘कल’ कविता महत्वपूर्ण है :

‘ कल की नट्टान की यह फौदती
का रही बाबाजकिलको ।

० ०

मे कल का मेघ हूँ ।
उन दिला की दासियों के संगमरमर के करी में,
बस वस मेरा है यमा ।

० ०

बाब मेरे कल कम्पी पर गगन बैठा हुआ ।
कल पर मे कल किसके ? २

धम्मोर भाखो की रज्जानों में जहाँ
प्रणय और धम्मोर के बि. फिस्ता है वहाँ लम्बित कल तथा प्रेमो या

१- सं० कलिय- दूसरा अक्षर ५० १०४

२- वही ५० १११

प्रेमिका को विशिष्ट मानने का जो दर्शन होता है। 'वही हर कलाकार है ' कविता में नास्तो बो का लक्षित वह ' सुजन को ध्यान ' की भुलाने का आग्रह करता है :

" रुका हुआ गया रुक जाऊँ का सुजन
विमिश्रित नयन में डगर भुलकर
कहाँ सी गयी रोजनी को किस
बादलों में कहीं ली गया
नया दृष्टि का सप्तर्षी स्वप्न ।

० ०

सुजन को ध्यान भूल जा देवता ॥ १

प्रपञ्चवादी काव्य में जलवादी विस्तार प्राप्त होता है। अपनी वाक्यी लक्ष्य मानने का एक उदाहरण प्रस्तुत है :

" घर में सुनता रहा बराबर ।
मे हूँ, आदम का वीरव ,
मानव हूँ, सुन्दर हूँ जना ।
कितना नहीं ज्ञान
तेजिन मेरे कभी नहीं ।
जाना था अपना धर्म ,
कि भूप और सामन्तों में यो
बम्बू के भूप । " २

१-१० ज्ञान - दुष्टरा सप्तक १० १६

२- १० ज्ञान- ज्ञान के प्रपञ्च, नील - वास्तविक नगरी काव्यगत १०६२

एक प्रकार का होता है कि प्रयोगवाद
 एवं प्रपञ्चवाद को एकतावादी में अवैवादी स्वर विद्यमान है। अवैवादी
 प्रयोगवाद के समोप है। अतः प्रयोगवादी एवं प्रपञ्चवाद में कोई कवि-
 तावादी पर व्यक्तित्ववाद का प्रभाव है।

(6) भोगवाद

‘ भोगवाद ’ वास्तव शब्द हेतुनिज्य
 का पर्याय है। यह वास्तव शब्द हेतुनिज्य ’ को उत्पत्ति मानने
 मानने के हेतुनिज्य शब्द से हुं है किन्तु वास्तव्य सुल होता है। इसी
 कारण भोगवाद को सुखावाद के नाम से अभिहित किया जाता है। सुखावादी
 दर्शन को एक सम्प्रदाय परम्परा रही है। सुखावादी दार्शनिक एपिक्यूरस
 (342-270 ई० पू०) के अनुसार ‘ मनुष्य का जीवनवृत्त है, जन्म
 के साथ एकता वास्तव्य होता है, मृत्यु के साथ एकता अन्त ही जाता
 है। बुद्धिमत्ता को मान्य करो है कि जो स्वयं से विकास करो है, विकास
 से वृष्टि या सुख जीवन में केही मूल्य को वस्तु है। वास्तव ’ एपिक्यूर-
 रियन ’ शब्द का अर्थ होता मनुष्य है जो ‘ लाजी फिली और मोज
 करो ’ को अपना लक्ष्य बनाता है। एपिक्यूरस के दर्शन में व्यक्तित्व-
 वादी विचारधारा को अत्यधिक अवतारणा हुई क्योंकि यह व्यक्तित्व
 के सुख को अधिक महत्त्व देता है, जबकि व्यक्तित्ववाद ‘ व्यक्तित्व ’ को
 केन्द्र मानकर अपने दर्शन का प्रसार करता है। भारतीय सुखावादी दार्-

१- हिन्दो विश्वकोश - खण्ड ६ पृ० ६

२- पश्चिमी दर्शन- (ऐतिहासिक निरूपण) लेख डा० दीपक चन्द

निकी में कार्यांक का नाम प्रसिद्ध है। बायुनिक भोगवादियों में बेथम (१४७८-१८४२ ई०) , मिस्त्र (१८०६-१८७३) , हार्वर्ट स्पेंसर (१८२०-१८७३) तथा हेनरी सिजविक (१८१८-१८७० ई०) कादि प्रसिद्ध हैं।

भोगवादो दार्शनिकों का विचार है कि विश्व में सुखानुप्राप्ति के अतिरिक्त अन्य कोई मूल्यवान फलार्थ नहीं है, यह सत्ता, सौन्दर्य एवं ज्ञान को मान्य रूप से स्वीकार करती है। साध्य रूप में नहीं। यह कारण साध्य सम्मान सुख को मानती है। भोगवादो कर्म का मूल्यकर्म भी सुख को कर्षोटी पर करती है। मनुष्य एक भोग विलास प्रिय प्राणी है। उसकी दृष्टि सदैव भोग विलास की ओर प्रवृत्त रहती है। वह सुख प्राप्त करने के लिए सत्त प्रियमाण रहता है। वह 'स्व' भाव से सुख का अन्विषण है। उसका सग्न अन्विषण सुख- प्रवृत्ति एवं दुःख- निवृत्ति है। मुक्तः भोगवाद की दो भागी में विभाजित किया जाता है :

१- मनोवैज्ञानिक भोगवाद

२- नैतिक भोगवाद

मनोवैज्ञानिक भोगवाद का सम्बन्ध

व्यक्ति के मन, व्यवहार तथा भावात्मक विषयों से है। इसमें सुखका को एक मानसिक तथ्य के रूप में जोधित किया जाता है। प्रसिद्ध मनो- वैज्ञानिक फ्रायड एवं रूग के सिद्धान्तों के प्रसार के कारण काम सुख एवं योनि सम्बन्धो विचारों में आन्धि हुई। वह व्यक्ति योन वर्जनाती

के रूप में प्रकटित हुआ। अतः उसके सुख के लिए काम सम्बन्धी व्यक्तियों को जीवने के प्रयत्न होने लगे।

नैतिक भोगवाद के अनुसार विश्व में सुख भोग को उत्पन्न करना व्यक्ति का मुख्य कर्तव्य है। ये जीवन का चरम लक्ष्य समझते हैं। नैतिक भोगवाद के दो भेद किये गये हैं :

१- स्वपरक

२- परपरक या सर्वपरक

इसको भी दो भागों में विभाजित किया गया है :

(क) स्थूल

(ख) परिष्कृत

इस प्रकार सुख मिला कर नैतिक भोगवाद के चार भेद हुए जिनके संदर्भ में नीचे विचार किया गया है :

१- स्थूल स्वपरक भोगवाद

यह सुखों में गुणों को खपेला पाया का भेद मानता हुआ व्यक्ति के निजी सुख की प्राप्ति को महत्त्व देता है। यह शारीरिक एवं दृष्टिकोण से वर्तमानकालीन सुख की महत्ता प्रदान करता है। इसके लिए भविष्यकाल के सुख व्यर्थ हैं। इसका परम लक्ष्य 'ताजी पिजी कीर पीज उड़ाजी' है। यह ज्ञान के धिरोदाक सम्प्रदाय

तथा उसके संस्थापक ऐस्टीफस के सम्बद्ध हैं। भारतवर्ष में जावांक दर्शन या लोकायक दर्शन जैसे सिद्धान्तों की प्रतिपादित करने में विशेष महत्वपूर्ण है। शारीरिक सुख की महत्त्व देने वाले इस सिद्धान्त का प्रभाव जाधुनिक साहित्य पर अधिक प्राप्त होता है। हिन्दो कविता में कविता का काव्यान्वित शारीरिक ही इन्द्रियजन्य सुख की महत्त्व देता है। भूखी पोड़ी या बोट पोड़ी, हिप्पी, नंगी पोड़ी, खाना पोड़ी आदि के नाम से ऐन्द्रिक सुख में भटकते हुए युवा विद्रोह ने नव धृन् में विशेष महत्त्व दिया जिसके कारण यौनपरक कविताओं की भरमार होने लगी ।

२- परिष्कृत स्वपरक भोगवाद

इसके प्रतिपादक यूनान के दार्शनिक एपिक्युर (३४२- २७० ई०) हैं। इन्होंने शारीरिक सुख के साथ बौद्धिक सुख की भी स्वीकारा है । इन्हें सुख की भावात्मक अवस्था की अपेक्षा वात्मा या चित्त की शान्ति अधिक प्रिय रही है। ये व्यक्ति का चरम लक्ष्य वर्तमान काल के दार्शनिक सुख की नहीं मानते , बल्कि सुखों- जीवन या आनन्द की महत्त्व देते हैं। भारत में भी शिष्ट जावांक कहलाने वाले ऐसे दार्शनिक भी हुए जिनको गणना इस प्रकार के भोगवादिनों के वर्गमें की जाती है। इसमें प्रमुख रूप से ' कामधून् ' के प्रणीता श्री वात्स्यायन हैं, इन्होंने काम या सुख भोग की ही परम पुत्र्णार्थ माना है।

३) सूक्ष्मपरक भोगवाद

अभिव्यक्तिगत सुख भोग की वपेक्षा सर्व-
सामान्य या सार्वभौम सुख को फलत्व दिया है। व्यक्ति का वास्तविक
व्यक्तिर्ता का अधिक है अधिक सुख है, व्यक्ति का वपना ही सुख नहीं।
इसकी उपयोगितावाद भी कहते हैं।

इसके प्रतिपादक वैष्णव हैं जो कि सुखों में
गुण भेद स्वीकार नहीं करते, बल्कि उनके परिणाम की ही शीघ्रता,
व्यक्तिः शुद्धता, समोपता, निश्चितता, फलसुखता एवं विस्तृति की
स्वीकार करते हैं।

४) परिष्कृत परंपरक भोगवाद

इसके प्रतिपादक श्री वे० एस. मिश्र (१८०६-
१८७३) हैं। सुखों में गुणभेद मानना भोगवाद के लिए मिश्र को एक विशेष
उपसृष्टि मानी जाती है। भोगवाद की मिश्र को एक अन्य देन यह है कि
वैष्णव द्वारा स्वीकृत बाह्य नियोगों के अतिरिक्त भक्तिरता के आन्तरिक
नियोग की स्वीकार करना है। परंपरक परिष्कृत भोगवाद की भारतीय
परिष्कारवाद की संज्ञा देते हैं।

साहित्य में भोगवाद की अभिव्यक्ति यौन-
परिहर्षणावर्ती एवं नारी-पुरुष के असीमित चिन्ता के रूप में हुई है।
संस्कृत में इसकी परम्परा रही है :

कालिदास के 'कुमारसम्भव' , 'रघुवंश' ,
 'शकुन्तला' में बरसोस काम कुल का वर्णन प्राप्त होता है। हिन्दु के
 रीतिकालीन कृमारपरक रचनाओं में नायक- नायिका के कामोद्दीपन झोडाओं
 का मुक्त रूप से वर्णन हुआ है। बाधुनिक कविता में इसका पुनः आविर्भाव
 हुआ। बाधुनिक युग में युद्धों विभोषिका से यौन सम्बन्धों पर प्रभाव
 पड़ा है। ऐनियों को पुरानो जीवन- निष्ठा , लीन्दर्व-विरोध और
 अनुभूति समाप्त हो गयी। प्रतिपण पहराने वाली मृत्तु ने उन्हें कामुकता
 की ओर प्रेरित किया। युद्धोत्तर आर्थिक विपन्नता ने यौन उत्तुङ्गता
 को प्रयत्न दिया। वैज्ञानिक जन्मजण एवं नीतिकवादो दृष्टिकोण ने
 लोभ, ईर्ष्या, समाज आदि के सम्बन्ध में जनस्थान के विचार उत्पन्न हुए।
 ऐसे नैतिक मन्थन दृष्टि। लिप्ता एवं मनोविज्ञान से काम हुआ एवं यौन-
 परक झोडाओं को प्रयत्न दिया। कतः कवि को यौन परक भावनाएं प्रकृत
 वेग के साथ साहित्य में व्याप्त हो गईं। बाधुनिक जन- जीवन में नीतिक-
 वाद के साथ भोगवाद भी सर्वत्र व्याप्त हो गया।

प्रयोगवाद में भोगवादो प्रवृत्तियाँ क्षान्त
 सोझ तापमान लेकर अवतरित हुईं कि कवि अपने 'हृद वीर्य' को पुनार ,
 सुनने की साक्षात्कृत होने लगा। सुखितबोध के सुखसुखरक भोगवाद के
 कतिपय उदाहरण प्रस्तुत हैं :

जी भेस्ता धीरे हृदय की निज हृदय पर
 जात्म उत्पुच्छीकरण की लुलो केसा में कि जब
 दो वात्मार
 बालकों से नम्र होकर लड़ी रल्लो । १

एक उदाहरण परिष्कृत स्वपरक भोगवाद का प्रस्तुत है :

मैं उनका ही होता ,
जिनमें मैं स्व- भाव पाये ह ।
वे भी हो दिए बंध हैं,
जो मर्यादाएँ लाये हैं। १

परिष्कृत परपरक भोगवाद के उदाहरण भी सुश्रुतिगीत की कविताओं में मिलती हैं :

आत्मा पैरो-
उस ज्वलन को भूमि में तु स्वयं बिस्ती
देत, जल्दी स्पन्दनों में क्या उत्कृष्टता हो गया है। २

मेघिनन्दन के कविताओं में परस्परक
स्व परिष्कृत स्वपरक के उदाहरण प्राप्त होते हैं जो क्रमशः इस प्रकार
हैं :

स्व स्वपरक भोगवाद

वह वैभुध- ता है,
उसके नयनों में झूल रही किस रूप परो को लगन-
वाद ,
उसके मन में कितनी पोट्टा, उसके मन में कितना
विज्वात ।

१- ० ब्रह्म- तारुण्यक -सुश्रुतिगीत - मैं उनका हीता पृ० ३५

२- - सीत बाई पृ० १५

बीर तनो वह ना उठता है ।

गोलि गाने । १

परिष्कृत स्वपक्ष भोगवाद

बाज ही प्रिय ,

क्यसिए ही बाज फलती बार ही ,

मे पागया हूँ तुम्हें प्रणम्य ।

बोम्ब पाया हूँ ।

कि जतनो दूर से । २

एव वीर रोषसि के कवि गिरिजा कुमार माथुर की रचनाओं में परिष्कृत स्वपक्ष भोगवाद सर्व रक्षित स्वपक्ष भोगवाद के जतने गुणित चित्र प्राप्त होती हैं कि एक को दूसरे से क्लृप्त करना सहज नहीं है। तब भी कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) बी झाड़ी का वह रूपवाप मिलन था

उसी रेडियम के हल्की झाला में

तुम्हें का वह लका हुआ चुम्बन वैकित था ।

कमरे की सारी झाड़ी के हल्के स्वर सा

झुकी थी बी एक दूसरे में मिल- गीत कर

झुकी थी उस बाधों रात । ३

१- तारसप्तक - नेमिचन्द्र - कवित्त गाता है पृ० ५३

२- स्व सण्य में पृ० ६२

३- बी० बलिय- तार सप्तक- गिरिजाकुमार माथुर - रेडियम की झाला

- (२) लीये लीये हुटेहुर लालो कमरे में ।
 गूँव रही फिस्सो रंगीन मितन को यादें ।
 नौद भरे बालिंगन में झड़ो को स्थितन
 मोठि जधरौ को वे धोमो - धोमो बातें । १

परिष्कृत स्वपरक भोगगाय

- (१) जाय है केसर रंग रंग बन
 रंजित शाय मो फागुन को खिलो पोखो- कली सो
 केसर के बसनों में बिपा तन ।

०

०

गौरि कपोली पे हौसि सेवा जाती
 पकिलि हो पकिलि के
 रंगीन ' शुम्बन को- सो तसार्ह । २

- (२) जाय बबानक खो- सो संज्या में
 एक सिलक के कुर्ती को खिलवट में लिपटा
 गिरा रेलमो झड़ो का कौटा सा टुकड़ा
 उन केसबड़े गौरों कसाइयों में जो तुम पकिलि धो ।

०

०

जब कीर के उस टुकड़े पर ।
 लिखि सगी तुम्हारी सब लज्जित तख्तों
 सेव सुनइसो ।

१- तारखतक - मिर्जाकुमार माधुर- भोगा दिन ५० १७६

२- बहो

- जाय है केसर रंग रंग बन ५० १७९

करी दूर बन्धन में जूझी का भर जाना । १

(२) एक विदाई को संजवा में

बीड़ बाँधनी सो वे बाँधि

बाँधु- रुको मज्झी जसि । २

गिरिबाबुपार माथुर की कुछ कविताओं में परिष्कृत स्वपरक भोगवाद, परिष्कृतपरपरक भोगवाद या परीक्षावाद में परिवर्तित होता है। इस संदर्भ में कुछ कविता विशेष महत्वपूर्ण हैं, इसमें दोती प्रकार के भोगवाद का दर्शन होता है -

‘बीपा के सति मुक की तख्तोर सलौनी ,
गीतम बनी के फलै किस तरह मिटो धो
तोस वर्ण तक रणो राज मदिरा को लासो ।

०

०

वहाँ विश्व- जय हुई प्यार के एक छूट से । ३

कविय के काव्य में भोगवादी प्रवृत्तियाँ अधिक प्राप्त होती हैं। उन्होंने स्वोकारा भी है - ‘बाधनिक गुण का साधारण व्यक्ति यौन-वर्जिताओं का श्रेष्ठ है’ इस विषयों का परिणाम है कि वाज के मानव का मन यौन-परिक्लपताओं से लदा हुआ है और वे कल्पनाई सब दमिती और ईदिति हैं। उसकी धीन्दर्य-माना

१- तारुस्तक - गिरिबाबुपार माथुर पृ० १७३

२- वही पृ० १७६

३- वही बुद्ध पृ० १८७-८८

को छोड़ जाशान्त है। उससे उपमान सब यौन प्रतीकार्य रसी हैं।^१ कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

स्थूल स्वपरक भोगवाद -

घिर गया नम, उमड़ बाये मेघ काले,
भूमि के कम्पित उरीजों पर कुका- सा
पिण्ड, स्वाधास्त, बिरातुर ।
हागया छन्द का नील वस्त्र-
ब्रज - सा यदि तड़ित से भुलथा हुआ- सा ।
बाह, मेरा स्वास है उल्लास
धमनिवी में उमड़ बायो है लहू को धार-
प्यार है वधितप्त-
तुम कहाँ हो नारि ? १

परिष्कृत स्वपरक भोगवाद-

निर्मिमेज लीजन, युगल जिसमें कि रसा कवि के
देखे जा रहे हैं, एक हागापय
किन्तु दोषितमान नारी मुल की । २

स्थूल परपरक भोगवाद-

सहित को फिर नायिका?
शास्त्र- संगत प्रेम छोड़ारै,
एम्झती थी बादलों में

१- तारुण्य - वयस्य पृ० २७२

२- वही , वीर्य - सावन-मेघ पृ० २७६

३- वही , नार का गजर पृ० २८६

आर्द्र , कच्ची वासना के धूम- सी । १

कव्य रचनाओं में भी भोगवादी यौन
परिक्लृप्ताओं के दर्शन होते हैं। जैसे- ' शिशिर की राधा- निहा ' ,
' बेहरा उदास ' , ' भादों को उमस ' , ' बाहु पर रुके हैं '
आदि ।

भवानी प्रसाद मिश्र की कुछ कविताओं में
भोगवाद के दर्शन होते हैं। एक दर्शन परिक्लृप्तस्वपरक भोगवाद का द्रष्टव्य
है :

' फिसली- सी फहल्यो, सिल्लो बसि लबोलो ली,
हन्त्र धनुष रंग रंगी, बाज में सहज रंगोलो ली । १

शकुन्त माथुर की रचनाओं में कुछ निर्दोष
देसिए-

परिक्लृप्त स्वपरक भोगवाद-

' हाँसे - हाँसे को फलचाप
बबो फल के साथ गुनाहें फड़तो
तंद्रिल कत्तकों का कटकाव
हुलसना फिर फिर साफ गुनाहें फड़ता । २

सुल परपरक भोगवाद-

सुन्दरियों के गील बदन,

०

०

१- तारुष्यक- सावनमेघ पृ० २७६

२- बूझरा उदास, भवानी प्रसाद मिश्र - फल वच्चा पृ० १४

३- बबो , शकुन्त माथुर - कनो रात गये पृ० ३६

मुझको जाये नरम कलाह ।
 शीघ्र फुहारों ऐग सब डालि ।
 बयै नृदियौ ।
 फिजली साह्यो ।
 मरत गये ऐग ।
 मरत गये तन । १

हरिनारायण व्यास की रत्नावली में परिष्कृत स्वयम्भूत भोगवाद के विषय प्राप्त होते हैं- 'उठे बादल मुझे बादल', 'नशोत बाद', 'नृदिय' आदि । हमीर बहादुर सिंह की रत्नावली में रोमांस के परिपूर्ण विषय प्राप्त होते हैं। भोगवाद के विभिन्न विषय प्रस्तुत हैं :

परिष्कृत स्वयम्भूत भोगवाद-

- (१) सुन्दर ।
 उठावो ।
 निज वन
 बीर- कल- उमर ।
 बवारो
 मरो गैदा को
 स्वर्ण स्थित ।
 बवारो मरो गैदा को । ३

-
- १- बुधरा सप्तक- , अकृन्त माथुर - केशर ऐग ऐग वागन पृ० ३०
 २- वही हरिनारायण व्यास पृ० ६०, ६१, ६२, ६३
 ३- वही हमीर बहादुर सिंह स्व मुद्रा से पृ० ८८

(२) ' बालि दोष ।
 क्षुर नारि ने ।
 पिय आगमन की ।
 लंघ्या की फलें भुकी ।
 फलें कलें भारी
 पिय की छुसलि प्यारी ने ।
 अगिया से दोष पर
 बालि ।
 पिय आगमन की । ' १

सुल परपरा भोगवाद-

सुरज की बालना जैसे नदियाँ हैं-
 इन मराना रानी की जम्ह
 ' उन ' की रूप प्रसन्द है । ' २

नरेश कुमार मेहता की रचना ' उच्छा-१ ' और ' उच्छा-२ ' में परिष्कृत स्वपरा भोगवाद प्राप्त होता है। रघुवीर सहाय की रचना ' अनिलय ' में सुलपरपरा भोगवाद का चित्र द्रष्टव्य है -

' जब कमो आगामी बातों का तनिक भास हुआ
 पर पुरुष है जैसे नवयौवन लज्जावती
 नयनछटा लेती है बल्दो - ' ३

१- दूसरा सप्तक - बालि दोष पृ० ६२

२- वही - शरीर स्वप्न पृ० ८७

३- वही - रघुवीर सहाय, अनिलय पृ० १५२

अन्ध स्त्रावी में 'बसन्त', 'बाफना',
'मसा' आदि परिष्कृत स्वपरक भोगवाद की विभिन्न दृष्टिकोण से
व्यापित किया गया है।

धर्मोत्तर भास्वी को स्त्रावी में प्रायः
रोमांच, लीन्दव्य के सम्मिश्रण के साथ साथ स्मृतस्वपरक भोगवाद एवं
परिष्कृत भोगवाद अधिक प्राप्त होता है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

स्मृत स्वपरक भोगवाद

(१) इन फीरीबी हीठी पर बरवाद ।

फेरी बिन्दगी ।

गुलाबी पहिरी पर रू छलकी सुमई आभा
कि ज्यों कलट बदल लेती कमो बरसात को दुपहर ।

इन फीरीबी हीठी पर ।

तुम्हारे स्पर्श की बादल- सुलोकनार नरमई ।

तुम्हारे बदन की जाड़ भरी मदहोश गरमाई ।

तुम्हारी स्तिवनी में नरगियों की पालि गरमाई । १

(२) तुम्हारा मन अगर सोनू ।

गुलाबी तन अगर सोनू

तब मलय्य झकीरी से ,

तुम्हारा चिन लोनी प्यास के रंगेन हीरी से ,

कसी से तन, किरन- सा मन ।

विधित छतरीगिया वधित । २

१- दुबरा सप्तक, धर्मोत्तर भास्वी, गुलाब का गीत पृ० १७२

२- वही पृ० १७४

परिष्कृत स्वयंभूत भोगवाद-

(१) ये शहर के ज़िंदे से उबले धूलि से पाँव
 मेरो गीद में ।
 ये शहर पर नाक़ी ताँबे कमल को हाँव ।
 मेरो गीद में ।
 दो बड़े पाछुम बादल, देवताओं से लगाते दाँव ।
 मेरो गीद में । १

(२) तुम कितनी सुन्दर लगती हो,
 जब तुम ही बातों ही उदास ।
 ज्यों किसी गुलाबी दुनिया में,
 छूने लँछर के आसपास
 मदमहो ज़िंदगी जगती हो ।

०००

बम्पन वहाँ की झुंझ ज्यों
 उड़ जाती केसर की उधारी । २

नैन के प्रपञ्च में नरेश कुमार को
 रचनाओं में परिष्कृत स्वयंभूत भोगवाद के चित्र प्राप्त होते हैं। इनमें
 'प्यार का गीत', 'क्रीनकथ', 'विरह', 'असुरीय', 'वायुनिक नर्तक'
 का स्वगत', 'परा-वर्ति', 'मान', 'शुक्रिया' आदि
 महत्वपूर्ण हैं। 'शुक्रिया' में एक परिष्कृत स्वयंभूत भोगवाद का उदाहरण
 प्रस्तुत है :

-
- १- दूसरा चयनक- भारतो- तुम्हारे पाँव मेरो गीद में पृ० १७६
 २- वही . उदास तुम पृ० १७८

‘ तुम्हारी बात के काबल है ।
 धूमिले बादल उस शाम किसी
 शीत के बाँचल से लहराए हैं । ’ १

(६) पलायनवाद

‘ पलायन ’ शब्द का अर्थ है- भागने की क्रिया अथवा भाग । ‘ पलायनवाद का अर्थ भाषा में पर्याय ‘ रस्के-फिज्म ’ है। इसका अर्थ यह है कि सारे जीवन-वेत्स के मध्य रहे वेत्स भी होती हैं जो विकास से बन जाते हैं और फिर समष्टि बनाना है विकृति उत्पन्न कर देती है। साहित्य में इसका प्रयोग मुख्य रूप से उस प्रवृत्ति को व्यक्त करता है जिसमें वस्तु-स्थिति और यथार्थ केन्द्राकर या जीवन और उसकी अनिश्चयताओं को उपेक्षा करके किसी दिवा-स्वप्न या स्वप्न लोक या व्यर्थार्थ काल्पनिक स्थितियों में साहित्यकार उस और आनन्द लेकर जीवन को अनुत्तर दायित्वपूर्ण ढंग से जीता देना हैयकर सम्भ्रमता है। जीवन और यथार्थ से परावृत्त एवं संस्कारहीन तत्त्वों से विस्थापित मनोवृत्ति को व्यक्त करने वाला साहित्य पलायनवादो साहित्य कहा जाता है। पलायनवाद का कोशगत अर्थ है- ऐसा साहित्य जो जीवन संघर्ष से कुछ समय के लिए हमें दूर ले जाये, जैसे- जादूखी उपन्यास, सुहान्ता नाटक, चित्रपट आदि । पाश्चात्य विद्वान् हिन्दू ने अनेको साहित्यकोश में लिखा है कि पलायनवादो साहित्य में जीवन

१- नरैन के प्रपञ्च - नरैन - सुक्रिया पृ० १०४

२- नालन्दा विद्यालय लखनऊ सागर पृ० ८१२

३- वृत्त अनेको हिन्दो कोश पृ० ४६६

४- हिन्दो साहित्य कोश भाग १ पृ० ४८३

से फलान्न हो ही यह बात यह नहीं। इसके द्वारा जीवन का अनुसंधान भी होता है, क्योंकि ऐसे साहित्य द्वारा हम जीवन की नारद अनार-
वृत्ति के कुछ भागों के लिए हटकर पुनः अधिक उत्साह से जीवन संघर्ष में भाग ले सकते हैं।^१

फलान्नवाद के संदर्भ में डा० रमन नागपाल ने अपने ग्रंथ में विभिन्न परिभाषाएं प्रस्तुत की हैं। डा० नागपाल का मत है कि "फलान्नवाद से हमें केवल खाना ही आभास होता है कि मानव अपनी सम्पूर्ण समस्याओं का समाधान खोज कर केवल स्वार्थ में ही विवरण करता है और कल्पना की गिनियों में ही तल्लीन रहकर उसी की अपना वास्तविक दुस्मय उधार सम्पन्नता है।"^२

फलान्नवाद किसी भी साहित्य प्रकार में पाया जा सकता है। आधुनिक काव्य में हायावाद उत्तराध्यावाद, प्रयोगवाद, नये कविता आदि में प्रमुख रूप से प्राप्त होता है। प्रयोगवादो साहित्य में भी फलान्नवादो प्रवृत्तियाँ प्राप्त होती हैं। प्रयोगवादो कवि जीवन के प्रति हूँठा, आत्मा, विद्रोह एवं भोगवादी प्रवृत्तियों की अधिक महत्व देता है। इसके परिणामस्वरूप वह उन निराशा घटन की स्थितियों से गुजरता हुआ जीवन-बोध वाक्य से मुक्त होकर अन्य मार्ग लीकता है।

प्राम विश्व युद्ध के उपरान्त भारतीय जनमानस निराशा एवं आत्मा के बीच में झुलता रहा। आत्मिक,

१-हिन्दो विश्वकोश - खण्ड ७ पृ० १२६

२- डा० रमन नागपाल - आधुनिक हिन्दो काव्य में फलान्नवाद पृ० ४४

धार्मिक, वाणिज्यिक, राजनैतिक एवं तत्त्वज्ञान विषयमहाकाव्यों से उत्पन्न किरणें किरणों के कारण ज्योति के मन में वैराग्य एवं दुर्बलता के भाव जाग्रा होती हैं। अनेक कृतुभव किया कि इन परिस्थितियों से बचने के लिए जल्दी छुटकर नये मार्ग निकाला करते हैं। इस कारण वह प्रयोगों से प्रति अधिक लक्ष्य रहा। उसके काव्य में फलायन की ज्वनि कहा कदा प्रतिबन्धित होती रहा। यद्यपि जीवन की भाँति 'हुँद बोरे' की पुनार की गर्भा करने वाले सब ही प्रयोगवादी नहीं हैं, तथापि कुछ कवियों का स्वर, लय, कृन्द, रंगोत्पत्ति आदि से भी फलायन करते लगा।

'तारुण्य' के कवियों में कहावता फलायनवादी प्रवृत्तियों के दर्शन होते हैं। मुक्तिबोध की 'वन्तर्धन' कविता स्वयं एक ज्वलन्ता उदाहरण है :

मैं अपने से ही सम्पन्नित ,
 मन मेरा दूबा निज में ही ।
 मेरा जान उठा निज में ही ,
 मार्ग निरुद्धा अभी से ही ।
 मैं अभी मैं ही अब सोया,
 तो अभी से ही हृद पाया ।
 निज का उदासीन मिलेक्षण
 जालों में बाँध मर लाया । १

नेमिचन्द्र जैन की कविताओं में भी फलायन-

बाग के पार्श्व हीरी है। 'बागी गहन कंधिरा है' कविता अन्तर्गत
को श्लोका का सुन्दर उदाहरण कहती है :

बागी गहन कंधिरा है, मन रुक रुक बातावै स्फापी,
जब भी है टूटे प्राणों में बिड़ हसि का आकर्मण
बापी ?
बाह रहा है जब भी यह पापी पित पति को सु,
जाता ,
एक बार फिर से भी नैनी के नलक-नम में उड़
जाता ,

० ० ०
है निस्सीम हमर मेरी, मुझकी तो उदा कबले
मलना ॥ १

एक अन्य उदाहरण प्रस्तुत है :

क्या भाया ?

कंधाने मन कयी लख कोलाहल में लिंकर बह जाया ? २

भारतभूषण अग्रवाल का फलामवाद के
संदर्भ में एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत है :

तु भूल गया, अज्ञान ।

तु है पाँच, रत्न, मुक्ति का धोन ।

१- सारसवाक - नेमिचन्द्र के- बागी गहन कंधिरा है पृ० ६४

२- वही पृ० ६५

सकदाम्बर नु मैं भ्रात्रा ।

अम्बरा बना हाता हुने

जोहल वनीया स्फुली वह पदो-सिलो लहको ।

पागत ।

तु हुनता रहा मरुत नुपुर-यनि कापि ककतो गो

नपुष्क । १

जिनको रचना में शिशिर को राका-
विना में पलायनवादी विचार प्राप्त होती हैं। एक उदाहरण दर्जनीय
है :

निकटतर -

रोडू बैक्कि किउ, निजय किन्तु लीलुप

लुहा वन्य बिलार-

पीछे गीयच्छी के गन्धर्वय वम्बार

गा गया सब राज कवि, फिर राजका पर लीकया ।

गा गया वारण, वरण फिर दूर को वाकर ,

निराफ़ सौ गया । २

इनके साथ साथ दूसरा सप्तक के रसतल स्वपरक
स्व परिष्कृत स्वपरक भोगवादो रचनाएं भी पलायनवाद के अन्तर्गत आती
हैं। 'दूसरा सप्तक' स्व तारसप्तक की रस- रोमांस स्व-धूल लीन्दन
की रचनाएं भी पलायनवाद के अन्तर्गत ही स्थान रखती हैं। उनके संदर्भ में
भोगवाद में लिख लुके हैं।

१- तारसप्तक - भारतभूषण अग्रवाल पृ० ८६

२- वही पृ० २००

प्रयोगवाद का कवि प्रत्येक चीज में फलायन करता है। उसने अपने युग की परिस्थितियाँ एवं समस्याएँ ठे संपर्क नहीं किया। प्रयोगवाद का कवि अभिव्यक्ति की सनातन समस्या के नाम पर स्वाभाविक उत्तरदायित्व से भागकर व्यक्तिवाद की ही परिधि में अपने को केन्द्रित किए हुए है। वह जान-बूझकर सामाजिक उत्तरदायित्व से फलायन कर रहा है।

क्रा: स्पष्ट है कि प्रयोगवादो कवि तत्त्वज्ञान परिस्थितियाँ और समस्याएँ ठे दूर रखकर कलाकला, भोगवाद, रोमांचवाद के द्वारा जीवन से फलायन करने का सौदा देते रहे। जहाँ एक ओर द्वितीय विश्वयुद्ध में मानवता तबल रही थी, वहीं प्रयोगवादो कवि 'जम्पली' की मो 'तुपुस स्वर' के रूप में धुनता रहा। उसे नागा-बाकी एवं हिरोशिमा के बम विस्फोट नहीं सुनायो पड़े। उसे एक प्रमाणित होता है कि प्रयोगवादो कवि फलायनवाद से अत्यधिक प्रभावित है।

(उ) जाणवाद

जाणवाद पारम्परिक काव्य की रीति है। जाणवाद के अनेक तत्त्व जीत दर्शन एवं ज्ञान दर्शन में प्राप्त होते हैं। जाणवाद खेदना उत्पन्न करने वाला जाग्रत जाण तत्त्व मानव के परिवेश की पूर्ण अभिव्यक्ति बना रहा है। जाणवाद को स्थापना में फेब्रिकार है।

१- डा० राम नारायण - आधुनिक हिन्दी काव्य में फलायनवाद पृ० २४३

का कार्यप्रतिक्रिया योगदान रहा है। जैन दर्शन में जीव को एक प्रकार का 'द्रव्य' प्रतिपादित करते हुए 'प्रतिपाद्य परिणाम' की बात कही है और नान्वयिक दर्शन में भी कतिपय व्यावहारिक तत्त्व प्राप्त होते हैं। अतः साधनावाद मूल रूप में विदित है वास्तविक दर्शन है। पाश्चात्य विचारकों ने दो विश्व युद्धों की विभीषिका को एवं मानव मूल्यों के विघटन तथा आत्मा की रिक्तता को देखा एवं भोगा है। उनका यह मान्यता है कि रिक्त एवं लीकलो अन्तरात्मा मनुष्य को 'शून्य' मान्य रूप में परिवर्तित कर देती है। इसके वह उद्देश के लिए अनेक वनियमित एवं अलगतिपूर्ण वाचरण विभिन्न समयों में विभिन्न परिस्थितियों में करता है। वह आत्म गरिमा एवं आत्म तृप्ति का प्रिया प्रयास कर विप्लवत दायों के प्रवाह में हस्तशतः नियति के धीरे जाता हुआ रहता रहता है। वह पूर्णतया अप्रतिहीन एवं उदम विनिम्न हो जाता है। वह निर्दोष ढंग से किसी वस्तु को उस दाय में ग्रहण कर लेता है जो जिस दाय में उसे उपलब्ध हो जाये। उस वस्तु को ग्रहण कर उसके भीतर का शून्य कायक उस वस्तु एवं दाय से भर जाता है। उस अनुभव के बाद पुनः रिक्त एवं शून्य बन जाता है। इस वास्तविक शून्यता का संसृष्टिकार ने सुन्दर चित्रण किया है।

प्रयोगवाद ने साधनावाद का जो रूप स्थापित किया वह भी उसी प्रकार का है। वा-व्यस्तिक दृष्टि के रिक्त एवं शून्य मनुष्य को आत्म तृप्ति के लिए, वाचनपूर्ण दायों का उपयोग करना आदि। जीव ने 'नदी के द्वीप' में साधनावाद

१- डा० जमशेद भास्कर- मानवमूल्य और साहित्य पृ० ३०-३४

२- डा० रमाशंकर तिवारी- प्रयोगवादी काव्यधारा पृ० ४६६

को स्थापना छटके देंगे से को है। ऐसा और भुवन के वाक्सी सम्बन्ध
 ज्ञानवादी दर्शन का प्रजित एवं सही रूप में सामने आती है। ऐसा ज्ञान
 को स्नातनता को व्याख्या करता है- "और छोटोतिर सब मंजिलें झूठो
 हो जाती हैं, और कोई रास्ता नहीं रहता। मैं सम्पूर्ण कहीं भी पहुँचना
 नहीं चाहती - जानना ही नहीं चाहता। मेरे लिए काल का प्रवाह भी
 प्रवाह नहीं, केवल ज्ञान का योगफल है- मानवता को तरल काल प्रवाह
 भी मेरे निकट सुखित रहत्य है, वास्तविकता ज्ञान ही को है। ज्ञान
 स्नातन है।" एक अन्य स्थान पर ऐसा चन्द्रमाध्व को ज्ञान का महत्त्व
 बताती है- जो ज्ञान में जीता है, ज्ञान को स्वीकार कर लेता है,
 वह झूठा होता ही नहीं। चन्द्रमाध्व के प्रणय प्रस्ताव का विरोध
 कर ऐसा ज्ञान को तुलना में नविष्य का प्रतिपाद करता है "जन्म क्या
 रास्ता दिखाएँ ? मैं नविष्य मानना ही छोड़ दिया है। नविष्य है
 ही नहीं, एक निरन्तर विकासमान वर्तमान ही सब कुछ है। वाक्सी
 कभी पाना के फव्वारे पर टिका हुई गैद देती है। अब, जीवन कैसा
 ही है, ज्ञानी को धारा पर उड़ता हुआ जब तक धारा है, तब तक
 बिल्कुल सुरक्षित, सुस्थापित, नहीं तो पानों पर टिके होने में अधिक
 देपाया क्या बोझ होगी।" ऐसा यौन परिलुप्ति के उपरान्त अपना
 विपत्ति बताती है, "मैं एक लड़ा हुआ पानो घो : एक फोल, एक
 पोसर, एक छोटा ताल, तैबाली से ढँका हुआ, तुम्ही बांधों की तरह
 बाकर मुझको जालोदित है कर दिया, मुझ में वनस्त बाकाश की प्रति-
 बिम्बित कर दिया। तुम्हें कहने दी, भुवन, मेरी यह बेल तुम्हारी

१- वनिय- नदों के तीरे पृ० ३६

२- वही पृ० ४६

३- वनिय- नदों के तीरे पृ० ५०

और उम्हो घो, बेरि कभी नहीं उम्हो । लेकिन, तुम में डर गा, डर नहीं, एक डर का कोई अनुशासन, कोई एक मर्यादा, जिसके भीत तक मेरो पहुँच नहीं घो । और जिससे हुवा जाकर मेरा तुफान सहेसा शांत होगया, मैं फिर उसी तल पर पहुँच गया जिस तल पर ताल उदा दे था । टंका हुवा निश्चय लड़े पानो का एक उद्देश्यहीन बपाव । उपरि-
लिखित उदरणी के प्रयोगवादी दाणवाद के संदर्भ में पूर्णतया प्राप्त हो जाता है। अपनी ग्रन्थ प्रयोगवादी काव्यधारा में डा० रमाँकर तिवारी प्रयोगवादी दाणवाद का स्वरूप निर्धारण निम्नलिखित रूप में करी है :

(१) दाणी का ही मूल मूल्य है। बाल का प्रवाह केवल दाणी का योगफल है, दाण ही वास्तविक है और दाण अनात्म है।

(२) दाण में जीना तथा दाण को स्वीकार कर लेना ही जीवन है।

(३) मयिष्य का अस्तित्व है ही नहीं । दाणी को धारा में बागि बड़ी स्त्री जानि से वर्तमान बनता है और यह वर्तमान ही सब कुछ है।

(४) दाण को उत्तेजना में वृष्टि लाभ करके मनुष्य फलफिल्ल हो जाता, वात्स्योपसृष्टि कर लेता है।

१- अजय- नदी के बीच पृ० १६२

२- डा० रमाँकर-तिवारी-प्रयोगवादी काव्यधारा पृ० ४६-६६

(४) मृत्यु स्वयं निश्चित एक काल जाता
 तब है समान है। साण की उत्पत्ति में वह वाय्वीलि ही उठता है,
 और साण की परिहृष्टि के बाद वह पुनः उद्देयविधोन निश्चित पीसर
 बन जाता है।

‘तारुप्तक’, ‘द्वारा उप्तक’ एवं
 ‘नस्ति प्रपय’ में जहाँ रही कविता है जो कि साणवाद पर आधारित
 है। सुखिबीध की कविता ‘मृत्यु और कवि’ साणवाद के प्रभावित
 है। एक निदर्शन प्रस्तुत है :

‘साणमगुहा के स्वयं जीवन की गति,
 जीवन का स्वर,
 दी ली वर्ण बाहु यदि हीतो ली वण,
 अधिक सुखो होता नर ?
 लो जमर धारा के बागे रहने के हित सब
 नगर,
 वृजशोत जीवन के स्वर में गावी मरण-
 गति तुम सुन्दर ।’ १

साण की महत्ता के लिए प्रभावित मानवी
 ‘मघ मत्तार’ में कितने वातुर हैं -

‘तुम निब वाद्रां पिर पिर वह साण मर जा दो
 अंतुष्ट ही मते हिय की प्याली हँसी ।’ २

१- तारुप्तक - सुखिबीध - मृत्यु और कवि पृ० २०

२- वही - प्रभावित मानवी - मघ मत्तार पृ० १३०

गिरिजाकुमार माथुर को 'शाया फत हुना' रचना साणवादी वर्गों को महत्वपूर्ण कही है -

मल्लो - वो एक हुन बनताहर बीबित साण-
हाया फत हुना ।

फन , हीगा हुत हुना । " १

कौन साणवादियों में सर्वोपरि है।
'भादों को उमर' और 'केहरा उदास' रचना में साणवाद को स्थापित किया है -

एक साण

केही को फुहार से फटा हुआ

रात का रहस्य गर्न स्पन्दित तिमिर फिर

ब्रण निज दुक्कर फैलकर मिला गया । " २

'हुसरा चपक' में भवानों प्रवाद कि,
'कुन्त माथुर, नरेश भक्ता, धर्मवीर नास्तो को विभिन्न रचनाओं में
प्रत्यक्ष रूप से अथवा अप्रत्यक्ष रूप से साणवादो विचार धारा प्राप्त
होती है। 'नरेन के प्रपन' में साणवाद अधिक उभर कर सामने आया
है। नलिनिलोत्तम शर्मा को 'फतलो अज्ञता' कविता में साणवादो
वर्णन देखिए-

'साण- भंग ही गया अजर- अमर

१- तारसचक्र - गिरिजाकुमार माथुर - शाया फत हुना पृ० २१८

२- मल्लो - कौन , केहरा उदास पृ० २६०

जैसे बिजली नक्की नीलि नभ में
जो महाशक्ति को है अभिव्यक्ति
राज्य पर को । १

केसरी कुमार राज्य का महत्व 'साल
गिरह' कविता में प्रस्तुत करते हैं :

‘एक साल दुह गया बीर
पर एक साल हो ,
छोसिए प्रिय, कत्ती पनाई
बफो- तीरी साल- गिरह । २

नील कुमार को 'जी हु' कविता में
राजवादो दर्शन प्राप्त होता है :

‘सुनलो ही प्रियतम ?
बीबन हो छसिए
कि आगे सम - तुम बिदे
राज के, दिनों के
महोनों और बर्षों के
संगम के ही पर-
अनुभव को छलिया ।
किंतु को कलिया
तुन तुन बर मी । ३

१- नदी के प्रपञ्च - नलिन विलीन तर्मा- पहले जर्कता पृ० ७

२- नदी के प्रपञ्च - केसरी कुमार, साल- गिरह पृ० ३७

३- बहो , नील 'जी हु' पृ० १११

प्रयोगवादी काव्य में जाणवादी दर्शन का प्रभाव है। जाणवाद व्यक्तिवाद के समोप है जो कि प्रतीक जाण के महत्व को महत्ता प्रदान करता है। अतः प्रयोगवादी काव्य को उनकी रचनाएँ जाणवाद एवं व्यक्तिवाद से प्रभावित हैं।

(ऊ) अनास्था एवं विद्रोह

अनास्था जीवन, समाज, वर्तमान, भविष्य वात्सल्यनिष्ठा आदि के प्रति होती है। प्रयोगवादी काव्य में अनास्था एवं विद्रोह अत्यन्त रूप में उभर कर सामने आये हैं। अनास्था के मन में निराशा, कूटा, घृण, वात्सल्यहीनता, पराजय भाव, वेदना, शंका, दिग्भ्रम, अनिश्चय, अस्तित्व आदि व्याप्त हो जाती हैं। विद्रोह के व्यक्ति के मन में विरोध, आक्रोश आदि उत्पन्न होते हैं। भारतीय समाज में अनास्था एवं विद्रोह के सम्बन्ध में विविध धारणाएँ प्रस्तुत हैं। प्रायः ही प्रयोगवादी काव्य का जन्म आत्मवाद की आशा में हुआ। आत्मवाद में दुःस्वाद एवं निराशावाद का स्वर भी विकसित होता रहा। अतः अनास्था एवं विद्रोह की उर्वर भूमि प्राप्त हुई। प्रयोगवाद का सम्बन्ध बुद्धि से है और न कि 'निहिलिस्ट' विचारधारा के निकट है। द्वितीय कारण यह है कि प्रयोगवाद की प्रेरणाभूमि क्रान्ति एवं क्रांति है। प्रयोगवाद की सभी प्रवृत्तियाँ भारतीय नहीं हैं। व्यक्तिवाद की जीवन दर्शन भी निराशावाद की दर्शन माना जाता है। अतः प्रयोगवादी कवि के मन में वात्सल्य केन्द्रित होने की प्रवृत्ति बढ़ी और न अनास्था एवं विद्रोह का बीर फुटे। हमारे देश में समाज का विकास बहुत धीमा

गति से हुआ । नीक सामाजिक विलेनगतियाँ कवि को विद्रोह के प्रति प्रेरित करती रही । उस युग में व्यक्ति कौता एवं अछाद्य रहा । उसके अपने जीवित साहित्य की रचना न ही सकी । नीक धार्मिक विद्वान्ताँ के कारण द्वालीन्तुली धारणाओं की प्रथम मिला । निराशावाद, फास्य-वाद , भीमवाद एवं अस्तित्ववाद वादि से भी कवि अपनी युग की परिस्थितियों से ऊबने लगा । प्रयोगवादो कवि ने अपनी वाफो कौता एवं कृष्टि भी अनुभव किया । उसके वह अभिव्यक्ति के प्रति स्नेष्ट हुआ । उतने रचना- शिल्प के प्रति ही विद्रोह नहीं दिया, बल्कि उसको धर्म, समाज , राज्य एवं परिवेश से भी अनास्था हो गई । उस युग का कवि विद्रोह को मुझ में निरन्तर नये मार्गों का अन्वेषण करता रहा । ये सभी व्यक्तिवादो दर्शन के विविध लोपान हैं। प्रयोगवादो काव्य में अनास्था एवं विद्रोह के स्वर मूल रूप से विद्यमान हैं। तारासमाक के कवियों ने अपने पूर्ववर्ती काव्य परम्पराओं के प्रति वाङ्मय बलि उगता है। नेमिचन्द्र के को रचना ' कवि गाता है ' इसी संदर्भ में पद्य वपूर्ण है :

देख बीदनी रातें कवि का नाच उठा उर ,
स्वप्न देह की परियों के
गायन से उसका गुँज उठा स्वर
बाधो सुंदो हुई फलकों में
मदिरा - सा किस
इवि का मोठा भार लिये

० ०

गद्गद होकर गा उठता है कवि ।

तब राधा और रीठ की स्तुति के गायन । १

नेमिचन्द्र जैन की 'जया माया' में

काव्या का स्वर देखिए-

फूँटो जीवन परिभाषा

रोति से काष्ठम्बर की बीड़ी-सी अभिसाणा-

एक कीताहल के वस्त्र में ढाकर जया पाय ? २

अन्य कवितार्कों में विद्रीह के स्वर विच-

रान हैं। जैसे- 'जिन्दगी की राह', 'छाया', 'उत्सुक' आदि ।

भारतभूषण कृष्णल में विद्रीह के स्वर दूसरा स्वरूप लेकर आये हैं-

विस्तारी कुञ्चित ओर्ण ,

बूझा ही गयो आस कवि की भाषा

विशाल प्रत्यावर्तन ओषन में ,

संजल सहरी के समान

० ० ०

कवि । तीही बपना शब्द आल,

जी बाज लौल्ला , डुम्य हुआ

यह है वषी पुरहली की वंद,

मीमायों कुञ्चित बाणी । ३

१- तात्पर्यक - नेमिचन्द्र जैन- कवि गायता है पृ० ५३

२- वही , जया माया पृ० ६५

३- तात्पर्यक- भारतभूषण कृष्णल - वषी कवि है पृ० ८८

गिरिजाकुमार माथुर को 'नया कवि'
कविता विद्रोह एवं कला-या के जिनों का सम्मिश्रण प्रस्तुत करता है-

'जो किये रात में मन के लज्जनक
बनके हैं कन्याधि कर दे
में निरन्तर पाव जाता अग्नि ज्वल है ।
कड़कड़ा रोद
झड़ो रुदियों को
जुलियाँ कपि
धुनो अनुसृतियों को
उठ नये जावाज को उठाने गरज है ।' १

कला-या का स्वर देखिए-

'हो मुझे है
समो प्रश्नों के समो उत्तर पुराने
नीसले है
अपवित्र और समुद्र वाली
० ०
क्योंकि प्रश्नों के नये उत्तर दिने हैं
हैं धर्म अपराध
क्यों मैं लोक से जाना चलन है ।' २

इसी प्रकार बल्लि की व्याख्या में भी

१- सारसप्तक - गिरिजाकुमार माथुर- नया कवि पृ० १६६

२- बहोपृ० २००

काव्य का स्वयं प्राप्त होता है। रामविलास शर्मा में विद्वान् के स्वर प्राप्त होते हैं - 'हड्डियों का ताप' का एक रस दर्शनीय है :

‘सु के नर-वैकल्य’

हड्डियों के ताप के कान्हा है

गालों की फुसी हुई हड्डियों में

असो हुई गालों की फुलियों में

बसो है भावना विद्वान् को । १

असो को 'अनाख्यान' कविता में विद्वान् का स्वर कान्हा होता है :

कृतन प्रमथता स्वर है

आलतायो आज तुलसी की फूलार रंग है -

रणीय दुर्निवार लसकार रंग है -

कान्हा है मैं । २

हरिनारायण व्यास की कविता 'एक भावना' में विद्वान् का स्वर विद्यमान है :

‘तीक्ष्ण वातुर हुआ यह शूद्र बन्धन

वाज कर पीले नखन ज्योति का हेमता धन ।

जल रंगो प्राणितार्थ बाध कातो पर मरण का

एक भावना ।

एक कवि को पुरानी जीवनो की केकर

१- तात्पर्य - रामविलास शर्मा- हड्डियों का ताप पृ० २३६

२- वही -असो - अनाख्यान पृ० २७४

जब कीर को पुरानो जीवनों की बेकर
जा रही ऊपर नथे का की किरण । १

जमशेद बहादुर सिंह की कविताओं में विद्रोह
का स्वर स्वतन्त्रता दिवस पर - १९४० 'भारत की भाखो' 'बापि लो
रुखोर सहाय की 'याचना' में विद्रोह विषम है तथा 'लापरवाही'
में अनाथा का स्वर है :

'मेरी मोड़ी-दो, ली, बन्धन म गिलो की प्रयाणा
जब लगे से करिन्तु पय पर नो नहीं हो तुम
किधर नो चला जाऊँ मैं
जहाँ तुम्हारा क्या करता या मेरा बिगड़ता है।' २

धर्मेश्वर भारती की 'बाढ़ की शाम'
में अनाथा का स्वर उपस्थित है -

'मेरे बेटा हूँ ।
यह शाम मुझे अपनी मुखाद उगलियों से छू लेती है
माया कृतो ।
लगता जैसे प्रतिमा ने भी कम तोड़ दिया,
मस्तक झना लालो-लाली
लगता जैसे
हो कोई सड़ा हुआ नरियस ।' ३

१- दूसरा संस्करण - हरिनारायण व्यास पृ० ५६

२- वही - लापरवाही पृ० १२६

३- वही - धर्मेश्वर भारती पृ० १८३

‘ नदीन के प्रपन्न ’ में नलिन विलोचन शर्मा
के ‘ गीति दर्शन ’ रचना में आलोचना का स्वर विद्यमान है :

‘ नोनि गक्ति नगराहुधि कलाम ,
ऊपर विस्तृत ऊपर जपार
में कल पर लेटा हुं ,
उफा , उमस देखी है :
हुं विस्तार भिन्नु-या ,
कस, उनके, रिमल कर्कश
ज्वनि करते सुद्ध नोनि । ’ १

वर्ण्य कीक कविताओं में विद्रोह एवं आलोचना
के भाव्य होते हैं। प्रयोगवादी काव्य में विद्रोह एवं आलोचना कवि की
स्वयं की अनुभूतियों के अधिक समोप है। क्योंकि यह व्यक्तिवादी जीवन-
दर्शन के अधिक निकट है।

(२) निष्कर्ष

प्रयोगवादी काव्य की भावभूमि पर विचार
करने पर यह तथ्य प्रकाश में आती है कि यह काव्य व्यक्तिवादी धारागत
पर विकसित हुआ है। कविपद्य विद्वान् ‘ वास्तव्यक ’ के कवियों में से
पाँच की आलोचनाओं अर्थात् मानववादो केना से जुड़ा हुआ आती है।
और दो कवियों की तत्प्रतिवादी अर्थात् व्यक्तिवादी विचारधारा से
जुड़ा हुआ मानती है। परन्तु प्रयोगवादी काव्य की भावभूमि पर विचार

१- नदीन के प्रपन्न - नलिनविलोचन शर्मा- गीति दर्शन पृ० १७.

२- डा० अरविन्द - वास्तव्यक काव्य पृ० १५

कवि पर यह छिड़ होता है कि 'साधक' के प्रायः सभी कवियों को भावभूमि कही- न - कही निरान्त वैयक्तिक रही है। इन कवियों को नहीं था 'दुहरा सप्तक' के प्रायः सभी कवि भावबोध के वैयक्तिक सन्दर्भों से जुड़े हुए हैं। इन कवियों की व्यक्ति- ज्ञाना प्रयोग करने के लिए निरन्तर कटिबद्ध है। जोसिए में विद्रोह करने में सक्षम हैं हैं। इन प्रकार प्रयोगवाद में व्यक्तिवादों दर्शन को अभिव्यक्ति विविध प्रकार से हुए हैं।

'मुक्तिबोध' की कविता पर विचार करने पर ज्ञात होता है कि 'व्यक्तिवाद का भाव उनको कविता में खाना है कि वह वैयक्तिक- अस्तित्व, व्यक्ति-ज्ञाना, व्यक्ति-स्वातंत्र्य एवं वैयक्तिक अनुभूतियों के काल्पनिक लोक में विन्यास करता है। वह ज्ञाना निराश है कि जीवन से प्राप्त करके प्राचीन मिला, मोक्ष एवं विमर्श की प्रस्तुत करता है।' इसके साथ साथ भावभूमि के विविध स्तरों के अन्तर्गत विचार करने पर यह ज्ञात होता है कि 'साधक', 'दुहरा सप्तक' एवं 'मौन के प्रपञ्च' के सभी कवियों की रचनाओं में व्यक्तिवाद, अस्तित्ववाद, भोगवाद, फलासनावाद, ज्ञानवाद और अज्ञानता एवं विद्रोह के विविध निदर्शन प्राप्त होते हैं। ज्ञाना अर्थ कहा जा सकता है कि कुछ कवि भावबोध- ज्ञाना से प्रभावित रहे हैं। परन्तु वे व्यक्तिवादों धारणा से ज्ञाना अधिक संपृक्त है कि उन्हें ज्ञात हो नहीं होता कि वैयक्तिक काव्य में कितने व्यक्तिवादों",

१- प्रोफेसर का लेख- मुक्तिबोध का अन्वेषण - ओलिवियो गोष्प के

और अपने मानसवादों। इन कवियों का मानबीध, मान-माना एवं प्रयोग माना, व्यक्ति-स्वातंत्र्य को नितान्त वैयक्तिक रूप में जोता है और मानानिव्यक्ति के विविध धोपानों से गुजरता हुआ व्यक्तिवादो धरातल पर अपनी काव्य को रचना करता है। 'सुखितोष' की वेदना भी इसी प्रकार की है। 'उसकी समग्र वेदना वैयक्तिक है। उसका व्यक्ति-माना है नूतन धरातल स्थापित करने में सतत क्रियाशील है। उसकी नकारात्मकता व्यक्तिवादो नकारात्मकता के अधिक समीप है और उसका जी निरन्तर संघर्ष करने का प्रयास करता है।' इसी प्रकार लफ़ीर बहादुर सिंह को कुछ कविताओं में स्पष्ट भोगवाद के कई निदर्शन प्राप्त होते हैं।

उपरिलिखित निष्कर्षों से छिड़ होता है

कि प्रयोगवादो काव्य को मात्रपुमि व्यक्तिवादो-माना है प्रभावित हो नहीं, बल्कि उसकी अपनी में समाहित किये हुए है। प्रयोगवाद में व्यक्तिवादो दर्शन 'प्रयोग के साथ विद्रोह एवं नकारात्मकता को विचार धाराओं को लेकर विकसित हुआ है। इसे यह कहा जा सकता है कि प्रयोगवाद व्यक्तिवादो चिन्तन का काव्यात्मक स्वरूप है।

(२) नक़्क़ाद

विहार के तीन कवियों- नलिनिलोचन झा, केसरी कुमार तथा नील ने लफ़ीर द्वारा 'प्रयोगवाद' संज्ञा को प्रतिपादन के विरोध में 'प्रपञ्चवाद' को घोषणा की। उन्होंने 'प्रयोगवाद' को सार्थकता का सम्पन्न किया तथा उन्होंने 'सपाक्षी'

१- प्रसन्नकर का लेख- सुखितोष का अनुरागत - प्रोत्थित ।

में 'प्रयोगशोत' की व्याख्या माना, न कि प्रयोगवाद की। इन्होंने 'प्रयोगवाद' की उचित व्याख्या हेतु नरेश द्वारा सम्पादित 'प्रकाश' पत्रिका में सन् १९५२ ई० में प्रयोग दस छन्दों प्रकाशित किया। उस दस छन्दों में प्रयोगवाद की प्रयोगशोतता से भिन्न माना गया। इसी सद्भावना की लेकर डा० कवियों ने एक दिनाम्बर सन् १९५६ ई० की एक स्वतन्त्र (फुलफुल) काव्य संस्था 'नरेश के प्रपञ्च' (प्रपञ्च-वादन-छन्दों तथा फुलफुल-संवत्सरा) पटना से प्रकाशित किया। 'नरेश' शब्द की उत्पत्ति इन तीनों कवियों के प्रथम अक्षर से हुई माना गई। नरेश, विलोचन शर्मा, केसरीकुमार तथा नरेश तीनों कवियों के नामों का प्रथम अक्षर 'नरेश' शब्द निर्मित करता है। अतः इन तीनों का सहयोगी प्रकाशन ही काव्य सम्बन्धी धारणा 'नरेशवाद' नाम से भी प्रचारित हुई। व्यक्तिवादो दृष्टि से इन तीन कवियों के हित (व्यक्तिव्यक्ति के हेतु) 'नरेशवाद' के रूप में प्रतिफलित हुए। नरेश के कवियों ने इसकी 'प्रपञ्चवाद' की संज्ञा दी। प्रपञ्चवाद के ही नरेश सन् १९६४ ई० में प्रकाशित हुए। नरेश प्रपञ्च-वादन छन्दों के घोषणापत्र का प्राक्य प्रस्तुत है :

(१) प्रपञ्चवाद भाव और जीवना का

साक्ष्य है।

(२) प्रपञ्चवाद सर्वतन्त्र स्वतन्त्र है, उसके सिरे

शास्त्र या दल निर्धारित अनुपसृत है।

(३) प्रपञ्चवाद महान् पूर्ववर्तियों को परि-

१- डा० रमादेव तिवारी- प्रयोगवादो काव्यधारा पृ० १०६

२- वहाँ पृ० ११६

३- नरेश के प्रपञ्च पृ० ४- ६

पाटियों की भी निष्ठाण मानता है।

(४) प्रपञ्चाद दृष्टी के अनुकरण की तरह अपना अनुकरण बर्कित सम्भूतता है।

(५) प्रपञ्च की पुस्तक काव्य नहीं, केवल काव्य की स्थिति की है।^१

(६) प्रयोगशील प्रयोग की भाषा मानता है, प्रपञ्चादी काव्य^२।

(७) प्रपञ्चाद की दुस्सावयवदीय प्रणाली है।^३

(८) प्रपञ्चाद के लिए जीवन और कोण कभी मात की बात है।

(९) प्रपञ्चादी प्रत्यक्ष प्रत्यक्ष रूप और शब्द का स्वयं निर्माता है।

(१०) प्रपञ्चाद दृष्टिकोण का अनुसंधान है।

(११) प्रपञ्चाद मानता है कि पय में उत्कृष्ट के द्रव्य होता है और यही नय और पय में अन्तर है।

१- नरिन के प्रपञ्च पृ० ११४-११५

२- वही पृ० ११४

३- वही पृ० १२३

(१२) प्रथम मानता है कि छीजी का समान
सही नाम होता है।

उपरिलिखित छन ही प्रयोगवाद के सूत्र
पाने गये हैं। इन्होंने छुनी को छुने लीनी ने 'नैनवादी प्रयोग-वाद-
छुनी' के नाम से अभिहित कर दिया गया है। अतः प्रयोगवाद ही
नैनवाद का सही नाम है। इस सम्बन्ध में केतरी कुमार ने 'कल्पना'
में खोकार किया है- 'इस नाम के लिए हम किन किन की प्रयोगवाद
दे। दो बातें फलते हमने इस नाम की अनुपयुक्त सम्झना या (देखिए
आहित्य और समीक्षा में नयी कविता शीर्षक निबन्ध)। पर अभी
यह नाम फलन्त है और सोचा गया है कि क्यों नहीं 'विस्तार' (नैन-
वादियों का काव्य संग्रह) का नाम 'नैन' ही रखा जाए।

नवम्बर सन् १९५२ के 'कल्पना' के
में भी इस पर विचार किया गया- 'प्रयोगवादी काव्य की हम
सम्बन्धी विशेषताओं पर विचार कर लें जो 'नैनवादी' प्रयोगवाद
के नाम से विख्यात है। इस प्रकार नैन के तीनों कवियों द्वारा प्रयोगवाद
एवं प्रयोगवाद को 'नैनवाद' के नाम से भी खोकार कर लिया गया।

'नैनवाद' प्रयोग का दर्शन है। उसके
अनुसार भाव, भाषा, विचार, अभिव्यक्ति, वाक्य, वाक्य प्रमाण,
हम सब तत्त्व आदि में प्रयोग किये जा सकते हैं। इसी कारण वह प्रयोग
की साम्य मानता है बाधन नहीं। कविता शब्दों से मिली जाती है, न
कि भावों, विचारों, दर्शनों, इच्छाओं, उत्कर्षों आदि से मिली जाती है।

१- नैन के प्रथम- पृ० १२४ कल्पना नवम्बर १९५२ से उद्धृत

नवनिवाद के अनुसार कविता की वास्तविक प्रेरणावस्तु स्थिति है किसी है। वस्तु द्रष्टा के भीतर भाव-इशियाँ उत्पन्न करती हैं। उन इशियों के साथ द्रष्टा की वास्तविकता मिलकर एक दृष्टिबिन्दु उत्पन्न करती है और जब उस दृष्टिबिन्दु से कवि वस्तु को देखता है तब वह शक्ति के एक नए संश्लेष के रूप में दिखाई पड़ती है। इस प्रकार कविता में सदा ही पुन-निर्माण हुआ करता है। नवनिवाद वस्तु संश्लेष को भिन्न-भिन्न प्रकार से देखता है तथा नवीन रचनाधाराओं की आधार प्रदान करे हैं। नैतिक स्व-कृति पाने का लक्ष्य है। नवीन रचनाधाराओं का व्यवहार में प्रिय प्रिय जाती है, क्योंकि उनकी चटितताओं की शब्दों द्वारा निष्पत्ति करना उन कवियों का लक्ष्य है।

नवनिवाद कविता और शब्द को भिन्न नहीं मानता। नवीन रचनाधाराओं के लिए नूतन शब्द रचना आवश्यक होती है। कविता शब्दों से निर्मित होती है। क्योंकि यह कवि शब्द रचना से कार्य ग्रहण करता उचित समझते हैं।

नवनिवाद का कवि प्रमाण एवं आधारणी-
कारण के संदर्भ में 'वास्तविक माध्य' (अर्थपूर्ण) की अपूर्ण मानता है। वह शब्दों की पूर्ण नहीं मानता। तथा पाठक की स्वतंत्रता की महत्व देता है। पाठक की स्वतंत्रता स्वतंत्रता है कि वह अपने को उन शब्दों में देख सकता है।

सम्प्रति कविता का गुण नहीं है, जिस

१- नवीन के प्रपत्र पृ० ११६

२- वही पृ० ११६

३- वही पृ० ११६

प्रकार कि नय कागुण है। कविता को भाषा दैनिक जीवन की भाषा से भिन्न होती है। कविता में व्यक्ति के अनुभव भाषा की वस्तु है। इस कविता में पाठक आन्तरिक सुखित का अनुभव करता है। यही नैकवाद की सम्झने के विन्दु है।

(बी) नैकवाद : व्यक्तिवाद का नकारात्मक प्रयोग

नैकवाद में प्रयोग का उतिवादी रूप प्राप्त होता है। केवि अपने सत्ता बनाने के लिए सप्तकोय प्रयोगवाद से अपने को मुक्त करते हैं और 'प्रपवाद' नाम से अपने प्रयोगवाद को प्रचारित करते हैं। जबकि पय तुकबन्दी कविता सामान्य कविता को कहा जाता है। इन कवियों ने भूमिका को 'पक्षपात' तथा 'टिप्पणी' को 'फासिका' की संज्ञा प्रदान करके शब्द-कम्पत्कार और प्रयोग को उतिवादिता का परिचय दिया है। इनके अनुसार कविता पाठक को स्वतन्त्र रखती है परन्तु नैक के कम्पत्कार उत्पन्न करने वाले, आन्तरिक शब्द कविता के लिए प्रयुक्त नहीं हो सकते। ऐसे मायावी शब्दों से व्यं को गरिमा उी समाप्त होती है और पाठक शब्दों के मायाजाल में नीपका हो जाता है।

नैक का पीनणा-पय कड़वोली गाली का संकेतन है। इसमें विरोधी कण है। डा० एवेल का विचार है, 'कह दुक्ताव्यपदोय होली या प्रणातो कही है ? इन प्रपरी में उत्पुष्ट केन्द्रण कहाँ है ? हाँ, यह स्वाभाविक लगता है कि ये सर्वतंत्र स्वतंत्र हैं, महान् पूर्ववर्तियों की परिपाटियों की त्याज्य मानती हैं, इसमें मनमानेपन का

बाग्रह है। इसकी घीबणार विरोधी कथनों को समाहित किया हुए है। प्रयोग को वतिवादिता ने इनकी घीर व्यक्तितवादो बना दिया। ये 'वाद' का प्रकार नहीं करता बाहरी, परन्तु फिर भी 'वाद' के प्रकार में है। प्रयोगवाद प्रकृत: व्यक्तितवादो काव्य है। परन्तु 'प्रयोगवादी काव्य का घीर व्यक्तितवादो अप 'नैतनवादी' काव्य में मित्ता है। व्यक्तितवाद 'नकार' पर वादित है, यकी नकारात्मक दान व्यक्तितवाद की पूर्ववर्तिगी को परिपाटी मजन के लिए प्रेरित करता है। कविता में वस्तु एवं चित्त में नूतन प्रयोग एवं विद्वीर के विविध स्वरूप है। नैतन में नकार विविध रूपों में व्यक्त हुआ है। ये कियो वस्तु को एक ही प्रकार से एक ही पदावली के द्वारा अभिव्यक्त करता उचित मानी है। एवतिर उनके काम में शीघ्र के अभिव्यक्तावाद का प्रभाव स्पष्ट दृष्टि-गोचर होता है। ये ज्ञाति को सब साधना में विश्वास न करके साहित्य में जाविष्कार करने के समर्थ है। एवतिर ये सर्वतः- स्वतंत्र ही जाते है।

प्रयोगवादी कवितावी में जटिलता होती है जिसे दुष्कृत जाता है। दुष्कृत अनसाधारण को समझ में नहीं आता। नैतनवादी मानते हैं कि कविता में सरलवाणि न होकर जटिल विवना उत्पन्न होती है। एवतिर ये इन जटिलतावी को वैयक्तिक व्याख्या करने का मार्ग तैयार करते हैं। इनकी कविता का पाठक सर्वसाधारण न होकर एक विशेष अभिजात्य वर्ग है। एवतिर उसने एक ऐसे कौटि समाज को लिया है जो उसके नीतर के पाठक का पर्याय है। बाव कविता में प्रयण है तो

१- डा० एम० एन०- साहित्य का नया परिप्रिद्य पृ० २१८

२- डा० अमर सिवारी, बाहुनिक साहित्य की व्यक्तितवादो मुद्रिका प० २६८

३- डा० एम० एन० सिवारी- प्रयोगवादी काव्यधारा पृ० १०-१२१

उसी अपनी पीठर के पाठक के प्रति क्योंकि बाहर वह कुछ नहीं पा रहा जो उसे प्रेरणा की प्रेरणा दे, और उसका पाठक समझ है तो इसलिए कि बादलों काई नहीं होता और इसलिए भी कि वह उस विबुध समाज की एक माननीय आवश्यकता की पूर्ति कर रहा है, नवीन जागीरों की व्यक्तिगत व्याख्या के रूप में।^१ कतः विशिष्ट समाज का निर्माण और जनसाधारण से दूर कविता का प्रकार नवनिवाद का नकारात्मक दर्शन है।

कविता में मनोवैज्ञानिक मुक्त जागृता का प्रयोगकर्ता है। उसने ऐसीप सिद्धी का प्रयोग किया है जो सामाजिक पीर्वापर्य के रूप में प्रयुक्त की गई है। उसके अनुसार बाबू शायद कविता ही बादलों का वह धाम है जिसकी व्यक्तिगत व्याख्या में उसके मन की मुक्ति बाँध ले सकता है। परन्तु मुक्त जागृता से दुःखता बढ़ती है जो जन साधारण पाठक की हृदि से परे है। कतः इस प्रकार के कविता में प्रयोग व्यक्तित्ववादी दर्शन की अभिव्यक्ति है।

नवनिवाद के कवि मानते हैं कि प्रयोगवाद में मायवेवाद, साम्यवाद, गांधीवाद सभी कविता में आजागी। कविता न तो इनकी अपाकर चलती है और न बहिष्कृत करे। व्यक्तित्ववादी दृष्टिकोण से कवि स्वतन्त्र स्वतन्त्र है कि वह किसी 'वाद' से नहीं बंधता चाहता और न कविता की किसी दल या राजनीति से प्रतिबद्धि करने का वाकौंदा है। वह कविता स्वै कवि की मुक्त झोड़ देता है, यही

१- नवीन के प्रपण पृ० १४१

२- ह्योस्तनत ओब्बेन्स

३- नवीन के प्रपण पृ० १४१

४- वही पृ० १४६

व्यक्तिवादों वर्णन को काव्यात्मक निधि है। इस प्रकार मनुष्य के वैयक्तिक स्वातंत्र्य को रचनात्मक प्रतिभा को रचा एवं वृद्धि कर कविता सामाजिक उत्प्रेरकत्व का निर्वाह करता है। तब कवि की अनुभूति का शीर, विकास, की दृष्टि है, जहाँ वैयक्तिक होगा, वल्लि जिसे अपना कुछ करना नहीं है, उसे कुछ सोलना ही न पाहिरे। इसके तात्पर्य यह है कि 'नकीनवाद' व्यक्ति स्वातंत्र्य एवं वैयक्तिक-स्वातंत्र्य का प्रबल समर्थक है। वह वैयक्तिक स्वातंत्र्य के प्रति निष्ठावान है। इसीलिए ये कवि वैयक्तिक अनुभूतियों के प्रति ईमानदार है तथा सामाजिक उत्प्रेरकत्व ग्रहण करने का बकाया भी है। ये 'दूधरी' को पोढ़ा को प्रेमी पर कविता 'नहीं' करी, वल्लि वही हाँ द्वारा वैयक्तिक शब्दों का प्रयोग करते हैं। इसलिए कवि भाषा को निम्न रूप से प्रयोग करते हैं। वह पाठक को विविध प्रकार से समतुल्य करना चाहते हैं क्योंकि वे पाठक को तन्मित्र व्यवस्था से अधिकता, मौल्यका करना अधिक पसन्द करते हैं। इस अर्थ में केशरी कुमार का मत है -

भाषा के वैयक्तिक प्रयोग को बात
उही है। परम्परा को कदियों से मुक्त होने के अनुष्ठान में भाषा का
यही रूप होगा। जब ऐसी प्रवृत्ति युग की सामान्य प्रवृत्ति बन जाती
है तब असाक्षित युग बराम होता है, पर तब भी भाषा के वैयक्तिक
स्वर से ही विविध कवि पहचाना जाता है। वस्तुतः कवि अपनी शब्दों
का नियामक होता है।^१ ऐसे उन कवियों में कल्याण का स्वर सुवर्णित
होता है। लोक कवितारं ऐसी हैं जिनमें कल्याण प्रवृत्तियाँ लक्षित की
गई हैं। इन कविताओं में 'नकार' की प्रवृत्तियाँ अधिक उभर कर आईं

१- नकीन के प्रपण १० १४६

२- वही १० १४५

हैं क्योंकि ये कवि न तो व्यक्तिवाद, न ही साम्यवाद और नही जर्नवाद के प्रति प्रकट रूप से समर्थक हैं। ये न ही सामाजिक-जीना, सामाजिक कार्यों के प्रति उत्साहित हैं। ये पूरे रूप से नकारात्मक प्रवृत्तियों से जुड़े हैं। उनका 'नकार' ही 'नर्कनवाद' के रूप में व्यक्त हुआ है।

नर्कनवाद की कवितानों में व्यक्तिवाद

अस्तित्ववाद, जर्नवाद, भोगवाद, फ्याक्सवाद, पाणवाद, ज्ञानात्मा एवं विद्वीह आदि रूपों में व्यक्त हुआ है। इसके विविध उदाहरण श्रो कथाय में प्रस्तुत किये जा चुके हैं। अस्तित्ववाद 'प्राक्भाव' कविता में प्राप्त होता है। जर्नवाद नरेश की कविता 'वायुनिक नर्गिस का स्वर्ग' में 'भोगवादो प्रवृत्तियों' प्यार का गीत, शोकध, गिरह, अरुण, 'वायुनिक नर्गिस का स्वर्ग' फलवनि, मान, शुक्रिया 'आदि में, पाणवाद का 'फलो जर्नता', सात गिरह, बी पु 'आदि का वर्णन हुआ है। नकारात्मक भाव प्रायः सभी कवितानों में विविध रूप से व्यापित हुए हैं। उक्त: 'प्रयोग की साध्य और साधन' दोनों बनाते हुए इन कवियों ने जो प्रपञ्चवाद रखाया है, वह व्यक्तिवादो का आधार के विकास में एक कदम बनकर जाता है। इस प्रकार इन कवियों ने भाषा में वैयक्तिक प्रयोगों को बल दिया अन्तर्मुखी बोधिकता को प्रय दिया। इसके कविता में शब्द-प्रयोग, वाच्य विन्यास, कन्द-विधान, प्रतिक-विधान, बिम्ब विधान, तथा भावों के प्रयोग में व्यापन प्रस्तुत किया।

१- नर्कन के प्रपञ्च पृ० ४३

२- वही पृ० ६२

३- वही पृ० ७३, ७५, ८८, ९०, ९४-९५, ९८, ९९, १०४

४- वही पृ० ७, ३७, १११

५- डा० बलराम शिवारी- वायुनिक साहित्य की व्यक्तिवादो मुद्रिका

६० संदर्भ में डा० बलभद्र तिवारी के विचार प्रस्तुत हैं- 'यह उनकी व्यक्तित्वादी दृष्टि का और रूप है, जिसके फलस्वरूप वे प्रयोग की रस्सों के सहारे व्यक्ति-सत्य पर सटक गए हैं ; और जाने अधिक अन्तर्मुख हो गए हैं कि बाह्य जगत् से अलग हैं। नवीनता के वाग्रहों इन कवियों ने जाह्निक काव्य धारा को अधिक वैयक्तिक और बौद्धिक स्तर पर प्रस्तुत किया है।

अन्त में यह कहा जा सकता है कि नवीनवाद का एक ऐतिहासिक महत्व है। प्रयोगवाद को उसी 'वार्थडॉक्ट्रिन' वात्मा का संकेतन में अतिशय रूप में समाहित है। भाषा, तर्क, शब्द-रस, अभिव्यक्ति, योजना, वाक्य विन्यास, मत्तु-विधान आदि में प्रयोग के अतिशय प्रयोगों के कारण नवीनवादी काव्य का युगोप महत्व है। यह काव्यान्वीक्षण प्रयोगवाद के अन्तर्गत व्यक्तिवादी दर्शन को एक दूसरी कड़ी के रूप में सामने लाया है। इनमें अनेक ऐसे कवितार हैं जो प्रयोग की दृष्टि से व्यक्ति उत्कृष्ट हैं। शब्दों के वैयक्तिक प्रयोग हिन्दी कविता में अत्यन्त होने लगे और सघन रूप से प्रयुक्त नहीं हुए हैं। समग्र रूप से यह कविता व्यक्तिवादी धारातल पर नकारात्मक प्रवृत्तियों को अभिव्यक्त है। ये कवि न तो सामाजिक व्यवस्था के प्रति और न सर्ववाद वैयक्तिक कृष्ण, प्रकृति, व्यंग्य आदि के प्रति अधिक मोह रखते हैं और न ही पाठकों की सुलभता के संदर्भ के प्रति विचार करते हैं। ये केवल अपने प्रयोग के समर्पण में और परम्परागत परिपाटियों के विरोध में रुचि रखते

१- डा० बलभद्र तिवारी- जाह्निक साहित्य की व्यक्तिवादी मुद्रिका

पृ० ३४२

२- डा० रमार्कर तिवारी- प्रयोगवादी काव्यधारा पृ० १२६

है। न ही ये जीवन के अनुभवों को भागे हुए हैं और न जीवन के घात-प्रतिघात से परिचित हैं। उनका दृष्टिकोण 'नकार' एवं नकारात्मकता के आधार पर भागे बढ़ता है। उनके काव्य में भयंकर एवं उदासीनता के चित्र अधिक प्राप्त होते हैं। इसलिए उनका व्यक्ति-स्वातंत्र्य वैयक्तिक-स्वातंत्र्य के परिधि में अपना रचना बिछार बनाता है। व्यक्तिवाद की अतिवादी प्रयोगात्मकता एवं नकार को प्रकृति समग्र काव्य का स्तंभ बनाकर रह गये हैं।

(बी) निष्कर्ष

उपरिलिखित सभी निष्कर्षों पर विचार करने पर निम्नलिखित तथ्य उपलब्ध होते हैं :

(१) प्रयोगवाद के प्रायः सभी कवियों ने भावभूमि के व्यक्तिवादों धरातल पर काव्य ध्वज किया है।

(२) 'तार सत्यक', 'दुहरा सत्यक' और 'नैन के प्रपञ्च' के सभी कवियों (केवल रामनिताय शर्मा को छोड़कर) की कविताओं में अस्तित्ववाद, कल्पवाद, भोगवाद, फलात्मवाद, साधनावाद, अनास्था एवं विद्रोह के निर्वर्ण सहज ही प्राप्त हो जाते हैं।
 का: प्रयोगवादों काव्य व्यक्तिवादों- ज्ञाना से प्रभावित है।

(३) प्रयोगवादका कवि व्यक्ति-ज्ञाना के साथ - साथ प्रयोग ज्ञाना और काव्य ज्ञाना के प्रति भी उत्तना ही

उपन है जिसका कि भाव बोध के वैयक्तिक उद्देश के प्रति उपन है।

(४) इन कवियों का व्यक्ति-स्वातंत्र्य
बर्तव्य में परिवर्तित हो गया है।

(५) प्रयोगवादो कवियों की भावामि-
व्यक्ति व्यक्तिवादो स्वल्प में अवतरित हुई है। इन काव्य में भोगवादो,
फलायनवादो, साधनवादो एवं कलास्था तथा विद्रोह के स्वर सुवर्तित हुए
हैं।

(६) प्रयोगवाद का रचना-निरूप विज्ञान
वैयक्तिक धरातल पर विकसित हुआ है।

निष्कर्षतः प्रयोगवादो काव्य में व्यक्ति-
वादो विचारधारा विविध रूपों में व्यक्त हुई है। प्रयोगवाद व्यक्तिवाद
का काव्यात्मक स्वरूपों को कि भारतीय परिवेश और भारतीय धृष्टि को
उपलब्धि है। यह व्यक्तिवाद का दूसरा नाम नहीं, बल्कि व्यक्तिवादो-
विज्ञान का प्रयोगवाद के रूप में प्रतिफलन है। प्रयोगवाद ने व्यक्तिवाद
की विविध स्तरों पर अपने काव्य में समाहित किया है। इसलिए यह उक्त
है कि प्रयोगवादो काव्यान्दोलन में व्यक्तिवादो- विचारधारा का बहिर्गति
में प्रयोग हुआ है। प्रयोगवाद व्यक्तिवाद से भावबोध एवं जिल्प के धरातल
पर पूर्णतः सम्पृक्त है। अतः प्रयोगवाद व्यक्तिवाद का काव्यात्मक स्था-
पना है।

पंचम अध्याय

नयी कविता में व्यक्तिवाद

पंचम अध्याय

नयी कविता में व्यक्तित्ववाद

भाष्यीय साहित्य के क्षेत्र में स्वातंत्र्योत्तर साहित्य का विशेष स्थान है। इस युग का हिन्दी साहित्य क्रांतिकारी वैचारिकता से विभक्त है। इस युग में हिन्दी कविता में अनेक प्रयोग हुए हैं, परिवर्तन आए हैं कई काव्याभ्युत्थानों का उतार चढ़ाव आया है तथा एक नया रूप में नवीकृत एवं आधुनिकता के नये विश्वास विकसित हुए हैं। सन् १९५० ई० का वर्ष हिन्दी कविता के लिए राजनीतिक, नार्थिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, पारिवर्णिक एवं साहित्यिक वातावरण की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है। इस वर्ष बर्लिन में अमेरिकी सांस्कृतिक स्वतंत्रता की क्रांति की स्थापना हुई। साहित्य और स्वतंत्रता की लेकर विश्व में सांस्कृतिक प्रभुत्व के प्रयास किए गए। हिन्दी साहित्य में नई संस्था स्थापित हुई। नयी कविता के उत्थान में 'परिवर्तन' संस्था का महत्वपूर्ण योगदान है।

स्वतंत्रता के उपरान्त भारतीय जनमानस में क्रांतिकारी व्यक्तित्व आया। जीवन का कोई क्षेत्र ऐसा न बना रहा परिवर्तन न हुआ ही। नयी कविता प्रयोगवाद के शोध में विकसित हुई है, यद्यपि यह अपने पूर्ववर्ती कविताओं से प्रभावित है। नयी कविता अपने रूप की उपलब्धि है। 'नई कविता' भी हिन्दी की पूर्ववर्ती कविताओं की भाँति अपने परिवेश की उपलब्धि है। इस परिवेश में पुच्छूपि के तौर पर काम करने वाली पिछली कविताएँ और अकस्मादिक विश्वास, दृष्टियाँ और

परिस्थितियाँ अभी सम्पन्नित हैं।^१ अखिर अनु ५० के उपरान्त हिन्दी कविता अपने पूर्ववर्ती संस्कारों को त्यागकर नये मार्ग पर प्रवृत्त होती है।

नवी कविता का परिवर्तित प्रयोगवाद को परिस्थितियों के निम्न रहा है। स्वाधीनता प्राप्त होने के पहले 'स्वतन्त्रता' एवं 'स्वराज्य' के ठोस, क्रांतिकारी उद्देश्य अनु ५० के उपरान्त लौटते और नब्बो लगने लगे। देश के अन्तर्गत का मजानक स्वतन्त्रता, सरागाधिकारों की समस्या, स्वतन्त्रता की स्मृति रखने के प्रयास, नेताओं के आत्माकन, बीकाओं का नया दृष्टिकोण, बीबीजीकरण, कुमायों में गुटपारस्ती, साम्प्रदायिक दंगे, गरीबी, भुत्तारी, भ्रष्टाचार तथा महानगरीय जीवन में 'व्यक्ति' को पुनः खोजने पर विवश कर दिया। अब व्यक्ति का 'स्वतन्त्रता' का प्रश्न टूटा, वह 'नीह भंग' एवं 'स्वप्न भंग' की स्थिति है। भारतीय व्यक्तिमुक्तः सामन्तीय व्यवस्था की प्रदर्शनी में रहा हुआ पुनरा है। व्यक्ति में सामन्तीय संस्कार रीतिकाहोन वैचारिकता तथा भविकाहोन विषय व्याप्त रही है। अब व्यक्ति उक्त संस्कारों को टूटता हुआ बहता हुआ तथा विहता हुआ देखता है। 'व्यक्ति' का नीह भंग वर्तमान अस्तित्वाधारियों के विरोध में वर्तमान जीवन जीवन मूल्यों के विरोध में उभर कर सामने आता है। अहं व्यक्ति के मन में सामन्तिक प्रवृत्ति की वैचारिकता के मध्य विराडा नकारात्मक, उन्मुख एवं अवकाश की स्थिति विकसित होती है।

अब व्यक्ति आधुनिक जीवन के सम्पन्न व्यक्ति-

१- हिन्दी साहित्य का नुक्त इतिहास- अर्जुन भाग ५० १४१

बादी वर्तन के निष्ठ बाने लगता है। व्यक्ति के मन में दस्तित्व बोध, राजबोध, हस्तबोध, कर्तबोध, व्यक्तिनिष्ठा, विद्रोह, भोगवाद, क्लेश-
मन, क्लेशा, निराशा आदि के भाव विकसित होती हैं। अतः नयी
कविता का व्यक्ति व्यक्तित्व के विभिन्न व्यक्तित्वादी स्तरों की बीता
है। उसकी वैयक्तिक- चेतना परम्परा- मंच के रूप में व्यक्त होती है।

(क) नयी कविता में निराशा

भातीय जनमानस मोक्षार्थ की स्थिति में
टूटने एवं बिखरने लगा। स्वातंत्र्योत्तर 'व्यक्ति' के लम्बर टूटने,
पुटने एवं क्लेशा के विविध बोधान विकसित हुए। मोक्षार्थ की स्थिति
में नयी कवि के हाथ निराशा लगी। वास्तव में आधुनिक बोध, महानगरीय
व्यक्ति, पारिवारिक विच्छेदन एवं व्यक्तित्व के प्रति अज्ञान ने व्यक्ति
की निराशा की ओर प्रेरित किया। मानव मूल्यों का भंग, नैतिकता एवं
पर्याय का विच्छेदन आदि ऐसी बराबर स्थितियाँ थीं, जिसे व्यक्ति
क्लेश, क्लेशाव रह गया। यह व्यक्ति स्वातंत्र्य के प्रति प्रभाव करता
है। यह विकर्षण करता है और अक्षय रहता है।

मानव के कवि की कई स्तरों पर नैतिक
और सामाजिक वर्तनाओं का सामना करना पड़ रहा है। यह अपने वाच-
पात्र की परिस्थितियों से साम्यस्व नहीं रह पाता। हर जगह उसे निराशा
ही हाथ लगती है। अतः कारण है कि मानव की कविताओं में निराशा तथा
क्लेश का ही स्वर है। यह सामाजिक विघटनार्थी है अतः

वीर उसे व्यक्तता प्राप्त होती है। सामाजिक वीर मानसिक विषयन के साथ साथ वर्तमान एवं भविष्य के प्रति वह निराश है। वह पराजित पीढ़ी की भाँति दुःखित एवं टूट बिखर रहा है। उसे अपनी समग्र साम्प्रदायिक तथा वैयक्तिक जीवन नष्ट प्रष्ट लगता है। धर्मवीर भारतीय का वैराग्य का स्वर प्रस्तुत है :

ऐसा लगता था कि मेरा भारी जीवन नष्ट ,
ऐसा लगता था कि मेरी भारी साम्प्रदायिक प्रष्ट,
जो हर दम पीटा अपने स्वर्णों का दम । १

यह कव्यकर्मीय व्यक्तित्व अपने स्वर्णों को टूटते हुए देखकर विचलित हो जाता है। उसी निराशा का वर्णन करते हुए भारतभूषण कृष्णदास अपनी कविताओं 'जी अग्रस्तुत मन' के सम्बन्ध में इस प्रकार विचार प्रस्तुत करते हैं :

“ हमें कव्यकर्मीय मन की अपनी कष्टदायक भावों मिलनी , अपना दावा में बकर कर रहा है। अपने से दूर ऊपर परीक्षा की सक्तियों से अनुप्राणित- अनुसाधित होती अपने की विचलता, अपनी हीमिश्र सक्ति को व्यक्तता के प्रति लोभ , वीर अपने हीटे से हीटे अपने की भी पुरा न कर अपने की भुक्तदायक- इन कविताओं में वे तत्त्व अपनी निरवयव मिलते । ”

वास्तव में यह युग के स्वप्न अपने टूटे हैं

१- धर्मवीर भारतीय- ठंडा लोहा पृ० ६३

२- भारतभूषण कृष्णदास- जी अग्रस्तुत मन - राजकमल प्रकाशन, प्रथम सं०

सन् १९५६ ई० पृष्ठिका पृ० १०

कि वह अपनी टूटन को व्यक्त नहीं कर पाता । वह इन स्वप्नों की बेच
बुका है। विवर्णेय नारायण दाही की कविता ' हम सभी केकर बाग
हैं अपनी अपनी ' उसी प्रकार की निराशाकम्य रत्ना है। निम्नलिखित प्रस्तुत है -

‘ कल्लि बागि पर झुने कुहरे की हाया ,
टूटती कल्लियाँ मे, रोता मुक्ता पर ,
साही केरी मे हाथ दिर, सामर्थ्य हीन
बिस्तुत यी लीकर ,
हम सभी उदार बाद हैं हस पाटी मे । ’ १

समस्त कविता पीर निराशा की स्थिति का ऐसा बीता प्रस्तुत करती है।

जीय का स्वर भी निराशा की पीर सु
नया है। इनकी कविता ' देखती है बीठ ' का एक उदाहरण द्रष्टव्य
है :

‘ हुत निष्ठा :
उसे हम कह न लै
सम्पर्क कुल्ल का उतरा सुरधरि- बा
हम कह न लै ।
यी बीठ नया हम हम पर नहीं, पर हाथ कदाचित्
भीषित यी हम रह न लै । ’ २

जब व्यक्ति मृत्यु बीध की स्थिति तक पहुँच गया । व्यक्ति निष्ठा स्व

१- नयी कविता की- २ ५० ६२

२- जीय- सम्प्रधनु रवि दुर ५० ७६

व्यक्तिवादी दर्शन की वरम अभिव्यक्ति इस कविता में प्राप्त होती है।
इसी प्रकार अन्य कवियों की कविताओं में निराशाकम्य मृत्युबीध के दर्शन
होते हैं। जहाँ बाग्य की कविताओं में प्रेम एवं विद्रोह के दर्शन होते हैं,
वहीं नैराश्य के उत्पन्न मृत्युबीध भी व्यापित हुआ। कुछ वैशिष्ट्य देखिए-

• •

स्वप्नबीधी नाटक की महान् ट्रेन्डी के नायक-का
वात्मकता करता हूँ ।^१

नयी कविता के 'व्यक्ति' की परिणति
यही हुई। उसका मोह भी 'स्वप्नबीधी नाटक की महान् ट्रेन्डी के
नायक' की भाँति होता है और वह उसी प्रकार वात्मकता करने
को प्रस्तुत है।

व्यक्ति में निराशा परिवर्तित परिस्थितियों
के उत्पन्न हुई है। कवि निरन्तर व्यथित ही रहा है और अपने बाकी
व्यथायक एवं निर्वृत अनुभव करता है। नीचे कुछ कवियों की निराशा के
उदाहरण प्रस्तुत हैं :

निरिबाकुमार माधुर-

“ किन्हीं के भार हुई
हुनिया है बहुत बोर”
बम्बी, पातण्डी, बहुतपिदि
हैं बड़े सोग ।^२

१- कदना - फरवरी मार्च अंक १९६२ बाग्य पृ० ३२

२- निरिबाकुमार माधुर- की बीध नहीं उका पृ० ३०

सत्यनारायण वर्मा

यह वक्ता पुटन
 मुसी ताम
 मुसा बीजन
 ० ०
 मे ठण्डे बुल्हे बफनीति
 पोति बस्तन । १

धर्मवीर भाखी

(१) धर धर
 बानि बिलि
 झूठे नबिज
 बस्तन स्वप्न
 नबिल बस्तन
 बिलि है कील की नगरी मे
 नली नली । २

(२) हम उनके बामन पर बाग
 हम उनकी बात्मा मे झूठ
 हम उनके बाप पर तर्ज
 हम उनके हाथों मे टूटी सत्कारी की मुठ । ३

१- सत्यनारायण वर्मा- अनुकान्त पृ० २८

२- धर्मवीर भाखी - बीजा युग पृ० २०

३- .. सात नील वर्ण पृ० २०

(3) ' मैं हूँ नदी तब की तब
बर्फ़ील हूँ
लेकिन किसी भी राण पायी के तब से
कब बाजिंगा । ' १

(4) मैं चलती हूँ ।
मेरी मरने वाली की बालों में
कबलर छुटती बाबाई चलती है ।
० ०
मैं चलती या रही हूँ रेरे
मेरी लहरों पर विपन्न बात बलती बाये । ' २

६० रमा सिंह

(१) बोलन की बीना मैं भी ली
कितने तार लगे हैं ।
टूटा है तार उसी में
स्वर धार उलझन है । ' ३

(२) प्रत्यक्ष तो बितरी कहीं हर वीर है
फेला है बीमार
रात यक अनावस को
दृष्टि की लहरा देने किरन नहीं लुटेगी
कसबिर उदास हूँ

१- धर्मवीर मास्ती - सात गीत: बर्ण पृ० १२३

२- .. ठण्डा लीला पृ० ४१-४२-४४

३- ६० रमा सिंह - समुद्रफेन पृ० १६

ज्योति की उवासा है
 जन्ममा की पूर्णता पर
 कब है ही टूटनी
 कबहिए उपास हूँ । १

सत्य वेवडा-

• जीवन के कष्ट
 कष्ट
 बीस की बिर तिमिर
 पारी भरकन बेचारी
 कावली
 बदल कामधी के ऊँचे बेचारी में,
 उमड़ती कावली टिड़की बली है
 बिडबिडाती कीड़ों है
 टूटो टाली की मोटियाँ है
 रंगी
 कौ
 बेचारी की,
 उनकी है मवा याद
 किधीपारी लिखा ही
 हर दम
 हर पल
 दिमान पर पड़ी रहती है । २

१- कृ० रमा शिव - साधुविमल पृ० १२

२- वी० रमाधीर शिवदा - साधुविमल कविताएँ पृ० ३३

वज्रिय-

‘कोई तो प्यारा नहीं भी मुझे मेह में-

तुम फिर आगये, वरार । १

उक्त निदर्शनों के साथ साथ कव्य की

कवियों की रचनाओं में निराशा की विविध स्थितियाँ प्राप्त होती हैं। श्रीकवि वर्मा की कविता ‘नगरहीन मन’ निराशाजनक स्थिति विशेष उत्प्रेक्षणीय है। कवि नगरीय जीवन से ऊब जाता है उसे निराशा की प्राप्ति होती है।

दुष्कम्प्य कुमार की कविताएँ निराशावाय

से विभक्त हैं। उनके ‘सूर्य का स्वागत’ काव्य संकलन में ‘परिणति’ एवं ‘मीम का बीड़ा’ में निराशावादी दृष्टिकोण स्पष्टिपूर्वक है। श्री बालिकुमार की रचनाएँ निराशावाय की व्यक्तिगत कहती हैं। उनके काव्य संकलन ‘कैसे बीठ की फुहार’ में निराशा की व्यक्तिवादी धारणा का ज्ञान हुआ है। वही प्रकार सुनी कीर्ति जीधरी की कविताएँ निराशा से विभक्त हैं। ‘करुणा’ दि० ७ नू १९६० में प्रकाशित ‘तुमसे भी मेह लगाया’ निराश्य का ज्ञान करती है। ‘तोषरा’ शब्दक में प्रकाशित होता - १ कविता में निराश्य का स्वर देखिए-

‘नाटक ही मेहनत गयी दिन बी दिन की ।

०

०

जुनी बी मुत- सुविधा, देस भास ,

तुमने बी, व्यर्थ गयो ।

१- वज्रिय - आबरा लहरी पृ० ४७

२- श्री नील मेहता- कृति - वनस्पत १९५६ ई० पृ० २१-२२

३- दुष्कम्प्यकुमार - सूर्य का स्वागत पृ० २२, ३३, ३६, ४०

४- बालिकुमार - कैसे बीठ की फुहार पृ० ४२-४४, ४२-४३

५- करुणा दि० ७ नू १९६० ई० पृ० ७

कम्पत्त ही बीर हुए न बना
ही मुरझ गयी । * १

निराशा का स्वर इन कवियों के साथ

मुक्तिबोध , हुंवर नारायण , नवन वात्स्यायन, अर्चस्वर दयाल उन्नीना,
जगदीश गुप्त, केशव बाबयणी, कुन्तल कुमार जैन, राखवल मिश्र, गंगा
प्रसाद विमल , नरेश मेहता, कान्ता वास्तो, कुममन्दिर तायल , राबिन्द्र
किशोर, विपिन कुमार अग्रवाल, श्रीराम वर्मा, सत्योकिान्त वर्मा, सतन,
श्री रामशिर , लक्ष्म दीप सिंह आदि लोकविताओं में विविध रूपों में
देखन हुआ है।

अतः नयी कविता में निराशा का देहन

व्यक्तिवादी स्तर पर हुआ है। व्यक्ति में निराशा सामाजिक, वार्तिक,
मर्वादापन, युद्ध की बालका , महानगरीय सभ्यता, सत्ता में अव्यवस्था
आदि के कारण व्यक्त हुई है। व्यक्ति ने संघर्ष किया, बड़ विफल
हुआ बीर निराशा की बीर अग्रसर हुआ । यही व्यक्तिवादी चिन्तन
की उपलब्ध अभिव्यक्ति है।

(क) नयी कविता में अस्तित्ववाद

“ अस्तित्ववाद ” की व्याख्या एवं उसकी

उत्पत्ति के सम्बन्ध में हम अतुल्य तथ्याय में जर्जर कर चुके हैं। तभी वास्तविक
विषय की देखी हुए हम नयी कविता में अस्तित्ववाद की अभिव्यक्ति

१- तीसरा सप्ताक - कीर्ति लीडरी - क्लास ३ पृ० ४०

के धर्म में विचार करें। अस्तित्ववाद महायुद्धों की विधोषिका के फलस्वरूप उत्पन्न हुआ व्यक्तिवादी दर्शन है। विश्व के इन ही महायुद्धों में व्यक्ति को अपना विनाशनिष्ठ दितार्थ दिया। बीसवीं सताब्दी के प्रारम्भ से मानवसूक्ष्म एवं संस्कृतियों के पतन का इतिहास प्रारम्भ होता है।

डा० अर्बोरे भारतीय व्यक्ति एवं संस्कृति के परिवर्तित होते स्वरूप की एक प्रकार प्रस्तुतकरते हैं :

“ 20 वीं सती की पक्षी बलाबली बोलती बोलती ही ग्रीष्म की धरती सेनाओं की पीछों से काँप उठी, ग्रीष्म के महासागर महायुद्धों से कम नये वीर कैंडर की तीपों ने नष्ट कर प्रथम पुँजीवादी प्रसव की घोषणा कर ही दी। उसके बाद बादलों पालत ही उठा एक बूछे का गला काटने की वीर पुँजीवाद के गुलाम विज्ञान का पुला कंकाल संस्कृति वीर मानवता की नीलें तीर फेंकने के लिए उतार ही गया। लगातार पाँच घात तक यह नर्तक होता रहा। कम किछी बरस भुल सका वीर तीपों का भुल बन्द हुआ तो बादलों ने देखा कि उसकी आत्मा में एक भयानक नर संहार के कारण एक ऐसा वार्तिक प्रसिद्ध कर गया है जिसे उसका रहा छटा पुँस्त्व भी झीन लिया है। उसकी नभों में बिस्फीट का क्षमा तीव्र वागाव पड़ना है, उसकी आत्मा क्षमी कुपल गई है, उसकी पक्षियाँ जानो कमबीर हो गई हैं कि उसके मन पर खना नहरा धक्का लगा है कि उन कुर्गों से कम हुए उसके मनोविकार, नु प्रवृत्तियाँ उभर कर उभर वा गई हैं। संस्कृति का पूरा डोचा हुए

वे उलका वास्तविक अस्तित्व हीन किया है।^१ इसी व्यक्ति के जीवन, वास्तव, विश्वास आदि पर प्रश्न खिड़न लग गये, वह खेदा की स्थिति में बोलें लगा। महानगरीय मोड़, घेना की पीठों, मशीनों एवं कम्प्यूटरों की झुलझुलहट, वितासकाय मकानों आदि ने व्यक्ति को बीना बना दिया, वह अपने अस्तित्व के प्रति सम्बन्धगुस्त हो उठा। खेदा की स्थिति में व्यक्ति में विस्तार आया। राष्ट्रों के जटिल, बाग़्गरी संस्थाओं के विनाश के, व्यक्ति के जीवन की पीछे लगी विघ्नगतियों का बाध, उसको मयाकृत करने लगा। व्यक्ति की वैयक्तिकता भी सम्बन्ध गुस्त हो गई। उसमें टूटन, फुटन, भय, अवास्था तथा अविश्वास के भाव विकसित होने लगा।

अर्थ में, अस्तित्ववादों दर्शन व्यक्ति-

जीवन को केन्द्र में लेकर अपने बाधा दर्शन है। इसी व्यक्ति-अस्तित्व के दर्शन के नाम से विचार करते हैं। अस्तित्ववाद के अन्तर्गत व्यक्ति को कुछ भी है, उस उनके सिर वह स्वयं उत्तरदायी है। अस्तित्ववादी दार्शनिक एवं प्राज्ञ के कयाकार ने व्यक्ति की स्वतंत्रता को महत्व दिया। व्यक्ति अपने कार्य का उत्तरदायी है। इसलिए धार्मिक के विचार व्यक्ति-वादी दर्शन के निकट हैं। अस्तित्ववाद व्यक्तिवादी दर्शन पर आधारित है। इसीलिए व्यक्ति के अस्तित्व के प्रति अस्तित्ववादियों का मोह रहा है। धार्मिक ने अस्तित्ववादी दर्शन को अपने उपन्यास 'उत्कार' लिखी में 'नीतिशा' (प्रकाशन काष्ठ सं. १६३० ई०) में व्यक्त किया है।

डा० रामविश्वनाथ तर्मा उक्त उपन्यास के नायक अन्वयाय रीति का

१- तत्सोकान्त वर्मा- नयी कविता के प्रतिमान पृ० १५५

२- आत्मने पद, पृ० ६३

३- डा० विश्वनाथ तर्मा- लिखी उपन्यासों का समीक्षित-जगतात्मक अध्ययन पृ० १५७

उदाहरण देकर अस्तित्ववाद की व्याख्या करती हैं। एक स्पष्ट टीकाएँ
 दी जाती है कि चित्त में सब कुछ व्यर्थ एवं अनावश्यक -

‘ मैं तपास दीड़ाने लगा कि वात्सल्य क्या कर हूँ,
 ये जो समान व्यर्थ अस्तित्व हैं,
 उनमें कम-से- कम एक का नाश कर डालूँ । ’ १

यह अपनी कथा की लीला की र चित्त से निरन्तर अलग अनुभव करता है।
 यह वात्सल्य हत्या नहीं करता, परन्तु उसको कल्पना वात्सल्य हत्या देती है।^२

हिन्दी साहित्य में अस्तित्ववाद की सर्वप्रथम
 अभिव्यक्ति ने अपनी उपन्यास ‘ अपनी अपनी कलमों ’ में स्थापित किया है। प्रयोग-
 वाद एवं नयी कविता भी अस्तित्ववादी विचारधारा से प्रभावित हुई है।
 नयी कविता के अस्तित्ववादी दर्शन की व्याख्या करते हुए डा० राम
 विशास वर्मा अपनी विचार एवं प्रकार प्रस्तुत करते हैं :

“ हिन्दी के अधिकांश नयी कविता दिल्ली
 बाहों का उदात्त टीकाएँ देता है। जग, उकार, लीलाप, हुरे- हुरे अपनी
 प्राय, वात्सल्य की भाव, लीला का बोध, भीड़ में कलमों का अलङ्कार
 होने की समस्या है परितोनी जाति जाति लक्षण जग में मिलती हैं। बीमार
 जावनी की कभी कभी हर बोध बीमार नज़र जाती है, इन कवियों की
 बीम बीमार ही नहीं, मुर्दा भी नज़र जाती है। मोक्षान्त वर्मा की ललता
 है- भारी पुष्पी के उठती लीला, यह एक पण्डित केवटरी में बैठे मानी

१- डा० रामविशास वर्मा- नयी कविता की अस्तित्ववाद पृ० १००

२- वही

पृ० १०३-१०४

सीधी है, उनकी कविता में सब कहीं नहीं है, उनके पैरों पर बीटियाँ चूँती हैं, की पर रीझ की मढ़ाता है, और "भुजा पर प्रेमिका करती है के ।" केसाव बाबयणी को सब तरफ पिकी पुनाबदार बातों की गलियाँ दिखाई देती हैं, "कहाँ धिक् उक्काई का शब्द जाता है, "बो भी, कहाँ भी है, बोमार है, बोनी की किसी न किसी तरह का हुंकार है, पूक, पीक, मक्का , गंधाती भुजाँ देती बस्तियाँ, और --- ।" है अन्य कवियों में सर्वस्वर ब्यास अन्धना, गिरिजाकुमार माधुर, राकमल बोधरी, विजयेश नारायण बाही, केसाव बाबयणी, सत्सीकान्त वर्मा, कालीश गुप्त, रघुवीर अनाय बादि की कविताओं में आत्म हत्या, बेश्याओं का श्लिष्ट, उक्काई का श्लिष्ट, छड़कों का श्लिष्ट, कदु - बोध बादि के उदाहरण प्रस्तुत करते हुए अस्तित्ववादी प्रवृत्तियों की व्याख्या करते हैं।

डा० राम विशास शर्मा ने जो अस्तित्ववाद के सदाण गिनाते हुए व्याख्या की है वह सपूर्ण है। यह अस्तित्ववादी दर्शन का स्वस्थ पक्ष नहीं है। इस क्षेत्र में डा० रामचन्द्र राय ने नयी कविता में व्याप्त अस्तित्ववाद के कई सदाण प्रस्तुत किये हैं :

- (१) विहंगमति (२) व्याकुलता (३) संकीर्ण (४) कई (५) भय, (६) अज्ञान (७) प्रेम (८) घृणा (९) व्यापकता बादि ।

इसी प्रकार डा० श्यामसुन्दर मिश्र ने

१- डा० रामविश्वस शर्मा- नयी कविता में अस्तित्ववाद पृ० १०४

२- डा० रामचन्द्र राय- नयी कविता - उद्भव और विकास पृ० १६३

वस्तित्वबोध के सपानों में बनास्वा, भव, संशय, कलमता, घृणा, व्याकुलता तथा अर्धनसि आदि पर विचार किया है। वस्तित्ववादी कविताओं में संस्कार पर अविश्वास यौन-सम्बन्धों के नग्न चित्र, मृत्युता, उन्कार, घृणा आदि प्रवृत्तियाँ प्राप्त होती हैं। वस्तित्ववाद ने व्यक्ति को महत्व दिया। नयी कविता में व्यक्ति की प्रतिष्ठा हुई। इसमें व्यक्ति-चिन्ता के प्रति नये कवि ध्यान रहे। इससे वस्तित्ववादी दर्शन की अभिव्यक्ति मिलेगी।

नयी कविता में वस्तित्ववादी चिन्तन की अभिव्यक्ति विविध रूपों में हुई है। नयी कविता व्यक्ति की प्रतिष्ठा को लेकर कहीं और उधर व्यक्तिवादी दर्शन की 'व्यक्ति' की केन्द्र में मानकर विकसित हुआ है। वस्तित्ववाद का समग्र दर्शन व्यक्ति पर केन्द्रित है। समाज का स्थान वहाँ व्यक्ति के बाद आता है। अतः व्यक्ति का किसी परिधि से उसके आस पास की परिस्थितियाँ उसे वस्तित्व बोध के प्रति उत्कर्ष करती रही हैं। नयी कविता के प्रायः सभी कवि वस्तित्ववादी भावना से पीड़ित हैं, उनका समग्र काव्य वस्तित्व-बोध से चिन्तित है। प्रोफेसर वर्मा महानगरीय जीवन की विमोचिका से व्यथित हैं। वे अनुभव करते हैं कि 'नवान्मय' (व्यक्ति) का वस्तित्व कितना निर्णय है :

हर दिन मकान की पीठ पर नये मकान
हर दिन
हर की सीढ़ी पर

१- डा० श्यामसुन्दर मिश्र : वस्तित्ववाद और द्वितीय उपरीत्तर हिन्दी

साहित्य पृ० ७६७ पृ०

२- महावीर दाधीच - वस्तित्ववाद पृ० १६

नया तरह

किन्तु नवान्तर के जाने का

बीध नहीं ,

वर्ण नहीं,

दुःख नहीं

शोध नहीं । " १

एक अन्य कविता 'वर के निम्न कर ' में श्रीकान्त वर्मा की अनुभूतियाँ
व्यक्तित्व- बीध के प्रति कीतनी कल्प हैं। व्यक्ति को एक मोड़ परी
छुक पर अपना व्यक्तित्व तो जलन रहा, नाम तक की अनुभूति नहीं
होती, लगता है ' व्यक्ति ' व्यक्ति नहीं रहा :

' मैं किसी भी छुक पर

निम्न जाता

बीर किसी भी

वह पर आविस्ता

कैठ जाता

(पृ)

कै-
कै-

मेरा कोई नाम

नहीं । " २

एक महानगर में ' व्यक्ति ' अपनी वाफा

१- श्रीकान्त वर्मा- मायावर्षण पृ० ६०-६१

२- वही पृ० १८

मुक्त नया । वह स्वयं को 'मरा हुआ' अनुभव करने लगा और प्रत्येक
नारी के साथ होने की इच्छा रखने लगा । व्यक्ति के व्यक्तित्व और
व्यक्तित्व का कितना भयानक विलम्बन है :

मेरे सड़क पर
मुचलती हुई
हरे
छाती के साथ
होने की इच्छा
हिर हुए
जीवन के मृत्यु
की
वीर
नता जाता
हूँ । १

व्यक्ति का विलम्बन उसकी पृष्ठात्मक
कार्य के प्रति रत होने की प्रेरित करता है। बदनु, उलकाई, गन्दगी
तथा मिथीसे पशु आदि उसकी सुन्दर लगते हैं :

मेरी पर चढ़ती है चोटियाँ
कन्ध पर पैर पड़ाता है
होइ ,
मुवा पर प्रेरिका
करती है के । २

श्रीकान्त वर्मा के अन्ध की उदाहरण
उपलब्ध है किन्हीं व्यक्ति गुणा, विशेषता, उद्वेग, अस्वीकृता, अस्वित्त-
वीध, भय, अज्ञान, ईश्वर के प्रति अनास्था आदि में यह दृष्टिणीकर
होता है। यहाँ कुछ निदर्शन द्रष्टव्य है :

(१) मैं एक फेलावण की दोषार पर

जकर

सिख जाता हूँ

जाक है :

अरवार । ईश फेलाती है

मक्षिया ,

खरी, अरवार ,

टमि फेलाती है

रुष्टिया

धनी रीकणार

आवधान । फेस रहा है

ईश्वर ॥ १

(२) कुछ प्रिया

प्रेम करती है

गर्दी है,

बाकी

नामर्दी है । २

१- श्रीकान्त वर्मा - मायावर्णन पृ० २६-२७

२- वही

पृ० २८

(३) मनुष्य के बन्दर

मनुष्य

सदी के

एक सदी

ही रही है । १

(४) क्या बागडोर के हैं

बेरयाबी के

हाथ में । २

(५) कई बीतों की मुल

करने की कोशिश में

कई लम्बे

बयल रहा

छोपे पर बैठे

नामर्द । ३

इसी प्रकार धर्मवीर भारतीय की कविताओं में मुल की विभीषिका से भयाङ्कत, अस्तित्व बीध के प्रति बल्लभ एवं व्यक्ति की विशेषतियों से संघर्ष एवं रेकिस किया है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) बी मेरी वात्मा की संमिति ।

१- श्रीकान्त वर्मा- पायावर्षण पृ० ४४

२- " " " " पृ० ६६

३- " " " " पृ० ८२

कार निन्दनी की कारा में
 कभी छटापटाकर मुक्तकी वाचायु सनावी
 बीर न कोई उत्तर पावी
 यही समझना कोई इसकी धीरे धीरे निशुल
 हुआ है,
 सब बस्ती में कोई बीप काने बाता नहीं
 क्या है ? १

(२) युद्धीपरान्त

यह सम्भावना अवतरित हुआ
 किसे स्थितियाँ, मनोवृत्तियाँ,
 वात्सल्य सब निशुल हैं। २

(३) वाकर कहुँगा क्या

सब सम्भावना पराजय के बाद भी
 क्यों बोधित क्या हूँ मैं ?
 केसे कहूँ मैं । २

(४) मृत्यु की हत्ती निकट पाना

मेरे द्वार यह
 विस्तृत हो गया अनुभव का
 केसे सब बाण निधी
 कोसल मुजास की

१- धर्मवीर वात्सी- ठण्डा बीरा ५० २

२- .. सम्भावना ५० १२

३- ५० ३२

अपार के नीचे तक नीर जाय
 बरम प्राप्त के उस क्षण नही जाना मे
 कोई मेरी बारी अनुभूतियों को नीर गया । १

(५) मे वह तुम्हारा अस्वत्थामा
 कायर अस्वत्थामा
 श्रेण हूँ अभी तक
 मेरी रोनी मुँह तक के
 मुस के श्रेण रहता है
 नम्मा कफ
 बासी फूक
 श्रेण हूँ अभी तक । २

(६) आत्मघात कर हूँ ?
 वह अप्रुथक अस्तित्व है । ३

(७) 'वध केवल वध, केवल वध
 अस्तित्व अर्थ को
 मेरे अस्तित्व का । ४

(८) मे हूँ युगुत्थ
 मे उस पक्षि की तरह हूँ
 जो पुरे युग के दौरान स्व मे लगा था

१- धर्मवीर भारती-कैलास युग पृ० ३३

२- .. पृ० ३७

३- .. पृ० ३७

४- .. पृ० ३८

पर बिदे सब समता है कि वह गलत धुरी में लगा था
बीर में अपनी उस धुरी से उतर गया हूँ । १

नयी कवितामें अस्तित्ववादो चिन्तन की
विभिन्न रूपों में अविव्यक्ति सम्प्रेषितान्त वर्मा ने की है। भीड़ में महानगर
में पराकाष्ठों में, तथा विकृतियों में कवि अस्तित्ववादो चिन्तन का प्रवीण
करता है। कुछ निवर्तन देखिए-

(१) पराकाष्ठों

पराकाष्ठों ही पराकाष्ठों
पराकाष्ठों में लीये अस्तित्व
हमारे व्यक्त को काष्ठों
ज्योति और अस्तित्व के बीच की महाराष्ठों
वक्ष्य व्यक्तित्व की
कुरूप स्थितियों की । २

(२) अस्तित्व :

वह एक किरण
की सम्भार की नहीं
० ०
बादमी एक समीप चीट से टूटा फूटा नहीं ।
वफा और वफा होने के बीच
वह धुन्ना दूर दूर की लड़ा रहा : उड़ा नहीं । ३

१- अमरीर भारती - अन्धा कुल पृ० ७६

२- सम्प्रेषितान्त वर्मा- अनुकम्पित पृ० ७

३- वही पृ० ६

- (३) ये प्रेतात्माएँ, यह इनका मुख्य वर्ण
 सधियाँ हैं बोद्धित मानवात्मा
 का पीर बन

०

●

यह भी प्रेतात्मा है
 उसे बन्ध कर दो । १

- (४) किन्तु-----

कहते हैं

उसी में भेन के कीड़े थे

मिष्टिनी कामरु के पुच्छों की

जमरी शरीर पर

बात्मा पर

मन पर

बीर----- । २

- (५) यह मन्त्री

ये विपकृतियाँ

ये कैदी बूट

कोरिया में बन रहे

बादमी राज्य पर गया

कर्म जो रहे । ३

१- इस्तीकामत बर्मा - अलुफामत पृ० ७७

२- .. पृ० ६१

३- .. पृ० १५६

संस्कृतियों का विघटन, भविष्य की बालका, व्यक्ति की सामाजिक विरासत खोना आदि है कवि हुआ क्या है। उसे ज्ञात है कि इन संस्कृतियों ने क्या ब्रीड़ा है, इन सुखों से क्या क्या है ? लोन्गे पैसुर से क्या मिला ? कलकली ललवारी, लोलकी बाबायें, कण्ठावन, नारे लगायी कर्कर प्रियात्माई और छुटेरों की परम्परा । लोन्गे कवि के बम्पर टूटन- फुटन लगी । लम्बे कवियों की स्थिति भी कुछ ऐसी ही रही है। नीचे कुछ कवियों के उदाहरण प्रस्तुत हैं :

गिरिबाह्मण माधुर

(१) की देता

मैं एक भूकम्प बने नगर के नीचे फिरता हूँ
 बमरावा हुआ
 कहीं घर तरफ टूटे
 लुप्त बरबाद है
 जलने मरी गलिरियाँ
 भमरायि बरायि
 ललकलाती लै फटे लम्बे हैं
 हर कदम पर टूण्डी- लुण्डी लीदियों के डेर हैं
 ० ०
 बल बुनियाद मरी है। २

१- ललकीकान्त वर्मा- ललकान्त पृ० ११८

२- गिरिबाह्मण माधुर- लिखा पंत ललकीति पृ० ६-७

(२) 'हर जीव भी टोन के हिस्से में बन्द है

सुखी से सुख नवा

सुखी हवा का संगूठा

बात बायी बनस्पति

उपरी हुर नीचे हुरि भी बनीन

सारा जीवन प्रेम ग्रस्त

क्या मारे रोगी - हा । १

(३) मेरा धरातल हीन

हमका डीकटा

मरी कपड़ी हा कबन्ध

उठता है गिरता है, ऊपर उड़ जाता है

० ०

हस्ताती भवन के भी तपे पर

मेराकटा हुआ सिर

पाताल राव- हा

वही ही कबन्ध का विशिष्ट नृत्य देता है

देता है

बीर रविग कपट्टी करता जाता है। २

(४) मांस के तुल्य

कट्टानी की तैल

१- गिरिवाकुमार माथुर- बी बी नही सका पृ० २४

२- वही

पृ० २८

लीक के पलासि
 मोहों की गीत माप में
 भिन्नगारिणी से उठते बावली
 किन्हीं ने भी देखे
 मेरी बन्धिम आत्म हत्या नहीं देखी । १

(५) अकसा मेरी स्मृति
 तीनदिन की नयी
 उन कर एक दिग्गु पर
 तीन बखली साथ लहने लगे
 कलन कविताओं में
 वीर का न ज्ञात हुवा
 हमें कौन मेरा है । २

कवि

(१) तुम्हें
 अपनी भी खेती में
 भूतों का डर होता रहा है
 मुझे अपनी कौटुम्ह में
 का डर ला रहा है
 कि मैं कम भूत की बाजना । ३

१- गिरिवाकुमार माधुर- जी की नहीं सका पृ० ३६

२- कही पृ० ४१

३- कवि- क्योंकि मैं उसे मानता हूँ पृ० ३२

(२) वेदना अस्तित्व की
 व्यथान की कुपाविनार
 मय मरण उत्थान जनति
 दुःख सुख की प्रक्रियार । १

(३) किन्तु हम हैं दीप
 हम धरा नहीं हैं
 स्थिर समयेण हैं हमारा
 हम क्या थे दीप हैं प्रीतस्विनी के
 किन्तु हम बल्लि नहीं हैं
 क्योंकि बलना तैल हीना है
 हम बल्लि तो रहेंगे ही नहीं
 पर उत्थेन
 धमन हीना
 ठहरे
 छहरे
 वह बायें । २

शुभर नारायण

(१) ये बीड़ि भरी हैं
 सम्बन्धीभरे हैं
 धरा, धाम, सदा बन्धु

१- शीत- इत्यम् १० ११३

२- शीत - इती पाठ पर पाण ५२ १० ६५

पिता , नाम, वर्तमान
 मुक्त मैं हूँ- मुक्त हूँ - भी हूँ
 कमाने, पकवाने, पाने, बेमाने
 अब भी हूँ- मैं बकता हूँ
 लेकिन मैं क्या हूँ ?
 मैं क्या हूँ ?
 मैं क्या हूँ । १

(२) एक घर
 जिसमें न दादाजी
 न बाबा निकलने के रास्ते
 केवल दीवारें
 पेंसिलर बन्धी गलियारी
 बीर एक लक्ष्मी बाबाजी का
 दबे पाँव बोझा करती
 हत्याएँ । २

देवराज

* कल पीढ़ी देर
 त्रिभुवन विश्व के साथ मैं
 एक दम जीता था

१- हुँवर नारायण - आत्मजयी पृ० ३७- ३८

२- वही पृ० ४०

वालों के शायी केश बहुत पता था । १

हरि नारायण व्यास

‘ वस सब देत रहे हैं
 सम्पन्न रहे हैं
 पुन रहे हैं, पुन रहे हैं
 बी श्वेत हमारे सिद्ध
 अपनी अस्तित्व की अनुभूति का
 आनन्द व्यक्त करता हुआ
 एक विरतिन व्याकुलताके मुक्त में
 सुखा था रहा है । २

केशवनाथ सिंह

कभी

विलकुल कभी

विश्वजय का श्रम सब पल से गया है

फाँसी पर उड़ रही है धूल

फेड़ पर पर काँची हैं । ३

१- कल्पना , मई १९६२ ई० पृ० ३७

२- .. मार्च १९६३ पृ० २६

३- दुधरा अक्षक पृ० १४०

गिरिराज कितोर

‘ सब कुछ है

हाथों में हाथ फँसाकर

एक धर में नानकी लगती है

सिद्धसिद्धाष्ट के चारा वातावरण

सबकुछ जाता है

बेबनानक

हाथ छोड़ देती है

सब सब गारों में गिरती जाती है। १

सुनमिन्दर तावत

‘ तबिले इस पर

हँसता मौन चारों ओर

निगलने की तत्पर हर जगह ।

वाक़ारहीन बानस वीरिका

पास की इस पर तबिले का डेर

सुर्दा सभी संसार । २

कामधर सिपाठी

‘ इस भीड़ की जगलमें

एक भीड़ ओर है

१- नयी कविता अंक ८ पृ० ७४

२- वही पृ० ८६

बिछका जाकात
 बन्धी पीठ के डेनों पर
 टिका हुआ है । १

राधेन्द्र कितोर

क्योंकि मैं कबिता साधती हूँ कि जो रहा हूँ
 बन्धु बन्धु करि मैं तपी ज्वान विस्तर पर
 हुए हुती कीचि के फाँकती हुई बन्धु
 बीर जो रहा हूँ । २

माधव मधुकर

बया कहें ?
 अन्तहीन जनजाती राहों का बया कहें ?
 फलता हूँ गलियों- बीराहों के डमरों तक
 बीराने गलियों के भीड़ में बगलों तक
 एक बर्ष फलता है
 हीठ काय फलता है
 बया कहें ? १ २

पुष्प

‘ हाँ हाँ ओके तो वन के गुमरी हुए बावनों के कहीं
 तो यह रहा तुम्हारा पहरा

१- नवी कविता पृ० ६६

२- .. पृ० १२३

३- कविता- ६ वीं भागीरथ भाग पृ० २२

यह लक्ष्य के पीछे गिर पड़ा था । १

उपरिस्थिति उदाहरणों की देखी पर जात होता है कि अस्तित्ववादी प्रवृत्तियों व्यक्ति के अन्तर्प्रेम में विविध रूपों में समाहित रही हैं। व्यक्ति की व्यक्तित्व की पीड़ा, टूटने का दुःख, मोह में लीबाने की बारीका, स्वयं की मरा हुआ जन्मा प्रतापना व्य-
पना, समग्र विश्व की बात जन्मा मुर्दा मानना, किसी महामानव के भय, बाधुनिकता का भय, मोह का भय, धर्म, वात्सल्य हत्या की प्रक्रिया, गम्भीर घृणात्मक वस्तुओं के प्रति रागात्मकता, कबू मरी, उक्ताई मरी, दुःखानित मयंक स्थितियों, विवेकानित्य एवं कलनाय का जीवन वादि है उसका हृदय विस्तृत है। वह अस्तित्व में जीवितानिक बाधार पर रोगी है। ऐसा समता है नया कवि जाना समान प्रसन्न, संघर्ष रत है कि उसके दैनिक जीवन की क्रियाएँ भी बाधोण के तेवर तथा समान की मुझाई प्रस्तुत करती हैं। बीबी छड़ें, भीड़ मरी छड़ें, पराशर्या, टूटे फूटे मल्ले , शर्याओं केगलित वेग, वाक्पित्तहोन जीवन, अनिर्णय की स्थिति, अस्तित्व के प्रति चिन्ता, इतिहास एवं संस्कृति के पान से अनिश्चय एवं बारीका का मन में बैठ जाना वादि है नयी कविता का कवि कहता हुआ है। जामाकि राक्नेतिक एवंवार्तिक विवेकानित्य में वह जाना फँसा हुआ है कि उसकी अपनी बाधायु भीड़ मरी छड़ों पर 'संविदाय' स्थापय 'समता' है।

नयी कविता में अस्तित्ववादी चिन्तन का बाधार व्यक्ति है। व्यक्ति की अनुभूतियाँ ही अस्तित्व के प्रति मोहात्मक

है। यह व्यक्ति अनुभव करता है कि वह विपुल संकृतियों की उपज है। इतिहास, भविष्य, वर्तमान आदि उसकी सीमा है, निर्णय समता है। वह प्रतिपाद्य मूल्य की निष्ठा है गुणहीन रहता है तथा मूल्य के पाणों की बीता है। व्यक्तिवादी धारणा के अनुसार वह आत्म केन्द्रित ही गया है क्योंकि मोड़ मरी उन्हें उसे कर्तवीन दृष्टिगीनर होती है। व्यक्ति स्वार्थी, व्यक्ति-केतना एवं व्यक्ति निष्ठा की पूर्ण रूप है अभिव्यक्ति वस्तित्ववादी कविताओं में हुई है। नयी कविता में व्यक्तिवादी प्रवृत्ति विपुल होती हुई वस्तित्ववाद के रूप में प्रकट होती है। सुखितवीध भी नयी कविता में वस्तित्ववाद के रूप में प्रकट होती है। यथावादी व्यक्तिवाद की उपज मानते हैं। अतः नयी कविता में वस्तित्ववाद की अभिव्यक्ति एकल रूप में हुई है और व्यक्तिवादी केतना समग्र रूप से कविताओं पर एवं कवि मन पर काई रही है।

१-डा० राम विशास तर्मा- वस्तित्ववाद और नयी कविता पृ० ११७

२- सुखितवीध - नयी कविता का आत्म संघर्ष तथा अन्य विवरण (१९७७)

(ग) नयी कविता में समुमानववाद

नयी कविता में समु मानव का प्रारम्भ

नीट्शे के अविमानव के प्रतिक्रिया स्वल्प हुआ। पारंपरागत धर्मों में लौटते मनुष्य (होली मैन) तथा समुमानव (हिटलर मैन) की धारणा महाकुर्डी की विभीषिका एवं मानव अस्तित्व की विघटनकारी स्थिति के कारण विकसित हुई। जब सम्पूर्ण में अन्तिम कवि टी० एस० एलियट की ' दि हाउसिंग ' कविता प्रसिद्ध है। समुमानव तत्त्व ' सुल्लिमर्ब टूवेल्स ' के सिद्धिभूटिकों ' मनुष्यों के संघर्ष में विचारणीय है, ये मनुष्य ' सिद्धि-पुष्ट ' दीप के केवल इः एवं सम्ये थे। परन्तु नयी कविता का व्यक्तित्व इः एवं डीटा कला सांरीरिह सम्पाद- बीडाई में किसी के कम नहीं है। इसके समय में, मानवता में समुत्त्व की समुप्रतिष्ठा व्याप्त है। समुत्त्व बीध ही नयी कविता के चिन्तन का मुख्य विषय है। भारतीय परिवेश समुमानव की एक नियोजित वैचारिकता प्रदान करता है। सम्भवतः अरविन्द वर्त्मन का महामानव की उत्पत्तिकाम्य वर्मा की दृष्टि में रहा ही। ये समु मानव की व्याख्या इन तर्कों में करते हैं, - ' जिस समयत व्यापक मान-वात्मा का समुत्तम वात्स्य बीध कहा जा सकता है। ' एक अन्य स्थान पर समुमानव की व्याख्या इन तर्कों में करते हैं- ' समु मानव प्रत्येक राण के यथार्थ की वागल्क वेता प्राणी के रूप में पूर्ण रूप से योग्यता है। वह स्वयं विगलित बाप्र वेवरियों पर कल्पित कोयल की दृष्टि के प्रति द्रवित नहीं होता, जो इसके लिए वह बीणी नहीं ठहराया जा सकता। वह

१- उत्पत्तिकाम्य वर्मा- नये प्रतिमान पुराने निकुञ्ज पृ० ६३

की बीछा है, की पीछता है, की बाण बाण उनके व्यक्तित्व में परि-
 व्याप्त है, उन्हीं की बहिष्कृति देता है। तत्त्वोक्तान्त वर्मा ने बुद्धि-
 गन्धर्व की द्वारा स्थापित महाप्राण पर विचार करते हुए तनु मानव के
 प्रति विशेष रुचि हो- 'मानव- सत्य के रूप में हमें भिन्न या विषय
 एक हीर प्रविष्टि का तीव्रता समाधान की स्थापित वर्मा हीर नया रहा
 या हीर दूसरी हीर 'स्वर्णवृत्त', 'स्वर्णपुष्टि' हीर 'स्वर्णवात'
 के ताने बाने में नैपुण्य 'महाप्राण' व्यक्तित्व किया जा रहा था।
 हमारी विज्ञाता की कि हमें हम कहाँ है, हमारा व्यक्तित्व कहाँ है,
 व्यक्तित्व की अनुपुष्टि कहाँ है, वात्स्य पुष्टि कहाँ है हीर उच्च वात्स्य पुष्टि
 के लिए क्या यह आवश्यक है कि वह भीड़ के साथ नहीं।

कल्पित तनुत्व- बीध एवं तनुता के प्रति
 भारतीय विज्ञान परम्परा अधिक सागरक रही है। शैव- शाक्तिय में
 तनुता एवं तनुता तथा अनुता काव्य में वैश्व एवं विनय व्यक्तित्व की
 'महापुष्टि' के भी 'महापुष्टि' की संवेदना की बहिष्कृति प्रदान
 करती रही है। यह तनुता का दर्शन महापुष्टि वर्मा तथा तन्मय कथियों के
 काव्य में भी पुष्टिगीतर होता है। कहीं वे 'हीट तोन' के रूप में
 व्यक्त हुआ है। अन्य रूप वे हिन्दी काव्य में तनुता की भाषना किसी-
 न- किसी रूप में व्याप्त रही है।

तनु मानव की डा० नागर सिंह ने 'हीटा
 बावनी' कहा है। डा० गोविन्द द्विवेदी ने 'धामी का बावनी' कहा

१- तत्त्वोक्तान्त वर्मा - नये प्रतिमान पुराने निरुपण पृ० ६६

२- वही पृ० ६३

३- उक्ति उक्त- नये कविता में मुख्य बीध पृ० १५५

है, ये एक संघर्ष में लिखी है- 'सामने का आदमी बीछत भारतीय मनुष्य है, जो परिवर्तन कलाओं की पथ से बैनी, टूटन, निराशा और सबसे अधिक कठोरता के बटित तनावों को भोग रहा है।' परन्तु दुष्कृत कुमार का मत 'साधारण आदमी' के प्रति है जो कि बाद में जनवादी साहित्य में 'आम आदमी' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। दुष्कृत कुमार अपने काव्य संकलन जलती हुई वन का वसन्त 'की भूमिका में साधारण आदमी को अपने जन्मर रीति का प्रक्रिया के संघर्ष में विचार प्रस्तुत करते हैं- 'मे एक साधारण आदमी हूँ और इतिहास और सामाजिक स्थितियों के संघर्ष में, साधारण आदमी की पीड़ा, उत्तेजना, खराब, क्षाम और उनके सम्बन्धों के उलझावों को जीता और व्यक्त करता हूँ।' प्रयोगवादी कवियों ने लैडि, बारन, बादि नामों से एक समुदाय को व्यक्त किया।

विस्मयक, समीकान्त वर्णों का समुमानव की कल्पना, 'महामानव' द्वारा ही प्राप्त हुई है। ये आच के समाज में समुमानव की प्रतिष्ठा करना चाहते हैं। इसलिए ईश्वरवाद एवं साम्यवाद में व्यक्ति की स्थिति का विवेक करते हैं। ईश्वरवाद ईश्वर को सर्व साध-वास के समाज की महत्त्व देता है, परन्तु व्यक्ति संघर्ष और लीजण में पिछता रहता है। वहीं समुत्व-बोध है जो कि निताम्य व्यक्तिवादी वर्ग पर आधारित है। 'मानव नियति का नियन्ता और उसका सत्य स्वयम् मनुष्य है। वहीं उसका केन्द्र है और उस केन्द्र की प्रतिविधि और उसकी नियंत्रित सक्ति भी उसी के हाथ में है, उसकी आत्म सक्ति और

१- डा. नीलम्व दिवेदी- नयी कविता में विश्व का वस्तुगत परिग्रह

पृ० ११४-११५

२- दुष्कृत कुमार- जलती हुई वन का वसन्त प्रथम संस्करण भूमिका पृ० ५

निरूपण तथित है^१। यह व्यक्तिवादी चर्च पर बाधाहित समु मानव
 वाच की कल्पना है जो कि व्यक्ति के केन्द्र पर पूर्णित है तथा व्यक्ति
 को समग्र क्रियावी का कर्ता मानता है। सप्रीकान्त वर्मा एक अन्य स्थान
 पर मानव को क्वाई (व्यक्ति) की स्वतंत्रता प्रदान करिका विचार
 रखते हैं- ' मानव नियति का धरताक या उसका निर्माता कोई ऐवदूत
 कथा कहेत तथित- प्रतिभा सम्पन्न प्रु नहीं है, वान् समस्त मानवता
 है, उसकी प्रत्येक क्वाई की सम्पूर्णता, समग्रता वीर स्वतंत्रता है^२। अतः
 व्यक्ति की समग्र स्वतंत्रता व्यक्तिवादी चिन्तन की ज्यादा है। समु-
 मानववाद के समग्र विचार व्यक्तिवादी धारणा पर बाधाहित है। समु-
 मानववाद व्यक्तिवादी की क्वाइयों की पूर्ण तथा स्वतन्त्र रखी के लिए
 पीनना करता है, क्वा व्यक्तिवादीविचारधारा का प्रु है। ' वाच
 का अनुच्य बाहे किना समु ही ' , बीना ही, किन्तु यह सम्भवता है
 कि उसकी नियति समु नहीं है कि क्वा बनने के विनियम में केवत यह
 प्रतिभा कन वाच जिसमें क्वा कू ही हीनही । अतिसर यवार्थ की यह
 क्वा क्वा विविधव्यक्ति होगी यदि मानव स्वतंत्रता वीर उसके व्यक्तित्व
 की क्वाइयों को परिपूर्णता रक्षित है^३। ' समु मानव रेखा व्यक्ति
 बनना चाहता है जो प्रतिभा सम्पन्न अद्वितीय एवं विशिष्ट ही । व्यक्ति
 विशिष्ट्य क्वा व्यक्तिवादी चेतना के निष्ठ सा देता है।

सप्री कान्त वर्मा ने समु मानव की प्रतिष्ठा
 हेतु अपनी ग्रंथ ' नये कविता के प्रतिमान ' में व्यक्ति के समुत्व की ज्यादा

१- सप्रीकान्त वर्मा- नये कविता के प्रतिमान पृ० १६

२- वही पृ० १६७

३- वही पृ० १६७

करने का परम प्रयास किया है। वह तपु मानव के केन्द्र में 'व्यक्ति' के व्यक्ति रूप में व्याख्याता करते हैं। इस संदर्भ में उनके विचार महत्वपूर्ण हैं- 'वस्तु', जब हम मनुष्य को मनुष्य के रूप में ग्रहण करने की चेष्टा करें तो निश्चय हमारी दृष्टि में सुपरमैन 'या' 'अधिनायक' का रूप न आकर उस व्यक्ति का रूप आयेगा जो अपनी लक्ष्यता की लिए हुए अपनी लक्ष्य परिधि में अत्यन्त गतिशीलताके साथ अपनी दृष्टि की रक्षा में बाध भी अपनी प्रतिवास्था बोधित रहे हैं। बावजूद मानव की इसकी वास्था के अन्विष्टता की आवश्यकता इसलिए है कि इतिहास के 'सुपरमैन' या 'एक शक्ति' के अधिनायक 'क्या' 'देवदूत' या मसीहा ने अपनी अमर्य्य महानता की लक्ष्य मानव की प्रति लेकर ही अपनाया है।

यदि मसीहा का ज्ञान और उसकी लक्ष्य प्रति ईश्वर प्राप्त है तो अधिनायक का ज्ञान केवल इतिहास-प्रदत्त है और सुपरमैन का ज्ञान केवल प्रकृति के अन्विष्टता (रखरखेकन्स) पर आधारित है। ईश्वर, इतिहास और अभाव की एक एक संपूर्ण मानव सम्प्रदाय के अन्विष्ट नहीं किया आयेगा जब तक उसकी कर्मियाँ स्पष्ट नहीं होतीं। मानव सम्प्रदाय की लक्ष्यता की स्थापनाओं के नहीं बल्कि हुनियादी स्थापनाओं द्वारा विकसित होती है और इन हुनियादी स्थापनाओं में लक्ष्यमानव का महत्व है। ईश्वर वास्तु तर्क में यह लक्ष्य मानव 'पापों का पुत्र' के रूप में चित्रित किया जाता है, इतिहास की अन्विष्टता की और अन्विष्टता की परिणति में वह केवल वर्ग-भेदना का प्रतीक बन कर रह जाता है। सुपरमैन में लक्ष्य रूप कृत्रिम, लक्ष्य और अन्विष्टता का प्रतिनिधि माना जाता है, किन्तु

१- अन्विष्टता के अन्विष्टता के प्रतिमान पृ० १६२-१६२

उसके पुष्प की वह समुमानव की विशेषता है उस पर कोई भी ध्यान नहीं देता । ----- वह समुमानव वर्ग मानव के रूप में मात्र स्वसिद्ध स्वीकार किया जाता है कि वह ही रूप में अधिनायक के समस्त साधन को बिना किसी उफ़ के बचन करता थाय और अन्त में बहकृत्रिम और विद्वत् स्वसिद्ध सिद्ध किया जाता है कि सुपरमैन ने अपनी अधिनायक में उसके रूप की बाहुति चढ़ाने की प्रतिज्ञा ली है। समुमानव के सोचण और संघर्ष की इन बाहुतियों ने व्यक्ति के वैशिष्ट्य के प्रतिबान्धक होने के सिद्ध अन्त क्रियाणा एवं संनद्धि होने का वाक्यान किया है। इतिहास हमका साक्षी है कि वे महाप्रभु अपनी माण्डे और सुहृदों के कुराग में अपने सम्मय रहे कि माण्डा उठाने वाले और एय- यात्रा का एय लीपने वाले समुमानव की कुम्हरी, पीछरी और उपेक्षा की दृष्टि से त्यागते रहे । नयी कविता का पुन ऐसा पुन है जबकि महाप्रभुओं के एय यात्रा के एयी की धुरियाँ दूर दूर की गईं और उनके द्वारा कताखाय एवं सुपरमैन की कप्तकाखाती तक्तियाँ को बीदिकता , बाधुनिकता, वैज्ञानिकता बादि ने नकार दिया जवना उनके सम्म विस्वासी पर प्रत्य विद्वत् बना दिये ।

समु मानव के कस्त्य का निरूपण वर्मा जी ने मानव- विशिष्टता के सम्मर्भ में किया है :

(१) समु मानव और उसका परिवित मा- मानव और सुपरमैन के ऐतिहासिक अस्तित्व की स्वीकारता है। परन्तु वर्तमान है उसकी अस्तता की स्वीकार नहीं करता ।

(२) समुमानव अपनीसम परिवित एवं स्तर पर

१- अस्मीकान्त वर्मा- नयी कविता के प्रतिमान पृ० १७०-१७१

मानव की शारीरता का सम्पर्क करता है। वह बाह्यपर सुप्त चित्त की रूप से बाहरी अधिक सम्प्रामाणिक वास्तव्य की महत्वपूर्ण मानता है। इस स्तर पर प्रत्येक विवेकपूर्ण क्षुब्धति को महत्ता प्रदान करता है।

(३) सपुता का परिवर्तन और उसका स्वरूप
उस वास्तव वाण में पूर्ण है जो उसे स्वीकृति देता है और उस स्वीकृति के साथ साथ उसे उस स्वरूप के प्रति गतिशील बनाता है जो उसकी क्षुब्धति की प्रभावित करके जीवन का सक्रिय वास्तव्य प्रस्तुत करता है। सपु परिवर्तन का बाधा ही सम्प्रामाणिक है, किन्तु सम्प्रामाणिकता के होते हुए वह बाधा अपनी विज्ञाता के नाते केवल तत्कालीन नहीं होता बल्कि उसके पुष्क होता है। तत्कालीन और सम्प्रामाणिक में अन्तर यह है कि सम्प्रामाणिक के स्वरूप में क्षुब्धतियों का आवागमन गहराई और विविध दृष्टि से सम्पुस्त होता है और तत्कालीन में उसी क्षुब्धति केवल प्रतिक्रिया व्यक्त करके नष्ट हो जाती है। ---- सपुमानव का सपुपरिवर्तन क्षुब्धति को गहराई और विविध की मर्यादा से प्रभावित होता है। वह वाण की क्षुब्धति के साथ वास्तव्य का भी सम्पर्क है।

(४) यह सपुमानव मविष्य के प्रति वास्तव्य रखता है, किन्तु अपनी सपु परिवर्तन की शारीरता के साथ, क्योंकि परिवर्तन की सपुता की शारीरता से विच्छिन्न हो जाने पर उसकी मर्यादा की पक्ष सिद्धि ही वास्तवी और तब वह मर्यादा क्या कहना सौक (झूठी पिया) की और उन्मुख हो जाती है। सपुमानव की मविष्य की वास्तव्य भी उसके परिवर्तन की वास्तव्य में ही सम्पर्क होती है।

(५) वाच का मनुष्य वाच के स्वरूप में जीवन

की उपलब्धि की किसी भी अन्य स्वरूप में महत्वपूर्ण मानता है।

(4) मानवीय क्षैतिजताओं का एक विशिष्ट महत्व होता है जो यथार्थ है उपलब्धता है, और यह यथार्थ ही उस क्षैतिजता की धारक बनाता है।

वर्मा जी की उक्त व्याख्या की विभिन्न विद्वानों के अपनी विचारों के द्वारा निष्कर्ष निकालते हुए व्यक्त किया है। डा० रमार्कर तिवारी ने पाँच विन्दुओं में तथा डा० रामनरन राय ने पाँच एवं डा० देवेश ठाकुर ने तीन तथा पाँच विन्दुओं में व्याख्या की है।

सम्पीकान्त वर्मा द्वारा समुमानव की स्थापना नयी कविता के लिए एक विशिष्ट आधारणा है। समु मानव किसी महा-मानव के धामने नहीं भुक्तता और न ही उसकी क्षमता के मध्य मानता है। वह अपनी कर्म के प्रति बागलक है तथा अपना स्वयं नियंत्रित है। और वह पारिभाषिक स्वभाव है उसकी 'समुता'। यथार्थ मनुष्य मुक्तः समु है, हीटा है, बीना है, मन है ठिगता है, यथार्थ है जाना बीधा हुआ है कि उसकी क्षमता सभी स्वयं नहीं देख सकती, सभी यथार्थ की प्रसर, कल्पना की उन किरणों में परिस्मात नहीं ही सकती जहाँ वह भव्य एवं उदात्त का साक्षात्कार कर ले। - - - - - उनकी जीवन दर्शन मुक्तः 'समुता का दर्शन' है, 'कितावकी जाफ सिटिलेन' है। उनकी स्थापना में स्पष्ट एक 'नया महीना' बनने की उत्कृष्ट-

१- सम्पीकान्त वर्मा- नयी कविता के प्रतिमान पृ० १६३-१६६

२- डा० रमार्कर तिवारी - प्रवीणवादी काव्यधारा पृ० ४५६-४६०

३- डा० रामनरन राय- नयी कविता का उद्भव और विकास पृ० १७६-१७७

४- डा० देवेश ठाकुर - नयी कविता के साठ क-याय पृ० २००-२०१

फटाखी दृष्टिगोचर होती है, जबकि वह स्वयं महीनकाय का विरोध करती है।^१ डा० रमलकर तिवारी ने सस्पीकान्त वर्मा द्वारा 'समुमानव' की स्वायत्ता पर बाधोप लगाते हुए मनु का विरोधी बताया है।^२

समु मानव के क्षेत्र में डा० जगदीश गुप्त स्व विषयमेव नारायण शर्मा के विचार महत्वपूर्ण हैं। डा० जगदीश गुप्त नयी कविता की- ४ तथा अपने ग्रंथ 'नयी कविता : स्वल्प बीर समस्याएं' में 'नयी कविता : नये मनुष्य की प्रतिष्ठा' केत में समुमानव के समुत्पन्न बोध पर विचार करते हैं। उनका मत है- 'मेरे विचार में मानव स्वाभिमान तथा व्यक्तित्व से सम्बन्धित मनुष्य अपने को समु माने ही- यह आवश्यक नहीं है। यदि समुता को एक मानव मूल्य माना जाये तो वह निश्चित रूप से 'स्वाभिमान' का विरोधी छिद्र होगा। वास्तव में समुता दुधरी की महानता से उत्पन्न एक बमिछाप है। महानता जल्दा बीर पुत्र का विरोध करना, बीर समुता को एक प्रतिमान बनाकर मानव व्यक्तित्व पर उसे आरोपित करने का यत्न करना निरर्थक बीर परस्पर विरोधी है। मनुष्य को उसके सत्य रूप में समु मानने की कोई आवश्यकता नहीं। मनुष्य को जाने जाहों के जग्याजगर से पीड़ित तथा कष्टित समु मानव की को अहानुभूति एवं खेदना का अधिकारी है। यह स्वाभाविक है। उनका पता देने में यदि 'समुता की महत्ता' छिद्र करती है तो भी अनुचित नहीं है परन्तु किसी भी कारण यह विस्मृत नहीं होना चाहिए कि यह समुता 'तपोकृति' माध्यमपरक ही है,

१- डा० रमलकर तिवारी- प्रयोगवादी काव्यधारा पृ० ४६०- ४६१

२- वही पृ० ४६२

३- नयी कविताकी ४ पृ० १५-१६

वास्तविक एवं वीर्य्य नहीं। लघुता और वीर्य्य ही कभी है तो किसी मानवता से सम्बन्ध होकर ही क्या मरिचकात में वास्तव मान के अन्तर्गत (राम ही नहीं है कौन नीलो कौन होंटे) - - - और विचार से नयी कविता के प्रतिमानों को लीज में उत्साहजनक लघुता पर अवधिक्त वह देना आवश्यक है। यहाँ तक वह उपेक्षित और वक्षित मानवता के प्रति हमारी स्मृता और सम्भावना को पीतक ही नहीं तक ग्राह्य है, उधरे अधिक नहीं सम्मत्या वह प्रम ही जाने की सम्भावना है कि हम मानव व्यक्तित्व को प्रसन्नः और अनिवार्यः लघु मानते हैं।

विषयवैय नारायण धाही ने नयी कविता के ५-६ में ' लघु मानव के कहानि हिन्दी कविता पर एक बल्ल ' केत में ' लघु ' और ' मरु ' के अर्थ पर विचार किया है- ' लघु मानव के प्रति एक आवर्ति यह भी है कि कल्पना मनुष्य की मरुता का निषेध करती है, मनुष्य का जो सर्व वैश्व है, सबसे विराट् है, उधरे हमारे सम्बन्ध को तोड़ देती है। फिर अपने साम्यिक चमत्कार ज्यादा विस्तार फैला है, तत्त्व कम। क्योंकि सत्य यही है कि लघु मरु में वैसी दुरमनी नहीं है, केवाकि तन्मकोश काताता है। यह सम्बन्ध में में प्रभाव की की रूपन दृष्टि का समावा दूना, जहाँ उन्होंने यथार्थ को लघु से और वादों को मरु से सम्बन्ध किया है, और यथार्थ और वादों दोनों की समन्वित दृष्टि से देखने की कोशिश की है। लघु और मरु दोनों कहीं न कहीं वैश्व ही मिलते हैं, वैश्व यथार्थ और वादों। यह कोई नयी उपलब्धि नहीं है। प्रभाव की ही यहाँ, धार ' सायावाद हू ' की कोशिश इन दोनों में को मिलाने की ही रही है। ' यथार्थ-मरु वादोंवाद ' , ' वादोंमरुत यथार्थवाद ' या उधरे वक्त पर हम बना

सके, 'समुन्मुक्तमनुवाच' या मरुमुन्मुक्त समुवाच' इस किस्म की सम्भावनी कायावाद युग की है, सप्तमीकान्त वर्मा की नहीं।

जतः समु मानव की हिन्दी कविता में परम्परा रही है, परन्तु उसका नामकरण एवं विस्तृत व्याख्या नहीं हो सकी। सप्तमीकान्त वर्मा ने समुत्व बोध के संदर्भ में अपनी विचार रखी हुए 'समुमानव' की स्थापना के प्रति फा उठाया, वह महत्वपूर्ण है।

नयी कविता में समु मानव की प्रतिष्ठा की गई है कि समु मानव अपनी समुता एवं बीनेफ में भी महान् है। वह अपनी कार्य का निर्देश है तथा स्वयम् ही उत्तरदायी है। वह अपने अस्तित्व के प्रति जागरूक है, उसका अर्थ वपराधिय है। वह व्यक्ति स्वातंत्र्य, वैयक्तिक वाक्यत्व, वैयक्तिक चेतना, व्यक्ति फित, व्यक्ति निष्ठा, एवं वैयक्तिकता के प्रति निष्ठावान है। उसे समु व्यक्ति का जीवन जीना पड़ रहा है उसकी व्याख्या स्वयं की है, वह जानता है कि इस समुत्व के कारण उसका नाम इतिहास में नहीं लिखा जायगा और न कोई 'कास-पात्र' ही उसके नाम का उल्लेख करेगा। विजयदेव नारायण साहो इस पीढ़ा की व्यक्त व्यप्रकार करते हैं :

‘तुम हमारा जिह इतिहासों में
नहीं पाबीगे
और न उस रात का
वो तुमने उस रात सुनी

तब मैं

रख का टूटा हुआ पहिया

उसके हाथों में

प्रवासी से सीखा ले सकता हूँ।^१

भास्वी मैं तब भीषण का तब परिवर्तित व्यक्ति
करने की क्षमता समझता हूँ। वह तब मानव की उसके तपस्व के कारण
बनता करती है कि कहीं गलत फल ने उठे सम्भवता नष्ट हो जायेगा -

‘बीना किसी केवल ही फल बीत रहा है

ही फल आगे

ही फल पीछे

ही फल ऊपर

ही फल नीचे

ही फल की ही केवल जिसकी ज्ञान-

परिधि है

कहीं फेंका गलत समय

ही बीती सम्बन्ध पाटी मुझको

सा बाँझी।^२

भास्वी जो प्रत्येक व्यक्ति को तब या
बीना मानती है बीर के उन तब मानवों में ‘तब’ हीकर बीत है
बीकि वास्तव हीद बुके हैं, वेषर्ण से एक बुके हैं। परन्तु वह उनकी उपरा-

१- धर्मवीर भास्वी- बात नीत वर्ण पृ० ४४

२- वही पृ० ८४

ये सब बातें करने का आह्वान करते हैं । एक निदर्शन देते हैं-

हर मनुष्य बीना है लेकिन
 मैं बीनों में बीना ही बनकर खड़ा हूँ
 हारी माँ साहस माँ झोठी
 लखे भी क्याह मनुष्य में
 बीनी ने ही तीन फाँ में धखी नापी । १

सब मानवका जीवन भी क्या जीवन है,
 जो कि तिरस्कृत साक्षी प्यासे की परीति पत्र पर फेंका हुआ है, क्योंकि
 जीवन ने स्वयं कुँद कुँद कर दिया है :

मैं क्या दिया
 मुझकी जीवन ने दिया
 कुँद कुँद कर दिया,
 मुझकी
 पीकर पत्र पर साक्षी प्यासे का झोड़ दिया । २

सब मानव के संदर्भ में सत्मीकान्त वर्मा का
 विचार पदा समस्त है। कविताओं में भी वर्मा की सत्त्व बोध के प्रति जाग
 रक हैं। वे व्यक्ति का परिचित, विवर्ति, उसकी व्याख्या उसके कार्य
 बादि के संदर्भ में अपनी रचनाओं में स्थान देते हैं। कुछ उदाहरण सब संदर्भ
 में सत्त्वपूर्ण हैं। द्रष्टव्य है कुछ निदर्शन -

(१) बावनी नहीं एक बधुतरा फल
 फेंका हुआ पिका हुआ कर्ष सत्य ।

१- धर्मवीर भारती- सात नील वर्ण पृ० ८५

२- वही पृ० ६६

बाबमी नहीं एक कड़वासा , विपत्तियों के पुँव से

हुटा

क्यों जीवित सम्पत्तियों क्यों मीन ।

बाबमी नहीं एक कटपटासा ,

बैसा ,

क्यों वीर्य का अभियोग । १

- (२) वीर तब मेरी अपनी तपु स्थिति में
 वह सब कुछ है जो मनु है, पावन है, मंगल है
 तुम है
 किन्तु वह भी है जो रीत्य है मलिन,
 भीमत्त्व, कृष्ण, तपस्व्य है। - - -

० ०

मेरी तपुता रक्षणीय है । २

नयी कविता का तपु मानव नव पराजित,
 बलि, लंछित, बाल्य, पापस्य वीर मणि पुन होकर भी वीर उपेक्षित
 है। ऐसे तपुमानवका सब कुछ सुट चुका है, वह गर्व सेधकैविकर निकास
 हुआ है। राक्षस्रक्षितोर का एक उदाहरण दर्शनीय है-

“ बारा जका , हुटा मनुष्य
 गुम गुम बैस रता
 बारी बुनिया दीर्घ बिहवा बी पाव त्त
 वन्द का वज्र लैह लैह----- ।

१- उत्तमीकान्त वर्मा - अनुकान्त पृ० ५-६

२- वही पृ० १०

बाणी की समस्या
 र्व की ताड़का से हार गयी
 (राम । संस्कार, कल्याण- है राम ।)
 लगता है, कहीं कोई नहीं
 बाव का झुझ
 गर्भ से धक्के देकर निकाला हुआ
 अणिमुद्र । १

समुद्र बोध की एक तरह की नयी कविता में
 व्याप्त हो गई है। इन सभी व्यक्तियों के जीवन एवं परिवेश के संघर्ष
 में कौन कविताएँ प्राप्त होती हैं। सम्पीकान्त वर्मा ने अपनी ग्रंथ 'नयी
 कविता के प्रतिमान' में पुरुषोत्तम शरी की कविता का उल्लेख किया
 है जो कि समुद्रावस्था के पक्ष पर प्रकाश डालती है-

हम डीटि नर लोग
 लीजों के पीछे पागल हैं
 कल्पना होने को व्याकुल हैं
 कनक गढ़ने में लह हैं हम
 का क्या रहि है ये रंग
 जो उद न पाये रूप में
 हम डीटि नर लोग
 नीम कीर सीढ़ियाँ ।

१- नयी कविता की २ पृ० ८८-८९

२- नयी कविता के प्रतिमान पृ० १७० पर उद्धृत

जीकान्त वर्मा का लघुत्व बीप कहीं कहीं उभर आया है। वही लघुता के अन्दर शक्ति, साहस और अपराधिय वर्ग का जीवन करती है। 'यह बीप बीता' कविता इस क्षेत्र में विशेष महत्वपूर्ण है। वही लघु मानव के परिवर्तन एवं संघर्षपूर्ण जीवन का 'बीप' के माध्यम से व्यक्त करती है :

यह बीप बीता नेह भरा
है गर्म भरा मम माता पर
किसी भी पक्षित को दे दो ।

० ०

यह वह विश्वास नहीं जो अपनी लघुता में भी कविता
बहुत पोढ़ा , जिसकी गहराई को खोजे उसी ने नापा,
कृपा, अपमान, कृपा के धुलवाते कदुने तम में
यह सदा द्रवित, चिर जागृत, अमृत-नोद्र
उत्सर्ग- बाहु यह चिर कलह अपनाया । १

गिरिजाकुमार माथुर भी लघुत्व बीप को
खनार करती रहे हैं। उनकी कविता 'बीनों की दुनिया' लघु मानव
के क्षेत्र में महत्वपूर्ण है :

'तम सब बीने हैं
मम है, मस्तिष्क है भी
भावना है, ज्ञान है भी
बुद्धि है ,

विश्व के भी

क्योंकि हम जन हैं

साधारण हैं

० ०

श्रीत, दास हैं हम

इतिहास - बचन सीधे हैं

इतिहास उनका है

हम सब तो स्याही हैं

विषय सभी उनको

हम धायक दिखाती हैं। १

इतिहास में दलित, उपेक्षित, साधारण
होटे एवं तपु व्यक्तिका नाम विलीन नहीं होता, जबकि वही युद्ध की
धुरी होते हैं। देवराज अपनी कविता में तपु से भी तपु मानते हुए "मस्त"
की पुनीती करते हैं-

मैं बहुत छोटा हूँ, तू बहुत बड़ा

मेरा अस्तित्व तेरी अस्तित्व विशालता का

एक पल टुकड़ा

फिर भी- मेरे ताकत की सराह -

मैं तबसुर

तेरे इस समूह फैलाव की

१- गिरिजाकुमार माधुर- जो बंध नहीं सका पृ० ६-१०

बाँलों की झ पुतलियाँ पर तोलता हूँ। १

समुमानव कौला और निरीह है पान्थ साहस
के बल पर उठा हुआ । उसके दो पैर हैं, जब भी वह छिपना चाहे ।
सुवर्ण चोपड़ा का एक निदर्शन प्रस्तुत है-

मे कौला दो पाया
और झुमता रहा अपने सिक्के दो पैरों के
बल पर । २

समुमानव के लोचन और छिपना का दायित्व
उन ऐतिहासिक महा प्रभुओं पर है जो कि स्वार्थ के लिए व्यक्ति के
सर्वस्व को लूटते हैं। जीम प्रकाश निम्न के विचार छंद कविता में
दर्शनीय हैं :

मन में जागी है मरीर कुम्पा
कि डोंग है राम-कृष्ण
पातण्ड है- मुहम्मद मुता
कत है रंभा
तुरा है ही रहा है यहाँ
सर्वापरि
हंसात्म्य का प्रपञ्च
अपने की पुजाने की शिष्टा

१ कल्पना - पृष्ठ १६६२ पृ० ३७

२- कल्पना, मुताह, १६६६ पृ० ४४

सब स्वार्थ पर टिके हैं
 बितने भी हैं- आदर्श और नियम
 छी के हाथों निके हैं। १

व्यक्ति के परिवेश से उत्पन्न परिस्थितियाँ
 तथा दैनिक जीवन की विवेकशक्तियाँ से उत्पन्न तनाव जتنا गहरा है
 कि समाप्त है कहीं व्यक्ति गहरा छिटा है।

जी नरिन्द्र मोहन शर्मा की 'धुनो हो धुनो'
 कविता में यह समुदाय और छिप्ने की बातें देखिए-

हम बहुत गहरे में कहीं छिटे हैं
 पर हमारी बातें सुनी और छेड़ी हैं
 हमारी नहीं छेड़ी हैं
 रोनाम सब पावुक्ता है, गैवारफन है
 सम्य सोन रोया नहीं करते
 और हम सम्य हैं
 हम बहुत गहरे में कहीं छिटे हैं। २

नयी कविता का समुमानव मुक्त, बेजो,
 बेरीजगाती, गरीबी और अक्षमताओं से जतना छिटे जका है कि अपनी
 हथेली पर मुक्त सभी रक्त कर जाटता है, यही उसकी मुक्त की वृत्ति है।
 परधराम परदेसी की 'समय की लकड़ी' रचना देखिए-

'कृष्ण और पीढ़ाओं से शुष्कित राहों में
 निर्वाचित

१- कल्पना - अगस्त १९६६ पृ० ४०

२- मधुसूतो- नवम्बर, १९६६ पृ० ६

में भूत छिछो पर उगाकर बाट रहा हूँ । १

व्यक्ति कतना टूट चुका है कि वह अपनी बात स्पष्ट नहीं कह सकता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता कितनी नहीं। व्यवस्था एवं कृता के विरोध में बोली पर आतंक एवं दबाव की कारागार प्राप्त हुई। ऐसे कवि का मन पशु-पक्षियों के द्वारा अपनी सफुल्ल की स्थिति कताने लगा। दुष्पन्त कुमार की 'पंखों की पैना' ऐसी ही कविता है जो दिये हुए यथार्थ और आतंक का दबाव सहन करती हुई मौन बैठो है। यही व्यक्ति को परिणति हुई। इसलिए कविता का एक निदर्शन व्यक्ति कहलाय एवं बौद्धिक की स्थिति क्या ही नहीं है :

‘छिड़की खुली है, पर उड़ती नहीं
 कद पिंजरे में कसकसाती है
 उड़ने की कला तुमने भूलो, या
 मरने की कला नहीं आती है ?
 क्यों कतनी विह्वल है ?
 बोस मेरी पैना तुमने क्या दुःख है ?’ २

महानगरों के 'सहरीकरण' वाणिज्यीकरण एवं औद्योगिकीकरण एक ही समय पर हुए। ऐसे महानगरों का व्यक्ति सधु मानव का जीवन बोन पर विवश हुआ। महानगरों का जीवन वास्तविक जीवन है, और व्यक्ति एक हाड़ मांस का पुतला। दुष्पन्त पन्त अपनी लेख- 'महानगर और सधुमानव' में इस पर विचार करते हुए लिखते हैं :

१- पशुपक्षी - नवम्बर १९६६ पृ० १०

२- वास्तविक हिन्दुस्तान ५ अप्रैल १९७० पृ० ११

' सखी जीवन के नियम- नियंत्रण कसौती होती है,
 कृपिम और निर्बाध- पर जंगल का तिर जंगल है,
 कंकरोट का ही सही वह भी मनुष्य को बेचारा
 बनाकर छोड़ देता है,
 महानगर में बसने वाले सघु मानव ही जाते हैं । ' १

इस महानगर में ' छोटे सा बिसराव ' जीवनबीप्ते का कलगाव ' और
 ' विराव बिहून सा ठहराव ' व्यक्ति के अन्दर अन्ध है रहा है, उसको
 आत्मा पर भय, अंत्य और प्रसन्नता के भय हाये हुए हैं। गिरिधर गोपास
 को कविता ' सब व्यर्थ है ' इस स्थिति का खोज स्पष्टिन करती है-
 ' यह आवसो का बेहरा नहीं

मुलीटा है
 वो उधने
 अपनी हीनता, पराजय और बेचारी है
 बचने के लिए लगाया
 लगाता है
 आवसो की गर्दन को
 एक अदृश्य तलवार तू रही
 आव बह जो है
 उसकी नियति बहो
 योगने के धिवा
 कोई और जारा नहीं । ' २

१- पुष्पेश पन्त- महानगरों में सघु मानव - साप्ताहिक हिन्दुस्तान

२२ अप्रैल १९७४ पृ० १७

२- धर्मयुग २० अप्रैल सन् १९६६

हस्तिए बाज को लफुटा को कत के बागमन
पर नया विश्वास लेकर विकसित होने के लिए रुचि उत्पन्न है। केदार
नाथ सिंह का विश्वास है कि यह लफुटा अवश्य समाप्त होगी। ' निरा-
कार को पुकार ' कविता का एक कंठ प्रस्तुत है- ' कलःकलःकलःकलः०

कल उगना मैं
बाज तो कुछ भी नहीं हूँ
पूछ, फटो, फूट, बिड़िया,
पास, पुनर्मि
बाज कुछ भी तो नहीं हूँ । १

अन्त में यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि
नयी कविता में लघु मानव को स्थापना लक्ष्मीकान्त वर्मा द्वारा
खोनी सम्झनी विचार धारा के अन्तर्गत ही विकसित हुई है। इसके पूर
में डा० लीहिया का विचार दर्शन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि
वर्मा जी भी लीहियावादी रहे हैं। अतः साधारण एवं छोटे बादमी
के महत्व का प्रतिपादन नयी कविता में बहुत ही प्राप्त होता है।

नयी कविता का लघुमानव व्यक्ति को व्यक्ति
के प्रति सतत जागृक है। लघुमानव नव कुण्ठा, प्रेम, लक्ष्य एवं नीति
को दीवारों को तोड़कर व्यक्ति के व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा करने के लिए
उत्पन्न है। नयी कविता में लघु मानव दलित - नस्ति एवं घृणात्मक वर्गों
का विमर्श करने में रुचि रखता है।

१- तीसरा अंक पृ० १४३

२- डा० राम बल्लभ राय- नयी कविता उद्भव और विकास पृ० १८०-१८१

समुमानव की प्रतिष्ठा के केन्द्र में व्यक्ति-
 केना एवं वैयक्तिक-दायित्व को विचार भूमि उर्वरता का कार्य कर
 रही है। व्यक्ति- हित, व्यक्ति- निष्ठा, वैयक्तिकता एवं व्यक्ति-
 स्वातंत्र्य की भावना समुमानव की निरन्तर प्रेरित करती रही है। नयी
 कविता का व्यक्ति साधारण, आम, लघु एवं दलित व्यक्ति है जो
 समाज , वर्ग एवं सत्ता से टूटा हुआ, झूटा हुआ तथा बिखरा हुआ
 बीना व्यक्ति है, परन्तु उसका वह समग्र पृथ्वी की ओर फा में ही नापी
 का प्रयास करता है। उसका साहस एवं धैर्य अविश्वसनीय है।

व्यक्ति के प्रति समर्पित समु मानव को
 कल्पना निरन्तर व्यक्तिवादो दर्शन पर बाधारहित है। नयी कविता
 का समुमानव अपने लक्ष्य को तोड़ने की प्रक्रिया में है। समाज और
 सामूहिकता समुमानव के लिए असहनीय एवं व्यर्थ है, इसलिए वह व्यक्ति
 प्रसार, व्यक्ति केना, व्यक्ति स्वातंत्र्य , वर्ग के प्रति संघर्ष, वैयक्तिक
 हित, व्यक्ति संघर्ष तथा वैयक्तिक - दायित्व के प्रति जागरूक है। अतः
 समुमानव नयीकविता की विशेष उपलब्धि है जो कि व्यक्तिवादो चिन्तन
 पर बाधारहित 'व्यक्ति' की गरिमा के प्रति संघर्ष सह एवं अपराधिय
 है।

(घ) साणवाद

नयी कविता पर साणवाद का प्रभाव व्यापक रूप से दृष्टिगोचर होता है। प्रयोगवादी काव्य का मौलिक तत्त्व 'साणवाद' है। साणवाद की समस्त व्याख्या हम ज्युर्य ज्ययाय के 'साणवाद' उप ज्ययाय में कर चुके हैं। अतः यहाँ नयी कविता में 'साणवाद' के प्रभाव और व्यक्तिवादी चिन्तन की समानता पर विचार करना उचित है। नयी कविता में साण-बीध की धारणा तत्कालीन कालाधारण व्यक्ति से सम्बन्धित है। ये कवि जीवन के सत्य की अनुभूतियों में आकर साण के मोहावृत्त हैं। उनके अनुसार फल नहीं कौन था तद् साण महत्त्वपूर्ण ही। जीवन सत्य की कौन से साणानुभूति अधिक धार्मिक स्व महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो जाये। यह प्रयोगवाद की भाँति साण की तरह न लेकर उसकी जीवन का विशेष समय मानती है। 'सब तो यह है कि हम साणों में ही जीते हैं और साणों में ही शाश्वत की प्राप्ति है।' जीवन साणों का ही योगफल है। अतएव नयी कविता में साण को महत्ता है और प्रत्येक तद् साण जीवन के महत्त्वपूर्ण साणों का प्रतिनिधित्व करता है। कुँवर नारायण का एक निदर्शन साण की महत्ता के संदर्भ में देखिए-

कितना गहन
हर एक साण
कितना कसा
जीवन कसा । ३

१- डा० रामकिशोर तिवारी- प्रयोगवादी काव्य द्वारा पृ० ४६६

२- डा० रामदत्त मिश्र- हिन्दी कविता : आधुनिक आवाम (१९७८)

३- कुँवर नारायण - मञ्जुशू ५० (१९४६) पृ० ८६

वह जीवन के प्रत्येक क्षण में खड़े मोटे एवं
विभक्त अनुभवों को जो रहा है। रामदत्त मिश्र का एक उदाहरण यह
संदर्भ में महत्वपूर्ण है :

की दाण- दाण

तोते मोटे अनुभवों को पीया है ।^१

नयी कविता का कवि दाण के महत्त्व को
समझता है। दाण- बोध को विविध स्थितियों से वह परिचित है।
रमेश बरभारे की "समीकरण" कविता में दाण- स्पर्श की अनुभूति
देखिए-

एक दाण

तुम्हें हूँ बताया

देर से फिर

संदर्भ स्थितियाँ

फिर वाक्यांशों का जलित हो

एक पावन वास्तविकता को

ज्ञान का अभिप्रेत

कामना-

हूँ जाना ।^२

दाण बोध काभाव नयी कविता पर बहुत गहरे तक पड़ा है। वह

१- डा० रामदत्त मिश्र - पत्रांक है पृष्ठ ११७

२- नयी कविता अंक ८ पृष्ठ ११७

राजा की प्रतिध्वनियों के पीछे बोलता सीढ़ता है। कीर्तिनारायण
जि की 'प्रतिध्वनि' कविता राजा की प्रतिध्वनियों के प्रति सम-
र्पित है :

मेरे राज मुझकी
प्रतिराज अनुवापित करते रहते हैं
वीर अपनी प्रतिध्वनियों के पीछे
पागल बना मुझ
दूर दूर लेवाते हैं

० ०

वीर में उनके सम्पीडन की बाटियाँ
कैसे कहलाता सीढ़ता रहता हूँ । १

नया कवि राजा की अपनी जीवन में समाहित
हिये हुए है। उसके साथ वह राजा में भी व्याप्त रहना चाहता है।
अव्यक्त की व्यक्तिकता राजा के अन्तर अपनी व्यक्तता स्थापित करने
की प्रतिबद्धता है।

कम्पनर त्रिपाठी की 'ताम होने से पहले'
कविता का केत इस संदर्भ में प्रष्टव्य है :

कम्पनर लगता है
की दातों के बीच
किसी कुबली हुई जीव के
टीखी कण धरीला

मे-----

राण बीर राण के कुहने बीर जल होने में हूँ ।^१

व्यक्ति का जीवन राण प्रभावशाली एवं महत्व-
पूर्ण है जो विश्व-दर्शन कराता है। देवराज की एक कविता देखिए-

‘कब पीछी देर

त्रिभुवन-विश्व के साथ मे

एक वन झंझा था

जहाँ के सामने कैसा बड़ा भेरा था ।^२

व्यक्ति राण-बीर की स्थिति में सधुत्व
के प्रति भी उत्कर्ष है। ‘एक राण’ विर्मला वर्मा की कविता का अंश
ऐसी ही स्थिति चित्रित करता है :

‘बह----- बह अपना राण

जो नयनों के लागि

जब तक तिरहा रहा -- -- ।

सब कहाना

बया में पड़ी की

टूटी सुई तो नहीं ?^३

राण बीर की व्यापक अनुभूतियों का अनेक
विभिन्न कवियों ने किया है। भारतभूषण कृष्ण विराटता के अर्थ

१- नयी कविता अंक ८ पृ० ६८

२- कल्पना, मार्च १९६२ पृ० ३७

३- कल्पना, जनवरी १९६२ पृ० २६

में साण की महत्ता स्वीकार करती हैं :

सुभ में विराट हुआ संहित :

यह सब भी ही

तो रहे ,

संहित है जो वह विराट है

में तो सम्पूर्ण हूँ, बल्लभ हूँ ।^१

व्यक्ति साणों में जीवन जीता है। व्यक्ति का साण-बोध तान्त्रिक वैयक्तिक होता है। एक व्यक्ति की साण-बोध की अनुभूति दूसरे व्यक्ति की अनुभूतियों से भिन्न होती है। नयी कविता में साण की प्रतिष्ठा इसलिए हुई है कि व्यक्ति की वैयक्तिकता का स्थाय्य में लेकन ही रहे। नयी कविता में 'सुभ साणों की यादगार नहीं है, वह एक संक्षिप्त उपलब्धि है, जिसमें गतिहीनता नहीं, साण से साण तक की ईश्वरता में वह सबके का प्रभाव है, गति है, भाव-सम्पन्नता है और है एक ऐसा वास्तव स्वर जो समूह व्यक्तित्व का नैतिक निर्णय बनकर ही उभरता है।' नये कवि में साण-बोध के प्रति ईमानदारी की भावना अधिक दृष्टिगोचर होती है। राबिन्द्र किशोर 'वीरगणाधर' कविता में ईमानदार बनने के लिए ईश्वर से अनुरोध करती हैं-

श्रु । सुभे वर दी ।

० ०

साण- साण पतिनी से लुटे हुए अनुभवी के प्रति

ईमानदार बन सकूँ

ईमानदार रह सकूँ ।^२

१- कल्पना - जनवरी १९५६ पृ० ७५

२- सप्तमीकान्त वर्मा- लहर - कवितार्किक जनवरी १९६१ पृ० १७७

३- लहर पत्नी

व्यक्ति का जीवन दाण- दाण प्रवर्धमान है। समस्त जीवन दाणों के योग का महासुधि है। ज्ञेय दाणबीज के संदर्भ में इस प्रकार कहते हैं :

एक दाणः दाण में प्रवर्धमान
व्याप्त सम्पूर्णता
कृते कदापि कदा नहीं या महासुधिवी
दिया या कास्थ ने
एक दाण होने का
वस्तुत्व का वक्ष्य वदितोय दाण
होने के सत्य का
सत्य के साक्षात् के दाण का
दाण के अर्थ पारावर का
बाव हम बाधमान करते हैं।^१

व्यक्ति को तपु दाण में वस्तु की एवं शिष्ट की कल्पति होती है और वह दाण उस वस्तु एवं शिष्ट के प्रति नूतन भावों की संव्यक्ति करता रहता है। इसी कारण व्यक्ति दाण- बोध की ईमानदारी से पीनता है। वैयक्तिक स्तर पर उसके हृदय में यह साक्ष्य रहती है कि वह उस विशिष्ट तपु दाण को बी सके, पीन सके। जगदीश गुप्त की कविता में इसी प्रकार का भाव है :

जाहता हूँ या छूँ
उस दाण की
नहीं----

राज के भी विभाषित
 पात्र उतने वीर की अनुभूति
 मिलने में काष्ठ धार जीवन की
 ज्ञानक पीर की कठोरी गुहा में हुब जाती है।^१

व्यक्ति जीवन के प्रत्येक राज की भीम रहा है। तपु मानव भी भीम की सार्थक मानता है। शरीरिण जीवन-सत्य की भीमने स्व जीने के प्रति जागृत है। तपुमानव तो केवल राज के यग्य का पूर्ण वीर जागृत भीमो है वीर उस भीम की सार्थक मानकर भीमता है- जोह वह स्थिति कर्तव्यता की ही या उद्देश्यहीनता की।^२ राज की अनुभूति स्व राजा बीध के मुख्यान् राज व्यक्त की वैयक्तिक राजों में जीने की प्रक्रिया है। व्यक्तिवादी वर्तन के निष्ठ राजावाद की धारणा वा जाती है। भारतीय की 'अनुभूति' में राधा से ही भीम हुए राजों के प्रति वासना है :

कला में कानु अनु ।
 मान तो कि राज पर की
 मैं यह स्वीकार हूँ
 कि मेरे ये सारे सम्बन्ध के नहरे राज
 सिर्फ भावावेश में
 सुकोपक कल्पना की

०

०

१- डा० कान्दीत गुप्त - तत्त्व वीर पृ० १५

२- लक्ष्मीकान्त वर्मा- नये प्रतिमान पुराने निष्पन्न पृ० १०४

मान ली कि मेरी सम्म्यक्ता के गहरे- साण
 रंग हुए ज्योंहीन आकर्षक लब्ध मे
 तो सार्थक फिर क्या है अनु । १

साण बोध की विविध स्थितियों का स्पष्ट
 नयी कविता के कवियों ने किया है। नीचे कुछ कवियों के साणवाद के
 उदाहरण प्रस्तुत हैं -

प्रयाग नारायण त्रिपाठी

(१) दी साण- रूप-रूप
 सिर हाथ में हाथ
 निहारें वन, उपवन , वृण

० ०

दी साण के
 वन्तिम दी साण
 फिर कृतज्ञ साण के प्रति
 अपनी प्रति । २

(२) एक गीत
 बिसका कुछ करें नहीं
 पर बीहड़ इस साण का उच्चारण
 इस निमेष की के सुन की, गरिमा की

१- डा० धर्मवीर नास्ती-०५००६० अनुप्रिया पृ० ६१

२- तीसरा अंक पृ० १४

समः विकसित भाषा
ज्योतिर व्यर्थ नहीं । १

कीर्ति जीधरी

‘ मैं प्रस्तुत हूँ
ज्ज कहे दिनी के चिन्तन बीर संघर्ष काद
कह साण बी तब का पाया है
उसमें बँधकर मैं प्रस्तुत हूँ
तुमसे सब कुछ कह देने को । ’ २

वैजय

- (१). कास की दुर्बल गवा को एक
कौतुक भरा वासः साण तीस्ता है। ’ ३
- (२) कोस का निर्वन बिनारा
बीर वह लल्ला होंगे सन्नाटे का
एक साण हमारा
बैसा भूयाँस्त फिर नहीं दिला । ’ ४
- (३) बरसी
शरद जीधनी
भरा ।
अन्तः स्फन्दन
तुम भी साण- साण बी ली । ’ ५

१- तीसरा सप्तक पृ० २५

२- वही पृ० ४७

३- वैजय - अमिन के पार द्वार पृ० ३६

४- वही पृ० २१

५- प्रतीक - जनवरी १९५१ पृ० ८८

(४) हमें किसी कल्पित बहिष्ता का मोह नहीं
 आज के विविध बहितीय इस दाण की
 पुरा हम पी हैवात्मसात् कर लें

०

०

साक्ष्य हमारे लिए नहीं है
 बहिर त्वर है वैदितव्य है
 अपार है। १

दाण बोध प्रेम एवं सौन्दर्य के चारों ओर में
 वाचनात्मक शिष्टों के जीवन की ओर उत्पन्न हुआ । भोगवादी सुखता के
 जीक ऐसे शिष्ट प्राप्त होते हैं जो कि उस विशिष्ट तत्त्व दाण में छुट्टे सुख-
 भोग का सम्पूर्ण देखते हैं। शान्ता चिन्ता का ऐन्द्रिय- सुख का एक उदा-
 हरण द्रष्टव्य है :

फिर रही है परिधि स्तनों की
 बसती अब जान है
 बाकी बीसों और धायियाँ
 बाकी धीरे धीरे के नीचे
 उत्पन्न कर नाथे गार
 रक्त को लय पर
 ये बसती
 उनकी पीताली में
 कई नम
 कभी हुए स्तनक

गिरती हुए
 खिलार को धुन पर
 बिरही हुए
 रीतनी में
 बामन्त्रित कर रहे हैं
 बाकी साधियो
 दोस्ती
 पियो
 नाचो
 उमरियों के कर दो
 बाध दियायान की तनिक भी
 किन्तु
 फल बार
 मुनासिब देखनी है
 फल रही है परिधि स्तनी को
 छरती अब जवान हैं। १

'बाधना का नाण' किताब उदात्त बाधना-
 त्मक होता है इसकी अभिव्यक्ति राबिन्द्र किशोर की कविता में उस प्रकार
 हुई है :

'यह मन में बो होता है
 बिरह बोता है
 नय - नय का लहू
 लगता है कभी

देखा क्या वापिस

उफ़

कभी फरसे तो नहीं बना

सगता है

कूब सगता है

सगता है क्या ?

देत , देत

री क्या ।

उफ़ , अचिस -

सैनात । १

नयी कविता के व्यक्ति के लिए राज का महत्व विशेष रूप से अधिव्यक्ति प्रदान करता रहा है। यह व्यक्ति राज को सौन्दर्यानुभूति के रूप में, वैयक्तिक अनुभूतियों के रूप में, जीवन-शक्तियों को जीववादी प्रवृत्तियों के प्रेरणा में, जीवन को विशेषतियों- संगतियों एवं कटु- तिबत अनुभवों को अपने में भीमता है, बोता है तथा राजानुभूतियों को अधिव्यक्ति प्रदान करता है। उसके मुख्य में राज- राज परिवर्तन जाता है। वह भय, श्रमा, अनिश्चय, शङ्कोर , तनाव, अविश्वास, व्याकुलता, रोमांच आदि की अनुभूतियों के मध्य से गुजरता है। राज- बोध व्यक्तिवादी जीवन पर आधारित है। राज के महत्व की व्यक्ति ही महत्ता प्रदान करता है और राज बोध का केन्द्रस्थ भी व्यक्ति ही है। अतः राजवादी धारणा व्यक्ति- केतना, व्यक्ति स्वातंत्र्य के माध्यम

से व्यक्तिवादो विप्लव को समाहित करिए हुए है। अतिकार्यवाद की कविता अतः वर्तमान साण की कविता मानी जाती है। कव्या र भी प्रेम की अनुभूति के साण काहातीत मानता है। अतः 'साण' के संदर्भ में अनुभूति की महत्त्व देती है। साणानुभूति से साण-विशेष में काहातीत कमत्त्व प्राप्त होता है। नयी कविता में वर्तमान से साण के महत्त्व का अधिक प्रयोग हुआ है। इसमें रहस्यावादी, प्रतीकवादी विप्लवादी, अतिकार्यवादी, परम्परावादी सभी सम्मिलित हैं। इसे कारण यह निश्चयता है कि नयी कविता में साणवादी धारणा व्यक्तिवादो विप्लव के विविध रूपों में व्यक्त हुई है। उक्त सभी साहित्य-वादीतन व्यक्ति एवं व्यक्तिवादके निकट हैं। अतः नयी कविता के कवि की साणानुभूति साणवादी, साण का महत्त्व आदि वैयक्तिकता के माध्यम से व्यक्तिवादी विप्लव का सफल काव्यात्मक स्वल्प है।

(ड०) अर्थात्

अर्थात् को वैयक्तिक व्याख्या कथुं कथाय में कर चुके हैं। प्रयोगवाद में अर्थात् को उक्त उपकथाय में विवेचना की गई है। यहाँ नयी कविता में अर्थात् प्रवृत्तियों की विवेचना की जा रही है।

- १- ज्ञानम बापदेव टु अरिचिह्न - पृ० ३१६ डा० जगदीश गुप्ता- नयी कविता में विज्ञातों संदर्भ पृ० ३५
- २- कन्टेम्प्लरीरी फ्रेंच पोल्डो पृ० १४० नयी पृ० ३५
- ३- अतः- आत्मवेद पृ० १६६
- ४- नयी पृ० २५१
- ५- डा० जगदीश गुप्ता- नयी कविता : विज्ञातों संदर्भ पृ० ३६

नयी कविता में कवियों की प्रवृत्तियों का प्रकार प्रयोगवादों काव्य को देन है। पहला शपक , दूसरा शपक एवं नैन के प्रपञ्च में कवियों के दुर्बलता एवं विद्रोह के विविध तौर दृष्टिगोचर होती है। नयी कविता का कवि अपने कर्म के प्रति तो सचेष्ट है ही, परन्तु वह समाज के झुठे कर्म का मुताबिका भी उठाता है। नयी कविता की प्रारम्भिक रचनाओं में कर्म का स्वल्प निश्चय ही प्राप्त, संकाय एवं अनिश्चय की स्थिति प्राप्त होती है। अतः ही ' प्रेमिणी की रचनाओं में यही अन्तर है ' अपनी आकाश मुद्राओं में वह व्यक्त नहीं, व्यक्त के रूप पर जोर देता था । ' प्रेमिणी की कविताओं में तेजस्वर मुद्राओं के स्थितियों को नती भाँति व्यक्त करती है। परन्तु अतः ही का स्वर सामुहिकता की भीड़ के समान जाना साध्य नहीं मुद्रा पाया कि प्रेमिणी का स्वर फाफा तिर हुए है। अतः ही रचना ' यह दीप जलता ' का अर्थ हैतः :

यह का है : जाता नीत किन्हीं फिर कीम गायेगा ?

यह फलुब्बा : ये नीती कल्पे फिर कीम कृती लायेगा ?

यह समिधा : ऐसी राग कठोरा विरता सुनवायेगा ।

यह अद्वितीय यह मेरा : यह मे स्वयं विवर्ति :

यह दीप जलता , स्नेह मेरा,

है गर्व मेरा मानकता , मे

इसकी भी पंक्ति की है ही । " २

१- प्रेमिणी - यह पुनः पुनः - मरणोत्तर प्रेमिणी : २० कथा यात्रा १९२५

२- अतः ही- बाबरा कौरी १० ५४

नयी कविता में कविवाद का स्वर यथार्थ
 अनुभवियों के प्रति ईमानदार है। वह के कारण व्यक्ति का स्वर विश्वास
 भरा एवं शास्त्र भरा दृष्टिगोचर होता है :

‘ तब तू मेरे देश का घर, बना हुआ
 फूलों तक मेरी विषय हो
 वो नरक जब जब मरण का व्योम नीला मे लगे
 तब उदय हो
 सूर्य कीति
 तुम मुझे मेरे फूलों में डूबना
 मेरी नींद में १ २

कविवाद के विविध रूप नयी कविता में
 प्राप्य होती है। इन कवियों का जन्म पराजय, अनास्था, अनिर्णय
 आदि की स्थितियों में शास्त्र प्रदान करता है। यहाँ कुछ कवियों की
 कविताओं के उदाहरण प्रस्तुत है :

श्रीकान्त वर्मा

‘ मेरी जैसा नहीं था
 मेरे साथ एक और था
 वो साथ- साथ
 जाता था वीर की की
 मुझे अपनी जेब में
 एक गिरे हुए फल था

उठाकर रख लेता था । १

सुखितबीध

‘ एक विषय कीर एक पराजय बीध
मेरी तुम प्रकृति
मेरा ‘स्व’
जगमगाता रहता है
विशिष्ट उच्छ्रित पुस्तक में । २

विचाराव

(१) ‘ बरा रोगहीन कमर
में बनादि कात विष्णु की गहरी नाभि-गुहा
से निकाला ब्रह्म कपल
सर्वन की गहन गूढ़ उदेलित लक्षितियों का
में ही हूँ केन्द्र प्रसक्त
गंध मरी कवा की तरंगों- सी फल जाती
मेरी जगद्गायिका ।

० ० ० ३

(२) ‘ व्यापक में हूँ विराट
हीम हीम में मेरी ज्ञान क्रिया भावाकुल
चित्तलोक बस रहे

१- श्रीकान्त वर्मा- माया दर्पण पृ० १०३-१०४

२- कल्पना- जून १९६२ पृ० २१

३- .. पृ० २१

बेगिनसी, बेतना की स्वप्न-बोध कि रानी के
 तार उलझ फँस रहे
 मे हो सस्र मेघ : सात रूप रानी पर
 कुन मेरे गढ़ रहे
 मेरे ह्वार बाहु संसृति के कण-कण को
 बरबस फँस रहे । १

धूमिल

(१) १ वच

लड़कियाँ मेँ होती हैं
 बड़ियाँ मेँ होती हैं
 रह रह लकड़ियाँ हैं
 लेकिन हर बार वापस घर लौटकर
 कपड़े के बप्पी रकते मे
 कुँते से निकाले गये पाँव धा
 लकड़ियाँ हैं । २

(२) १ बीर मेँ मोतर रू कायर विमान है
 बी मेरी रसा कहता है बीर बही
 मेरी बटनी का उत्तराधिकारी है । ३

(३) १ मेँ उन तमाम चुनीतियों के लिए

१- कल्पना- कुन १९६२ पृ० २२

२- धूमिल - संभव से बहुत तक - स्कान्स कथा पृ० २५

३- बही पृ० ३१

हृद को तैयार करना चाहता हूँ
 जिनका धामना करने के लिए कत्तीस सात तक
 वह बादलों की गलियारी में
 नफरत का दावाया स्टैट्यूस
 केशियाँ को पहाड़ी करता रहा । १

सप्तोक्तान्त वर्ण

मैं जितना भी अप्राकृतिक को खूँगा
 उतना ही सफर खूँगा
 और सफरता ?
 स्वयं प्रकृति पर विजय पाना है । २

धर्मवीर भाखी

' ली तुम्हें मैं फिर नया विश्वास देती हूँ
 नया इतिहास देती हूँ
 कौन कहता है कि कविता पर नयी ? ३

इस प्रकार नयी कविता में कविवाद के विभिन्न
 उदाहरण प्राप्त होते हैं। नयी कविता का वह भाव प्रयोगवाद के वह
 भाव से कई दृष्टियों में उत्पन्न है। वह व्यक्तिगत है, कुछ करने की उद्यत है।
 उसका स्वरूप एवं धारण बन नहीं सकता । उसके वह मैं सुजातम्भता है

१- प्रमिस- संसार से छूटकर , सप्तोक्त कथा पृ० ३८

२- नयी कविता कंक ८ पृ० १६६

३- धर्मवीर भाखी - ठण्डा सीका पृ० ४६

प्रति द्विषमाण का भाव है। प्रयोगवादी कवि का अहम् टकराने के, तोड़ने के लिए बराम है। वह नकली, भ्रूण है इसलिए लज्जित कई देकर घुम रहा है। घर से बाहर अहम् का नकली रूप बिताता है और घर बाहर 'हूँ' से निरासे नये पाव- बा मरकता है। 'यथार्थ में व्यक्ति के साथ उसका अहम् समग्र जनीतियों का सामना करने के लिए दुरासात्मक कार्य- बाही करता है। नयी कविता का कई कुछ स्थानों पर 'हंस्त्व' एवं विराट् की ओर उन्मुख हुआ है। समग्र रूप से कहा जा सकता है कि नयी कविता के अहम्वाद की वैयक्तिकता का आधार प्राप्त है जिसके कारण वह विकसित हुआ है।

(ब) आत्यंतिक वैयक्तिकता

नयीकविता में वैयक्तिकता जल्दा व्यक्ति- निश्चया के विविध रूप दृष्टिगोचर होती है। आत्यंतिक वैयक्तिकता तत्कालीन परिस्थितियों को उल्लेख है। महानगरों के जीवन से ऊपर तथा आत्म केन्द्रित है। बाह्य जीवन बाधनिकता के कारण विराट् हो गया है। व्यक्ति टूट रहा है, भोग रहा है और आत्म केन्द्रित हो रहा है। पारिवारिक दलों के बाधन सम्पूर्ण नये युगों के कारण वैयक्तिकता को भावना फैलती है। नयी कविता पर वैयक्तिकता का आरोप लगाया गया है। व्यक्तिनिश्चया नयी कविता में एक प्रवृत्ति के रूप में उभरी है। नये कवियों में अज्ञेय, शम्भेर, मुक्ति बोध, जगदीश गुप्त, गिरिजाकुमार माथुर, भारद्वाज, अण्णा, भारती आदि वैयक्तिकता के प्रभाव में रहे हैं। आत्यंतिक वैयक्तिकता के कारण नयी कविता में भोगवाद कीलापन,

असंग, अस्तित्ववाद, नास्तिकता, परम्परा भंगन आदि को प्रवृत्तियाँ
दृष्टिगोचर होती हैं। जीवन का अहम् वैयक्तिकता के कारण है। वास्तविक
वैयक्तिकता मर्यादित और सीमित होने लगी। जीवन के जीवन का वाङ्मय
एक चुनाव धीरे धीरे समाप्त होने लगा। एक उदाहरण कवि के वास्तव
भाव का देखिए-

मरने की
बाँस बाँस में मरने की
धूसर
धूसरित करने की
तन की जो बुध की धूसी ली नहीं
सिहरने की
करने की । २

धूम्रवादी उन्मत्त और महानगर के दबाव से वाङ्मय नयी कविता का
कवि वैयक्तिकता के प्रति सजग है। वह सामुहिकता को इस सम्मता है
और वैयक्तिकता को हार न बाधे, उसके लिए अतः क्रियाशील है। धूम्रवादी
भारतीय वैयक्तिकता के प्रति जागरूक है, उनकी कविता का एक उदाहरण
प्रस्तुत है :

हूँ या हमको लेकर लट के पास
पथर गति से बड़ जाया इतिहास
सामुहिकता भी श्वेत
साक्षित होगी जिस दिन लट

१- श्यामसुन्दर घोषा - नयी कविता का स्वरूप विकास पृ० २६

२- कविता- जीवन पृ० ३४

अपनी वैयक्तिकता हार

बया पायी । प्र० ।

हम बया पायी १ १

जात्यैतिक वैयक्तिकता के पाण कभीन अनु-
भूतियों के पाण होते हैं। ऐसे पाणों में प्रेम एवं सौन्दर्य की कविताएँ
भी विशेष प्रभावोत्पादक हैं। आग्नेय की कविताओं के दृश्य देखिए :

- (१) १ मैं प्रेम की उज्ज्वल भावनाओं से
मग्न हो जाता हूँ
मेरे हृदय में कभी हूँ
अनुभवों का रहस्यगोचर
कल्पनाओं के गोपन कर्ता मैं
तिरोहित होता हूँ
मैं अपनी धीनी धुनाओं में
अग्नि स्तम्भों की उठाये
कतल हूँ धुँये की ओर
जो तुम्हारा शरीर होता है, तुम्हारा मन होता है
तुम्हारी आत्मा होता है
कण्ठ होता हूँ । २

- (२) १ किन्तु उस धुँवर सड़को का शरीर
गोले कमरे की टूटी चारपाई पर बिड़े
नये धिक्कीनी का शरीर मात्र था

१- धुँवर भारती- सात गीत वर्षा १० १८

२- कल्पना- फारसी , मार्ग, अक्टू १९६२ १० २६-२७

काम गंध परा शरीर
 यौन सुख तथा शरीर
 सभी से सम्पूर्ण पुण्यो एक वैश्या की भाँति
 स्त्रावदियाँ से पहले धर्म, राजनीति, नैतिकता
 के बरत उतारती है
 बल्लभवार गली के कोने पर लड़ी
 विराट् मानव का स्वप्न धारण किये हुए
 कामुक बुद्ध बाणिज्य-श्रावक की प्रतीक्षा करती है । १

वैयक्तिक प्रेम की कौन कविताएँ प्राप्त होती
 हैं। यहाँ व्यक्ति निष्ठा एवं वैयक्तिकता के प्रभावित से कुछ कविताओं
 के उदाहरण प्रस्तुत हैं :

समीर कलाहर सिंह

'बेटी के प्यार से मैं तुम्हें प्यारा रहा हूँ, प्रिये ।
 तुम्हारे मायक कुम्हार की
 भावुक कान की
 मुखा की मैं
 दुलारा रहा हूँ, प्रिये ।
 तुम्हारी मृदुली
 कविता बनाता रहा हूँ,
 और उसे
 बिन्दुओं के आगरी पर

तुम्हारी उम्मीद माता रहा हूँ, प्रिये । " १

गिरिजाकुमार माथुर

• मैं बेता-

एक बहुत बड़ी विधवा माँ के सामने

मैं एक बितात में पर

बैठा निर्भय लड़ा हूँ

बीर माँ की मुँह

काशीन मरी नवरी

एक बीड़ पर बने

स्वतः वृत्त पर लड़ रही हूँ

बीर वह वृत्त

उनकी नवरी से स्याह हुआ जाता है। " २

सप्तमीकान्त वर्मा

(१) मेरी प्यास सामूहिक प्यास नहीं

मेरी प्यास अपनी है, अपनी मर्जिया से

प्रतिष्ठित है । १

(२) मैं आत्मसीन हूँ

रुईगा आत्मसीन

बन नहीं सकता आवाज़ में किराये की ।

१- कल्पना - कुतार्थ १६६३ पृ० ४६

२- गिरिजाकुमार माथुर- जो बंध नहीं सकता पृ० ५

३- सप्तमीकान्त वर्मा- आत्मसीन पृ० ३१-३२

नहीं हूँ मैं। प्रति-बन्धि किसी विज्ञापन को ।

० ० ०

आत्मा का पीतो में लूना बही
 जो स्वाती है, ग्राह्य है, प्रकृति है
 और लक्ष्य सब जगत्
 जो मेरा है, अपना है, निज का है
 हाथों पर अपनी टुमर का टापू उगाकर करेगा
 विहाङ्गना में उसमें प्रतिभा तुम्हारी नहीं । १

नयी कविता में वैयक्तिकता की विभिन्न
 स्थितियाँ प्राप्त होती हैं। आकर माफ़ी की एक कविता का लेख
 देखिए :

“ कितना हो मैं मोह भटके में जाता हूँ
 उतना हो बगी पीर क्लेशाफ पाता हूँ
 यह वह सब कुछ पीर पुणित है लगता । ” २

नयी कविता में वास्तविक व्यक्तित्ववाद
 के लक्ष्य उदाहरण प्राप्त होते हैं। वैयक्तिकता धीरे धीरे विस्तार
 पाती है, वह समाज की ओर मुड़ती है। नयी कविता में क्लेशवाद के
 वर्तन होते हैं। लक्ष्मी कारण मुक्तिबोध ने नयी कविता के क्लेशवाद को
 व्यक्तित्ववाद के संदर्भ में कहा है। काः नयी कविता में वास्तविक
 वैयक्तिकता- क्लेशाफ क्लेशाफ की ओर मुड़ गई है। नयी कविता में

१- लक्ष्मीकान्त वर्मा- अनुकान्त पृ० ३६

२- आकर माफ़ी- मेघनाद पृ० ३०

३- हा० का गुलाबी - कविता और संदर्भ- क्लेशाफ पृ० ७०

जात्यैतिकता वैयक्तिकता का विभिन्न स्तरों पर विकास हुआ है जो कि व्यक्तिवादो पैतना पर आधारित है।

(क) सामाजिक व्यक्ति की वैयक्तिक अनुभूति

नयी कविता में व्यक्तिवादो स्वर प्रधान रूप में उभरा है। परन्तु यह वैयक्तिकता भारतीय परिवेश को उपय है। अतः कुछ कवियों को कुछ कविताओं को छोड़कर अन्य कवियों पर विचार किया जाये तो ज्ञा होता है कि इस वैयक्तिकता में योरोप जैसी सामाजिक बराबर, जति व्यक्तिवादिया जाति के दर्शन नहीं होती। वस्तुतः नयी कविता का केन्द्र भी व्यक्ति है और व्यक्तिवादो पैतना का केन्द्र भी 'व्यक्ति' माना जाता है। परन्तु नयी कविता का 'व्यक्ति' बौद्धिक मनुष्य है और वह सामाजिक भी यथार्थ एवं परिवेश में उसकी स्थाना गहरा पोटा है कि वह न तो हो सकता है और न अपने को कहीं व्यस्त कर सकता है। उसका में 'निरन्तर' हम' को और परिवर्तित हो रहा है :

हम बहुत गहरे में कहीं छिटे हैं
पर हमारे जति सुते और ठंडी है
हम ही नहीं खे हैं
हीना मनु मातृकता है, नकारण है
सम्य लोग रोया नहीं करते
और हम सम्य हैं
हम बहुत गहरे में कहीं छिटे हैं। १

व्यक्ति को परिस्थितियों के कारण समा-
जिक कल्याण की सामाजिक दायित्व के प्रति विचार करना पड़ा ।
उसकी वैयक्तिक अनुभूतियाँ समाज की ओर उन्मुख होती रहीं । अजय का
स्नेह भरा अकेला दीपक पंक्ति में जाने के लिए तैयार है :

‘ यह दीप अकेला, स्नेह भरा ,
है गर्व भरा मायकता, पर
उसकी भी पंक्ति को दे दो । ’ १

नयी कविता का उत्तरदायित्वपूर्ण स्वर
बोधन, समाज की विश्व के प्रति सांस्कृतिक परिष्कार लेकर उदित
हुवा है। इसीलिए नयी कविता में जनता के प्रति, समाज के प्रति यथार्थ-
वादी शिक्षण प्राप्त होता है। व्यक्ति इस सामाजिक दायित्व के भुगतान
के लिए अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को जोड़ता है उसके वैयक्तिक दायित्व ,
व्यक्ति स्वातंत्र्य एवं समूह कर्मा का संयोजन इस न्यायावधार है। इस संदर्भ
में कुछ कवियों के उदाहरण प्रस्तुत हैं :

सत्योक्तान्त वर्मा

(१) क्योंकि
मैं अपना मैं ही नहीं
मैं तुम्हारा - तुम सबका हूँ
आत्म स्थित
क्रियाशील । ” २

१- अजय- भावरा अहरो पृ० ५४

२- सत्योक्तान्त वर्मा- अनुक्तान्त पृ० ११

(२) 'मे तुम्हें दे दिये

अपने धारें संवित स्नेह :

तास के कुश्यों से लिलि -

क्य लिलि दुग्ध ध्वस मुन्धारं से

०

०

मे तुम्हें दे दिये ये धव

मे तुम्हें दे दिये एक- एक

कितने भी दाण थे महत्वपूर्ण । ' १

धूमिल

(१) मे कब भी उनसे कहा है देल तासन जीर तासन

उम्हारे फीन टोक दिया है

अधर, वे फीन अपराध के काली मुकाम पर

कुली रत्ने से मना करते हैं। ' २

(२) एक बादमी

रोटी बेतता है

एक बादमी रोटी ताता है

एक तीसरा बादमी भी है

जो न रोटी बेतता है, न रोटी ताता है

बस धिक् रोटी से बेतता है। ' ३

१- सत्यमेकान्त वर्मा- कलुषान्त पृ० १०६

२- धूमिल- संभव से छद्म तक पृ० १६

३- धूमिल - कस सुनना फीन पृ० २३

श्री काम्य वर्मा

‘ मैं गीर से हुन उकता हूँ
 बीरों के रीने की
 मगर दुष्टों के दुःस की
 अपना मानने को बहुत
 कोसित की, नहीं हुवा । ’ १

सुखितबीध

(१) मुनि० प्रम होता है कि प्रत्येक वाणी में
 महाकाव्य पोछा है
 पल भर में सबमें से गुबस्ता जाकता हूँ
 प्रत्येक उर में से तिर जाना जाकता हूँ
 इस तरह हुन ही की दिये दिये फिरता हूँ । २

(२) फिर गया वह भीतरों
 जी बाहरों की कठिन पाटों के बीच
 ऐसी देखिड़ी है नीच । ’ ३

नये कवि ने निम्न मध्यमार्गीय जीवन को
 जाना कहना है। श्रुतिर नयी कविता का व्यक्ति बीरों के रीने
 की वायाउ हुनता है, दुष्टों के दुःस को अपना दुःस मानता है। वह
 वैयक्तिक होती हुए भी सारे समाज का है। समाज के प्रत्येक व्यक्ति को

१- श्रीकाम्य वर्मा- माया दर्पण पृ० १०२

२- सुखितबीध- यदि का मुँह टेढ़ा है पृ० ७३

३- वही पृ० १७

रोटी के संघर्ष में, उसके शोषण के संघर्ष में जीवता है। नयी कविता सामाजिक वास्तव को वैयक्तिक अनुभूति से सम्पृक्त है।

(ब) विद्रोह के नये स्वर

नयी कविता व्यक्ति के वर्तमान के विद्रोह की कविता है। यह विद्रोह तनाव, द्वन्द्व एवं संघर्ष के रूप में व्यक्त हुआ है। युगीन परिवेश की परिवर्तित होती हुई वस्तुधारा ने व्यक्ति को बाह्य एवं आन्तरिक संसार से झुझने की शक्ति दी। व्यक्ति को सत्ता की प्रभुति एवं कुमाराह तैवर राजनीति, सत्ता, समाज, संस्कार परम्परा तथा परिवेश के विरोध में अभिव्यक्ति की स्वर प्रदान करी है। यह वाङ्मय कई स्तरों पर धामनी बाया है। व्यक्ति का वैयक्तिक मन निरन्तर संघर्ष की जीर ख रहा है। नयी कविता में विद्रोह, नास्तिकता, नकारात्मकता, मोह भंग काया स्वप्न भंग, सत्ता के प्रति विद्रोह, परम्परा-भंग, कदियों के प्रति विद्रोह, वर्तमान के प्रति अनुभूतिवाद के रूप में व्यक्त हुआ है। नयी कविता मोह भंग की कविता है। मध्यमगीय समाज उत्कारी से ग्रस्त रहा है। स्वतन्त्रता के उपरान्त वे उत्कार, जीवन, विश्वास, सम्बन्ध एवं रीति रिवाजों में दरार पड़ती है। नया युवक एक जीर वायुनिष्ठा में जीता है जीर परिवार तथा वंश से परम्परागत जीवन जीने के लिए विनम्र है। उत्कार ईश्वर के प्रति अविश्वास उत्पन्न हो जाता है। उसे नास्तिकता के प्रति कई कवियों के स्वर प्राप्त होते हैं। दूसरी ओर नयी कविता व्याप-

बादो व्यक्तिवाद पर आधारित है। व्यक्ति यथार्थ की दमघोंटू भयानक विवेकशक्तियों में डूब रहा है। वह संघर्ष रहा है और निरन्तर टूट रहा है।
 ईश्वर नारायण की कविता का कौन प्रस्तुत है :

‘ जब हर चीज फटपट की
 तरह कठोर
 कथार्थ
 या यथार्थ की कनो हुर्र
 लह नहीं
 जिसकी वलायत बर्बसा है टकराता
 मैं मनुष्य मात्र
 टूट रहा । ’ १

वह संघर्ष रहा ही नहीं, क्योंकि उसके लिए
 ईश्वर भी मर गया है। संघर्ष की दूसरी स्थिति नास्तिकता का
 ईश्वरत्व की कविसम्प्राप्ति नयी कविताओं में प्राप्त होती है :

‘ बीर बारम्बार पाया
 शून्य नीलाकाश
 तुम ईश्वर नहीं हो
 तुम हमारे प्रश्न का विस्तार पर उत्तर नहीं हो । ’ २

विद्रोह के विविध आयाम नयी कविता की

१- ईश्वर नारायण- परिचित : हम तुम पृ० ८७

२- .. - कड़क पृ० ८५

विशिष्ट प्रवृत्ति रही है। युक्त भाव व्यक्त के मन में गहरा बैठता है। वह आन्तरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार की लड़ाईयाँ लड़ रहा है :

बाहर नहीं है ऐश्वर्य यह

दम्भ , प्रति दम्भ

घात- प्रतिघात

बहकम्प है । १

युद्ध में हम नयी कविता का कवि विविध प्रकार के वाद्यों को गुंथार धारण करता है। सर्वेश्वर दयाल को समग्र बाहरी युद्ध केसार लगती हैं, जबकि वे एक युद्ध में हम ही -

एक युद्ध जब मैं लड़ता रहता हूँ

घारे बाहरी युद्ध नगण्य लगती हैं

ऐश्वर्य के घारे बस्तु निर्णय । २

इस प्रकार कवि का विद्रोह एवं ऐश्वर्य विविध रूपों में परिवर्तित होता रहा है। मोह भंग की विविध स्थितियों के साथ साथ परम्परा- भंग, सत्ता के प्रति विद्रोह, समाज के प्रति विरोध , नास्तिकता, वर्तमान के प्रति क्रांतिवादी आदि के रूप में नयी कविता की विद्रोह भावना विकसित हुई है। यहाँ कुछ निदर्शन प्रस्तुत हैं :

ईश्वरत्व का विरोध

पूजनी के व्यापक बोध उठ चुका

१- ईश्वर नारायण- वात्सल्यगी ५० १५

२- सर्वेश्वर दयाल समवेना - एक धुनी नाम ५० ४५

कैलास बाबपियो

हंश्वर किसी कारा में जन्म कर
किसी पागलखाने में मर चुका । १

कबीर कुमार

हंश्वर का ठिकाना कुछ नहीं
कन, किस दुःखी की भित्तारी या पुजारी या
विचारी दीन इतिया का रबाये बैरा । २

भारत भुजंग कथात

रात में एक स्वप्न देता है
मैं देता
कि मेका अस्फात में नहीं ही नहीं है
बीर विश्वामित्र टूटान कर रहे हैं
उर्वशी ने डाँठ स्कूत लीस दिया है
नारद गिटार भीत रहे हैं
गणेश टाफी खा रहे हैं
बीर ब्रह्मपति कीर्त्तनी में अनुवाद कर रहे हैं । ३

डा० रामदत्त मिश्र

भगपति कुंभर बाब गुल कुल के राजा

- १- कैलास बाबपियो- सैक्रान्त- विकल्पवादी का गीत पृ० ७५
२- कबीर कुमार- कौशे कण्ठ की फुहार पृ० १२
३- भारतभुजंग कथात- बी अग्रस्तुत मन पृ० १०२

गुहकुल बाबाय्य भी वृहस्पति स्तुति करति हैं

बजा बजा बाजा

कामदेव, भनका पढ़ाति बाबाय्य-साय्य

पाठ पुराति हैं कृष्णकृष्ण कल्याण

बाजा धनम बाजा । १

केशाव बाबपियो

० मे जी कायर कश्यप की तरह

बन्द कमरी मे

बुद्ध जीर कल्याण के नीति नाता रहा । २

परम्परा भजन तथा धर्म के प्रति विद्रोह

सप्तमीकान्त वर्मा

(१) धर्म दीर्घ के महामहिम मण्डलेश्वरी के बाये बासन

दिव्य भास

बैरी गुबरेली की जमात एकल हो, कर रही

तपनी बात

बैठे, फिरीने, कृष्ण गीवर की श्रु पर फलन

गौरव वसन, मण्डलेश्वरी बाधुचण विजयासक्त । ३

(२) धर्म तो बिन्धा रहा

१- डा० रामदत्त मि- बैरि केनाम बिट्ठिया ५० ६८

२- केशाव बाबपियो- सहर बब भी सीमावना है ५० ८०

३- सप्तमीकान्त वर्मा- वसुकांत ५० ३५

बुद्धि फार पर गयी
 तस्वीर की रेंवा हुआ : बूढ़ा की पिठाई ता
 अनाहीम अपाठिय हुआ : बूढ़ा की अफीम ता
 डेविड की रेंवा हुआ : बूढ़ा की फोर ता
 अस्पास में
 तीन रोगी
 तीन भीगी
 तीन योगी
 धाय पर । " १

बुधनाथ सिंह

" मेरा धर्म निश्चित कर दिया गया है
 मैं कृष्ण या रेंवा, बुद्ध या लंकर, मुसा या मुहम्मद
 किसी के शब्दों के धाय
 मुझ बन सकता हूँ । " २

भास्करनाथ कृष्ण

" मैं डीहकर पुआ
 क्योंकि पुआ है पराजय का विजय स्वीकार
 बाधकर मुट्ठी तुमिल सकारता हूँ । " ३

१- तस्वीरान्त वर्ण- अतुक्रान्त पृ० ७७

२- बुधनाथसिंह- धुरंग से लौटते हुए पृ० ४०

३- भास्करनाथ कृष्ण- जी अग्रस्तुत मन पृ० १५

पीह भंग

(१) जैसे तुम्हारी भविष्य विषा
 सारी व्यर्थ हुई
 उसी तरह मेरा भुज भी व्यर्थ सिद्ध हुआ
 मैं कभी देता दुर्योधन को
 जिसके मस्तक पर
 मणि बटित राज कर्णों की ज्ञाया थी
 आज उसी मस्तक पर
 गँदते पानी की
 एक चादर है । १

(२) मैं तो हूँ झूठा भविष्यमात्र
 मेरे शब्दों का क्या वर्तमान में
 कोई मूल्य नहीं
 मेरे जैसे
 जाने कितने
 झूठे भविष्य, व्यस्त स्वप्न
 गलित तत्त्व
 बिखरे हैं कीचड़ की नगरी में
 गली गली । २

चिब्रील

श्रीकान्त वर्मा

----- (१) कफ़ा कुनैवाली पिल

१- धर्मवीर - कथा गुण पृ० ४३

२- वही पृ० २७

(भा) नयी कविता में भोगवाद

भोगवाद की सैद्धान्तिक व्याख्या हम पिछले अध्याय - 'प्रयोगवाद में व्यक्तिवादों चिन्तन को अभिव्यक्ति' में कर चुके हैं। यहाँ केवल नयी कविता में भोगवादों प्रवृत्तियों के संदर्भ में विचार करना कलम् है। साहित्य में भोगवाद की अभिव्यक्ति यौन-परिकल्पनाओं एवं नारी-पुरुष के वस्तुतः विप्लव के रूप में हुई है। हिन्दी में इसको एक परम्परा रही है। कासिदास के 'कुमारसम्भव', 'रघुसिंह', 'सुसंहार' में वस्तुतः काम पुत्र का वर्णन मिलता है। रीतिभङ्गोंन मृगारपण रचनाओं में नायक नायिका की कामोदीषा शोकावस्था का सुन्दर रूप से वर्णन हुआ है। नयी कविता में इसका पुनः आविर्भाव वृत्तन परिप्रेक्ष्य में हुआ है। सुन्द को विभोचिका के यौन-सम्बन्धों पर प्रभाव पड़ा है। इसके चिन्तकों की पुरानी जीवन-निष्ठा, शौन्दर्यबोध और अनुभूति समाप्त हो गई। प्रतिपाद्य मेंलाने वाली कृत्य ने उन्हें कामुकता की ओर प्रेरित किया। सुन्दोत्तर बार्हिक विप्लवता ने यौन उत्प्रेरकता को प्रय दिया। वैज्ञानिक अवधारणा एवं भौतिकवादी दृष्टिकोण ने धर्म, ईश्वर, समाज आदि के कान्ध्या के विचार उत्पन्न हुए। इसके नैतिकव्यवस्था टूटने लगे। शिक्षा एवं मनोविज्ञान ने पुनः काम पुत्र एवं यौनपरक चिन्ताओं को प्रय दिया। कतः कवि को यौन भावनाएँ प्रकट वेग के साथ साहित्य में व्यक्त हो गई। भौतिकवाद के साथ साथ भोगवाद का प्रसार भी होने लगा।

सर्वप्रथम वीर्य के 'सुन्द वीर्य' को पुनः 'यौन वर्णनाओं' की रचनादीक्षी है। परन्तु तबः तबः यही धारणा भोगवाद में

परिणत हो गए । अब कवि अपनी सुत के सिर माँस, शारीरिक, ऐन्द्रिक सुत की प्राप्ति का अवसर लीजने लगा । नयी कविता में यौनपरक भोगवादी कवितारं कल्पवृक्ष प्राप्त होती हैं। कविता के काव्यान्वदीसन एवं एवं बाँटीस्तरी पोढ़ो ने भोगवादी काव्य- सुवन की प्रेरणा दी । शान्ता धिम्हा की भोगवादी माँस शारीरिक सुतानुभूति की रक्षा प्रस्तुत है :

“ फिचरहो है परिधि स्तनों की
 छरहो की ज्ञान है
 बाकी दीस्तो कीर साधिया
 बाकी पर काँच के नीचे
 उत्पन्न की, नारी गार
 रक्त की सय पर । ” १

अब कवि का जीवन यौनाचार, काम भावना के चारों ओर केन्द्रित हो गया । हुँवर नारायण की कविता प्रस्तुत है-

“ बापाशय
 यौनाशय
 कर्माशय ----
 जिसकी जिन्दगी का यही वाशय । ” २

नयी कविता, कविता, भुत्ती पोढ़ो, रक्तानी पोढ़ो, बोट कविता, नंगी पोढ़ो, पिछीली पोढ़ो, कुपित पोढ़ो बादि में भोगवाद कई रूपों में वीक्षित हुआ है। नयी कविता में सुत भोग-

१- शान्ता धिम्हा- समान्तर सुनें पृ० ५०

२- हुँवर नारायण - कृष्ण पृ० ३४

बाद, परिष्कृत स्वपरक भोगवाद एवं स्फुल्लपरपरक भोगवाद के किन्तु बहुतायत में प्राप्त होती हैं। कहीं कवि बीसा ही भुल भोगना चाहता है तो कहीं मिला मण्डली के धाम धामुनिक सम्भोग का आनन्द लेता है। व्यक्ति को बाधना उसको भुलनाद की ओर प्रेरित करती है। बीरद्वय देवदत्त को 'पाप कवि' के पदों के लिए पदों 'कविता का बीत देखिए :

‘ कुर्छों के पोरों के ऊपर लकी ना यों
 बी मिलाता है
 गंध बातों है
 बाटे
 पसीने की
 जाड़ी की
 बीर । फिर बहो
 कला तो सटोना
 तुम्हारे ' बी ' बाते होंगे
 अब तो टटो । ' १

भोगवाद में बाह्य सौन्दर्य की महत्त्व देती है तथा आन्तरिक सौन्दर्य की अर्थ मानती है। एक अन्य दृश्य देखिए -

‘ बंगलौर में एक बस्ताब हम
 पास बैठे हम तुम
 तुम एक बेबी के लिए
 उल्टी जा रही होंगी है
 से तो मिली होंगे- मैं निकट

हंसी में कल्लो कटक- कटक
 हंसी में हिलावटा
 तुम बीर तुम्हारी हंसी
 बही थी बही । १

भोगवादी स्थूल शारीरिक सुख के लिए व्यक्ति की शक्ति क्षिप्त हो जाना प्रस्तुत है-

‘बाज मुख्य मेहमान तुम
 रात के ‘फुल्लोर हो ‘म
 एकबार , बस एक बार
 अपनी तन को आप झीठ जाओ
 सुभ्र पर ।’ २

भोगवाद के नयी कविता में अनेक उदाहरण प्राप्त होती हैं। इस लिए यह आवश्यक हो जाता है कि नयी कविता में भोगवाद किस किस रूप में प्रतिफलित हुआ है। इस संदर्भ में स्थूल स्वरूप भोगवाद के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

‘उसके झुंघराते बाल बिसर जाते हैं
 उसके वदन को उस नींद नीलाश्या
 निबन्ध होकर बीर उभर जाती है ।’ ३

नयी कविता में स्थूल स्वरूप , परस्पर तथा

१- विनादे जन्म पावै - सफेद जिहिया पृ० ६५

२- शान्ता चिन्ता , समानान्तर क्षी पृ० ५३

३- केशू- काली बदली , अभिव्यक्ति पृ० १३६-१४०

परिष्कृत स्वपरम भोगवाद के चित्र प्राप्त होते हैं। इन कवियों के लिए 'श्रीफली को नंगी जेबा पर बैठाने के लिए' जादू-रसि से मोहित हो 'मोड़िया' 'रेफो' 'ही जबा' 'हीमोसेवकुत' स्थितियों के मुख-रसों हुई चारों पौड़ों नग्न ही- उस ग्राह्य है। इन कविताओं में अस्तित्व बोध, मानवीय पवित्र्य की वास्तविकता, द्रासपूर्ण स्थिति, फीनो रस की खेपणा, तैलाफ, सम्झना का विदूत एवं मौजब, व्यंग्य, वासन्व संकट आदि में नपुंसकों की छिजलाहट एवं वरसोलता के नग्न चित्र प्राप्त होते हैं। ये कवि यौन सम्बन्धी वरसोल मुहावरों का प्रयोग करते लगे। भूमि को कविता के कुछ चित्र प्रस्तुत हैं :

(१) 'एक धूम्रों रसों होने के पहले तो
गर्भाधान की क्रिया से गुजरती हुई
उसने जाना कि प्यार
फनी बाबादो वाली वस्तियों में
फसान की तलाश है
लगातार बारिश में पींगती हुई
उसने जाना, कि घर लड़की
तोसरे गर्भाधान के बाद
धर्मशाला की जाती है बीर कविता
हर तीसरे पाठ के बाद ।' १

(२) 'लोलाक हूँ को बनावट पर गौर करते हुए
उसने कहा था था
माझि जम हवती ही सुहागिन बीरों

सोहर को पत्नियों का रस
 (नमड़े की निजंता की गोला करने के लिए)
 नये भिरे से सोलने लगती है
 जाँघों में बढ़ती हुई तात्पर से
 पवित्र्य के रंगीन सपनों की
 जोलने लगती है
 मगर अब वह नहीं है
 उसका घर जाना पत्नियों के लिए
 तफो पत्नियों के पतिव्रता होने होने को
 गारंटो है । १

प्रेमिल की कविता में विद्रोह एवं पादसाधो
 प्रभाव से विस्तृत कविताएं प्राप्ता होती हैं, वही भीगी हुई जीवनपरक
 स्थितियों को कहीं गहरे से बाँखलायी हुई वाचाव है। अतः , लोकान्त
 वर्मा आदि की कविताओं में भी भोगवाद के दर्शन होते हैं ।

अतः-

' कुछ नहीं यहाँ भी अन्धकार हो है
 काम- कपिणी वाचना का विकार हो है।
 यह सुनोता व्योमघासी पुँवा जेता
 जातलायी वृष्ट - दुर्वम व्याहो है । २

लोकान्त वर्मा

(१) में सङ्कट पर

१- प्रेमिल - संत से सङ्कट तक , पृ० ३२-३३

२- अतः- हरिी घात पर दाण पर पृ० ४६

गुजरती हुई
 हरेक
 स्त्री के साथ
 सोने को लकड़ा
 सिये हुए
 जीवन के मृत्यु
 को बीर
 गला जाता है । १

(२) क्या मैं पड़ा रहा हूँ अपनी स्त्री को जीप की
 दराज़ में ? २

इस प्रकार नयी कविता में भोगवाद, वरसोसता
 एवं यौन पर चिन्तों के विविध रूप प्राप्त होते हैं। अक्सर भारतीय के
 वाक्य में भोगवाद का अध्ययन पिछले जग्याय में कर चुके हैं तथा कविता,
 नंगी पोढ़ी, बीट कविता को वरसोसता एवं भोगवाद के सन्दर्भ में करते
 अध्यायी में विवेचन करते । इस प्रकार प्रेम एवं शृंगार का कारण चित्रण
 वरसोसता को बीर नयी कविता को ले जाता है। व्यक्ति या भोग बीर
 वैयक्तिक यौन-पुष्टि है। नयी कविता में व्याप्त हो गया । नयी
 कविता का भोगवाद, स्तुतस्वपरक भोगवाद नहीं है जो कि व्यक्तिवाद
 पर आधारित है। अतः नयी कविता का स्तुत स्वपरक पर आधारित
 है। अतः नयी कविता का स्तुत स्वपरक एवं स्तुत परपरक भोगवाद वैय-
 क्तिकता से आश्रित है। अतः नयी कविता को भोगवादो प्रवृत्तिग

१- प्रोफेसर वर्मा- पाया दर्पण पृ० १८-१६

२- वही पृ० २७

अप्यभिवादी केना को अभिव्यक्ति है।

(ब) नयी कविता में क्लेशाप्त तथा जनबोध

क्लेशाप्त सामाजिक अलगव तथा स्वान्तवास शब्दों से पूर्ण अस्तित्व रखता है। अप्यभि अप्यभि के मध्य जीजनबोधन और परायाप्त है वही क्लेशाप्त है। अप्यभि का समाज, परिवार, समुदाय तथा मोड़ से अलग रहना ही क्लेशाप्त है। अप्यभि - अप्यभि के मध्य को पहचान लीजाना ही जनबोधन का संकेत है। जनबोधन से ही क्लेशाप्त को अनुप्राति लीजो है। क्लेशाप्त मनीषिकार है जो कि सामाजिक सिंघात से उत्पन्न होता है। नयी कविता में क्लेशाप्त सामाजिक परिस्थितियों तथा परिवर्तित विवेकतियों के प्रतिक्रिया स्वयं विकसित हुआ है। भोक्तान्त वर्गों को कविता 'एक दिन' का उदाहरण प्रस्तुत है -

‘सारा दिन केले चुड़ाहंगा ?

तीने से पहले अपने घरवा

क्या बाली में

वपना क्लेशाप्त देखी के लिर उताहंगा ?’ २

एक अन्य कविता में कवि को क्लेशाप्त से कितना भय है ?

‘एक के न होने पर

वपना क्लेशाप्त

१- डा० गोविन्द रजनीश , समकालीन हिन्दी कविता : विविध

परिदृश्य पृ० १३७

२- भोक्तान्त वर्गों- माया दर्पण पृ० १०

होने का भय ।

जनश्रुति

होने का भय । १

हस्तीकान्त वर्मा की कविता में जनश्रुति और
कैसेफ के साथ साथ उदाहरण प्राप्त होते हैं :

सब मानो मैं कैसेफ हूँ खाना कैसेफ जितना प्रत्येक

नन्दा वृष्टि से

व्यपारित किन्तु व्यपारित को किरणों से प्रदीप्त

कैसेफ किन्तु उस सामूहिक चेतना से वमिभूत । २

स्नेहमयी बांधरी को अनुभूति नितान्त कैसेफ
का है उनकी बोद्धा भी कैसेफ है। काः कथिष्टो इस कैसेफ दुःस दर्द
की कैसेफ हो भोग रही है। कविता - एक प्रस्तुत है :

यहाँ पर कौन ऐसा

जो कभी वाकर

कटाते

जलन जो, दुःस- दर्द के

ये दहकते पत्त

जो कि मेरे हैं

मेरी ही तरह ।

वपनी वाप में, छिछोका

खिन्न कैसेफ हैं । ३

१- श्रीकान्त वर्मा - मायादयंका पृ० ७१

२- .. - कृतकान्त पृ० १४७

३- कल्पना . पुस्तक १९६३ पृ० ६६

क़ैलाफ़ इस तरह काटता है कि जो ऊहनोय
 बन गया है। एक अन्य कवयित्री कुसुम बीमार बिस्तर पर पड़ी स्काकी
 बीमन के साणों को काट रही हैं :

वातमान क़िस्तान- सा फेला हुआ
 सँडिह साण- पिछी से बीज रहे
 बाकारहीन बादल
 बीमार बिस्तर पर
 निरुदय
 कसबट बदलतो हुए मैं
 सिद्धकी से देखती हूँ
 गुलदारी से सटा हुआ
 कल्ले फाँसी से लदा
 नारिस्त का एक जवान फेड़

० ०

मैं

सिर्फ ऊहलया का अभिशाप बीदे
 सेटी रह जाती हूँ । १

कान्ता भारतीयों को क़ैलाफ़ 'बीम' लगाता

है :

क़ैलाफ़ मैं
 धीरे धीरे बढ़ जाता
 तपय का बीम । २

१- कसफा- जनवरी १९६८ पृ० १०

२- कविता कौ - पृ० ६३

विपिन कुमार जटवाल जैलाफन और कजनबोफन की साथ साथ जोते हैं। " २६ वीं वर्णन गाँठ पर " कविता का एक और देखिए :

“ मेरे रकाकोपन को लम्बी कापि में फटा नहीं
 दो बादमियी के बोन को तहजोब
 कवल गयो है किलना । ” १

इस प्रकार जैलाफन के बने उदाहरण प्राप्त होते हैं। महानगरों की मोड़ तथा व्यक्तियों की व्यस्तताओं ने व्यक्तियों को अपनी जोषन एवं आत् से दूर फेंक दिया है। व्यक्तित्व-व्यक्ति की परिमत्ता भी गई है। आपुनिकता एवं सुजोबादों सन्ध्या ने व्यक्तियों को मलोन बना दिया। वह रात-दिन व्यक्तियों को भाग दाँद में व्यस्त हो गया। उसको पहचान भी गई। वह माद में कजनबोफन की सति की जाने लगा। व्यक्तित्व का कजनबोफन फताभवाद को और लेजाता है। जैलाफन भी व्यक्तित्व-केन्द्रित आत्मा आत्म केन्द्रित भावना है। आत्मा नयी कविता में जैलाफन, कजनबोफन एवं अलगव को प्रवृत्ति व्यक्तित्व-वादों का एक चिन्तन पर आधारित है।

नयी कविता में व्यक्तित्व

नया कवि विनमताओं में जीवन जीता है। नयी कविता व्यक्तित्व-आत्मकेन्द्र की कविता है। वह व्यापक परिधि की जीता है। सामाजिक विनमता, श्रोतियों के प्रति आशीर्ष आदि में नयी

कविता केक व्यक्त का स्वर लिखत र्वं कटु हो गया है। इस कवि ने सामाजिक शोषिता पर, व्यसथा पर, वर्तमान स्थिति पर, ईश्वर एवं धर्म आदि पर तीव्र प्रहार किया है।

वज्रिय की 'छाप' कविता महानगरीय समस्या पर करारा व्यंग्य है जो कि वैयक्तिक व्यंग्य तीव्रता का रूप धारण करते व्यक्त हुआ है। उदाहरण देखिए-

'छाप तुम सम्यगी हुए नहीं
नगर में रहना
भी तुम्हें नहीं आया
एक बात पूरी उत्तर दीगे
फिर कैसे सोला डसना
बिडना कती पाया १' १

नयी कविता में व्यसथा, युद्ध, राजनीति, बेकारी, बहिष्ता आदि पर व्यंग्य का स्वर प्रारण होता है। युद्ध के उदम में सर्वजनरक्षाल सन्देश का व्यंग्य प्रस्तुत है :

'बया कमाल है मेरी दोस्त
काल कि तुमने इन छापों के गरीब को
तिलसिणी के पत्तों के वीर मर दिया होता
फिर तुम्हारी यह शांति
काली शांति को लगने लगती

क्या कौबो बर्षियों पर

बीद बिन्दुओं का गैरिक वसन

नहीं जोड़ा जा सकता ?

" टी " के वाकार के फोटा के नीचे बिन्दुओं

का स्तन

जहाँ शायद कुछ और टिकाऊ हो जाता । १

डा० रामदत्त सिंह को " वाकर-मीटर " कविता

में जिन्दगी से व्याप्त दुः, दुष्टिना तथा वात्स हत्याओं पर ५ रा रा
व्यंग्य किया है :

• वाकर मृत्यु

स्वाभार- पत्र की तरह

फेंक गया दुःख की

मरान- मरान के डाले

धूप की तुलसी सेता हुआ

हर दावादा बनिता है

एक मुर्खप

एक युद्ध

एक बाढ़

एक दिन दुष्टिना

हत्याएं और वात्स हत्याएं । २

१- सर्वेश्वर बयाल समीक्षा - काठ की घंटियां पृ० ३६३

२- डा० रामदत्त सिंह - एक गहं है धूप पृ० २३

भारत भूषण कृष्णसुत पुराणे- मूल्यों पर प्रहार
करते हैं। उनके लिए देवी- देवता भी निर्दोष हैं क्योंकि वे उन पर
अभ्यर्थ करने से नहीं डरते :

रात में एक स्वप्न देखा
मेरे देखा
कि भित्ति का कण्ठाक्ष पतन हो गयी है
बाहर विज्यामिश्र दूधन कर रहे हैं
उर्ध्वगो ने हासि रक्त भीत सिखा है
नाख छिटार सीत रहे हैं
बाहर वृक्षस्मृति लीजो में अनुवाद कर रहे हैं । १

सर्वेश्वर दयाल सन्तान के अभ्यर्थ कथन में एवं
समसामयिक हैं। एक उदाहरण प्रस्तुत है :

वेद पर्वत के वास्ते
जिसारे, बट्टाने, फांत काट काट कर
खत, हथियार, सम्पत्ति मुर्दा गादियों के लिए
सहज बनाते हैं
वे तो पागल ने
पर उनकी में क्या भूँ। २

इसी प्रकार अन्य कवियों के व्यंग्यपूर्ण उदाहरण
प्राप्त होते हैं :

१- भारतभूषण कृष्णसुत - की अप्रस्तुत नम ५० १०२

२- सर्वेश्वर दयाल सन्तान - काठ की पीटिया ५० ४२५

सदगोदान्त वर्मा

सभी कुछ बसल गया
 राजन को दुकान पर झीपड़ी का चोर
 बट टिकर मरुतु चार गज कहतालोस के
 गाण्डीय का वज्र : केवल हाफ पीण्ड
 प्रवेदा : केवल एक फुट औस्टिक
 कर्ण-दुष्टन : केवलिक गोत्व
 गोता और न्यून प्रिण्ट
 व्यास बाप का : केवल ब्यूटीटा
 गजेश जवारी । १

प्राप्ति

पेट में जो छुरी के साथ आगती है तलारबसी
 सस्ते मल्ले को दुकान की बाहरी
 बोवार से टकराती है
 उसको हून मरी सुट्टी में पिना हुआ
 राजन काँह, हजिज क्रांति के विरुद्ध
 उसको टाँगों में बाफ़त है । २

जैसे प्रकार नयी कविता में साहित्य, राजनीति
 धर्म, व्यवस्था आदि चीज़ों पर ध्यान दिया है। राजनीति के सोलस

१- सदगोदान्त वर्मा- सुभा-स पृ० २२

२- प्राप्ति- बल हुना सुभा पृ० २२

मुलौटि और पुँबोपदियों के षड्यन्त्रों आदि का फर्कफारा नयी कविता में हुआ है। नयी कविता के व्यंग्य वैयक्तिक अनुभूतियों पर आधारित है। वे व्यंग्य जितने भी हैं उतने ही सारक और मोट मुँजाने वाले हैं।

(ठ) नयी कविता का व्यक्तित्व

नयी कविता का व्यक्तित्व स्वतन्त्र भारत का व्यक्तित्व है जिसके सामने समस्याओं की भीड़, विवेकतियों की त्राणियाँ, गिरावटी विचार धाराओं के लहरे तथा व्यक्तित्व-स्वातन्त्र्य को ताजा फुहार है। इन सबके मध्य प्रयोग युग, प्रातिवाद तथा उत्तर आध्यात्मिक व्यक्तित्व से अनुप्राणित भी है। एक ओर अस्तित्व बोध के प्रति सन्नित है। दूसरी ओर 'सपु मानव' आशा बोध का महानगरीय जीवन की विवृतियों के रूप में ग्रहण करता है। यह व्यक्तित्व प्रेमवाद, सार्थकवाद तथा सत्ता के षड्यन्त्रों से लौल्लि नारों में उत्पन्न गया है। इसके परिणामस्वरूप उसे आस्था, दुष्टता से पीड़ा-बोध की विविध विधियों से गुजरना पड़ा है।

(९) आस्था

नयी कविता में आस्था का स्वर कई रूपों में व्यक्त होता है। बोधन के प्रति आस्था, व्यक्तित्व के प्रति आस्था, वर्तमान के प्रति आस्था आदि रूपों में आस्था का स्वर नयी कविता में व्यक्त होता है। यह सन्दर्भ में कुछ निम्न प्रस्तुत है :

(१) लगता है कहीं कोई ठीर नहीं
 जाय का मनुष्य
 गर्म से धकेल देकर निकासता हुआ
 शनि- पुत्र । १

(२) मैं एक अज्ञेय दुनियाँ में जो रहा हूँ
 नीर बफी की टटोल कर उल्टा हूँ
 दाग के दाग
 मैं एक साथ ही मुर्दा भी हूँ नीर उदासिताय भी
 मैं एक बाधो दुनिया की मिट्टी में
 दबा हुआ
 लफ्फे की लौट रहा हूँ ।
 मैं एक बिल्ली को लकड़ में लिपा हुआ हुआ हूँ
 नीरों की टोलता हुआ
 लफ्फे से ढरा हुआ बैठा हूँ । २

(३) 'जादमी नहीं एक लय भूरा फल,
 फेंका हुआ, धिक्का हुआ धर्म सत्य
 जादमी नहीं एक सफ़ा ,
 विपत्तियों के झंझ में डूबा , लय बोलित
 संसार की बाँग । ३

१- राबिन्द्र विशीर - स्थितियाँ- अनुभव तथा अन्य कविताएँ पृ० ११

२- श्री कान्त वर्मा- दिनाराम्य पृ० ४६

३- तदमोक्षान्त वर्मा- कुकान्त पृ० २-६

(४) " मैं निरा बिलसती स्वेन हूँ
मेरे प्राण स्थित वीर क्षिप्रमय उनमें कहीं है प्रीत
मैं तो मात्र बाहर के जीवन को लीज कर
फिर उगत देता हूँ
ओ मो तब जब कोई आपके निजी हूँ मुझ । " १

(५) साधियों हम सब दुष्ट हैं बाने हैं
कलहाम कलहाम हैं
हमारे के धोड़ुठा के भगत हैं
बाबी, घोषणा करे कि हम नये बादमी हैं
(समूह स्वर प्रतिक्रिया) बादमी ?
बादमी तो मर गया
हम मरब डमी हैं । " २

(६) " तमि का वासमान
टिन के स्तिरि
गसोला
उड़ते हैं कसकट के पीछे केनारि
लोह की धरती पर
जाँदी की धारा
पोतल का दूरव है
रामि का मोलाजा जाँद क्का प्यारा
गंधक का कौका है
बादमी पुर के हैं (जाया ने लीका है)

१- नारतभूषण कृपात- जो वप्रस्तुत मन १० ५६-६०

२- विजयन्द्र कुमार- नया बादमी : अस्तित्व की घोषणा- निष्ठा १००६

होर को बाइत ने छड़ी छड़ी टीका है
 सोने ने समझा कि रोडियम का मोका है
 भूत 'कनकलम्ह' है, हसोसिए बकती है-
 जिन्दगी नहीं है यह,
 धोला है, धोला है। १

इस प्रकार नयी कविता में कानास्था के विविध रूप प्राप्त होते हैं। व्यक्ति को व्यक्तित्व के प्रति, जीवन के प्रति, वर्तमान के प्रति कानास्था का स्वर विभिन्न रूपों में विकसित हुआ है। इस कानास्था का आधार वैयक्तिक ज्ञान है। नयी कविता का व्यक्ति टूट चुका है, वह मोह भंग में जो रहा है। अतः वह व्यक्ति एवं व्यक्तित्व के प्रति सजग है। इसलिये नयी कविता को कानास्था व्यक्तित्व-वाद पर आधारित है।

(२) कुण्ठा

नयी कविता में कुण्ठा का स्वर आगान्त व्याप्त है। कुण्ठा, संघास, मय, विपरीत, संघर्ष आदि का भाव नयी कविता में बहुधा व्याप्त है। कुण्ठा की प्रक्रिया के सम्बन्ध में राजकपूर जी रो के विचार इस प्रकार हैं :

संभवतः सफ़िद जई के जसग जसग
 टुकड़ों पर जम जाई हुई कोचड़ काई हो कुण्ठा बनती है, जो कन्दर

से सावुत पत्थर यानी बादलों के अस्तित्व, अन्तर्ग अस्तित्व की जगह-
निलरने नहीं देती है। जी बादलों की किसी तात्परा, किसी देह की,
किसी नीमन , किसी भोग, किसी मृत और कतीत शारीरिक सम्भावना
में हमला के लिए, उन बादलों अपनी कुंठा से अधिक मजबूत हुआ तो कुछ
जब के लिए रोक देती है। नयी कविता में व्यक्ति को कुंठा ग्रस्त
माने में व्यक्तिवादिता का अधिक प्रभाव है। यही नयी कविता में
कुंठा के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) बीटियों के लगने पर भी
तड़पना मगर बीटनी नहीं । १

(२) गर्मियों में
मेरी कुंठा नवारी कुंती
बादर बाने हैं तो ठीक ताप मर्यादा
भीतर रही हैं तो फुटन
सहन से ज्यादा
मेरा यह अस्तित्व
सिमटने पर कामावा । २

(३) अपनी कुंठाओं को
दोबारा में बन्दो
में फुटता हूँ । ३

१- सहर- दि० अ० १२६५ पृ० ७० से उद्धृत

२- सत्योदयान्त वर्मा- अतुकान्त पृ० ४७

३- सुष्यन्त कुमार- धूर्त का आगत पृ० १९

४- धर्मवीर माहो- ठण्डा सीहा पृ० ५६

(४) मैं वह कहूँगा होता तो इस

समय वधि से अपनी मोतार चुक्क कर बैठ

बाता, और यह न दोली पाली

चोट भी मुझ हूँ न पाली, और मुझ

तलाक़ी भी चारों ओर चक्कर लगाती । १

नयी कविता के कवि के मन में अनास्था का स्वर ही निराशा एवं कुण्ठा के रूप में विकसित हुआ है। ज्यादातर है कि कुण्ठा तण्डित कर्म पर कोण्ड एवं काँट की तरह बम जाती है। कुण्ठा व्यक्ति के अस्वस्थ, अज्ञान एवं अजनबीपन के साथ विकसित होती है। कुण्ठा, बीदिता एवं वर्तमान विसंगतियों के कारण उत्पन्न होती है। नयी कविता में कुण्ठा का स्वर पराक्ति प्रदीर्घ रूप में अपना निराशा-वा दियों के स्वर में स्फूर्ति हुआ है। नयी कविता का व्यक्ति निराशा, घुटन, पराजय, आत्महीनता में जीवन जी रहा है। अतः इस व्यक्ति का समग्र व्यक्तित्व कुण्ठित जीवन जीता है। यह व्यक्तिवादी जेतना के प्रभाव से विकसित हुई है आत्मकेन्द्रित व्यक्ति कुण्ठित होता है।

(३) पीड़ा बीध

नयी कविता में पीड़ा, वेदना, दुःख की अभिव्यक्ति दर्द के रूप में हुई है। व्यक्ति के सुख-दुःख के एवं उसकी वैयक्तिक अनुभूतियों के दाग जो पीड़ा की असहनीय दर्द देती है वह नितास्त

वर्षों की सहन तपित है। दर्द को विभिन्न स्थितियों नयी कविता में स्थापित हुई है। नयी कविता का कवि 'जीवन को मोल माँग कर भी व्यक्तित्व के प्रति मोह दिखाता है। वह पोढ़ा, पिचकता एवं झूठा का दान लेने की तैयार है तथा किन्तु ऐसा, माप के दूर अकेलपन में जोता हुआ नयी स्वतन्त्रताओं एवं कविताएँ के प्रति भी अकेला है। अकेलापन ही अजय को विश्व को पोढ़ा धीरे धीरे करने के लिए बाध्यमान करता है। यहाँ मैं क्रमिक कवि जीवन के प्रति यही उदात्ता प्रकट करता है। नया कवि सामाजिक, राजनैतिक एवं परिवर्तन गत सम्बाधनों के शका हुआ, हारा हुआ है, हतोत्तर वह झूठा, सहित एवं कटु-सिक्त हो गया है। उसकी पोढ़ा 'स्फूर्ति' की पोढ़ा है, वैयक्तिक दर्द ही इसके काव्य में समाहित है। अजय ने पोढ़ा बोध को अपने काव्य में स्थान दिया है। एक कविता की देखिए :

दुःख अकाली माँझा है
और चाहे स्वयं को पुनित देता वह न जाने,
किन्तु
बिनकी माँझा है
उन्हें ये सोच देता है कि अकाली मुक्त रहे । ४

दर्द को अनुभूति की अजोष होती है। नास्तो
की एक रचना में पोढ़ा बोध प्रस्तुत है :

१- नयी कविता-अंक ४ पृ० ६४

२- नयी कविता ५-६ पृ० २२४ (राजकमल जोधरी की कविता)

३- अजय- पूर्वा ५० ४३

४- अजय- हरी पास पर दाण्डा ५१ पृ० १५

‘ हँसकर न करे तुम तुम कभी यह दर्द सही
दर्द, हाँ कार लाही तो इस दर्द की
मगर ये लीर भी वेदर्द सजा है र दोस्त
कि ठाढ़ - ठाढ़ चिटित जाये मगर दर्द न ही । ’ १

सत्सोकान्त वर्मा ने पोढ़ा- बीध को
स्थितियों की विभिन्न प्रकार से व्याख्या किया है। वे दर्द की विविध
प्रकार से जोते हैं :

‘ दर्द दर्द है : दर्द को किसी नहीं
दर्द एक मित्राज है । ’ २

कौी प्रकार वर्मा जो के लब्ध निदर्शन में
प्राप्त होती है :

‘ दर्द
दर्द वह सहारा है
० ०
दर्द : जो महत्त्व से निरुद्धा है
दर्द : जो सलिल से उमड़ा है
दर्द : जो धिक्का का पिता है
दर्द : जो भरा विधाता है । ’ ३

नये कवि में पोढ़ा की सहन करी की बहुल
लाप्ता है। वह निरन्तर दर्द, पोढ़ा, स्व दुःख का चित्रण करी रहे हैं।

१- धर्मवीर नास्तो- ठण्डा लीहा पृ० ३३

२- सत्सोकान्त वर्मा- कृतकान्त पृ० १४०

३- वही पृ० १४०

सुखितबीध का विश्वास है कि पोढ़ा का बीध उम्ह कर पारंगत बाधर काटता है। नरेश मेहता पोढ़ा की प्रक्रिया को वर्णित करते हैं :

दृष्टि प्रिया पोढ़ा है, कल्प वृक्ष
दान सम्पन्न, जोश मुक्ता
स्वोकारी
बी मन कर पावो
मधु करि स्वोकारी
बहन करी, सहन करी
बी मन ।
बहन करी पोढ़ा । २

ये कवि पोढ़ा की प्रिया तथा दर्द की बीर
तेजों के बीन का वाह्यान करते हैं।

धर्मोत्तर भारतो दर्द की सभी का दर्द
मानते हैं। किसी एक का नहीं है। दर्द की ऐसी स्थिति है प्रतीक व्यक्तित्व
गुजरता है :

बी मेजों को कोरी पर माथा रख रखर रोने वाले
यह दर्द तुम्हारा नहीं सिर्फ, यह सबका है। ३

भारती को अन्य जिन रचनाओं में पोढ़ा-
बीध से शिक्त है। पराक्ति 'पोढ़ी का गीत' तथा कविता की मीत

१- सुखितबीध - प्रतीक , १९४८ पृ० ६२

२- नरेश मेहता - धन पालो सुनी पृ० ६

३- भारतो - ठण्डा लोहा पृ० ७

४- आल गीत वर्ण पृ० २०-२१

कवितारं कवि को वैयक्तिक पोढ़ा को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं।

विजयदेव नारायण साहो का पोढ़ा-
बोध 'दर्द को देवाफा' के रूप में प्रसिद्धि हुआ है। दर्द को कौनसी
स्थिति का एक ठोस प्रस्तुत है :

और कब तक धमनियाँ के बन्ध में प्यारे हूँ
यह दर्द को देवाफा ?
और कब तक मुक्ति- प्यासी जरियाँ की मोत
भी सुनता हूँ ?
लौत दो, मेरी गिराई लौत दो
तोड़ दो, मेरी परिधियाँ तोड़ दो
बहो बहो
फूटकर के बहो
मेरे दर्द को देवाफा । २

एक अन्य कविता में हिमालय के 'बाँझ'
के द्वारा पोढ़ा बोध को नूतन अभिव्यक्ति प्रदान को है :

सब मानो प्रिय
उन बाघाओं के टूट टूट कर रोने में कुछ लपे लपे
कितने कमरों में बन्द हिमालय रोते हैं
मेजों से लगकर सी जाते कितने पठार

१- नारतों- ठण्डा लोहा- पृ० ४४-२१

२- तीसरा सप्ताह - पृ० १८१

फितने धूरव गत रहे कंधे में बिफर
हर बाँधु कायदा को सोझ नहीं होता । १

धर्मोदर भारती के 'कन्धा युग' में पोढ़ा-
बोध की अत्यन्त ताजा ढंग से ग्रहण किया गया है। तैय्यी को पोढ़ा का
अत्यन्त मार्मिक रूप उभरा है। एक दृश्य प्रस्तुत है :

‘कन्धी से
बिन्तु कैसे कहूँगा हाथ
सात्याकि के उठे हुए सस्त्र के
जम्कदार ठी लोहे के स्पर्श में
पुत्तु की खने निकट पाना
धेरे तिर यह
बिल्कुल ही नया अनुभव था
जैसे तैय्य बाण किसी
कीमल मुण्णास की
ऊपर से नीचे तक जोर जाय
जाम ब्रास के उस बिलद गहरे दाग में
कोई मेरो सारी अनुभूतियों को जोर गया
कैसे वे पाऊँगा मैं सम्पूर्ण सत्य
उन्हें बिल्कुल अनुभूति से । २

इस प्रकार नयी कविता का पोढ़ा- बोध
व्यक्तिवादों के ताना से प्रेरणा पाकर ताजा ढंग से स्थापित हुआ है।

व्यक्ति समग्र पोट्टाओं और वर्द की रकाकी जोता है। उसको वर्द सहने की साम्ता मीतिक और खोज है। नये कवि की व्यक्तिक अनुभूतियाँ इस वर्द की अपनी तरह से अंकित करती हैं। नये कविता का व्यक्ति सामाजिक, वार्षिक विचाराओं से बंधा व्यक्ति केन्द्रित बन गया है और व्यक्तिवादो वर्दन से प्रभावित है।

(य) नये कविता में व्यक्ति और समाज

नये कविता का जन्म प्रयोगवाद के क्रोध में हुआ है। कतः प्रयोग युग की प्रवृत्तियाँ नये कविता में भी प्राप्त होती हैं। प्रयोगवाद व्यक्तिवाद की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है। परन्तु नये कविता की व्यक्तिवाद ने विविध रूप धारण किये हैं। प्रयोगवाद और नये कविता के 'व्यक्ति' में महान् अन्तर है। नये कविता का व्यक्ति मूलोनी युग की है। उसका जड़ प्रयोगवाद के जड़ से भिन्न है। नये कविता का व्यक्ति समग्र मर्यादाओं और नैतिकताओं का विरोधी है। इसलिए उसका स्वर व्यंग्य प्रदान हो गया है।

कायावाद की 'मैं' को जितने प्रयोगवाद और नये कविता तक नये कविते बदलती हुई अभिव्यक्त हुई हैं। नये कविता का व्यक्ति साधारण, छोटा, सामान्य का, सद् तथा बीना वादमी है। वह विश्व की समग्र अनुभूतियों की अपनी झोटी से हृदय में वात्सल्यपूर्वक किये हुए हैं। नये कविता ने उसके 'मैं' में ही अस्तित्व विश्व के सभी विचारों को व्यक्त करने का दावा किया है, कहीं तक यह सत्य

नी है। लघुतिर वह अपने को कुत्ता, लाल, मुर्दा, गतिहीन, फूट, बाँना, जारब, तथा लीकित आदि नामों से अभिहित करता है। 'मैं' के द्वारा व्यथित का लघुत्व एवं मरुतु का क्षिण किया गया है। मानवोपमोपकार एवं दुःख दर्द, हास, रुदन, क्रोध आदि को समग्र प्रवृत्तियाँ नयी कविता के 'मैं' द्वारा वक्षित हुई हैं। अतः नयी कविता का व्यथित 'मैं' का मुसौटा लगाये हुए नितान्त आत्म केन्द्रित व्यथित है।

नयी कविता में समाज का क्षिण व्यथन व्यक्त है। नयी कविता का समाज पीछे पीछे की स्थिति से गुजर रहा है। मध्यमार्गीय संस्कार, बन्ध विस्वास तथा जीवन-सूत्रों के टूटने से भारतीय समाज का ढाँचा चरमराने लगा। एक ओर प्रभोपति समाज ऐश्वर्य में जो रहा और दूसरी ओर गरीब समाज रोटी रोज़ों से काँझित है। नया कवि गरीब, दलित को भूत का कैन भी करता है और प्रभोपति तथा सामन्ती समाज पर तोहि व्यंग्य भी करता है। एक ओर राजनीति में व्याप्त कर्तव्य एवं प्रष्टाचार को उद्घाटित करता है तो दूसरी ओर नेताओं के लोभले वात्स्यायनों से रहस्य है। भारतीय समाज का दारिद्र्य, बेकारी आदि से पीड़ित है और नयी कविता का कवि अत्यन्त बौद्धिक है, कितना अन्तर है ? इन दोनों की विपत्तियाँ हैं।

नयी कविता का व्यथित दोनों प्रकार के समाज का क्षिण करता है, उसको अनुभूतियाँ वैयक्तिक हैं, परन्तु वह सामाजिक दायित्व के प्रति भी समर्पित है। नयी कविता का कवि जितना 'मैं' के प्रति क्लेश 'स्व' के प्रति उजड़ा है उतने कुछ कम समाज के

प्रति अपने प्रतिबद्धता घोषित करता है। व्यक्ति स्वातंत्र्य एवं अधिकारित स्वातंत्र्य को सबसे सुन्दर प्रतिक्रिया नयी कविता में प्राप्त होती है।

कतः नयी कविता का व्यक्ति एक और समाज के संघर्ष रत है और दूसरी ओर सामाजिक दायित्वों को निर्माण का उद्भव करता है। 'बिस् प्रकार व्यक्ति और समाज के संघर्ष, दुःख, सुख, वेदना, कठिनाता आदि से कविता को बाजार मिलता है, वेद हो राखती भी कविता को तुराक हो सकती है।' व्यक्ति अपने वास्तविक को जोता है और विचमताओं से संघर्ष करता है। नयी कविता का व्यक्ति मोह भंग एवं स्वप्न भंग को विपत्ति में है। उसके सपने दूर हो चुके हैं। कतः वह विवश और निश्चय है इसीलिए वह लघु और लीडित है। उसके मन में कुप्टा एवंनास्था है। वह स्व-चित्त, के प्रति समर्पित है। नयी कविता का व्यक्ति व्यक्तिवादो के विरोध और ककार का जीवन जोता है तथा समाज मोह भंग को विपत्ति में है।

(१) कथं की लय

नयी कविता का सबसे अधिक शान्तिकारी कार्य सुप्त इन्द्र का प्रयोग है। नयी कविता में सुप्त लय इन्द्र माना गया है। लय तीन प्रकार की होती है :

(१) लघु - लय

(२) कथं- लय

(३) पाव- लय

१- ललित सुप्त- नया काव्य : नये मूल्य पृ० २१५

२- डा० राम बल्लभ राय- नयी कविता का उद्भव और विकास पृ० २३१

नयी कविता के कवि कर्म को लय की सत्ता को ज़रूर स्वीकार करती हैं। डा० जगदीश गुप्त कर्म को लय की सत्ता को स्वीकारीवित मुद्रा में लिखते हैं :

‘ कर्म लय का निरूपण प्राचीन भारतीय काव्यशास्त्र में नहीं मिलता । हिन्दों में नयी कविता के नाम से अभिलिखित होने वाली वाचनिक काव्यधारा के अन्तर्गत कनेक बाह्यकाः गथाभास कविताओं का वास्तविक आधार जीवने पर कर्म लय का स्पष्ट प्रमाण मिलता है, किन्तु इस तत्त्व को और विशेष ध्यान गया है। --- आवर्तन - विवर्तन और गहराई से युक्त गतिशीलता, जो एक सम्बन्ध प्रवाह रूप में प्रति-भासित होती है, शब्द और कर्म दोनों में लय- रूप में व्याप्त हो जाती है। कर्म लय का यही तात्त्विक आधार है। ’

डा० जगदीश गुप्त ने नयी कविता को कर्म को लय पर अधिक बल दिया है। वे इसकी मानती हैं कि शब्द को लय पर प्राधान्य समय से विचार होता रहा है परन्तु कर्म को लय पर बहुत कम ध्यान दिया है। व्यक्ति को बुद्धि और मस्तिष्क के आधार पर मान लय में भिन्नता होती है। मान का स्थान हृदय है और कर्म का स्थान मस्तिष्क है। इस उद्देश में डा० गुप्त का मत है :

‘ भावात्मकता के कारण ही कर्म लया-न्वित होता है और कर्म लय की स्थिति उत्पन्न होती है। फिर भी

१- डॉ० धीरेन्द्र वर्मा- हिन्दो साहित्यकोश पृ० १६

२- डा० जगदीश गुप्त- नयी कविता : स्वल्प और समस्याः पृ० ७७

कुछ अन्तर अवश्य दिया जा सकता है, क्योंकि भाव को कल्पना विचार रहित अवस्था में भी जो जा सकता है, जबकि जय में भाव और विचार दोनों की संश्लेषता रहती है। विचारों से निर्मिता शुद्ध भावात्मक धरातल पर जहाँ तय को प्रतीति ही, वहाँ 'भाव-तय' को सत्ता मानो जाली अन्यथा उसे जय तय में ही समाविष्ट करना होगा।

उक्त विचारों से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि जय को तय व्यक्ति को बुद्धि और मस्तिष्क पर बाधार्थित है। अतः व्यक्ति को वैयक्तिकता ही जय को तय को ग्रहण करती है न कि सामूहिक बुद्धि आदि। जय को तय का प्रारम्भ ही व्यक्तिवादी धारणा पर बाधार्थित है। व्यक्ति स्वातन्त्र्य को माँगने व्यक्ति को जय को तय को और विशेष ध्यान देने पर बल दिया। जय को तय विरामादि विभिन्न विधियों से स्वतन्त्र रहता रहता है। ये विरामादि तय को स्पष्ट करते हैं न कि जय का जग ही। यद्यपि ये जय को तय जय को ही एक वाक्यविक संगति होती है।

इस प्रकार नयी कविता में मुख्य शब्द का प्रयोग ही जय को तय के प्रति प्रतिबद्धता प्राप्त होती है। डा० जगदीश गुप्त ने जय को तय पर अधिक बल दिया है। उन्होंने विभिन्न कविताओं के उदाहरण प्रस्तुत करके जय को तय को सत्ता को व्याख्यायित किया है। यद्यपि ये जय को तय कविता के आन्तरिक क्षेत्र में व्याप्त रहता है। जय को तय कविता में बाहर से दिखाई नहीं पड़ती है, परन्तु कविता

१- डॉ० एरिन्ड्र बर्मा- हिन्दो साहित्य कोश भाग १ पृ० ५४

२- डा० जगदीश गुप्त- नयी कविता : स्वल्प और समस्याएं पृ० १०

३- वही पृ० ७४-७५

के अन्दर अर्थ को लय व्याप्त रहते हैं। अर्थ को लय नये कविता में उन नये कवियों के वैयक्तिक जीवनानुभवों एवं बौद्धिक रचना-कौशल पर भी आधारित है। नये कविता में अर्थ को लय के कारण कविता का आन्तरिक संस्कार बहुत हुआ है। अर्थ को लय का सिद्धान्त पूर्ण रूप से व्यक्ति-स्वातंत्र्य की व्यक्तिवादो चिन्तन पद्धति पर आधारित है। इस प्रकार नये कविता में अर्थ को लय व्यक्ति जानना की मिल्प सम्बन्धी जीवन्त धारणा है।

(स) निष्कर्ष

आधुनिक हिन्दी साहित्य में स्वातंत्र्योत्तर काव्य का विशिष्ट महत्व है। इस युग की कविता में अनेक प्रयोग हुए हैं, परिचर्चन आये हैं, कई काव्यान्दोलनों का उद्गार चढ़ाव आया है तथा रचना मिल्प में नवीनता एवं आधुनिकता का नया विश्वास विकसित हुआ है। नये कविता परिस्थितियों को उद्भव है। यह प्रयोगवाद के झोढ़ से अन्धों की हिन्दी कविता के पूर्ववर्ती संस्कारों को त्याग कर नये मार्ग पर प्रगस्त हुई। भारतीय व्यक्ति सामन्तोय व्यवस्था को प्रश्नो में रखा हुआ प्रकट है। स्वराज्य प्राप्त के उपरान्त उसका मोह भंग एवं स्वयं भंग हुआ। "व्यक्ति" का मोह भंग वर्तमान सत्ताधारियों के विरोध में एवं वर्तमान जीवन मूल्यों के विरोध में उभर कर सामने आता है। इसी व्यक्ति के मन में आन्तरिक अन्त की वैचारिकता के मध्य निराशा, नकारात्मकता, समुच्च बोध एवं अतहाय की स्थिति विकसित होती है।

अब व्यक्ति आधुनिक जीवन से सम्पृक्त व्यक्तिवादी दर्शन के निष्ठ आने लगता है। व्यक्ति के मन में अस्तित्व-

बीध , दाण बीध, लघुत्व बीध, क्लृप् बीध, व्यथितनिष्ठा, विद्रोह, भोगवाद, क्लेशात्म , अनास्था , निराशा आदि के भाव विकसित होते हैं। अतः नयी कविता का व्यथित व्यथितत्व के विभिन्न व्यथितवादों स्तरों को जोता है। उसको वैयक्तिक केाना परम्परा मंजूर के रूप में विकसित हुई है।

नयी कविता में निराशा का जैन व्यथित-वादों स्तर पर हुआ है। व्यथित में निराशा, सामाजिक, आर्थिक, पर्यादा भोजन, युद्ध को आर्तिका, मानवगरीय सम्झना, सत्ता में व्यवस्था आदि के कारण व्यथित हुई है। व्यथित ने संघर्ष किया, वह विकसित हुआ और निराशा को और क्लृप्त हुआ। यही व्यथितवादों निम्न को अभिव्यक्ति नयी कविता में निराश्य को स्थिति है।

अस्तित्ववादों प्रवृत्तियाँ व्यथित के अन्तर्भूत में विविध रूपों में उपस्थित रही हैं। व्यथित को क्लेशात्म को पोढ़ा , टूटने का दुःख, मोड़ में खी जाने को आर्तिका खरों को मरा हुआ क्लेशा प्रज्ञात्मा मानना, समस्त विश्व को लेश क्लेशा मुद्रां उपभूतना , महामानव से भय, मोड़ का भय, क्लेशा, आत्म हत्या की प्रक्रिया, दुष्णात्मक वस्तुओं के प्रति रागात्मकता, बदलू मरो, उक्काई मरो , युद्ध जनित भयंकर स्थितियाँ, विरंगलियाँ एवं क्लेशाव के जीवन आदि से उसका हृदय विचलित है। नया कवि स्वना तनावग्रस्त एवं संघर्ष रह है कि उसके दैनिक जीवन को क्रियारं भी आश्चर्य के तैवर तथा तनाव को मुद्रां प्रस्तुत करता है। क्लेशा सड़कें, मोड़ मरो सड़कें, पराकाष्ठा, टूटे- फूटे

मल्लिकार्जुन, वैश्याकी के गस्ति की, दाकिवहीन जीवन, अनिर्णय की स्थिति, अस्तित्व के प्रति चिन्ता, इतिहास एवं संस्कृति के पतन से अनिश्चय एवं त्रासका मन में बैठ जाना आदि से नयी कविता का कवि बन्ना हुआ है। नयी कविता में अस्तित्ववादो चिन्तन का आधार व्यक्ति है। व्यक्ति अनुभव करता है कि वह विकृत संस्कृतियों की उपज है। वह प्रतिपाद्य मृत्यु की निकट से गुजरते हुए देखता है। व्यक्तिवादो धारणा के अनुसार व्यक्ति आत्म केन्द्रित हो गया है, अब उसे पीछे नरो छुड़के निर्णय लगता है। नयी कविता में अस्तित्ववाद का व्यापक सफलता प्राप्त हुआ है। इन कविताओं में व्यक्तिवादो चेतना को धारा प्रवाहित होती हुई दृष्टिगोचर होती है।

समु मानव की प्रतिष्ठा के केन्द्र में व्यक्ति चेतना एवं वैयक्तिक दाकिउ को विचार भूमि उर्वरता का कार्य करते रहे हैं। व्यक्ति चित, व्यक्ति चिन्ता, वैयक्तिकता एवं व्यक्ति स्वातंत्र्य को भावना समु मानव की निरन्तर प्रेरित करते रहे हैं। नयी कविता का व्यक्ति साधारण, आम, समु एवं दलित व्यक्ति है जो समाज, वर्ग एवं सत्ता से दूटा हुआ, दूटा हुआ जमा बिसरा हुआ पीना व्यक्ति है। नयी कविता के समु मानव की संस्कार विरोधी, परम्परा भङ्ग, समाज विरोधी एवं विरोधी एवं व्यवस्था के प्रति आक्रोश को मुख में व्यक्त किया गया है। समाज विरोधी होने के कारण वह व्यक्तिवादो हो गया है। नयी कविता का समु मानव अपनी सत्त्व की तोड़ने की प्रक्रिया में है। समु मानव नयी कविता को विशिष्ट उपलब्धि है जो कि व्यक्तिवादो चिन्तन पर आधारित नये व्यक्ति को गरिमा के प्रतिपाद्यक है।

नयी कविता के कवि को जानानुमति, पाण-

बोध, ज्ञान का महत्व, आदि का वैयक्तिकता के माध्यम से व्यक्तित्ववादो
 ज्ञान का सफल जीवन हुआ है। नयी कविता का जहाँ कुछ स्थानों पर
 'ईश्वरत्व' एवं विराट् को और उत्सुक हुआ है। समग्र रूप से नयी कविता
 में वहम् वैयक्तिकता के आधार पर विकसित हुआ है। नयी कविता में
 आत्यंतिक वैयक्तिकता ज्ञेतापन, ज्ञनबोधन को और मृदु गयी है जो कि
 व्यक्तित्ववादो चिन्तन पर आधारित है।

नयी कविता विद्रोह को व्यक्तित्ववादो
 मुक्ति पर स्थिर है। व्यक्ति का विद्रोह धर्म, समाज, संस्था आदि
 के प्रति व्यक्तित्ववादो ज्ञान को नूतन रूप में प्रस्तुत करता है। नयी कविता
 में स्पष्ट स्वपरक भोगवाद अधिक है जो कि वैयक्तिकता से सम्पृक्त है। नयी
 कविता में भोगवाद व्यक्तित्ववादो चिन्तन से प्रभावित रहा है। नयी कविता
 में ज्ञनबोधन एवं ज्ञेतापन का चिह्न व्यक्ति केन्द्रित ज्ञान आत्मकेन्द्रित
 भावना पर टिका हुआ है। नयी कविता में ज्ञेतापन, ज्ञनबोधन एवं
 ज्ञानाव को प्रवृत्तियाँ व्यक्तित्ववादो चिन्तन को देन है।

नयी कविता का पोड़ा बोध व्यक्तित्ववादो
 ज्ञान से प्रेरणा प्राप्त करता है। ज्ञान से स्थापित हुआ है। व्यक्ति समग्र
 पोड़ा और दर्द को स्थापित करता है। उसको दर्द सहने को सामान्य मानसिक
 और ज्ञेतापन है। नये कवि को वैयक्तिक अनुभूतियाँ इस पोड़ा को अपनी
 तरह से व्यक्त करती हैं। नयी कविता का व्यक्ति सामाजिक, आर्थिक
 विषयमयताओं से बंधा आत्म केन्द्रित हो गया है जो कि व्यक्तित्ववाद को
 प्रवृत्ति है।

कविता व्यक्ति को वैयक्तिक देन है। कविता

का केन्द्र व्यक्ति का हृदय माना जाता रहा है। परन्तु नयी कविता में केन्द्र मस्तिष्क माना जाता है। यथार्थ में, नयी कविता व्यक्ति को बाँटि-
का का परिणय देती है। सन् १० के उपरान्त कविता में क्रान्तिकारी
परिवर्तन हुए हैं। नयी कविता में निराशा नास्तिकता, व्यंतीक, अति-
कता, जाह्नवी, व्यस्यस्था, विष्टन, मय, ध्वज, कृष्ण, अनिष्ट
आदि का स्थापित विविध प्रकार से हुआ है। नयी कविता का कवि अन्त
सारी विवेकशक्तियों को भोगता है और उनको अभिव्यक्ति प्रदान करता है।
नयी कविता का व्यक्ति लैडि, जारज, लघु, बौना तथा गर्म से धक्का
देकर निकाला हुआ है। वह समाज को छाने होते हुए भी समाज और
व्यवस्था से उपेक्षित जीवन जी रहा है। इस कारण व्यक्ति में व्यंतीक
एवं संघर्ष का प्रवृत्तियाँ विकसित हुई हैं।

नयी कविता की अनुभूतियाँ व्यक्ति की
वैयक्तिकता पर आधारित हैं। व्यक्ति ने ईमानदारी से अनुभूतियों को
फनाया है, और व्यक्त किया है। नयी कविता की विचारधारा विनाश
है- वैयक्तिक दायित्व के साथ सामाजिक दायित्व के प्रति भी ये कवि
तत्पर हैं। परन्तु निराशा, नकार, परम्परामुख, अस्तित्व बोध, लघुत्व
बोध, क्षण बोध, आत्यंतिक वैयक्तिकता, अलगाव, भोगवाद, अस्वास्थ्य,
अनास्था, कृष्ण तथा विद्रोह के नये उद्भावनाओं ने नयी कविता में
व्यक्तिवादो विन्तन की विराट् फलक प्रदान किया है। नयी कविता
नकार एवं निषेध से उत्पन्न हुई है। नयी कविता नये व्यक्ति की प्रतिष्ठा
में रह है। व्यक्ति की प्रतिष्ठा, ही नयी कविता की व्यक्तिवादो जेतना
के निकट ला देती है। नयी कविता वैयक्तिक जेतना की जोड़ना अभिव्यक्ति
है। अतः नयी कविता व्यक्तिवाद के आध्यात्मिक विकास की मुष्किल
निर्माता है।

अष्ट अध्याय

नवगीत : व्यक्तिवादो प्रवृत्तिर्वा

चतुर्थ अध्याय

नवगोल : व्यक्तिवादो प्रवृत्तियाँ

नवगोल को विकासवात्मक रूपरेखा के तदर्थ

में चतुर्थ अध्याय में लिखा जा चुका है। आलोच्य शोध-प्रबन्ध की अवधि को सीमा सन् १९७० ई० तक है। परन्तु नवगोल के सन्दर्भ में सन् १९७० ई० के बाद के कुछ तथ्यों की जहाँ विषय को स्पष्ट करने के लिए आवश्यक है। इसका प्रमुख कारण यह है कि सन् १९६० के उपरान्त हिन्दो काज में मोह भंग का प्रथम दौर समाप्त हो जाता है तथा दूसरा दौर सन् ७० तक समाप्त होता है। कार्या बोध और सामयिक विवेकतियों के कारण सन् ७० के उपरान्त मोह भंग की स्थिति उभर कर सामने आती है। यह मोह भंग मध्यम के साथ साथ सम्पूर्ण भारतीय समाज में व्याप्त हो जाता है। सन् ७० के उपरान्त मोह भंग की प्रक्रिया भारतीय समाज में अधिक तेजी से फैलती है। व्यक्ति इस मोह भंग से प्रत्यक्ष रूप से जीवित होता जाता है। वह अपने गीतों में कार्या जीवन, व्यक्ति के आन्तरिक संघर्ष तथा जीवन मूल्यों के विघटन को प्रस्तुत करता है। नवगोल ने व्यक्ति तथा समाज के विराट् जीवन को विविध क्रिया-प्रक्रिया एवं अनुभूतियों को स्थापित किया है।

नवगोल के प्रारम्भिक दौर में प्रकृति-चित्रण

को नगण्य हो है। प्रणय एवं रोमांस की अनुभूतियों की वैयक्तिक रूप

में प्रस्तुत करने का नवगोत ने कार्य किया। परन्तु परम्परागत विषयों से अटकर सन् ७० के उपरान्त नये विषयों को नवगोतकार ने ग्रहण किया तथा नये परिस्थितियों के ताजा - टटके नवगोत सिले। व्यक्ति को टूटन - छूटन नगरीय जीवन को विप्लवावस्था में नवगोतकार को अभिभूत किया। वह कार्य जीवन की ओर प्रेरित हुआ। इस कारण सन् ७० के उपरान्त नवगोत में व्यक्तिवाद विद्रोह एवं आक्रोश के स्वर लेकर व्यवहारित हुआ है।

(ब) नये रोमानिक्स बनाम नया व्यक्तिवाद

हमारे देश में गीत प्रेमपरक भावनाओं की व्यक्ति-व्यक्ति का माध्यम रहा है। गीत का मुख्य विषय व्यक्ति, विनय एवं रागात्मक भावों को वास्तव निष्ठ आत्माभिर्व्यञ्जना है। गीत पर प्रेम तथा 'रोमान्स' छाया रहा है। प्रेम तथा रोमानिक्स ने गीत को नारीय के विविध संस्पर्श एवं सौन्दर्य-बोध के अंशों ने मोहावृत्ति में बंधित किया है। 'नवगोत' में प्रेम-विह्वल को वैयक्तिक अनुभूतियों ने जगमगा नहीं है। आयावादी गीतों में रोमानिक्स के विविध पक्ष उजागर हुए हैं। प्रणयानुभूति और सौन्दर्यानुभूति की प्रकृति के माध्यम से आयावादी गीतों में व्यञ्जित हुआ है। आयावादी गीत प्रेम, सौन्दर्य के, दर्शन एवं प्रकृति के वाक्यी स्वप्निल विश्व को रचना करती हैं जबकि नवगोत भीनों हुए कार्य अनुभूतियों के व्यक्त निष्ठ हैं। डा० विनीत गोदी वषी ग्रंथ 'आयावादीतर हिन्दी प्रगति' के एक उपखण्ड में इस पर विचार करते हुए लिखी है :

“ शायवादी प्रीति को भावभूमि सीमित है- प्रणय, लोदर, प्रकृति तथा दर्शन । इन्हीं के अंद- गिर शायवादी प्रीति घुमी है, पर नवगीत में विषय वैविध्य है। दम तोड़ती शायवादी मोहक रंगों से नाराज जीवन और हृदय सम्बन्ध के विर नवगीत में प्राप्त हैं। उसमें सोनी हुई, पीली हुई चिन्दगी के चित्र हैं। वह कोरे हमानी शब्दों की हादिक जमाव नहीं है, पर उसमें महानगर का संघर्ष तथा बोधो गिक संकृति के विविध पक्षों का लेवा जोला भी है। ”

एक प्रकार शायवादी गीत और नवगीत ~~का अंतर~~ को रोमानियत भिन्न है। शायवाद को रोमानियत रहस्यात्मक अशोन्ध्रिय तथा क्लौकिक के अन्तर्गत स्थापित हुई है। शायवादी गीत श्लोकात्मकता, साक्षात्पिक्तता के शिल्प विधान में फँसो सा प्रस्तुत दिया जाता रहा है। नवगीतकार प्रणयानुभूतियों को रहस्यात्मकता के आवरण में नहीं ढिपाता । वह सीधे, सरल ढंग से प्रस्तुत करता है। अपनी प्रेमा-नुभूति को गोपाय नहीं बनाता । नये रोमानियत अनुभूति को ताजगी तथा शिल्पगत नवीनता के कारण नवगीत में विशेष रूप से उभर कर सामने आया है।

नवगीत में नये रोमानियत व्यक्ति को वैयक्तिक प्रणयानुभूति के रूप में स्थापित हुई है। नये कविता और नव गीत का व्यक्ति सन् ६०-६२ के उपरान्त मोह नंग की स्थिति को भोगता है। उसे यथार्थ का करारा फुटका लगा है, उसके मोठे स्वप्न- प्रेम, प्रकृति कल्पना आदि बिखर गये हैं। वह नगर बोध, यांत्रिकता, औद्योगिकता

१- डा० विनीत गोदरे- शायवादीतर हिन्दो प्रीति पृ० १४१

२- डा० श्यामसुन्दर घोष- नया गीत : समय प्रवाह और यथार्थ -

सं० दिनेश सक्सेना दिनेशायन गीत २ पृ० २५

आदि के ऊँचकर गीत को बीर मुहता है। वह प्रणय को अनुभूतियों एवं रागात्मकता को संकट ग्रस्त देखता है। उसे हर है कही गीत, रेखा , रागात्मकता एवं प्रणयानुभूतियों का कुल हो समाप्त न हो जाये। इस-
 सिद्ध नवगीत के प्रति गीतकार को यथार्थ व्यक्तिगत जीवन जगत के विविध
 चित्र उठने लगे। नवगीत को अनुभूतियाँ वैयक्तिकता के साथ सामाजिक
 जीवन के निकट मोड़ती जा सकती हैं।

नवगीत को नयी रोमानियक की दो भागों
 में विभाजित किया जा सकता है। सन् १६७० ई० तक के नवगीतों में चित्रित
 रोमानियक पर आयावादी गीतों की वैयक्तिकता का प्रभाव अधिक रहा
 है। सन् १६७० ई० से सन् १६८० ई० तक के नवगीतों में रोमानियक को
 ताजगी तथा प्रेमानुभूति व्यक्तिनिष्ठा के साथ सामाजिक दायित्व की
 भावभूमि के रूप में वृद्धि हुई है।

नवगीतों में चित्रित रोमानियक व्यक्ति को
 वैयक्तिकता को अनुभूति है जो परिवार, मुहता, फ़ौस तथा कंधे, नगर
 को विविध स्थितियों का निष्पणकरण में सक्षम है। नवगीत का व्यक्ति
 समाज के संघर्ष एवं व्याकुल है, वह प्रेम के ऐकान्तिक दाणों को भोगने
 में डरता है। स्व० भूय प्रताप सिंह का गीतार्थ प्रस्तुत है :

“कब न मिलूँगे तुमसे जाने,
 क्यों हँसते हैं लोग
 देख हमारा मिलना होती पखाते नाराज़
 नहीं जानते , क्या है ?

उनको नाराजो का राज
 फलते तो वे कभी नहीं
 कुछ भी वे सेवा करते
 जाने क्यों जब देल तुम्हारी शायी भी वे जलते
 घर बाहर सखियाँ मुझकी मारा करते तानें
 कहती ऐसी बातें जो कहीं न कहने योग्य । १

यह गीत सन् १९२९ में लिखा गया है। इसमें
 रीतिकालीन और शायीवादी 'रोमान्स' के पलायन तथा नवी एन-बोध
 की ग्रहण करी की संकेत है। सामाजिक दायित्व की प्रेमपरक स्थिति वैय-
 धितक प्रणय के हाव भावों के तिर कठोर मह भूमि बन गई है। नवगीत
 ने नयी रोमानियत के प्रणय चित्रों की विविध रूपों में उल्लास है।

वास्तविक जीवन इतना यांत्रिक हो गया है
 कि व्यक्तियों की प्रणय-सम्बन्धी बातों की सोचने की तथा प्रेम के नाम
 पर नाराजो का समय नहीं है। ऐतिहासिक प्रेमपरक स्थिति पर लिखी
 हुए नवगीत की जीवन के निकट पाते हैं- 'आज रचना में हर कहीं
 जिन्दगी का आग्रह होता है। नवगीत इसके अलग नहीं है। ऐसे में एक कवि
 अपनी प्रेमिका के नाम कविताएँ लिखी हुए बढ़ी सहजता से उसका नाम
 लेता है। उसकी आँखों का मोलार्थ तक माफी से बाध नहीं आता। और
 नवगीतकार प्रेमिका पर लिखी हुए गुल मोहर और पलायन देखा है। वादवी
 बल्लो यात्रा में हलनो तेजो से भाग रहा है कि वह क्लिष्ट देखकर हो

मौसम के फूलों का चितना बिकला है। ऐसेमें प्यार का मनोनीकरण भी हो सकता है, गुल मोहर और फलाश का प्रश्न हो कहीं उठाई।^१ इसी कारण श्री बोरिन्द्र मिश्र को 'सहज इच्छा' है कि उन्हें हिमशिखर का प्यार बार बार प्राप्त हो :

रगि की धूप और लवि की शाम की
किसने निजोद्ग कर अबोध रंग डाला है
ऐसे में कुटिया की आकृति का रंग फलत
शायद मुझका कर ये कहने हो वाला है
सागर के तट पर घट्टान मिलि ना मिलि
लहरों की लारों बौतार मिलि बार-बार।^२

नवगोश को यह रोमानियस प्रकृति-चित्रण के कहाने प्रेम को गोप्य रिश्तियों की सहज रूप में व्यक्त करता है। देवेन्द्र कुमार का एक दृश्य प्रार्थनिक है :

सिलो थो, फर गयो बेला ।
तुम्हारे प्यार के पावों पड़ो
जब तर गयो बेला ।

७ ०

हवा का, लवि कर चीखट बला बाना
रोलनों का
कीरे में फफकना
फूट कर कहना

१- शैलेश वैदित- नवगोश : रास्ताधर से है- संवत्समीय साहित्य -जुल-२३

पृ० २२-२२

२- बोरिन्द्र मिश्र - अमिराम - जल मधुसूतो पृ० ७३

पड़ा रहना, बिता जाना
 बताता हूँ कि किन मजदूरियों में-
 सर गयो बेता
 कितो गो, सर गयो बेता । १

रोमानिक कोर्ट भी तरबोर उस दृश्य
 में व्यापित हुई है। नवगीत का रोमांच अनुभूति को सहज अभिव्यक्ति के
 रूप में व्यक्त होता है। अतः जो रामसिंह कितो के कद्वे हुए अमाल को
 अनुभूति को कैसे उठाती है। एक वंश प्रस्तुत है :

हवा निहकियों के पानी पर किते गन्ध बहुत को
 रोशनदान प्ट रहे चारे बंद दिनों के गुलदस्तों पर
 फाँ जमो है धूल को
 बिस्तर पर सितवट, सितवटी पर सिगरेट को
 हाँ
 हाथ उठाऊँ कद्वे फलते ठप्पे गर्ह है- दोठ कितो के
 नाम कद्वे अमाल पर । २

नवगीतकार वैयक्तिक प्रेम को परिवर्णित
 प्रतिबद्धता के स्थित मानता है। वह वास्तविक के वातावरण को भी
 अपनी अनुभूतियों में जोता है। जैसे वह गाँव, नगर, कस्बे और राजसिंह
 वंश के सौन्दर्य के अभिप्राय हो उठा हो। नर्म के नवगीतों में व्यक्तित्वता

१- डॉ० बन्धुदेव सिंह- पॉस जीह बाँसुरी पृ० १३७

२- वही पृ० १४०

के जिन के साथ रहे- रोमांस को नूतन स्मृति को अभिव्यक्ति दें :

‘ सतरंगी नोलो केसरी- लुटे बन्ध

किसी बांध रहे ?

ठार- ठार सिरों के हारिल

लै लै मन मिरणा , भेद उत्तम रहे

कजरारि लैबन दो

बध- उगरी घुंघट से हिर गये

मेरा मन धर गये । २

नवगीत में नगर- शहर, कस्बे, गाँव आदि के किराँ को भर मार है। नवगीतकार सभी तरह के जीवन को स्थापित करना चाहता है। फातनगर तथा दफ्तरी बिन्दुगो ने नवगीतकार की तोह दिया है उसका व्यक्त तथा वह चाहत है वह व्यस्तता में रोमानियत के दाणों को जोता है। मणि मधुकर जब दफ्तार से लौटते हैं कंसो निगति होती है :

‘ फाझली में बन्द करी दिन

लौटता हूँ जब तुम्हारे पाठ

प्यार से अनजान रहता हूँ

बद का नामपाश

नस नस

मरोड़ देता है

बोलेते हैं सारा मैं

धिक्-हुक् गलत सही बाँकट
 पराजित
 उपेक्षात व्यक्तित्व
 की मजूका
 समुन्दर से
 दूर क्यों जा पड़े
 क्या कहें ते पिया से, फन
 लौटता हूँ जब तुझारी पास
 कुलुमा बेजान रहता हूँ । १

नवगोतकार पास के गुजरते हुए टूटों को
 जायाजु बुनता है परन्तु उनकी देखी को विषयि में नहीं है, क्योंकि वह
 भी लौट बन गया है।

व्याख्या है कि नवगोत में नयी रोमानिया
 की प्रकार से चित्रित हुई है- १ वी प्रकृति के माध्यम से तथा दूसरी
 वास्तविक जीवन- बीध से । प्रथम प्रकार की रोमानिया में कल्पना,
 सुहृदारीता, सहजता तथा वैयक्तिकता का समावेश प्राप्त होता है।
 वास्तविक जीवन बीध से उत्पन्न प्रणयानुभूति यथार्थ जिन्गी को मीठी
 हुई अभिव्यक्ति है। देवेन्द्र कुमार शर्मा 'जिनवादी गीत' : कुछ प्रीतियाँ
 तेरे में छपर निहार करती हैं- जिस तरह रोमानिया का गलत कार्य लेकर
 बीध को एक ठोरी पीढ़ी फूल पत्तियाँ, नदी भरनी, तारी कीर गुलाबो

१- ३० दिनेश सक्सेना दिनेशायन गीत -२ पृ० ३१-३२

२- वही पृ० ३२

होठों में सीई रहो वैसे ही जीवन की विविधता और उसकी सम्पन्नता-
सहस्र शब्दों में वास्तविक कार्यों की अनुभूति और कार्यों की वास्तविक
अनुभूति कटकर जैसे जैसे जनवादी गीत विचारधारा मजबूत विचारधारा के
प्रदीपक होती जाएंगे, वैसे धीरे धीरे नयी दिशा की आवश्यकता महसूस
की जाएगी ।^१

सन् १९७० ई० तक के गीतों में वैयक्तिकता
से विभक्त प्रकृतिपरक रोमानियस के ज़िद प्राप्त होती हैं। गीत-२ का गीत-
कार सामाजिक जेतना की वास्तविकता करने में डरता है क्योंकि उसके ' लगे
हुए फूलों के स्वप्न बिखर जाएंगे ' । इसीलिए वह वा से कहता है -
' बहना । धीरे बह ' । ऐसा प्रतीत होता है कि गीतकार नारी -
सौन्दर्य के प्रति समर्पित है, उसकी अत्यन्त गत अनुभूति ' बस- बस
होकर मैं ,

कबल तुम्हें निहारूँ

तुम पर रोझूँ ।^२

वह अपनी प्रणय की आयावादी प्रेम तथा उत्तर आयावादी प्रेम की
अत्यन्तवादी सोभा में बंधा रहना चाहता है।

रमिता रंजक के नवगीत प्रणय तथा सौन्दर्य
के अनुभवजन्य परिणाम को उपलब्ध है। आगे के नवगीतों में रोमानियस में

१- सौ० आग्नेय गीतित्व- कथा - १५ पृ० १२

२- गीत २ पृ० २८

३- वही पृ० २८

नयाफन तथा काम की ताज़गी प्राप्त होती है। आधुनिक बोध से सिक्त उनके नवगीतों में नारी का नूतन सौन्दर्य से अभिनीक किया है। कुछ नव-गीत के उदाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) सुबह तुम्हारे हो सुहाग की
साढ़ी में आयी
जाति जाति शाम तुम्हारे
ढंग से आमायी
सुधि को गंध मिली, फलफार के
दिन मधु मास हुए । १

(२) झुंके से कमलानग्न के पास
गंजने लगे मधुर कतुबन्ध
किनारे पर वा बैठे मौन
बधकड़ो हाँसी के सम्बन्ध
जम्पड़े मौसम के संकेत
बुझा होती दलकानि लगे । २

(३) अधराष्ट सौ गये झुंके दृग
कैसे करे पोर कवानो
कल जो प्यास गगन दूती यो
आज हो गयो पानो- पानो

१- रंग रंग- किरन के पास पृ० १३

२- वाणी पृ० १६

उपासक के भी, तब तब
 ईद फैलावार हो गयी । १

(४) कविता को
 बन गयी निम्नोड़ी
 फल पर को फलान तुम्हारी
 रुन्द चरोतो गहन देह को
 मनमोहनो पवित्र हो चित्त
 अन्तर उन्ने गंभीर के
 फल फल रोषण गया भाग्य मन
 भाषा यो जानो फलानो
 शैली यो बनवान तुम्हारी । २

नायिका के लोन्तरी का निष्ठा प्रायः

सभी कवि तथा गीतकारों ने किया है। ऐसा रस ने नायिका के लोन्तरी
 को उफानों के लगे टटकेभा के नृतन कलेवर प्रदान किया है। नारी-
 लोन्तरी को बहुमूल्य फलानों के संजोया है :

भाषिक उधर, नोतमो जति
 ये फलान बन
 मन पायल कर गयी तुम्हारी
 लोन्तरी चित्त
 चित्त चित्त - जो दिने
 मोतिया

१- ऐसा रस - चित्त के पवि पृ० २३

२- .. गीत विष्णु उतरा पृ० ३६

बैंगिया कसो- कसी
 रस नस मणि पन्वहं
 चुनरी
 लहरे नागिन सो
 कैंसे पाये प्राण बाँहरी
 ये बनमोल स्तन । १

नारो- सौन्दर्य और सौन्दर्य के नवगीत
 बहुतायत में प्राप्त होती हैं। रोमानियत को वायुनिक उदयों के साथ
 सांस्कृतिक जीवन में व्यापित करने में उनके नवगीतकार सदाय हैं- वीरेन्द्र
 सिंह, नरेश, जीम प्रभाकर, राजेन्द्र प्रसाद सिंह, देवेन्द्र कुमार आदि।
 जीम प्रभाकर का एक रचना जैसे सांस्कृतिक जीवन को रोमानियत का
 चित्र समझता है :

कल हो फटना है जो
 देस तनिक रंगना रे
 सित तनिक चुनकी रे
 लिपा पुता रंगना रे ।
 ना ना रे बाहु ।
 तनिक देस ये पना ना- रे । २

जीम प्रभाकर का "रोमान्स" पारिवारिक जीवन के चित्र प्रस्तुत करता

१- रमण सिंह - किरन के पाँव पृ० २२

२- सी० चन्द्र देव सिंह- पाँच जोड़ बाँसुरी पृ० १३३

६। एक निदर्शन देख -

उठी सुहागिन
बाद ढल गया
सकाबो मेह ते धीलो का पत्ता
भालको देता है झुगो का पत्ता
सुनी सुहागिन
ज्यो ज्यो बाहर से कोई रूप निकल गया
चौका बाजन फी हुर है झुठे
पिंजरे में डोरामन बैठे रुठे
ज्यो सुहागिन
ज्यारो का गैदा सारे घर में बिखल गया
बाद ढल गया
उठी सुहागिन । १

जीवन में प्रेम के हाथ प्रायः खाली जाते रहते हैं। प्रेम का फल कब बाध से कोई फल नहीं ? लक्ष्म डोराम सिंह 'जनाम के नाम' खाने रोफ गये कि उसका नाम तक नहीं पूछ पाये-

रौज रौज बातों आतों हुई
बहुत मसो लगती हो हम मुफ
कहना चाहता लेकिन कह नहीं सका
हॉटो पर जपस्ति जगारों के कम्प
फन घर घर आते हैं दम्पती के मुकम्प

कतः नवगोत में प्रेम, प्रणय तथा रोमान्ति-
क नित्य की विविध रूप से व्यक्त किया गया है। नवगोत का व्यक्ति
वास्तविक जीवन तथा बौद्धिक जीवन के मध्य नयी रोमान्तिक के मध्य
गीतों को रचना कर रहा है। नवगोत ने प्रणय सम्बन्धी काव्य परम्पराओं
में भी प्रयोग किये हैं। नवगोत को रोमान्तिक व्यक्ति को वैयक्तिक निधि
है। कतः प्रायः सभी रोमान्तिक के नवगोतों में व्यक्तिवादो जीवन-दर्शन
का प्रभाव रहा है।

(ब) नया युग बोध : नया भावबोध

नया युग बोध का आशय वाधुनिक बोध से
है। वाधुनिकता का वागमन मार्लबर्ग में १६वीं के वागमन के साथ हुआ
था। परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त देश में वाधुनिकता को बाधों
से बाधियो। सन् १६५० ई० के उपरान्त वाधुनिकता क्योंकि नये युगबोध
के प्रति सज्जता दृष्टिगोचर होती है। वाधुनिकता सामयिक बोध के अर्थ
में ली जाती रही है। इसमें परम्परागत जीवन मूल्यों से विद्रोह कर नये
को स्थापना तथा प्राचीन जीवन-मूल्योंमें नया संस्कार करके ग्रहण करना
है।

नवगोतकार प्रयोगवाद तथा नयी कविता
को सोमा लक्ष्मीर बागे बढ़ता है। वह नये युग की, नयी जीवन पद्धति
की नयी वैचारिकता की अपने मन-मस्तिष्क में धारण करता है। इसके
नवगोत के रचना दार्ष्टान्त में युग बोध के साथ नूतन भावाभिव्यक्ति विक-
सित होती है। द्वितीय विश्व के उपरान्त प्रयोगवाद, नयी कविता ने

मुक्त हृदय को ग्रहण किया। इसमें गीत रचना के प्रति उपेक्षा का भाव दृष्टिगोचर हुआ। सन् १९५१ ई० के लगभग ऐसा प्रतीत हुआ कि गीत को प्रतिष्ठित विधा समान्य हो जायेगी परन्तु बिहार के राबेन्द्र प्रसाद सिंह के निरन्तर प्रयास से नवगीत प्रतिष्ठित हो सका है। उनके साथ अन्य नवगीतकारों का यात्रा-पथ प्रसरत हुआ है।

शायवादी गीत- काव्य सामयिक विषयों पर रचना करने में विवश रहा है। शायवादी गीत का रचना-तंत्र भी अटित रहा है। शायवादाय में कोमल कान्ता पदावली, संस्कृत गर्भित भाषा, अप्रस्तुतों को मोड़ सादाणिक्ता आदि के बाहुल्य ने कालोन्मय युग की परिवर्तित परिस्थितियाँ समाहित नहीं हो जा सकीं। यथार्थ में सन् ५० के उपरान्त 'अ्यक्ति' 'अ्यक्ति' नहीं रहा। वह पौराणिकों का पुतला बन गया। विश्व उसकी मुट्ठी में सिमट जाया। विज्ञान ने उसे शक्ति दी, वैचारिकता, नयी जीवन पद्धति नयी वैभूषणा, नये शहर-नगर, नये मित्र तथा नये शत्रु प्रदान किये।

नया भावबोध नवगीत में अनुभूति को ताजगी लेकर अवतरित हुआ, नवगीतकार को नयी अनुभूतियाँ यथार्थ के धरातल पर विकसित हुईं हैं। यहाँ गीतकार ह्यमानदारों से अनुभूतियों को जीने का प्रयास करता है। अन्य नवगीतकारों ने वास्तविक जीवन तथा जन-जातियों के लोकगीतों, फार्सियों तथा कबीलों की सांस्कृतिक मुद्राओं को विजय रूप से वक्षित किया है। दूसरी ओर निम्न-मध्यम के जीवन में उठती विभिन्न समस्याएँ, फर्षी तथा त्यौहारों आदि कीमतीभूमि में जोकर सजीव वस्त्र किया है। ग्राम तथा कस्बों के जीवन को मधु-

सौधों गन्ध तथा पारिवेशिक परिवर्तन को नये ढंग से प्रस्तुत किया गया है। निम्न मध्यम वर्ग का भाव बोध जीवनगत सञ्चाइयों से सम्बद्ध है। अनुभूति का तात्वात्मक नवगीत के भावबोध को वात्मा बन गया है। नगर- गाँव तथा कस्बों के विभिन्न वास्तविक जीवन को एको वसी अनुभूतियों को प्रेरणा प्रदान करती रही है।

नवगीत में नगर- बोध से उत्पन्न वर्ग संघर्ष मजदूरों को जीवनगत सञ्चाइयों, राजनीति का लोखतात्मक, वाफिस तथा बफसरों को बीकलेबाजों, कल्याणों, पञ्चकारों तथा दुकानदारों का जीवन वादि वापुनिक बोध का पर्याय है। निम्न वर्ग में उभरती हुई जागृकता, उच्च मध्यम वर्ग में मोहभंग की स्थिति जाति- बहिष्कारों के टकराते हुए वाङ्मय का वैविध्य, नगरों के साम्प्रदायिकता जातीय तनाव, व्यक्ति के वैयक्तिक तनाव बनकर वैश्वीकृत हुए हैं। नगरीय जीवन की व्यस्तता बाजारों जमक दपक , प्रचलित वाचरण, जीवन मूल्यों में दरार, वापसी सम्बन्धों में कलगाव, पारिवारिक टूटन , पारिवारिक तनाव , जाति- तियों में बिना गया जीवन, वाफिस, रातन को दुकान में उलझा व्यक्ति एक मात्र कृष्टा, संघास तथा जब में अकेला जीवनजीता है। इन ताजा अनुभूतियों को बिये हुए नवगीतकार ने यथार्थ चित्रों को प्रस्तुत किया है।

नवगीतकारों ने नयी अनुभूति को अपनी तरह से बिया है। इन ताजा अनुभूतियों को वैयक्तिकता के रूप में व्यक्त के योग्य गये जाणों को अभिव्यक्ति है। अब व्यक्ति की अनुभूतियाँ कितनी परिवर्तित हो गयी हैं। वास्तव्य रूप राहों अब फूस के नाम लेते हो दर्द

का अनुभव करते हैं। एक उदाहरण देखिए-

“यह मुझको क्या हुआ
जब मो में लेता हुनाम किसी फूल का
बिंधी हुई उंगली का दर्द उभर जाता है।” १

इन अनुभूतियों को जोते हुए हा. रयाय
सुन्दर गीत गीत भेज की विविध में भोगी हुई मनः विविध की प्रकट
करते हैं :

“नहीं लातिमा अब रही सफ़ के रंग में है हुए
वो सुनारं कर्तातक जिये रोज किसी बपावस हुए
पूरा कुहराई डको, का ठिठुरी प्रकर
सबि लेना कठिन हो गया है।” २

अनुभूति को समानता से नवगीतकार की
यागों विविध को और प्रेरित किया है। सम्पूर्णान्त सरस के नवगीत
का एक जीत देखिए-

“बेईमानो अपने से करी की करता हूँ
लेकिन अनुभूतियों के लिये बोध
वासी में सत्य उगलती देते हैं
वफावापन अपने में लेकर
कागज पर बहुत कुछ उगलता हूँ

१- सी० भूपेन्द्र कुमार लोहो गीत-२ पृ० ५६

२- वही पृ० ६४

ऐसा ही दिन मेरा मरता है

गुल मोहर करता है। १

अनुभूति को ईमानदारों नवगीतकार के जीवन को सन्नाहें है। बासस्वय राहो युगबोध से उत्पन्न नवगीतों में कलाकार को सन्नाहें देती है। उनका फल है :

“ ईशान्ति युग है हमारा, जूझ जव निरुत्तेगा, कभीतो मानवता के हाथ पिछा के बतिरिखत कुछ नहीं लग रहा है। वातावरण में बहुत गहरी छूटन है, उससे है : बरसा होने से फले जैसी होती है। जो वर्तमान को समग्र उपलब्ध प्रकृत, जगत्वा और बारीकाजी की विराटता को गहराई और व्यापकता के साथ अभिव्यक्त कर सके, वही कलाकार ईमानदार कहलायेगा।” उनके नव-गीत प्रयोगात्मकता के कारण नयाफा सिर हुए हैं। वे अनुभूतियों के तात्प्राप्त के कारण बारी है :

“ मैं न हुताने गया कभी गीतों को उनके पार
मे हो फा प्रकृति सबसे बारी मे पास।” ३

महेन्द्र तैर को अनुभूतियों भी नवगीत में तात्प्राप्त लेकर उभरो है। एक उदाहरण प्रस्तुत है :

“ खिदन जन्तार का जमा जमा फूट गया
क्यहीं से कभीला स्वर कीई फूट गया
लीण गन्धवाही ये शब्द किसी जाल के

१- मृत्याकिन - जुलाई- सितम्बर १९६६ पृ० ६८

२- बासस्वय राहो- मेरा स्व गुप्तारा दर्पण-स्वोकारीकित पृ० ७

३- वही पृ० १८

निमिया को हास के
फर फर फर फर करे । १

चन्द्रदेव सिंह के नवगीत जीवनगत सच्चाईयों
के चित्र प्रस्तुत करती हैं। बापी युग बोध को दिया है :

क्यों मन में
बाह्या-कजरी-चैता-विरहा के डेर हैं
क्यों धीरे आस पास
अगिनत अभिलाषों, अनपेक्षित शंकाओंके
लाह लाह धीरे हैं
रोपी मत, काटों के वन में कुह झूलबीर रोपी मत
बाधों मत, बाँजर के छूटे कुह फुल बीर
बाधों मत । २

वरिन्द्र मिश्र ने अनुभूति के ताजापन को
नये ढंग से प्रस्तुत किया है। मिश्र जी ने जीवन की भाँगा और देखा
तथा समझा है। इसी कारण उनके नवगीत जीवन की सच्चाई को
अपनी तरह से अभिव्यक्त करते हैं। कुछ निदर्शन प्रस्तुत हैं :

(१) नीर सदा कण्ठायो लिदिया मो नहको
मुझको क्यों नयो लगे यह तवा बुझ को
बाज किसी परिचय को गन्ध फिर मज्ज कर

१- श्री चन्द्रदेव सिंह - पानि जोड़ु बाँसरो पृ० ११४

२- वही पृ० ६४-६५

बार बार फेराती गीत के महल पर
 पुरब मोना बाज़ार परिलम्प में जाइ
 बम्बर को यात्रा पर पुरब का साधू
 बम्बर से दैत रहा मधुनियी मरको
 मुनको ती नयो लगे यह कवा सुख को । १

(२) यह हलफ़ुहरी को गीत नहीं
 परिनिः सा अपना गीत नहीं
 कुँ जीर- जीर हो है यह ती
 क्या भूम कवा, क्या दोफ़री
 हर मरुतु यही ठहरी- ठहरी
 बलती है ती दुनियादारी
 तुही अभिनय को तैयारी
 दिन रात जोर हो है यह ती । २

ठाकुर प्रसाद सिंह ने आदिवासीयों की
 अविवर्ण्य अनुभवों की ग्रहण करके मौलिक नवगीत के रूप में प्रस्तुत
 किया है। निदर्शन के लिए नवगीत का अंश देखिए-

“कौनो स्वर उमड़ उमड़ रही रहा
 मन उठ बली की हो रहा
 धोरन की गाँठ हलते ली, लेकिन
 गंधि केरा पर पिय हो रहा ।

१- चोरिन्द्र सिंह- अविराम चल मधुनियी पृ० २१

२- वही पृ० ४८

मन मेरा जोड़ रहा पाँचुरो
पाँच जोड़ बाँचुरो । १

रमल रिक की अनुभूतिया मोह मन तथा
उत्तेजन को वैयक्तिकता को जोड़े हुए हैं। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) जब तो लगता है हर दिन रदं का जनम दिन
हँसो फूल को सुभतो है जिस तरह बालभिन
पायल बत्तार का पूनाफन
हार जोते में बाँध के १ २

(२) 'भी गाल पर भी हँसतो
सिद्धको में बँठो जलबेलो
सौज रहा है जाने क्या क्या
छवा जेलो राम की
बहुते पकन के बाद मिली है ये पदियाँ आराम की । ३

नवगीत में अनुभूति कोलाजों फिलि फिलि
पुराने तथा वास्तव रूप से छटकर नये सुखबोध से उत्पन्न नूतन भाव बोध
के रूप व्यक्त हुए हैं। नवगीत में तात्प्राप्त को अभिव्यक्ति हो उसको
अस्मिता बन गयी है। स्त्रीकारण नवगीत का भाव बोध गाँव, नगर,
कस्बे और बाल्यिक जीवन को फाँकी प्रस्तुत करता है। नगर बोध निम्न-
मध्यमगीय जीवन का संसार है जहाँ नवगीतकार ने जिया है। बाधुनिको-
कारण के साथ औद्योगिकता, मशीनोकरण आदि के कारण व्यक्ति का

१- ली० चन्द्र देव सिंह - पाँच जोड़ बाँचुरो पृ० १३

२- रमल रिक - किरन के पाँच पृ० १६

३- बहो पृ० ४६

वस्तुमें संकात है। डा० श्यामसुन्दर घोष नगरबीध के संदर्भ में इस प्रकार अपनी विचार प्रस्तुत करते हैं :

“ गीतों में नगरबीध को अभिव्यक्ति की हो है- क्या यह नगरबीध भी यथार्थ के अद्वैत हुए तबाह का परिणाम नहीं है ? गाँवों को बेघरा शहरों पर जय व्यवस्था का बोझ अधिक जोड़ पड़ता है। पैदल और युद्ध से गाँव और शहर दोनों ही तबाह होते हैं, लेकिन तुलनात्मक दृष्टि देखा जाए तो शहर पहले तबाह होते हैं और अधिक तबाह होते हैं। और वे इस भाव को तुरन्त व्यक्त करते हैं, गाँव वालों को तरह चुप रहते नहीं । ”

सन् ६० के उपरान्त नये कवियों पर नगरबीध का हुतार-सा ज्वाले के गाँवों को भुलने लगे । नगरीतकार ने गाँव कस्बों के झिड़ों के साथ नगर बीध को अधिक अभिव्यक्ति हुई है। बाफिस से लोटने पर मणि मधुकर की विगति टूटोहुर, पराक्षित उपेक्षित व्यक्त इसी ही जातो है :

फाँटलों में बन्द करके दिन
लोटता हूँ जब तुम्हारे पास
प्यार से अनजान रहता हूँ
रुक पर्वत बोझ
कन्धी लोहदेता है
दर्द का नाम पास
नर नर

१- डॉ० मुपेन्द्र कुमार स्नेहो- गीत-२ डा० श्याम सुन्दर घोष का लेख
नया गीत : समय प्रवाह और यथार्थ पृ० २४-२५

मरीठ पैता है
 बोलती हैं लॉस में
 रिफ़ कूड़ गलत सही बाँकी
 पराजित
 उपेक्षा व्यक्तित्व
 जैसे महुआ
 समुन्दर से
 दूर क्यों जा पड़े
 क्या है ऐसे पिया से, मन
 लौटता हूँ जब तुम्हारी पास
 बुलबुला बेजान रहता हूँ । १

अब नवगीतकार सड़क पर गुजरते हुए ट्रक
 को बावज़ धुनता है परन्तु देख नहीं पाता है। कैसे विदम्बना है ?
 हरोज़ नादानों भी नगरीय जीवन के स्तब्ध हैं :

'सॉ- सॉ गुह
 उगता करता है धुँवाँ निमनियाँ
 क्या देखें घर- बाग़िन से
 जलो- जलो रहते हैं सड़कें
 कीलतार को
 क्या बगलें हल जागुन से । २

वीकार ठाकुर शहर की मोड़ के साथ जीवन

बोले हैं :

‘ व्यस्त शहर के फुटपाथों पर लड़े होकर
मेरे मोड़ की बाजू से निकल जाने दिया । ’ १

रमेश जिस फुटपाथ के जीवन पर दुःख
प्रकट करती है :

‘ उफ, कैसा कर्तहिन जीवन फुटपाथों का
मटमलो बातों में नर- नर कोण
उभर नहीं पाते फिर मो दृष्टिकोण
कौन यहाँ दार्क है कर्तहिनहाथों का । ’ २

बोरिन्द्र मिश्र ने महानगर का जीवन
जिया है वह राजधानी के जीवन के विविध रूप प्रस्तुत करती है :

(१) पार्केट में डाल कर तिजारा लो क्नाट स्लेस
झुंझा मोनी लो मन्थ
लेगा जेदनी बोक हाथों में गैद- ला
बाधेगा कितना बानन्द । ’ ३

(२) सतहो लामाजिस्ता के मेष भरे
उन बाय घरों का पाद नहीं हूँ मैं
पर टूटे नुल्लों के कोलाहल में

१- गीत- २ पृ० ३६

२- वही पृ० ६६

३- बोरिन्द्र मिश्र- अविराम बस मधुरीतो पृ० ६४

रह सब है दबि-माग्न नहीं हूँ मैं । १

(३) राजनगर के चौराहे पर
भटकी हुई उदासी मेरी

० ०

ऊँचे फाँसि बौने फाँस
पोते हैं योजना खाद के
एक जोड़ उठती कागज पर
उमरे हुए समाजवाद के
भ्रष्ट मुक्ति के सिंह द्वार पर
भटकी हुई उदासी मेरी । २

(४) कहीं नहीं होंगे ऐसे माया नगरो
दावारी भी कलौ एतनी गुप्तचरो
हंस जोश धुमते उत्सव के चरणों में
कण्ठ-कण्ठ में नाग फाँसि कुलासन को । ३

उमाकान्त मातवोय के नगरबीच की

विभिन्न स्थितियाँ देखिए-

(१) फाँड़े ल जाँगी, आदमी नहीं
रहलिर हमें रहेज लो, ममी सही । ४

१- बोरिन्द्र मि- अमिराम कल पूर्वकी पृ० ८१

२- वही पृ० ७६-८०

३- वही पृ० ७८

४- पानि जीड़ बहुरी पृ० १२६

(२) याद रहा महज नून-तैल
 तौर कुछ नहीं
 बफसर के सामने दलैल
 नित्य क्रम यहाँ
 खूब बसे, जहाँ ली गये
 ज्यों मिलन- विरह । १

रमेश रंजन के नवगोतों में नगरबीध के
 विविध कायाम प्राप्त होते हैं :

(१) सोधो कर तुम्हो कमर
 हाथ पाँव फैलाये
 लोढ़ी कुँसो
 मृत दिन को चिता जला
 दृष्टि सुमायी , लोढ़ी
 मातम सुर्खों । २

(२) जितने जाधो उमर काट दो
 स्वर उधर कैलियाँ चलाते
 गोल स्मारक को धारें हू
 उनके पाप, पुण्य हो जाते
 गढ़ते हैं कानून निराते
 ये लम्बे नाखूनों वाले

१- पाँच बईरूखे जोड़ बाँधुरी पृ० १२६

२- रमेश रंजन - गोल विहग पृ० ४७

देती लींठीं से करती हैं

बातें सदा विदेश की

यह कहान नगरी है और देश की । १

नगरबोध तथा शहरोद्धारण के विविध

चित्र नवगोत में उड़े गये हैं। नगर का जीवन, कार्यालय की व्यस्तता, सड़कों पर भाग दौड़ तथा विलेनतियों का फहाड़ आदि ने नवगोतकार की व्यक्तिवादों स्तर पर जीने के लिए विवश किया है। नगर बोध के कारण व्यक्ति बसहाय, खैला बौर बलगाव का जीवन जीने लगता है, इससे ऐसा प्रभाव होता है कि नवगोतकार वैयक्तिकता के निष्ठ है। उसकी व्यक्तिनिष्ठा संदित जहाँ की प्रेरणा देती रहती है।

नगरबोध आज के जीवन में प्रभाववाद तथा

वापुनिकोद्धारण के आन्तरिक विरोध को उपज है। वीथीगोद्धारण के कारण मिल मालिक तथा मजदूरों का संघर्ष, नगरिय जीवन को भाग दौड़ तथा रोमानो विचारों से सम्पुनत स्वदेश प्रेम को नूतन भाव द्वारा आज के नवगोत में एक-बस गई । नवगोत में नगरबोध तत्कालीन मनो-दशा को व्यक्त करने का आधुनिक प्रयास है।

आज नवगोत में नगरबोध मीठुना

मनोदशा को व्यक्तिया और प्रभाववादों वापुनिकोद्धारण को नोयों के अन्तर्विरोधी अनुभव स्तर पर स्वाकृत हुआ । इसीलिए उतनी पूर्वकथित विचारों के स्थान पर आरों विवशताओं के धरे में जो रहे परिवारों में रहो- बला मानवोय बहकता मूर्तों हुई, वर्ग- बहियों के अनिवार

फर्क के बावजूद, नियन्त्रित मातृकों के विपरीत उपम, व्यवसाय और भ्रम से जोषित लोगों की सहजोषिता व्यक्त हुई और रोमानी के विवर्ती में, जाधुनिकीकरण के अनुकूल से टकराते हुए तारे स्वदेशी-रूपन् (इन्डिजिनस) संस्कार सम्प्रेषित हुए । ”

इस प्रकार नवगोत्री में नगर-बोध के विविध तैवर और व्यस्त सुझावों का संकन प्राप्त होता है। जहाँ व्यक्तित्व की टूटन, छूटन और संक्रास के स्वल्प की ' उद्घाटित ' किया गया है। अतः नवगोत्र नगरबोध को सम्पूर्ण रूप से अपने में पचाये हुए है। इन नव गोत्री में महानगरीय जीवन के उत्पन्न कृष्ठा, संक्रास, ऊब, पराजय बोध, मोहभंग, संहित व्यक्तित्व आदि के विविध किस्मों को व्यक्त किया गया है। जहाँ ताजा अनुभवों को बहुपूर्व ढंग से प्रस्तुत किया गया है। नवगोत्रकार व्यक्तित्व के जीवन की विषम परिस्थितियों को जो रहा है। व्यक्तित्व के अन्तर्गत में वैयक्तिकता, व्यक्तित्व विच्छा एवं व्यक्तित्व स्वातंत्र्य के पाव प्राप्त होते हैं। अतः नवगोत्रकार नगरबोध के जीवन की व्यक्तित्ववादो चिन्तन पर जो रहा है।

(४) स्काकीपन, नवनवोपन तथा आरुत

नगरबोध और नास्तोय जीवन में पूजावादी शक्तियों के एक छत्र साम्राज्य के कारण व्यक्तित्व व्यस्त एवं अपने को संहित अनुभव करते लगा । महानगरीय संस्कृति और जाधुनिकीकरण के कारण

१- डॉ० वीरेन्द्र मि- उज्जयिन्त्रा - प्रौढांक - राजेन्द्र प्रसादसिंह का

लेख- नवगोत्र : नवनवोपन की दिशा में पृ० ६८

व्यक्ति की अनुभूतियों में अन्तर लाया। सन् ६० के उपरान्त नगराधीन के निम्न अधिक प्राप्त हो रहे हैं, नवगोतकार प्रकृति की गुलामीहरी छाया तथा कमलताश के फूलों के गुच्छों के सौन्दर्य से ऊँकर लक्ष्मी जीवन जोने पर विश्र हो गया।

एक संक्रमण युग में स्थित जीवन मूल्य तथा परिस्थिति होती हुई परिस्थितियों के अन्तर्मन्थन तथा भीगे जा रहे जीवन की प्रस्तुत करने के लिए व्यक्ति को लक्ष्मी का महत्व है। व्यक्ति की सामाजिक विघटन ने निराशा, क्षुब्धता, पराजय, संशय, पोड़ा, कर्तव्यभाव क्भाव आदि विदुब्ध कर दिया। इसलिए नवगोतकार अपने युग के साथ समानदारों से जुड़ा रहा है।

स्पष्ट था कि टूटी मूल्यों व बदलती परिस्थितियों में क्यों संक्रमण उत्पन्न अन्तर्मन्थन व प्रतिपादन का सार्व-त्राण जानकार है। भीगे जा रहे जीवन के उद्गम, अन्तर्मन्थन तथा उत्पन्न सम्मान्य ही लक्ष्मी लक्ष्मी हैं। निजार्थों को यह सम्मान्यता क्यों जाना-तित नहीं प्रत्युत, लक्ष्मी के रूप में सामाजिक विघटन तथा तज्जनिता निराशा, क्षुब्धता, संशय, पराजय, क्भाव और पोड़ा का प्रतिकलन है। कर्तव्य एवं स्थिति की सम्प्रेषण में नवगोतकार समय के साथ समानदार है।

नवगोतकार के जीवन में स्वप्न भग, संसार और ज्ञान की स्थिति भी प्राप्त होती है। उनके नवगोतों में स्थितता,

१- सुना प्रताप जीन - नवगोत गोष्ठों से मागीर्य भाग्य ,

कविता -६ पृ० ६६-७०

जनापन, ऊब, थकान, जैलापन और कभी कभी उल्टास के चरमों पर भी प्राप्त होते हैं। वस्तुतः नवगोतकार नगरीय जीवन को सम्यक्दर्शन की नींव रहा है। भारत प्रसाद सागर 'सही सीफ़ी की तलाश : नयी कविता बनाम नवगोत' लेख में सीफ़ी की तथा बार्तक की विधिति के बारे में यह प्रकट किये हैं :

“ वाय का मानव अति आधुनिक वातावरण में फलकर प्रत्येक दम घोट परिस्थितियों में जिन्दगी-बिना से व्रस्त है। कच्चा, गति और गति को गहो- गहो में मानवता सिक्तो नजर आती है। स्वयं भी, और बार्तक के लेखन उत्पन्न होता है। मानव जगत् धीरे से बराबर पिछ रहा है।---- नवगोत इसी टूटन की पूर्णता- राहत प्रदान करता है। ”

एक प्रकार नवगोतकार आधुनिक जीवन से व्रस्त होकर जैलापन और जन्मजन्त का जीवन जीने को और विवक्त हुआ। नवगोत में जैलापन और जनार्थ के किन्हीं कविता तथा नयी कविता के जन्म का व्यापक-दीर्घा जैले नहीं है। योही नवगोतकार कुछ समय के लिए जैलापन जगत् ऊब जन्म करता है, और फिर जगत् गति में रह- रोमान तथा मिठाव उत्पन्न करने का प्रयास करता है। पाणिनर तिगारी के विचार स्तुत्यनीय हैं :

“ हम जीवन में और विवृष्टता और जनार्थ

*- सं० नमिनेता - जन्ताराल - हा- हरदयाल का 'नया गीत'

लेख पृ० १५

२- वही पृ० २५-२६

की स्वीकार करती हूँ उनसे कुछ ही है, मगर मैं उसे अभिप्रेषित दे रही हूँ और दूसरी तरफ हम नवगोत्र तिल रहि हैं।^१

जतः नवगोत्रकार समग्र समाधी को व्यक्त करने में रहा है। यह स्तना क्लेश और अजनबी नहीं है कि अपने लक्ष्य तथा अस्मिता की सी है, उसकी अनास्था अस्थायी तथा विरथाप की ओरों पर टिकी है। इसलिए सन् १९७० ई० तक नवगोत्रकार स्तना आश्रित एवं अनाव प्रवृत्त नहीं हो पाता। नरि क्लेशापा, अजनबीपन, अनास्था एवं अजब आदि के विभिन्न चित्र प्रस्तुत हैं :

मणि मयूकर

यहाँ की बात
 यहाँ सुनता नहीं कोई
 अकेले हैं हमने
 लेकिन किसी के साथ को
 सुनता नहीं कोई
 ज़ोरों से गाने पर लिखे
 खुद पुरे- ७१
 नटकता है
 मेरी सदा का गवाह
 जाह, कितने संशयों में
 जा रहा है आज
 आताफ्त ।^२

१- सं० भक्तोत्पल भागवत - कविता -६ नवगोत्र गोष्ठो पृ० ६१

२- सं० मुपेन्द्र कुमार स्नेहो- गीत -२ पृ० ३१

उक्त निदर्शन में कविसम के संशय को स्थिति
वीर विरसितियों से उत्पन्न जीवन की क्लृपाष्ट का चित्र बंकिता किया
है। एक अन्य नवगीत 'सौटता हूँ अब' में संहित व्यक्तित्व का चित्र
उद्घाटन है। हरीश भादानी के 'संशय-बीध' रचना में कलास्था
वीर संशय का स्पर्शन किया है :

‘ कब तक वीर प्रिया जाना ऐसे
तन मन पर तो
संशय का आकाश डका है
सब कुछ धुंधला हो दिखता है
बीध बीध हूँ बी बीधों के
धामि हाथ मरम को साठों
कब तक वीर जता जाना ऐसे । २

बीकार ठाकुर विरसितबीध तथा कलास्था के कारण संहित व्यक्तित्व
का आकलन करते हैं। वे कहते हैं-

“ मैं पाया है कि गीत लिखना मेरे
लिए विषयता रहा है। हमारा जीवन सीसों की त्कारी वीर गति
सामाजिक मान्यताओं से संश्लिष्ट, टूटने को है। इस संश्लिष्ट में हमारे साम
नवात्मक चिन्तन नहीं है। ऐसा एक संश्लिष्ट वा तत्स बीध हमारे जीवन में
व्याप्त है जो जीवन के प्रति हमारे मोह को क्षिप्त करता है। अतिसिद्ध
गीत-विधा में निश्चय अधिक है। यह जायाम, संवेदना से उपजा विरसित

१- श्री० सुपेन्द्र कुमार त्रिपाठी - गीत २ पृ० ३२-३२

२- वही पृ० ३४

बीध , वास्तवों की टकराहट , परस्पर से विघ्नोक्त की जावानु यदि जाफ़ी हूँव कही तो मेरा मन सार्क होगा ही । हमारा स्वर नकारा-त्मक कहीं नहीं ही पड़ता है।

कभी सिद्ध होता है कि नवगीतकार की जगहस्था के कहीं कहीं में वास्तवा एवं विश्वास विषयान है। उत्तर-हायावाद, प्रयोगवाद , नयी कविता तथा कविता के व्यक्तित्ववाद और नवगीत के व्यक्तित्ववाद में यही मुख्य अन्तर है कि नवगीतकार का स्वर नकारात्मक जगहा 'नकार' का स्वर नहीं है वाङ्मय एवं तनाव की मुद्रा अवश्य प्राप्त होती है। इसका कारण यह है कि व्यक्ति का अस्तित्व भी हास्यास्पद होगया है। बौद्धार ठाकुर के कुछ निदर्शन प्रस्तुत हैं :

(१) हमारा अस्तित्व मसीह बनता वा रहा है

अव्यवस्थाओं से हमारा

धिर भुङ्कता वा रहा है

प्रश्न ही प्रश्न रह गये

उत्तरों के कर्म चुक गये

मुक्ति शिवाय नहीं है

गति से उन संस्कारों से

भीड़ों से कुलाकर

जी मुक्ति कहीं और से गये । २

(२) 'सतहो सम्बन्धीको पायल कर हाता

वपे हर साथो से भय लगता है

पर सभी मुर्तीएँ खूबे कीन लिये
कब तो बोना तक बेमानी लगता है। १

लखनऊ भटनागर नवगोत की नयी अनु-
मुर्तियों के रूप में ग्रहण करती हैं। उनकी रचनाओं में क्लैसिक तथा व्यक्तव्यो-
पन के विविध रूप प्राप्त होते हैं। एक दृश्य देखिए-

यह क्लैसिक
कला से फर्कती
अनुभूति- भी जाती क्या ही याद
मन पर आ रही है एक परिचित
स्वप्नवादी याद
हुम नहें फिर बाज बन्तर में सुई । २

रघुनाथ प्रसाद घोष के एक नवगोत में
दुविधा अज्ञात तथा संतय श्रुत जीवन से उत्पन्न कलास्था का स्वर
देखिए :

स्टो हुई शाली के मुक्त लीन
हम अनुमानों दाण के
पंथों पर तर्क बिंदे
दुविधा की लुई हुई कायाएँ
पुटनी के फुल लटके
किधर पाँव धरे, किधर दिशा बारी

जबजब वाकतियाँ दीई रही
 बन प्रेसकाय बन के । १

डा० श्यामसुन्दर घोष के जवनीतोंमें परि-
 केश मत विशेषतियों से उत्पन्न अनास्था तथा वाङ्मोल का स्वर विद्यमान
 है :

‘ हवा में घुसा झुहर
 सीधे लेना कठिन हो गया है
 जमाना हुआ गंध अपना हुई ,
 फुल के रंग हूँ ।
 एक युग हीनया स्वाति- धन की चुके,
 धीप का मुल हूँ
 जब उमड़ती धुई की लहर पर लहर
 सीधे लेना कठिन हो गया है। २

माध्यम मधुकर जीवन की विशेषतियों से
 जतने संतुष्ट और व्यथित हैं कि वे धीप नहीं पाते कि जब क्या
 करें ? संतुष्ट स्थिति है, अपना वंश देखिए :

‘ पिशा होन उलफि उन पावोंका क्या करें ?
 फुटी फुटी बाहों से लित हुए भावों तक
 बाहर के वैभव से घर के अभावों तक
 वही वही दिन रातें
 रटो रटाई बातें

बया कं १

कर्महीन निरुद्धे ज्ञान भावों का बया कं १ २

कर्महीन और कुण्ठाग्रस्त योगनका प्रेम लंकार
का एक नवगीत अंत प्रस्तुत है :

“ तिरुको पृष्ठ घर को
दोबारी छुनर खी
हुइ कीर नहीं कहना
बपीका मैवहना । २

बोरिन्द्र मित्र का रकाकी होती है तब उनका
का खट्टा हो जाता है, नवगीत का एक अंत प्रस्तुत है :

“ अब मैं हूँ रकाकी
खट्टा है का
हीता तू कहना है
बाना अब दाण
कात तिरु मैं भी फिर
रेखे तू तिरु
पेरा का काँप रहा
नोम ।
नहीं तिरु । ३

१- ६० भागोरय भागवत- कविता - ६ पृ० २२

२- कास्यवनि , १५ अक्षर १६७० पृ० ६

३- बोरिन्द्र मित्र - अदिराम चत फलुवतो पृ० ४४

प्रवराव तिवारी 'कधीर' नावनी
 संवा में वीरपन का अनुभव करती हैं। इन अनुभूतियों का प्रस्तुतीकरण
 वैसे-

'वाली में एक छुई छि-ही
 उमर जाती है
 बारि-इत पर
 वीरि जहाँहीता हूँ
 बिसर जाती हूँ
 उमलियों तेजब कहीं मरसूस करना चाहता हूँ
 न जाने क्यों मरक जाती नावनी
 मरक जाती नावनी । १

चन्द्रदेव सिंह के एक नवगीत में कुण्ठा के
 साथ साथ वास्था का स्वर प्राप्त होता है जो अविश्वास तथा लूते
 संकल्पों के कारण उत्पन्न हुआ है-

'कथं नयन लड़कों पर बाहू से डंकी हुई
 पिझि की लतार सी वास्थाई
 बगल बगल
 परिमि निगाहों से जहरीले फेड़ लई
 किस के नोचि बैठे हुस्तारि
 कोहं भी काँह मल गली
 बपने की बपने से वही
 ठी ही चुप रही

कुछ भी मत करो । ' १

कुप्टा, क्वास्या तथा खेस्त जीवन से निहित वस्तु ग्रस्त मन की स्थिति
बीम प्रकार की रक्षा में प्राप्त होती है-

‘ जैसे जब तो बन्ध कमरों में
सुलगती लकड़ियाँ से जलें । ’ २

कैलास व्यक्ति कीवासीका तथा वनिश्चय
से रहना कर देता है। फिर एक के कुछ उदाहरण देते । फलसे कैलास
बीर फिर जीवन में क्वास्या तथा वनिश्वास की स्थितियाँ व्यक्ति को
नकसीपन विनाश समता है। निवर्तन प्रस्तुत है :

(१) ऐसी कवा जली पापि तक
फुल गयो पापि की बिवाह
सापि गयो सामर का जगिन
मेरी नामर भर तनहाई । ' ३

(२) ' जगत कीमिद मेरी मुस्कान
हाटती नई कपारि पैल
परकटा जीवन समने समा
किधी मेदिर का उतरा सैल
समय के साथ बदलने लगी बफावरी की बारखतही । ' ४

१- पापि बोहु बहिुरी पृ० ६६

२- जली पृ० १३१

३- रिस्त रिक्त - किरन के पापि- पृ० २७

४- जली पृ० ४५

(३) ' एक बदन लामोसो
 बी वादमकद टुटन
 तेजा रहा सतना हो धन
 बाको सब हो गया छवन । ' १

(४) ' तिनके - सो तैर गई तनछाईं
 बरव के समुन्दर से
 सारो सट ने मणि उतराईं
 भारी भारी स्वर से । ' २

इस प्रकार नवगीत में क्लेशापन, वनवी
 पन , कुप्टा एवं क्लेशा के स्वर विद्यमान हैं। नवगीतकार युगोप
 परिस्थितियों से निरन्तर झूका रहा है, उसका वर्तमान वनवी है,
 क्लेशा है, उसका व्यक्ति क्लेशा और छुटन पर जीवन में क्लेशा
 को एक किरण सीझता है। यही नवगीतकार में व्यक्तिवादी जीवन
 को प्रेरणादायक उत्सवधि है। यथार्थ में व्यक्ति के निजी सम्बन्धों में
 दरार, क्लेशा का वातावरण, जीवनके प्रति अनिश्चय, वर्तमान संघर्ष
 एवं क्लेशा से घिरा हुआ है। इसलिए व्यक्ति का मन क्लेशा होती हुए
 भी संघर्षात है।

आयावादी तथा उत्तरआयावादी गीतों में
 क्लेशा , क्लेशापन, अनिश्चय तथा नकार के स्वर ठीस चिन्तन लेकर

१- रमेश रिक- गीत विष्णु उतरा पृ० ६१

२- बही पृ० ४१

३- श्री चन्द्र देव सिंह - पाँच जोड़ बाँझुरी - प्रस्तुत संस्करण और गीत-

प्रयोग पृ० १७

व्यतिष्ठित हुए हैं। परन्तु नवगीत में वजनबोधन, औसाधन, आस्था, टूटन आदि के स्वर विद्यमान होते हुए भी जीवन के प्रति नकारात्मक दृष्टि-कोण नहीं प्राप्त होता और न ही 'नकार' चिन्तन की दृष्टि होती है। इस संदर्भ में उपरिलिखित उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि नवगीतकार में 'नकार' की मुद्रा के स्थान पर जीवन के प्रति प्रवृत्ति-पूरा भाव तथा आस्था के नूतन स्वर भी विद्यमान हैं। इसका अर्थ है कि नवगीत का व्यक्ति वैयक्तिक अनुभूतियों को व्यक्तिवादो स्वयं चिन्तन के परिप्रिय में ग्रहण करता है जिससे उदात्त भाव प्राप्त होते हैं।

(ई) वैयक्तिकता की अभिव्यक्ति

नवगीत में व्यक्तिनिष्ठा तथा वैयक्तिकता की अभिव्यक्ति का स्वर विविध रूप में प्राप्त हुआ है। नवगीतकार व्यक्ति है। नवगीत के मूल तत्त्व - लय, गेयता, सहजता, संक्षिप्तता, वैयक्तिकता तथा रागात्मक बीभक्तता आदि हैं। वैयक्तिकता का गीत में विशेष स्थान है। वैयक्तिक रागात्मकता गीत का अनिवार्य तत्त्व है। गीतकार वैयक्तिक स्तर पर जीवन को विभिन्न प्रवृत्तियों की ग्रहण करता है और उसमें निबोधन करने के लिए कटिबद्ध रहता है। व्यक्ति को वैयक्तिक अनुभूतियों नवगीत में वैयक्तिकता को मूल भावना की प्रेरित करती है। नोरथ सेन तथा साहित्यकारों को वैयक्तिकता के संदर्भ में अपना मत प्रकट करते हुए गीतकार की वैयक्तिकता के संदर्भ में इस प्रकार विचार प्रस्तुत करते हैं :

‘ नम के दीप्ति में सेन का व्यक्तित्व सरोवर

में कमलगत होता है, कविता में कवि का व्यक्तित्व नीका के समान, भाव को नदी में बैठा रहता है, बाधा जब में हुआ हुआ, बाधा जब के बाहर लेकिन गीत में गीतकार का व्यक्तित्व कताले की तरह पानों में पूरी तरह घुल जाता है। फलमें गीत की रस का पार्थक्य बना हुआ है, दूसरे में वह पार्थक्य मेर से अमर की कीर छुड़ा है कीर तीसरे में वह पार्थक्य पूर्ण कृत में परिवर्तित हो गया है।" इस प्रकार नवगीतकार का व्यक्तित्व कीर उसकी व्यक्तित्वता तथा कई आत्मनिष्ठा से नवगीत में छिप जाता है, वैयक्तिकता के कारण नवगीत में पार्थक्य की स्थिति नहीं रहती। अनुभूतियों को जीने तथा भोगने की प्रक्रिया के रूप में नवगीतकार को वैयक्तिक दावा है गुजरना पड़ता है। नवगीत की वैयक्तिकता आत्मनिष्ठा का ही दूसरा स्वरूप है। यह आत्म निष्ठा व्यक्ति के रचना दावा को अनुभूतियों का मिश्रण है। सत्त्विकान्त शब्द ने 'सातवें बरस के नवगीतकार ग्रंथ में नवगीत को पुनर्व्याख्या का सूत्र इस प्रकार प्रस्तुत किया है -

‘भोगने की प्रक्रिया + सत्य को प्रसरता =

कहसुने गर दावा, कहसुने गर दावा +

अनुभूति = नवगीत।’ २

उक्त सूत्र में नवगीत की वैयक्तिकता भोगे हर दावा है तथा अनुभूति की सान्द्रता से जुड़ी हुई है। अतः नवगीत की वैयक्तिकता व्यक्ति निष्ठा के रूप में व्यक्त हुई है।

१- डॉ० नोरम - रस - अन्तः सित० अक्टूबर १९६७ पृ० १४

२- डॉ० बीरेन्द्र मिश्र - साहित्यमित्रा -२ प्रेमलोक का सित नवगीतक :

विकास यात्रा पृ० ४८

नवगीत में वैयक्तिक अनुभूतियों और व्यक्त-
निष्ठा से प्रभावित कौन-कौन-से कवि प्राप्त होते हैं। ज्योत्स्ना भटनागर का
वाकर्षण वैयक्तिकता से जीत प्रीत है। एक रचना प्रस्तुत है :

‘ एक वाकर्षण

काहू को मन्थ में पीणि- नहार पाण
मलय की झड़ झूकर लीट बार प्राण
फिर भी पौन हूँ मैं । ’ १

ज्योत्स्ना कवि के नवगीतों में वैयक्तिकता,
व्यक्ति निष्ठा तथा अहम् और वास्तव अहम् के विविध रूप प्राप्त
होते हैं। एक कवि मन की टूटा का देखिए-

‘ बन्दो हुवा यह गुनगुनार मन

टूटा कि फिर टूटता ही गया । ’ २

वैयक्तिकता व्यक्ति के अन्तर्मुख की गहराई तथा
अनुभूतियों की सान्द्रता के कारण होती है। ज्योत्स्ना कवि के नवगीत
की में ऐसा ही कवि प्रस्तुत है :

‘ मेरा सम्बन्ध नहीं धारा से

मकली हूँ मैं ठहरे पानी की

मेरा नाता है गहराई से

कब मैं ज्वारी की बगो दो । ३

१- गीत- २, पृ० ३६

२- ज्योत्स्ना कवि - अविराम चल पृथ्वी पृ० ३७

३- वही पृ० ३६

नवगीतकार का व्यक्तित्व अपनी ही तरह अभिव्यक्तित्व से परिपूर्ण है उसका बाह्य जगत् जीवन की विविध स्थितियों से लुप्त रहा है। व्यक्तित्वता के अनेक चित्र बोरिन्ड्र मि. के नवगीतों में प्राप्त होते हैं, यहाँ कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) है व्यक्तित्व- व्यक्तित्व ऐसा अभिव्यक्तित्व मरा
जायू जैसा होता है कबरो में ।^१

(२) टूटता वह उदास सपनों की राह में
देख रहा हूँ तुम्हारी प्यार के उदास में ।^२

(३) लुप्त हो गई थी तारी
पोती हुई निरस्त बातों है
रह जाती है मन में बैठन
तन की रस्ती जल जाती है।^३

ऐसा रस को नवगीतों में कुछ चित्र व्यक्तित्ववादी तथा व्यक्तित्वनिष्ठा के प्राप्त होते हैं। उदाहरण देखिए-

टूटनी या बरं भुका
सुनेपन में
मन दीनी ठहरा
ऐग उड़ा अपराधी का
मन में

१- बोरिन्ड्र मि- अबिराम जल मधुमती पृ० ४५

२- वही पृ० ६१

३- वही पृ० ७६

बरसों का गहरा

हुँठा ने तोड़ दिया वस । १

व्यक्तिवादी चिन्तन में व्यक्ति ही केन्द्र है वह आत्म केन्द्रित ही जाता है, ऐसा रिक के नवगोत 'वायमन्द टूटन' का केंद्र देखिए-

साखी छापी जाती

नीति बदाली में घूमना

बुझक दिन का पारा पीकर

रातों के प्रती से झुमना

पोतर-पोतर

कण्ठों मिट्टी के बर्तन का

फूटना । २

सत्य श्रीरामसिंह के नवगोती में व्यक्तिवाद का स्वर प्रगाढ़ होता है। रोमानियत के विरुद्ध एक रचना की अनुभूतियों का एहसास कोमल उदाहरण बन गया है :

रीज रीज बातों बातों हुए

बहुत भली लगती ही तुम मुझ

कहना चाहता लेकिन कह नहीं सका

होठों पर क्या लिखी बनारों के

कम्प

मन पर धर जाती हैं दृष्टियों के मुकम्प

१- ऐसा रिक - गोत विरुद्ध उतरा पृ० ३८

२- वहाँ पृ० ६१

बादलों के जलते हैं उस जलम

तुम्हीं अपनी अफस संकल्पों के होते

जलना चाहते लेकिन यह नहीं होता । १

इस प्रकार जैसे नवगोतारों को रत्नाओं में वैयक्तिक अनुभूतियों के स्थित वात्सल्य निष्ठा तथा वात्सल्य केन्द्रित होने के लिए प्राप्त होते हैं। नवगोत को ताजा अनुभूतियाँ वैयक्तिकता के स्थित व्यक्तित्व को स्वतंत्र सत्ता को व्याख्या करने में रहते हैं।

(उ) नवगोत : आश्रय के नये स्वर

काव्य का विकास भी व्यक्ति की समाज की लेकर हुआ है। गोत, धार्मिक, संस्कारगत तथा प्रणयानुभूति के मौलिक आस की तोड़कर वास्तविक जन-जीवन के पास आ गया है। नवगोत में व्यक्ति तथा समाज दोनों का ज्ञान हुआ है। व्यक्ति को व्यक्तिगतियों की नवगोत में विशेष रूप से स्थापित होता रहा है। नवगोत में नये रोमानियस के भावुकता पर जाणों की पिछाई प्राप्त होती है। सन् १९७० ई० के नवगोत वैयक्तिक प्रणयानुभूतियों के स्थित हैं। सामाजिक संस्कार रोति-रिवाज, भक्ति, उत्सव, पर्व तथा धार्मिक अनुष्ठानों में भी नवगोत का रोमानियस वर्णन रहो है। तब भी कुछ नवगोतारों में विद्रोह, आश्रय तथा तनाव को विविध प्रकार प्राप्त होती रहो है। बोरिन्द्र मिश्र का आश्रयपरम्परा नैतिक, अधोमत्त जब पूजकों के विरोध में, बन्धनों के विरोध तथा

आमाजिता के विरोध में उनका है। प्राचीन मूल्यों तथा बन्ध विश्वासों के विरोध में वीरेन्द्र मिश्र के नवगोत विवेचन रूप से विद्रोह को पुनः प्रारण किया हुए है :

जब बन्दूक हाँ हमारा जिविर
तब चाँद की कल्पना क्यों है
हम बनवत हैं गगन के परे
जब तो हमारी नयी रक्त है
पिझी चमत्कार का है विदा
तो रो- सुगों के मुँह के विदा
रोते हुए बालकों के लिए
गाये बहुत गोत खतने दिनों । १

वे प्राचीन परम्परा - संस्कृत के रूप में बढ़ते हुए परिवर्तन को ग्रहण करते हैं :

हर भवना की कल्पना है अलग
बन्दिता पुरानो नहीं भय है ।
बढ़ते हुए इस समय के तले
रचना सहज बाज अनुभव है
जीवन अनात्म नहीं हर कहीं
हमको नहीं हँसना खर कहीं
सोमन्त जब मुँहों के लिए
गाये बहुत गोत खतने दिनों । २

१- वीरेन्द्र मिश्र - बहिराम चतुर्धारी पृष्ठ ३८

२- वही , पृष्ठ ३८

आक्रोश का स्वर तनाव के जीवन से उत्पन्न होता है। नवगीतकार
की वन्धनों के कारण ही विद्रोह का स्वल्प धारण करता है।
बोरेंद्र सिंह का एक निदर्शन प्रस्तुत है :

जागृत उपेक्षित की घाटो में
रंगों की नाचा में बीहूना
आस्था है शिखरों में, बन्धन है
ऐसे जो बन्धन हैं, सीतूंगा
अन्तर-कान्तों के आग्रह पर
करता है आस्था से बन्ध मुक्ति । १

युगार्थ में रचनाकार आन्तरिक तथा बाह्य
दोनों ओर लड़ रहा है वह अपनी आस्था से बन्ध करता है, उसी तिर
तामूलकता को व्यक्त है। वह अपना व्यक्तित्व अलग रखा चाहता है।
नगरजीव तथा आधुनिक जीवन के दबाव ने जीवन की विघातक बना
दिया है। नवगीतकार दफ्तर में, घर में, मित्रों में, समाज में तथा
मोड़ में अपने को जकसापाता है तथा वह उन सबके प्रति आक्रोश उगलता
है। उसका आक्रोश मोह भंग के कारण उत्पन्न हुआ है। व्यथित विरह-
सिगों और आधुनिक परिवेश के कारण बिसर गया है वह तब भी
आक्रोश की मुद्रा में कुछ करने के लिए उत्पन्न है, नीलम सिंह के नवगीत
का एक और प्रस्तुत है :

खिन्का है, बंटा और बिसरा है आदमी
झूटा प्रेम नहीं पावे, जुना है लाजिमी ।

जब नया, हथेली नया

विनिमय को दुनिया में बिदे को कहुलना

मूल्य नर वृत्तना

बीर काम सीपना । १

इसे ज्ञात होता है कि नवगोतकार का आक्रोश अभी पूर्णतया अपनी ऊर्जा समेट कर मार्ग प्रहार नहीं करता, वह निष्कलता है, उसकी सीपना है। नवगोत में रोमानियस चरित्रात्मक उत्सव तथा प्रकृति वादि के जाने विद्वों को परम्परा है कि वह जीवन में बाह्य तथा आन्तरिक दबाव को रूप-रूप उल्टा है। इस नवगोतकार में कृष्ण आक्रोश है जो जने: जने: मुखरित हुआ है। यह पूरा पौढ़ो नवगोत में आक्रोश को व्यक्त करने के पुषि सीप रही है।

सन् सत्तर के उपरान्त नवगोत को नया पौढ़ो लाने कावो जी आक्रोश को नया मुद्रा लेकर अवस्थित हुई। एक बीर के नया पौढ़ो ने व्यक्ति के आन्तरिक आक्रोश एवं बाह्य आक्रोश को विविध चीजों के प्रयुक्त किया जो दूसरे बीर समाज में व्याप्त अवस्था, जीवन, विद्रोह एवं समाज को अवधान के बीर के विद्रोह किया। व्यक्ति स्वतः विरोधयोगी है। वह निरन्तर आक्रोश का विधितियों के मुखरता है। नवगोतकार कीमती यही विधिति हुई। वह परिवार में विरोध का स्फार हुआ, समाज में विरोध का स्फार हुआ और माफिस में भी प्रकटता रहा। इसके प्रतिक्रियास्वरूप पर-

बाहर जनाव, विरोध एवं आक्रोश के स्वरों की प्रेरणा मिली। वह व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह करने पर उतारू हो गया। सन् ७५ के उपरान्त नवगोतकार कविता के कवियों के अधिक आक्रोश के स्वर में जामे जाया। स्वर भारतीय राजनीति में गूँद जाया। गणतन्त्रिक दबाव, पलायन, गुटबाजी, प्रचटार, आर्थिक एवं सामाजिक दबाव आदि के नवगोतकार ने छहरे टपकर लगे। वह नवगोत सृजन की गति के प्रति ध्यान रहा। परन्तु रचनाकार की व्यपित्त ऊर्जा विद्रोह को मुद्रा में अवतरित होने लगी। नवगोतों में रचनाकार व्यपित्त की अनु-प्रवियों की समष्टि को अनुप्रति के रूप में स्थापित करने लगा। माहेश्वर तिवारों ने जनाव की विविध रूपों में भोगा है :

‘‘तहाँ में लोम, ऊपर तनो सलख
कहाँ-कहाँ दृष्टियाँ गढ़ार हन
घर के नीतर-बाहर
एक-सा जनाव
कहाँ कुछ नहीं केवल भोग ठहराव
ऊँच गर लहर की लगी रहे
किस तल में फूल के सनाकेक छप ।’’ १

नर्म को भी यही विधिति है। एक निर्गमन प्रस्तुत है :

‘‘तहाँ में कीसों को हरो,
यहाँ यहाँ लोको हददो
कृत्रिम जडा की सन्तानें, नम हूँ घर,
गलियाँ गंदी

दिल दिमाग पर जीते हमले पक्का छटके । १

ऐसी विषम परिस्थितियाँ जिन में प्रत्येक साहित्यकार रत रहा ।
नवगीतकार ने ऐसी कुबोध को जिया है और पूर्णतः जात्मसात् भी
किया है। प्रेम और का रचना में उपस्थित है :

ये पुरा कुल जोया है हमने
रक्त दलित बँतुआ मजदूर की तरह
भगाही में ऊँची लड़क की तरह

०

०

ये पुरी सदो टिकी रही
जनमत के कंधों पर
टंगी रही धड़ों पर स्त्रियाँ की लाज
रक्त उवादी पर खड़ा था
गाँवों की ताले बन्दो
लकड़ों पर हँसता मौत का पिशाच
बाकाबवाणो चापलूसो हम भी
हप हुनते रहे वेपछे नरुर की तरह । २

उक्त उदाहरणों से ज्ञात होता है कि
नवगीतों की नयी ऊर्जा बाकी के नये चरों में बल्ले के तिर तैयार
रही । व्यक्ति की विविध परिस्थितियाँ- विवशता, निष्ठतापन,
कायरता, नायकवाद, अनिश्चितता एवं बन्धन की स्थितियाँ ये हुआ

१- डॉ० विश्वम कुमार- अनु० -१ पृ० ११

२- डॉ० प्रेमचंद- अनन्या -१ पृ० १२

पदा । ऐनिक जीवन की समस्याएं छड़ताल, भगदड़, बेरोजगारी, पारिवारिक टूटन, सामाजिक उपेक्षा, राजनीतिक दबाव, नीकलाहों के कात्नाम, कृत्याचार, पदाप्राप्त, भ्रष्टाचार आदि ने नवगोतार की पुनः नये धिरे से सोचने पर मजबूर कर दिया । यह राजनीतिक स्वार्थ समर में रत लोकहित की भर्त्सना करने के तिर बड़े बड़े मंडलाह एवं सुल्तानों के अधिनायकवाद की सुनौती देने लगा । ऐतिहासिक पंथित का नवगोत की प्रस्तुत है-

तब बहुत लीर था
 शहर में सप्राट् का
 बेहुवान जोने कोचारी सुविधायी गों । १

विरोध की विधति को पराकाष्ठा देते, नवगोत में किस प्रकार स्थापित की है :

काट की हमारी
 इन बेगुनाह हागी की
 जावारा जालें हम लीर मो बर्तन
 बर्फ की शिलागी से
 घर की छतर की तो
 नुगा इतिहास बहुत दूर तक फुटकता है
 एक शब्द जाग, कहीं पाटो में फँकी तो
 बादल तक कलम हुआ जंगल भुक्तता है

हूँड- बिस्व- यात्राओं

के हम कल्याणी

लोक वाराणसी तक लुट कर चढ़ें । १

नरम की टूटन इस विद्रोह की वंशित
करती है, उन्हें दिन ने पछिना, रात ने बीदा, चाँक ने बिहाना,
सुबहों ने मोड़ा, भीड़ ने पीछ दिया तथा महाकास कीड़ा मार रहा
है^२ तब भी वह "कास" पर चढ़ने के लिए तैयार है :

"कब फिर गोता हूँगा

कगली फली होगी

कास पर चढ़ना मैं

भीड़ खदेली होगी । २

इसका लक्ष निरन्तर सामाजिक रुढ़ियों
के विरोध में रहा है । एक उदाहरण देखिए-

"लोक तोड़ बली के छेड़ों प्रयास

बिनाफि किये गये

राम की बितास

रुढ़ियाँ भयेस । ३

इस बाजोल के नये स्वर नेगीतकार की

१- सं० प्रकाशक- जनन्या पृ० १७

२- वही पृ० १६

३- वही- १३ पृ० ४

जबोप के स्तर पर उतरने के लिए आवाहन किया। कृष्ण, कृष्ण, कृष्ण, पारिवारिक टूटन, आन्तरिक द्वन्द्व, आश्रित को मुक्त, विद्वान, लोक एवं विरोधी केहरों की मोह बादि ने नवगीतकार की विस्फोटक परिस्थितियों का विरोध करने में समर्थ बना दिया। जब रचनाकार आश्रित को दूसरे रूपों में प्रस्तुत करने लगा। उसी तेज धारदार मुहावरे की वीर व्यंग्य की तीली सजावली। वह गांव - शहर के गली-पोहले के दैनिक बसताऊ सज्जनों का प्रयोग करने लगा। ऐसे आश्रित की नयी जगह प्राप्त हुई। कुछ गीतों में सपाट बयानों की दिशाएं देने लगी। यथाकदा द्वन्द्व के टूटन की मांग उठी। ऐसा लगता है यह विद्वान नवगीत युक्त के कन्वर की बलने लगा। कथ्य एवं शिल्प में नये प्रयोग हुए। शिल्पात मुहावट पर कुछ सपाक फिल मठाधोश उगली उठाने लगे। परन्तु नयी पीढ़ी ने संस्कारों से जड़े नवगीत की स्वीकार नहीं किया। आश्रित का नया प्रयोग ऐसे बढ़कर क्या है ? पुराने पीढ़ी की अपनी नियम बन्धनों का मोह छोड़ना पड़ा।

सन् ७८ तक जाति जाति विद्वान की तुलना दिखाई जाती। जब आम्ने आम्ने के टकराव की स्थिति आ गई। रचनाकार की निम्नलिखित तुलना की गयी। धारदार मुहावरे एवं तेज तर्रार सज्जनों ने भी सधियार का काम किया। कौस्तुभार ने विद्वान की नये सिरे से उठाया। वह गहरिया वीर तुहारों की वीर से प्रश्न करते हैं :

उन मस्ती से

उन गदियों से

हम निर्वाचित

क्यों निर्वाचित । १

दुल्हरी लीर से समाज से उपेक्षित जातिवाधियों के द्वारा वाङ्मय के स्वर में बातें करती है :

हम लीनित हैं, हम पीड़ित हैं
गिरत की सत्कारी मत । १

कृत्रिम जीवन भी तबवाग एवं जीत की बातें करने लगे । उन्होंने समझा कि जन-जीवन वाच वाङ्मय में बध्ति है। कुछ उदाहरण यहाँ-

(१) यह लीर है

कसते कसी ऐसे समय
कृत्रिम वाग की चर्चा करे
जी बीस रंग- रंग में नरे
उस फाग की चर्चा करे । २

(२) कंधार कलावाँ में कनी

जी बसता पीलो हली
बह भी हटो, सतिये फिट
बाधो फ़ो गंगाबली
कि रहीं हुवा
तन रीत का
छोपी गिरी ताताब में ।
उम्हो कलत हैं कंधारी

१- सं० प्रेमलोक -कन्या पृ० २

२- वही पृ० २१

उन मन्दिरों के पाँव में । १

(३) ' दीवारों के कान लड़े हैं- होने दो
 पीछे के नाकून लड़े हैं- होने दो
 अब तो हम कुछ और और से बीसिंग
 फिट्टों का लू होने से नो ज्यादा है
 अब तक जिये लादपी मर कर बाटों में
 अब तक फंसे व्यवस्था का तन काटों में
 अब हम बाटि वाला हाथ मरोड़िंग
 काटों की टांगों के टलने लोड़िंग
 चम्पाटों के बिस्म लड़े हैं- होने दो
 दरवाजों पर बल लड़े हैं- होने दो
 बाब मौन फिर अपने मुँह की लोड़िंग । २

नवगीत के लक्ष बाङ्गोश पर खर की धामनी
 लाने के लिए व्यावहारिक पत्रिकाओं ने नकारात्मक दृष्टिकोण अप-
 नाया । अतः सप्त पत्रिकाओं द्वारा हो बाङ्गोश के निदर्शन धामनी अति
 रहे ।

नवगीत के रचनाकार ने गाँव- लहर तथा
 जाँचल्लि बोधन की विविध परिस्थितियों की जोड़ि हुर यह सोचा
 कि अब क्या हो ? परिस्थितियों से कैसे निपटा जाये ? अतः प्रत्येक
 स्थिति से लड़ने के लिए सीधो टक्कर लेनी वारम्भ की । लड़े नये

१- हुँवर केवन - नीतर बाँकित बाहर बाँकित पृ० २६

२- वही पृ० ८७

बराबरे हुई। नूतन मार्ग प्रकट हुए। नवगीत ने किसी बंधी बंधायी लोक को गले नहीं लगाया, वह समय के ऋक्ष अपना स्वयं धारण करता रहा। इसीलिए नवगीतकार सख्त हीकर पाक चोट कर जाता है। क्योंकि उन्हें पारंपरिक भूमि एवं शिल्पाव नयापन है :

गवि की जखनी फाईडिनी पर
बैठकर हम तुम कहों
बठारत गोट हमसे
समय की चोट हम भेजें । १

वाङ्मय व्यक्त को मनीदला को व्यक्त करता है। इसे नवगीत के कथ्य को सफ़ाता में वृद्धि हुई। नवगीत का को मार्कि पार्कि को भेदने में सफ़ात हुआ। नवगीत में व्यंग्य इसीलिए अधिकप्राप्त होता है। नवगीत को विद्रोहात्मक व्यंग्य से वापुर्ति रखना विविध मूर्त पर अधिक प्रचारित हुई है। इसे पता चलता है कि नवगीत में वाङ्मय के स्वर निरन्तर अपना रंगान बना रहे हैं। ऐसी रचनाओं का अपना महत्व है।

समग्र रूप से नवगीत में वाङ्मय, विद्रोह तथा विरोध नवगीतकार के वैयक्तिक जीवन से प्रभावित है। नवगीतकार सामाजिक परिवेश के विरोध में वैयक्तिक रूप से नवगीत को सज्जा करता है। अतः यह विद्रोह सामाजिकहीन हुए नो व्यक्तित्वादिता से प्रभावित है।

१- अनन्या - २ पृ० २७

२- डॉ० आग्नेय शर्मा- अना- १४ प्रकाशक का लेख - नवगीत :

वाङ्मय के नये स्वर पृ० ६-१२

(अ) व्यथित जीर समाज

नवगोत वाधुनिक युग के व्यथित को क्लेशों की अभिव्यक्ति प्रदान करता रहा है। नवगोत में व्यथित जीर समाज का विना विविध रूप में होता रहा है। वाधुनिक युग व्यथित की विविध प्रकार की व्यक्तताओं में उलझाये हुए है। जीवन की सन्ध्र सन्धा-र्या व्यथित होता है। अब तक गोतों में भावात्मक कल्पना का बहिः प्रवर्तन रहा था। भविष्यकालीन तथा आयावादी गोत इसके प्रमाण हैं। व्यथित के दुःख-दुःख, आत्म निवेदन तथा प्रणय जन्मदो गोतों में व्यथित को आन्तरिक भावाभिव्यक्ति होता रहा है। परन्तु नवगोत में वाधुनिक युग की व्याप्ति करने का प्रयास होने लगा। अनु ६० के उपरान्त व्यथित के विघटन तथा व्यथितत्व के पराभव को परिनिमित्तियाँ समाज में व्याप्त होने लगीं। अतः इन नवगोतकारों ने एक जीर जी व्यथित के क्लेशों को गहराईयों की अभिव्यक्ति प्रदान की है तथा दूसरे समाज के जीवन-राशियों को प्रस्तुत किया है। ग्रामीण परिवार आर्थिक जीवनके उत्सव तथा पार्श्व का विना, परिवार में व्याप्त रोति-रिवाजों तथा धार्मिक सामाजिक संस्कारों की व्याप्ति करने में सफलता प्राप्त की है। ये नवगोत के रचनाकार परिवार को समझाते हैं और देश समाज तथा विश्व की समस्याओं को प्रस्तुत करने में लग्नो रहे हैं। नर्म ने मातृता के जीवन की विविध नवगोतों में क्लेश-हृन्दर दंग से उठा है। उसी मातृता के उत्पन्न, पक्ष तथा फलनावा आदि आकर्षित करते रहे हैं। मातृता के सांस्कृतिक जीवन की वैयक्तिक अनु-प्रतियों के द्वारा नर्म ने क्लेशता से पिरोया है, निर्दोष प्रस्तुत है :

मातृका के पायी
 मेरा मन धर गये
 अचल बनारिया के आधू- सा फेर गये
 इन्ने आकाश के, धरती पर लुके लुके
 उज्ज्वली दिवाप्रतट में बेमदुत लुके लुके
 लुका दी भला बरले
 लुके की मोतिर मोतिर तरले
 गये, पर लुके गये
 मेरा मन धर गये । १

इसी प्रकार माहेश्वर तिवारों के एक
 नवगोत में व्यक्ति की र समाज की एक साथ स्थापित किया है। नव-
 गोतकार समाचार- पत्र पढ़ने में खूना तल्लीन है कि वह परिवार के
 दैनिक कार्यों में से अनभिज्ञ रह जाता है। यहाँ तक कि वह पुन्ने का
 सुलसाना नहीं सुनता और न ही सन्त बाणी पढ़ पाता है :

गप्पों में पढ़ा नहीं पानो
 पढ़ी नहीं गयी सन्त बाणी
 दिन पुरा बिलकुल केदार
 सारे दिन पढ़ते कलहार

पुन्ने का सुलसाना गीत
 अनसुना गया बिलकुल बोले

कहें बार कहे खोकार
 सारे दिन पढ़ते जलवार
 बोले गया है फिर लजवार । १

वास्तविक युग बीध के कारण व्यक्ति में
 टूटन, लज्जन, पराभव तथा तिर जाने की स्थिति विकसित हुई है।
 व्यक्ति का कुण्ड- पक्ष ही नहीं, व्यक्ति भावपक्ष भी विघटित हो
 गया है। आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियाँ तथा वास्तवी
 सम्बन्धों में विघटन एवं बिस्तार की स्थिति भी प्राप्त होती है।
 नोलम सिंह ने व्यक्ति के बिस्तार की स्थिति के आधार पर प्रस्तुत
 किया है-

“ दिखा है, बेटा और बिस्तार आदमी
 झूठा जन क्यों बालें, मुनना है साबिमो
 बेब बया , लथेली बया
 बुझो बया, बोलो बया
 विविध को दुनिया में जिसे भी कहूँ
 मूल्य नर मूल्यना
 और काम लोचना । २

व्यक्ति और समाज का चित्रण नवगीत
 में बहुतों में हुआ है। एक ओर व्यक्तिवाद की विचारधारा के प्रभाव
 से व्यक्ति व्यक्ति के स्वयं की उन्नति, निराशा, पलायन, जल, झूठा,
 वास्तविक तथा सामाजिक के दर्शन होते हैं तो दूसरी ओर साम्यवादों

चिन्तन से प्रेरित समाज का चित्रण सामूहिक उत्सव, पर्व, वार्षिक लोकगीत तथा परिवार आदि का उपनिषद् प्राप्त होता है। उन सभी व्यक्ति जो समाज के इस चिन्तन व्यष्टि तथा सपष्टि को समझने की नवगीत के कुछ उदाहरणों द्वारा स्पष्ट कर रहे हैं। उदाहरण प्रस्तुत है :

(१) वार्षिक के बार बार एक जोर वार्षिक है
बन्द कपाट , किन्तु सकल बकरी फन-फन है,
नही बेतना की जाती बन्दिनी किन है,
ज्योति-ज्यार का उज्ज्वल रहा कफल सावन है।^१

(२) हर गली के पीछे पर कुछ नम्र बगैर
बस कतर्किक छुटन पीछे पर सब बावर्त
आवरण के जोरों में रुड़ बना वस्तित्व
हूटो से उफार वाकृत सिफटते जायापन।^२

(३) ' हर तरफ कागजों मक्यता है
जति में पर रहा जूझता है
इस भिन्न-व्योहर्ष चिन्तनो से
ज्यार की चिन्तनी साफता है। ' ३

(४) ' सँकल गहरी धोरन छूट
किन्तु वादी को फल हूट
हुने वार्षिक पोषल हूट । ' ४

१- बालकृष्ण उपाध्याय - कादम्बिनी, नवम्बर, १९६४

२- शारदा चरण- साम्प्रदायिक हिन्दुस्तान ६ नवम्बर १९६६

३- सुपिन्द्र कुमार खेती- साम्प्रदायिक हिन्दुस्तान १४ फरवरी १९६४

४- वीर प्रभाकर- धर्म का, १४ अक्टूबर १९६४

(५) 'भटक रहे गुम नाम उदासी,

ठिठुरी- सी गलियारे में

हमन्ती जाकाश धूप मुन्हाई मुझे पिनारों पर ।१

(६) 'विरहा विदेशिया- सी, तिरती तुम रहिया सी

जाने कब का जाती , लीकगीत गा जाती

हुनिया की लगती है लोट,

हुलसी है रह- रह कर लोट । २

इस प्रकार नवगीतकारों ने व्यथित और
हमाज की विविध रूप में स्थापित करने का प्रयास किया है। व्यथित
और हमाज के मध्य नवगीत की सीमा को स्थापित नहीं कर सका।
नवगीतकार ने व्यथित और हमाज का युद्ध अपनी तरह से लड़ना चाहा।
उसमें पराजय बीध तथा अविश्वास के स्वर भी विद्यमान हैं। इस पर भी
उसका मन वैयथित स्वर पर मधुनासी स्वप्नों में, क्रीडों के उदास-
विह्वलों में तथा संन्या के क्लान्त नयनों के बिन्दु उठने में मग्न रहा
है।

“ वह व्यथित और हमाज के दोनों
पीछों पर लड़ाई तो लड़ना चाहता है पर उसमें उस विश्वास को कमो
है जो प्रिय साता है। पराजय- बीध की स्थिति में मन की भटकन
रचना को कमजोर करती है। नवगीत व्यथितगत धरातल पर मधुनासी
में रहा है, क्रीडों की उदासी नापी है, साम का पोलापन देखा है,

१- जानन्द कुमार शास्त्री- साप्ताहिक हिन्दुस्तान - २६ सितम्बर १९६५

२- नईल- प्रोद्युक्त २५ जुलाई १९६५

वासमान के बारे में है, स्त्रियों का विद्रोह बताया है।

सन् १९६० ई० तक नवगोत्र सामाजिक समस्याओं के झुझने में सफलता प्राप्ति नहीं कर सका। परन्तु सन् ६५ एवं सन् ७० के लगभग स्थितियाँ बदली और सन् १९७० के उपरान्त नव गोत्र में सामाजिक जीवन में वृद्धि हुई तथा वैयक्तिक जीवन का विकास हुआ है। कुछ निदर्शन देखिए-

(१) ये प्यारी लीटें उनीचे हम,

पूँछताये दृष्टि मलिन

काना का- का तन लेकर कैसे घुल रहेगा

दिन । २

(२) बस्तों बढ़ो अबोध यहाँ की

म्यारी है तड़बोद यहाँ की

जिनके बारे काम गलत है,

सुबह गलत है, शाम गलत है

उनकी लोग नम्र करते हैं

जिसे हाथों जंग लगी है

जिनको बलती सिर्फे जवान

पाल लिये हुए लीनों की

उनके पोछे लगे कटारें

जिनके रिश्ते भी सुलभ हैं,

१- डा० ललित कृत- नया काव्य : नये मूल्य ५० रु०

२- आत्मस्वयं रात्री- काव्यविनो १९६१

बी बरबर के हाथ फिर गये
 उनके प्रसन्न, बी राह पर,
 उनके हिस्से पैसा छारे ।
 बिगड़े छारे काज यहाँ के
 उल्टे रीति रिवाज यहाँ के
 जिनको नोखा ठोक नहीं है,
 जिनके मकड़ ठोक नहीं है
 उनकी लोग नमन करती हैं । १

नवगीत के रोमानो स्वर ने वैयक्तिक

दुःख-दुःख के कुलनीय चित्र प्रस्तुत किये हैं। अष्टि भाव का अष्टि
 भाव द्वारा पिष्टपिण्डा कहीं-कहीं अलौकिकीय है :

(१) ' सरसों को फुनगो पर,
 सासों को बगिया में
 नीलाम के मुल्ले पर, तये नये गीत
 नई लकनम ने छाज---
 नीर हूँ, कलन को । २

(२) ' मैं बारम्बार कहा है
 एक नहीं ही बार कहा है
 एक फुल के स्ति जाने को,
 मैं मनुष्य नहीं मानुंगा ।

१- विनीत निगम - सं० कृष्णानि प्रभाकर, ब्रह्म बाणो , कविका
 मई जून १९६६ पृ० १२

२- राम नरेश पाठक- बरार को सँज ५० १८

सुतसु तो मन की होती है
 मन से ही सुनी जाती है
 केवल वस्त्र बदल देने से,
 वह दुर्गन्ध नहीं जाती है। १

(३) 'हूब रसो है दिन को नाच रो
 सभि प्रात के तट की तोड़ती
 कदम घेरेन की मोड़ती
 बहती युग की यमुना सगिरी ।' २

अपवित्र और सभाय का चित्रण नव-
 गीतों में रचनाकार की कल्पनाओं का देखा जाता है। शैल मटियानी
 हिन्दी के कथा-लिखी हैं, परन्तु उनके कौन नवगीत धर्म युग, हिप्रस्य,
 शरिता, आनुति वादि पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहे हैं। यहाँ एक
 नवगीत का चित्रण अवलोकनार्थ है :

'उपर भर लड़की रहे प्राण-लोपी
 नक-कौल में यों न पीली तिराकी ।' ३

चोरिन्द्र मि के नवगीतों में अपवित्र तथा
 सभाय का चित्रण अत्यन्त भावुकता पूर्ण तथा कथार्थ के रंग के माध्यम
 से हुआ है। एक पुरय देखें-

'कौन बार कह चुका हूँ तुझ के तट से

१- मधुर वास्त्री-ब्रजवाणी-कवितारि, मई जून १९६६ पृ० १३

२- सम्प्रदाय सिंह-ज्योत्स्ना, सितम्बर १९५६

३- शैल मटियानी-धर्मयुग २ दि० १९५६

फसोना धूप का काटेय पर बसा जाता
 रेत के बीच में ये जनीफ़ी की आकृतियाँ
 जिनमें पकड़ों की तरह ही सदा रहा जाता

०

०

कुनो की राखि और की सफ़ु दे की धुम
 मेरी रज्जा के स्वेद पर जो हवादार जाये
 तुम्हें मिल जाय एक नील गुन गुनाने की
 मेरे उल्लास का वातावरण तैयार जाये । १

डा० श्यामसुन्दर घोष, तारादत्त
 निर्विहीन, लक्ष्म, जोराम सिंह, रघुनाथ प्रसाद घोष तथा रमिल
 कि आदि के नवगोष्ठों में व्यपित और समाज की विभिन्न करने में
 विशेष कार्य किया है :

(१) 'दिन जमावों मरा
 रात फीफो, महिन
 उनहियों पर रहा बादमो उग्र गिन
 हैं उदाये हुए गाँव, कस्बे, शहर
 सड़ि लेना कठिन हो गया है।' २

(२) 'पुत्री, कान करे की हस्तधार लदा हुआ
 अपने की तरह में रक्ता लव पड़ा हुआ
 बीना हो कीताई

१- बोरिन्द्र मिश्र - अश्विराम नरु मूर्धन्ती पृ० ७५

२- श्यामसुन्दर घोष - गीत- २ पृ० ६४

भीतर का भाव दरा

ऊपर और लुब्धा की दली नहीं दिया । १

(३) ' बाहुरी बने लगे है फिर
बाकस पूने शिवानी में
जब किसी से भी रहा जाता नहीं है
फन मछोरे- जेण्ही गुन धुम मछानी में । २

(४) ' यह बीना बिस्म तिर
कोठरे में हृद की उकास रहे
संभार पकल गई
लण्ड- लण्ड दूर फन बैठाल रहे
लण्डहर की उमर बहुत लस पावती
उफ पीर पीर तनके । ३

(५) कुछ रेखा बांध दिया बीनो फन
कूबों के बंद में
गुनरी हम गाते बीराहे से बनाने । ४

इस प्रकार नमनीत नारी के जीवन्य पक्ष की उद्घाटित करने में तो रस नहीं रहा, अपितु उसमें व्यक्ति और समाज की स्वीकारा है।

१- चारादत्त निर्मितीय- नोट- २ पृ० ६४-६५

२- लक्ष्म मोराम सिंह, वही पृ० ६०

३- रघुनाथ प्रसाद घोष - वही पृ० ६१

४- रमल सिंह - नोट बिस्म उतरा पृ० ४५

माहेस्वर विवारी के नवगीत गोष्ठी में
व्यक्त विचार उचित हैं :

“ हम जीवन में और विवृष्टता और
जवाबदा की स्वीकार करते हुए उनसे भ्रम रहे हैं, यह मैं उसे समि-
व्यक्ति के रहे हैं और दूसरी तरफ हम नवगीत लिख रहे हैं, धाकाओं,
गीतों, उपमाओं, तर्कों और नैपथ्यों पर कदम फुल्लों, मोहियों, तर्कों,
तुलनों के झट्टों, झुझियों, झिझियों, तर्कों और उपमाओं की कविताएँ
लिख रहे हैं। ग्रामीण रोमांच को स्तनीकृतताओं और कच्ची उम्र को
भाकुलताओं में हम नवगीतकार हिन्दी काव्य में उत्कृष्ट पिठास बना
करना चाहते हैं। हमारी दुनिया के नव उम्र काहित्यकार जिन की दुबान
में लिख रहे हैं लेकिन हिन्दी में नवगीतकार उस भाग को सुनाने की
कोशिश में पुच्छिता है जो नया कविता और नयी कहानों ने लगायी
थी ।”

आधुनिक युग का व्यक्ति अपनी परिवेश
में जो रहा है। वैदिक जीवन की उपलब्धि- पुस्तक, साहित्यिक जीवन की
पुस्तक तथा दृष्टन व्यक्ति को पराभव की ओर ले जाती है। व्यक्ति का
जीवन उत्कृष्ट बटित होजा या रहा है। नवगीतकार परिवार और
समाज से अपरोक्षव्यक्ति कृतियों की फाटा , दीकृता और उनको
अभिप्रेत का रूप प्रदान करता है। उसके लिए व्यक्ति का संहित वर्ग
तथा व्यक्तिवादीचिन्तन की अभिव्यक्ति वांछनीय है जो दूसरी ओर
समाज तथा परिवार से उत्पन्न नयी चिन्ता का उपघोष भी इन उल्लेख
नव गीतों की निधि है। एक ओर व्यक्ति पुरानी रुढ़ियों तथा परम्परा-

नव संस्कारों में उत्थान की दुसरी ओर व्यक्त के प्रसार में वैयक्तिक
चेतना को स्थापित करने में लगती है। नवगीतों में व्यक्त और समाज
की विधि समस्याओं तथा व्यक्ति एवं समाज की पंक्ति की अत्यन्त
विचारपूर्ण रूप से चर्चित किया है।

निष्कर्ष

नवगीत प्रभाव , शीन्दय , प्रकृति तथा
जात्यात्मिक विचारों से कलम बाधुनिक युग बीध से सम्पन्न महानग-
रीय जीवन, व्यक्ति जीवन तथा ग्रामीण जीवन को यथार्थपरक
विविध्ययुक्त है। बाधुनिक युगबीध के कारण व्यक्ति के व्यक्तित्व में
परिवर्तन आया । व्यक्ति को रोमानियस के अपने टूट गये । व्यक्ति
मोह भंग तथा पराजय बीध की स्थितियों से मुक्त हो गया । तब
कविता के माध्यम से बाधुनिकता का जो बीध नये वातावरण में
फैला है वह नये नवगीतकार के साथ गया है। प्रकृति कहीं से वह
व्यक्तिय व्यक्तित्ववादी है और कहीं अपने की समाज का उद्घोषक
मानता है।^१

अन्त में जन् ३४ तक नवगीत पर व्यक्त-
वादी विमर्श का प्रभाव रहा, तदुपरान्त सामाजिक चेतना की अनि-
व्यक्ति हुई है। नवगीत में रोमानियस , नागो- शीन्दय, महानगरीय
बीध से उत्पन्न कृष्ण, श्वाभ, कृष्ण, काला, बाधुनिक तथा
वास्तव विमर्श के भाव प्राप्त होते हैं। नवगीत में व्यक्ति के स्वतन्त्र
की भावना का यथार्थपरक चित्रण हुआ है। डा० एमोन्ड्र प्रमर अपने

जाफो और व्यक्तिवादी तथा आत्मकेन्द्रित स्वीकार करते हैं :

“ मैं नीचे से ऊपर तक चीखा कुकीला
काँटा हूँ। अतिसय बीसकता, विज्ञानवाद और बाप के महानाभति
परिवर्त की कुठो हरीदिमा का कुठा प्रतीति । मुझ किशो से कुछ
मनस्य नहीं । मैं बड़ हूँ । अपने जाफो सीखा हुआ अपने में हरा ।
मैं आत्मकेन्द्रित हूँ, आत्मस्य । ”

अतः नवनीतकार की वैयक्तिक अनुभूतियाँ
वैयक्तिक वास्तव्य , व्यक्ति स्वार्थीय तथा आत्म केन्द्रित विचारों
की प्रणय देती हैं। लोक जीवन की माना में अत्यन्त सन्निहित भाव हैं।
अन्यथा अनु ७० तक के नवनीत अतिशय में व्यक्तिवादी आत्म केन्द्रित
चिन्तन को समिप्ययित हैं।

अनु ७० तक के नवनीत पर व्यक्तिवादी
चिन्तन का अत्यधिक प्रभाव रहा है। इन नवनीतों में प्रणय, अन्वय-
बीध, प्रीति निरुण , कृष्ठा, अन्वय, अन्वय, अन्वय, अन्वय, अन्वय,
एवं नवनीत बीध एवं पारिवारिक दृष्टन के विविध दृश्य व्यक्तिवादी
विचार धारा से निरुत हैं। आलोच्य युग के नवनीतों में व्यक्ति का
विविध रूप से अन्वय हुआ है। अब व्यक्ति नये युगबीध एवं भावबीध
से प्रभावित है। अतिसय उक्त अन्तर्गत वैयक्तिक अनुभूतियों के माध्यम
से वैयक्तिक हीमानिष्ठ तथा नारी- अन्वय के विविध विचारों की

१- डा० खीन्ड प्रमर - अन्वयबीध चिन्ती कविता - अन्वय धुरी

पाली बलिरी और में १० १०५

उत्पत्ति है। इन नवगीतकारों की वैयक्तिक अनुभूतियाँ नवगीतों की नूतन विचारों प्रदान करने के लिए सतत प्रयास करती हैं। सारांश में नवगीतों में व्यक्तित्व का अत्यधिक महत्त्व रहा है। इन नवगीतों पर व्यक्तित्व-स्वातंत्र्य, वैयक्तिकता, व्यक्तित्व निर्मिता एवं वैयक्तिकतात्मिकता का प्रभाव रहा है। इसी कारण सन् ७० तक के नवगीतों पर व्यक्तित्ववादी चिन्तन की पूर्णतः शाय है।

सप्तम अध्याय

कविता में व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों का प्रतिफलन

उत्तम कव्याय

कविता में व्यक्तित्ववादो प्रसृतियों का प्रतिफलन

प्रस्तुत तीर्थ ग्रन्थ के तृतीय कव्याय में कविता के सम्बन्ध में विचार किया जा चुका है। परन्तु कविता में व्यक्तित्ववादी प्रसृतियों के प्रतिफलन के सम्बन्ध में विचार करना अधिक आवश्यक है। नयी कविता सम्प्रदायिक तथा पूर्ववर्ती परिस्थितियों की उत्पत्ति है। द्वितीय विश्व युद्ध की विभीषिका, मानव सूर्यों के विघटन, वैज्ञानिकता तथा बीडिकता के आगमन से कवि के मन में अस्तित्व-बीध को भावना आरम्भ हुई। महायुद्धों की विभीषिका, सुदृष्टिवादी आर्थिक विफलता, स्त्री-पुरुषों के सम्बन्धों में अन्तर्गत आदि में व्यक्तित्व के स्वप्न की तृप्तियाँ मिली। अनु ६० तक आते-जाते नयी कविता में पुरुषद्वेष और बीडिकता रोमान की आलोचना कृतविप्लव तथा नैतिक की बीडिक नयी विवशता से प्रभावित है। नयी कविता पर आध्यात्मिकता का प्रभाव रहा है क्योंकि आध्यात्मिकता का वास्तविक अन्तर्गत अन्त में हुआ^१। नयी कविता के सीधे-सीधे तथा सीधे प्रत्यक्ष प्रतिक्रियावादी आन्दोलन के कारण द्वितीय कविता में विविध बीड आये। नयी कविता के विरोध में डा० रयान परमार का काम महत्वपूर्ण है :

“संभवता यों है कि नयी कविता एक ऐसी जीवित है जिसे आध्यात्मिकता की ओर से हीनकर अन्तर्गत के अधिकतर अनुभवों ने भीना। वह अब उसके बीच विविध होने लगे तो वह ऐसे भतीजों के हाथों में फँस गई कि उसकी पुनर्जाति पर स्वयं 'जीवित' की बड़ी दर्द के भाव नये कवि

१- डा० रयान परमार- कविता और कला सम्बन्ध १० १६

२- वही १० १८

६ " शिकायत करती रही ।"

नयी कविता और कविता के आविर्भाव की परिस्थितियाँ भिन्न हैं।

कविता सातवीं शताब्दी की कविता है। यह साठौत्तरी पीढ़ी के "धीप" पर आधारित है। सन् ६० के उपरान्त भारत पर चीनी आक्रमण, पैगुहाई, बेरीकनारी, छद्मास तथा अन्ता की युद्ध तथा ब्रह्मसूत्र के कारण सामाजिक तथा मानवीय मूल्य परिवर्तित हुए। भारतीय जनमानस की विवेकी शक्तिय, संस्कृति तथा प्रतिदिन नये नये आन्दोलन एवं विचारों के ज्वलन नारों ने अपनी और ताक-पिबित किया। अब भारतीय व्यक्ति धर्म और ईश्वर से विमुख होने लगा। उसी परम्परागत अंधविश्वासों पर प्रहार किया। बरसोसता अब रसोसता माननी जाने लगी। नयी कविता में अस्तव्यस्त कवियों तथा ज्ञेय के एकत्र साप्राप्त्य के कारण काव्य में परिवर्तन की उठी। अतः विविध काव्यान्वोसनों का आविर्भाव हुआ।

कविता नगरीय सभ्यता की सगर्भपरक अभिव्यक्ति है। कविता बोधन की उन सन्ध्याओं की व्यक्त करती है जिन सन्ध्याओं की व्यक्तता योग्यता है, परन्तु अभिव्यक्ति प्रदान नहीं कर पाता। नयी कविता के व्यक्तिकारी अस्तित्ववाद में कुछ विचलितियाँ उभर कर बाह्य की जिनकी कंधी में लीजा गया था। उसी कंधी में लीजे हुए यह पोती है किन्हीं कविता में कविता कहा गया है।^२ कविता व्यक्त

१- डा० श्याम परमार- कविता और कला सम्बन्ध पृ० १६

२- डा० जीशम प्रकाश अवस्थी- नयी कविता के बाद पृ० २३

के विद्रोह की कविता है। यह विद्रोह निजीय और व्यक्तिगत के रूप में व्यक्त हुआ है। कविता परम्परागत मूल्यों के प्रति विद्रोह है। यह व्यक्ति के दर्द का यथार्थपरक विस्फोट है। कविता व्यक्तिवाद की और व्यक्ति-निष्ठा का परिणाम है।

(ब) व्यक्तिगत का नवीन्यता : मूल्यों के विद्रोह

कविता राष्ट्रीय परिस्थितियों तथा अन्तराष्ट्रीय परिवर्तनों से प्रभावित रही है। कविता में सौन्दर्य-बोध में परिवर्तन तथा मोर पैंग की सभित्तियाँ कार्य कर रही हैं। जीवन मूल्यों में शान्तिकारी परिवर्तन कविता को प्रथम विशेषता रही है। कविता-वादियों ने समाज, संस्कृति, संस्कृति में परिवर्तन तथा विनाश की लम्बा की है। परम्परागत मूल्य अब खंड से हो गये। व्यक्तियों के वापसी सम्बन्धी का आधार केवल स्वार्थ बन गया। जीवन में टीम-टाम तोलसफा तथा मूल्यहीनता का प्रभाव अधिक हो गया। श्याम परमार ने व्यक्तिगत भाव को इस प्रकार प्रकट किया है - " यह सब है कि हम एक तरह से 'नहीत्व' 'नास्तिकभाव' में जीते हैं। क्योंकि मनुष्य जितना है और स्वयं को विश्लेषित करते समय वह 'नहीं' रहता जो वह विश्लेषण के पूर्व होता है। निरन्तर वही से फूटते जाना- नहीं के विस्तारित में जागती 'नहीं' के तिर बढ़ना उसकी नियति है। कविता तमाम 'नहीत्व' के बाद जागती विह्वल की मुद्रिका है।" ^१ ये कविता के 'व' की निजीय बोधक नहीं मानते। परन्तु जगदीश बतुर्जदो व्यक्तिगत और निजीय को अनिवार्य मानते हैं। उनका विचार है कि 'व्यक्तिगत

१- डा० श्याम परमार, कविता और कला संदर्भ पृ० ७

२- वही पृ० २६

बीर निषेध की अनिवार्यता को सख्त मानकर स्वीकार करती है। उसे किसी प्रकार के व्यापीक या जतीयन्मुख वैभव जैसा रागात्मकता से तोड़ चुणा है। अगदीश चतुर्वेदी 'निषेध' की भूमिका में मानव नियति की अन्तर्राष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय घटनाओं के फल पिली हुई बताते हुए कवि की निषेधात्मक प्रवृत्तियों की काव्य की जाधुनिकता का पर्याय मानते हैं- 'ऐसे में कवि की सज्जता उसे इन घटना-कों से बीड़ती है और एक प्रतिक्रियात्मक विद्रोह उसकी धमनियों में कौंध उठता है, किन्तु समाज नामक तंत्र में उसकी सत्ता अत्यन्त नगण्य है। अतः वह विद्रोह के तिर प्रक्षिप्त हो उठता है। यह विद्रोह की भूमिका उसकी कृतियों में निषेधात्मक प्रवृत्तियों की रचना मुख्य के रूप में प्र-विष्टाप्ति करती है। वह उस नकार की ध्वन को अनिवार्यता मानकर अपनी रचना में संलग्न दिशाई देता है और वह परम्परा से आयास ही प्राप्त हो जाता है। यह निषेध ही वाच काव्य की जाधुनिकता का पर्याय है।' वस्तुतः कविता का नकार जैसा अस्वीकृति की प्रवृत्ति व्यक्त की विद्रोह भावना का परिणाम है। डा० परमानंद जीवास्तव कविता में निषेध और नकार के स्वर के सम्बन्ध में अपनी विचार उस प्रकार प्रस्तुत करती हैं :

... इसके पीछे सबसे महत्वपूर्ण कारण संभवतः यह है कि वाक्य-वैतना के विरोध में 'स्वतन्त्रता' का जो नारा दिया गया था, वह देखे देखे 'निषेध' और 'नकार' के स्वर में पुनः मिला गया।

१- डा० का गुलाटी - कविता और संघर्ष वैतना पृ० ६

२- डॉ० अगदीश चतुर्वेदी- निषेध, निषेध की भूमिका पृ० ६

३- डा० परमानंद जीवास्तव - नयी कविता का परिचय पृ० १०६

कविता में नकारात्मकता, अस्वीकृति, नकार तथा निषेध का भाव विविध रूपों में व्यक्त हुआ है। कविता के कवियों ने नैतिकता की परम्परागत व्याख्या को नकार दिया। उन्होंने नैतिकता के निर्णय में व्यक्ति-धनता, धर्म एवं वास्तविक से प्रभावित माना है। इस परम्परागत नैतिकता की नूतन व्याख्या मर्दाना-पंथन के रूप में उभरी है। कादोश चतुर्वेदी के लिए "माँ बीर बहन बीर कनो बीर प्रिया में अब कोई अन्तर नहीं दिखता है।" इसलिए ही उन्हें कुसटार देवियाँ लगती हैं :

“कुसटार देवियाँ नजर आती हैं
 कुछ बहलत बीर बंधन से दिखता हाथ
 किसी विनम्रता के छुटनी से ऊपर को बीर
 सरक जाता है।” ३

कविता के कवियों ने अस्वीकृति की स्वीकृति के समोपहास दिया है। कवि को समग्र भिन्नक समझा ही गई। राक्षसता जीधरी के लिए नारी कनो नग्न नहीं लगती -

“रूनी कनो नग्न नहीं होती है
 अपनी लज्जा से ढकी हुई
 उजाले में लीती है।” ४

१- कादोश चतुर्वेदी- ३ (१९८०) कविता बीर अविनय काव्य-

अभिव्यक्ति -२ पृ० १०६

२- डॉ० कादोश चतुर्वेदी- निषेध - इतिहासहन्ता पृ० २७

३- वही पृ० २७

४- डॉ० कादोश चतुर्वेदी- प्रारंभ पृ० ६०

परीत एवं परम्परागत व्यवस्था के साथ जीवन-
मूल्यों से विद्रोह करती हैं। उनके लिए वह 'निषीध' एवं 'नकार'
की गुफारें ही जब 'अनुभव-पर' बन गई हैं। एक निवर्तन प्रस्तुत है-

‘व्यवस्था ने विन्हीं

बावमतीरों की गुफारें करके वर्जित किया
है ही गुफारें हम कवियों का
अनुभव -पर बन गई ।’ १

एवं परम्परागत नैतिकता तथा मर्यादा के प्रति
नकारात्मकता का स्वर कविता का मुख्य विषय है। जीवन मूल्यों का
सिखन विविध प्रकार से हुआ है। जीत की मति को सस्ती दुकान तथा
सड़क की स्वस्थता के रूप में चित्रित करना मूल्यों के प्रति विद्रोह का
परिणामक है। नारायण साह परमार को कविताओं के अंत देखिए-

(१) ‘कुबल गया

सहज भाव से

एक बावपी

टुक के नीचे

(मत कुली स्वस्थता सड़क की) ।’ २

(२) ‘कुई करी

न करी

कैनुत उतार बी

१- डॉ० काशीराम चतुर्वेदी-परीत , वर्जित गुफारें पृ० १२४

२- डॉ० गोविन्दराम- कविता , लखनऊ १९६६ पृ० १४

बीस्त

बीर ब्यू में

लड़े ही बाबो बुध्नाप

बीरों माथ को

लड़े लस्ती हुकान

बीर कहो

मही पिलिगी । १

कविता की वस्तुवृत्ति ब्रह्मा नकार का स्वर
पञ्चायन के स्वर में परिवर्तित हो गया है। कहीं कहीं कल नकार विद्रोह
के रूप में तथा वात्स्य हत्या आदि कल्पना का चित्रण हुआ है। श्रीराम
छिंद को एक कदम तबरी का उदाहरण देखें-

फाँसी- मुनहसी कमानों का बरमा लगाये
एक कत्तम कन्या : विज्ञापन प्रतिनिधि
एक हिरोइन बनने के इरादे के घर भागो लड़की :

लच्छा- बाँधिनरी

बी ठोस माथ पेशियाँ बाँधो पहाड़िन बाँध

युनिवर्सिटि के हारटल के तान में

बहलकदमी कहो कमधिन - सी सेठबादी

कृत फिस्तार एक कदम तबरी ।

बिस्का

किछो बुद-बंसा, माँधो-नेहल-कैनेहो

सनिन- फिटलर- मुँधोसिनी

माथे- बरसू- पीटो से दूर दूर तक कोई बास्ता
नहीं

जुलसा- मुनरो- कोठर की शायदा भी उसमें लीज है^१।

शैल गोपास्त्व की 'मैं हूँ शिफे' कविता में वर्णनीय तथा मूल्यों के
सम्बन्ध की व्यापक स्थिति अवलोकन करने योग्य है :

‘सुमनस्य वफासानी में लिखा है
मेरा नाम
बहर की पिया है
बैठती रही से पीटो तक हसी किताब हूँ
बिरासत में प्राप्त निधि
जाने नकदितो
बीर
लिखा बीर सभ्यता कर्तव्य- पय
दिलर, तिरस्कार करती हैं मेरा
में व्यथित मैं सम हूँ
बैठती
उनके नेत्र, जब मुझे नहीं देखती

०

०

मेरी हत्या मेरे बाप ने जम्पती की
कर दी थी बीर मेरे लून में
रोंप दिए थे अपने संस्कार
बीरत, उस पर भय उस नेतिकता का

बामा पहने यह समाज
जो कभी नैतिक नहीं रहा । १

मीना गुलाटी को 'वात्स्यायन' तथा
'कट्टहास' कविदारों अत्यंत नयेपन का चित्रण करती हैं। उदाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) नामाकृत स्त्रियों के साथ शहर के भीले कुत्ते
गौरव की लड़की के सिर भगदते हैं बदनवार
मसियाँ में
प्रसन्न पीढ़ा में चीखती हुई गायें, केवल चीखती हैं
बन्धन नहीं देखो बहनों या बच्चों को
कभी भीमना चाहते हैं भाग्य साधारण होने का

० ०

एक बीने व्यक्ति को वहीं बाजार पर बिफ
गयी है

गोप से । २

(२) 'तन्त्रा' में कभी बाल नौबती हुई में
तनाव की कल्पना या सजुराही का
तनिवार्य परिदृश्य मानकर हुपकाप
सज्जदहरी के कीरे स्कान्त में कूद जाती हैं
बीर गुहाखी हैं कटे हुए
धर्त का तबपय मैदान-

बीर नाकाफुटी में उठती हुई चिराधि
 में दग्ध करता है स्वयं की
 समाधिस्य न होने के लिए । " ७

रमित कृन्तक मेघ वफा की पीढ़ी के ' संघर्ष में वस्त्रोक्त, नकार तथा मृत्यु
 के विद्रोह बाध की ' हमारी पीढ़ी के कितने 'प्यारे लोग ' कविता
 में मिश्रित करते हैं। एक निर्वर्तन व्यसोक्तार्थ प्रस्तुत है :

' कहीं महान् भारतीय संस्कृति के मृत्यों के पुंवारी
 हम

मेरा मसख नमस्क
 धीरे धीरे मसखी, विद्रुणक, विद्रोही, कुत्ते,
 उल्लू बन गये
 बार्तकवादी धारे लोग बार्तकित गिरा कट,
 कसकार हो गये
 बीर न जाने क्या हो गये
 उनके कड़े प्यारे नाम थे, देवीं के
 कड़े कड़े काम थे, तुम्हारे के ।
 वे अब दुहन्मता हो गये । " १

कविता पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए राम गोपाल गुप्त व्यक्ति के
 बन्धन होने विद्रोह तथा तीक्ष्ण व्यंग्यादाओं के संघर्ष में अपनी विचार
 प्रस्तुत करते हैं :

‘ लीकरी मर्यादाओं में बने से बहतर है
 स्वयं की कगार प्रशिक्षित करना- किन्तु निरावृत्त एवं कैमहीन ।
 मुकुं पीढ़ी की यही सब चीज़ाँ उकता है, कबलाब लग सकता है किन्तु
 बदले हुए लक्षि, बोधन मूल्य- रूपा प्रक्रिया को प्रभावित होने से
 क्या नहीं उकते और यही कारण है कि निरावृत्त दर्शन बाज के बहुमल
 की भाँति है। साठोत्तरी काव्य प्रवृत्ति में हम उमरः का प्रभाव की
 पाते हैं जो वह मीन केन्द्रित मनःस्थिति का उचित है और विविध
 स्तरों के माध्यम से अभिव्यक्त की है। बाज को रूपा की समझता
 सम्भवतः इसी में निहित है क्योंकि जहाँ यौन नहीं है रूपाओं में
 उतनी उचित नहीं है।’ कविता में व्यक्त का स्वयं विविध रूपों
 में उचित हुआ है। अब व्यक्त मर्यादा, नैतिकता, सामाजिक मूल्य तथा
 धार्मिक मान्यताओं के विरोध में है। उसका व्यवहार, लक्षि का दि
 भी परिवर्तित हो गये हैं। अतः वह प्रेम के संदर्भ में साधक प्रतीक्षा
 नहीं कर पाता है। मुख्यतः दुःख की ‘ ऊँच और उकताहट ’ की स्थिति
 विचारणीय है :

‘ अब प्यार यही भर से अधिक प्रतीक्षा नहीं
 कर पाता

तु नहीं और सही

० ०

फूलजुल बल्लों की तरह

सुख सौन्दर्य के लक्ष

बेहिसक हो प्रता से बदलने लगे हैं

जाने क्यों हर बीर से
 हर वस्तु से
 साधन से
 स्वयं से
 प्याराये । आराये
 जाहूँ बने हूँ
 जाने क्यों अब हम
 घर से
 दुखी हैं । कपटी हैं
 हूँ कपटी हैं
 उदासीन रहने लगे हैं । १

व्यक्ति की वसिहतियों के साथ-साथ उसके
 सोचने का ढंग भी परिवर्तित हुआ है। व्यक्ति समष्टि जियायी, अनु-
 तियों का केन्द्र है। तिनहुमार जीवास्तव 'नेतन वनी' कविता में
 इसी प्रकार के विचार रहते हैं :

कहाँ डफोडिल सिली
 कमल बीर गुलाब ही नहीं
 केकटस भी तिल्ली हैं
 भारी दिशाओं के स्वप्न मिलती हैं
 केन्द्र वह
 भारी परिधियों का

बादमी है

बेसों- दिशाओं

बीर संस्कृतियों के अन्तर के लिए

उनका होना साबितो है। १

अगदीत अतुर्वदी की लोक कविताएं अवोक्त के नवीन्यता के प्रति समर्पित हैं। उनमें नकारात्मक दृष्टिकोण, आत्म हत्या के आस्था, विस्मरण एवं लज्जन की मनोरूपिणी आदि के दर्शन होते हैं। कुछ निदर्शन प्रस्तुत हैं :

(१) " जन बीरों गतियों में भटकी- भटकी मेरा
कंधा टूट गया है बीर हाथ
कंधों पे लटककर बांधों में समा गए हैं। २

(२) " सुबह होते ही मर जाते हैं हम
रात भर हम कितनी ठंडों वाली सोचते हैं
तनाम आकृतियों में मन-पसन्द के रंग भरते हैं
पर,
धुरंध के उगते ही
मनहूस लोग नजर गाने लगते हैं
बीर , हम अपनी- बेकारी को सोचने लगते हैं। ३

(३) " देश एक लंगड़ाता बुढ़ मरोज---
देश प्रेम एक बय्याली का

१- कृति परिचय- दिसम्बर १९६७ पृ० ३६

२- कविता- अक्षि- १९६६ पृ० १८

३- डॉ० रमेश कुमार मिश्र- अविद्यविद -१ पृ० १४२

दिया हुआ परामर्श

वाकाल के बीच साहस के साथ लड़ होने वाला सिफ-
साताह---- सब ही गये हैं कलियुग या तमस्करोन या
मन्कार ।

बुद्धिजीवी भी रहे हैं गहरी नींव । " १

(४) " ज्ञायासु सगता है कि वर्तमान एक गहरी दुर्गम में
गुम हो गया है

समाप्त सम्बन्ध मात्र एक गाढ़ा धुआँ में जिनने डंक
लिया था

सारा शरीर और विचार- तन्त्र

बस नहीं हुआ ना कोई भी परिणय मिल

नहीं फूट रहा कोई नाम । " २

(५) " जीवत हमार जनमानुषी के बीच में एक सुहृदवार
लेजो है

सुबर गया ।

बीरवी को नामि से निकली बाग में पुनो जाने लगे
लतावदो ।

प्रेमिका के स्तनों पर की रोनी की नींदी हुए

आता आकाश उठाकर फेंक दिया बाँबी कीर

०

०

मेँ इतिहास की नकारता उस नर्म स्कान्त में प्रवेश
कर जाता हूँ।^१

(६) 'मुझे अब नहीं करना है विश्वास बदलती आकाश
पर

रिहियाते हँसकर पर

मेरी आकाश के पार कीहँसितान नहीं पा

सकता अपना वस्तित्व

तब परोक्षताओं के तिर मेरे पास नहीं

समय।^२

(७) 'कोई नहीं है उस हूँकी इतिहास का नकार कोई
नहीं है उस व्यभिचार का दायिदार

यह एक कौनो

नियति है और लक्ष्मी जितनी पर एक लाख कपड़ा

बँधा है।^३

एक अन्य कविता संकलन 'विषय' में अस्सी-

कृति के नवीनमेका तथा परम्परागत जीवन-मूर्त्यो के प्रति विद्रोह का
स्वर विद्यमान है। कुछ अन्य उदाहरण द्रष्टव्य हैं -

१- सौं जगदीश लुईकी - विनीध पृ० २६-२७

२- वही पृ० ३२

३- वही पृ० ३७

(१) 'मधुबिर्वा में निजुन रत कृत्ते बीर निद
 भुनते हैं वपी वपी बीरों को
 दुपचाप ।' १

(२) 'मैं एक कटे पट्टे का
 पट्टा हूँ निरक्षर
 बीर ही रहा हूँ जितना गुन्य

० ०

बीर मेरा निश्चय
 कबार मैं ढके हुए दुर्द-सा निरुपाय होकर
 कटपटाता हूँ
 बीर बीह होता है मिट्टी का कफन ।' २

(३) 'नगर जाती हैं बीर संस्कृतियाँ कफन होती हैं
 कस्बों में उन जाती छतिछान

० ०

छारा का छारा जोषित नगर बदल जाता है
 सब गृहों में ।' ३

(४) 'रौतों के विधवायें
 जोखती हैं नाचायक बन्धे
 बीर धूमकेतु का बह रहा हूँ मैं
 सीली नगर का सुत

१- सं० जगदीश चतुर्वेदी- विषय पृ० ४७

२- वही पृ० ४६

३- वही पृ० ४०

बीतों का कीमती

बीर पत्नी में लीये बच्चों की माताओं का सतीत्व
बाप नहीं दिलाई कोई भी दिला । १

- (५) हर तादी गुदा मर्द कायर है
हर तादी गुदा बड़ी फ्रस्टेट है
क्योंकि वह एक दूसरे को प्यार नहीं करती ।

०

०

हर बीरत अपनी पति से घृणा करती है
हर मर्द अपनी पत्नी को तलाक देना चाहता है । २

- (६) रीते हैं कुत्ते संछिन्न बोनारों के पाद
निग्रा में चँकि जाती है बेसीफ लड़कियाँ
पायल गोरियों को फड़फड़ाती है उनको देख
बीर विस्तर में रीते हैं गिरबिले सर्पों के मानव
सिंघीय आकार । ३

- (७) हरक करने को रह जाते हैं बूढ़े वासियाँ
या झूठ पर वासियाँ
बीर के गुलाम होते तपाम मर्द
फाँसों के दोलिपायों बढ़ाकर सड़कों पर घुमते हैं

०

०

एक अनिच्छित किंगों की सहाय में

१- सं० बगदोश पुरुषदो - विषय पृ० ५२-५३

२- वही पृ० ५६

३- वही पृ० ५६

गुबहरी के उमर । १

(८) ' उगत रहो है धीरकृति डेर सारे पिरसु
 बीर गुबहरी से बीर जयपिताय
 नमि बीठों पर कीद के पाव सिर मानवता बीत
 रहो है लगातार
 नोखो पड़ो देह बीर पूरे हुए बदा सिर स्त्रिया
 नमोधान से हटती हैं ।

० ०
 संवर भाँके कर सत्त्व बूटने जाते तोग नैकु
 हो गए हैं।

० ०
 धर्म के नाम पर बोधित है बंद नुमि हुए स्तन
 और उनकी भेषामि निमग्न है पूरी की पूरी लावनी
 सारा देह । २

(९) ' संवर पर मुनि विश्वास नहीं है
 पर --
 हर स्रो के पाव होते समय
 मुनि संवरीय भुत की कृपति होती है
 वे वास्तव होता जा रहा हैं । ३

(१०) ' भू----- भू----- सौ----- सौ-----
 भू----- भू-----सौ-----सौ-----

१- ६० जगदी लहरीयो - विजय ५० ६३ -६४

२- बहो ५० ६० ६० ६५-६६

३- बहो ५० ८३

कड़ी दर से काट कर रहो है
कुवारी प्योछिन । १

(११) ' परछटे हुँ गोप- बा

में पाछ फँदे छड़े माछि को हा नहीं सकता

नसित लवों और फिलाव की चिराधि से नही लव लीह में
में फड़ा हुँ निरुपाय । २

व्याख्यान: इन कविताओं में धर्म, संस्कृति ,

मर्यादा, सदियों तथा परम्परागत संस्कारों के प्रति विद्रोह का स्वर प्राप्त होता है। दूसरी ओर इतिहास, संस्कृति , धार्मिक अनुष्ठान एवं संस्कारों के प्रति नकारात्मकता के विविध दृश्य प्राप्त होते हैं। जब संस्कार पर विश्वास नहीं है, संस्कृति लीकती और निरर्थक है, नगर और संस्कृतियाँ मर रही हैं, धार्मिक स्थलों में मिथुन रखे हुए तथा गिद्ध कुकर्म करने में मग्न हैं, इनो पुरुषों नामर्द हो गये हैं, लड़कियों के विस्तरों में लिंगीय वातावरण रहे हैं तथा पुरी पोढ़ी जैय संतान है। इन कविताओं में परम्परागत जीवन मूल्यों का लण्डन तथा अन्वोदृति एवं नकारात्मक जीवन दर्शन का वाधुनिक रूप प्राप्त होता है।

रवाम परमार कविता के स्थापकों में गणनी रहे हैं। इनकी कविताओं में अन्वोदृति एवं नकार का स्वर विद्यमान है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) ' वहाँ उलका शरोर नहीं

कविता का कटा हुआ धड़ फटाया

कविता को एक और लपेटा करने के बाद वह संघा
ज्योंकि हून उसने नहीं, नन्हें हाथ ने किया था । १

(२) " इतिहास की गठि गल बातों हैं जब शहर का दिमाग
फिरता है

एक हावा होता है और हावों की गंध
नालों के पास चिपक्यों की नीकता बरस्तु सदियों
की पीठा है

मगर झुका है हून के फव्वारे । २

(३) " या मौत ? लड़कों की बंजरों पर सरकारों की
स्तरों

चिपकी हैं या क्षायाधिकों के कालम ?

० ०

मगर पासम की या सफ़दरबंग

संस्कृतियाँ उतरती हैं क्वालों से क्वालों में
बिलोन

ही जाती हैं । ३

(४) " स-क्या की उक्ताईं लड़े हुए दातों में

० ०

लौकहा इतिहास रीढ़ की टोकर पैता

लान पर बौहसे क्लेशिगिम्स की पीठ पर

१- सं० अमदीत बहुर्विदो- निजम पु० ६६

२- वही पु० ६६

३- वही पु० १०१

नहूँ जाता है।" १

- (५) "बर्षा जिस देह को लेकर सोया
उसे अपनी नजदीक अपरिचित पाता हूँ
कि तुम्हारे अनुभव के बाद
उसके हाथ
यह धारा देह धर्म
जीवनात्मिक लगता है।" २

- (६) "तुम्हें पता है मेरी कविता बिल्लाकर नारे लगाना
नहीं
जानती
उसे मैं स्मरार्थी की कृतियाँ नहीं बना करता।" ३

इन कविता उदाहरणों में कव्योक्ति का नया स्वर प्राप्त होता है। एक अन्य कविता के कवि नेना प्रसाद विष्णु का कव्योक्ति का स्वर जीवन-मूर्त्यों के प्रति कितना नकारात्मक है :

- "नर्म नर्म दोषार्थी पर कालिणित कीप्सागि
पूरी श्लाघनी की गाली उच्चारती :
झूट झूट हाथ
अपनी बड़ियाई में हा-

०

०

जीवन के एक दल के लिए

१- सं० जगदीश चतुर्वेदी- विजय पृ० १०४

२- सं० जगदीश चतुर्वेदी - निजीय पृ० ६७

३- वही पृ० १०३

सुन रहे हैं बचपु- मेसुन -सु बचपु । १

अतीत कथाओं के कथितार्थकन ' एक बीर
नंगा बादमी ' में मृत्यों के प्रतितीव्र आक्रोश विद्यमान है। वह परंपरा
मंचक के रूप में जीवन मृत्यों के प्रति विद्रोह का स्वर है। इस संदर्भ में
कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) इस बारहदिने के यदि गर्म कर दूं मैं
बारहदिना हो क्या होना पता । २

(२) ' वह नासियोंपि पड़े लिहूँ हृदय रफ-रफ-रफ
तसासता है
उनके पित्त जानि पर
वह योनों हाथों के बार- बार लहता है
रफा सास- सास गर्द
बारहदिना
वह सब स्त्रियों का पाता है नग्न
वह सब स्त्रियों को योनियों पर गर्म जराब
उठिष कर
उन्हें चाटना चाहता है
वह सब स्त्रियों को हाथियों की रीदना
चाहता है।
क्योंकि उसे बाहिए इन हाथियों में साने के

१- बी० कान्हालक्ष्मी - निष्प्रेम पृ० १०३

२- अतीत कथाओं - लिखत-लिखत एक नंगा बादमी पृ० २

तिर एक कदम । २

(३) " वह नगर के बीच में जाकर ही जाता है लड़ा
 और धीरे- धीरे अपने सब कपड़े उतारता है
 अपने उसके नयनों की देखकर होती है हेरान
 फिर उसके खिलाफ सभी कलहारी में उभरती है
 फिर
 स्त्रियाँ उसकी नयनता की देखकर हसती हैं,
 (काँफो है) , (भागती है) ,
 और नगर की सड़कों पर कोई खो नही जाती है
 नगर
 वह सब स्त्रियों की जानता है
 जो हर रात अपने मर्दों के बिस्तरों पर सीती है
 नयन । २

(४) " जब उसकी बोबो फ्लाव किया करता है
 तो वह निकट ही कहों हिप
 कर, र ही- नी - नी - नी , र-ही- नी- नी-नी-नी
 बाबाब सुना करता है । ३

(५) " तुम स्त्रियों के हर जुँह पर फेंकते ही बम
 होरामंडो, सीनागाबी, बोबो० रीठ पर कति ही
 करतीम ।

०

०

१- उत्तोल कमासी - एक ^{और} नया आवसो पृ० ३-४

२- वही पृ० ४

३- वही पृ० ४

तुम जीनीसुत की तमाम कुन्दर कुमारियों की
 लोहे के छंटाई से बांधी हो उल्टा
 उन्हें बाग की उबलती लपेटों पर बांध जाते हो । १

- (६) वह फूट- फिन्नियों की अपनी टांगों में कसकर उनका
 करता है भीम
 लाता है अपनी टट्टी
 पोसा है पिलाव ।

० ०
 वह तंग गुफा - कमरों में लहकों-
 पर्दों की एक- दूसरे में कसे हैं वेस्ता
 वह एक डूबो की रेत की सड़ी चीनि पर से चुनता है
 पबिलिया
 उन्हें बचाता है । २

- (७) नास्वाहा के ज्योतिषाचार्य ने कहा
 स्रोत का भीम तुम्हारे हाथ पर नहीं
 पड़े

० ०
 उसने तमाम ज्ञान लहकियों की हातियाँ काट दीं
 उसने कंठ ह्मास्तों की गिराया
 कंठ ह्मास्तों की लगाई बाग
 एक- ठार कर बिल्डन पार्क में फुकर उधने किया बात्मभीम

१- क्षतीज कमाती - स्क्रीनगा बादमी पृ० ७-६

२- बहो - पृ० १२-१३

बन्धे उसके फागुछको देखकर होती ।

हैं हीरान । १

- (८) अभी बनती- होखी की बी० बी०२००० के बी०
 ००० घर करता
 है छट्ठा
 उनमें बाटता है बैरयातयी है उठाये गये हून नरे कपड़े
 बफीम शराब- कोकीन- गाजासीये हुर बन्धी के मुँह
 पर देता है बांध
 प्रत्येक कृती दूयार- गये के प्रकृति उसके घर का पता
 पहुँचाता है वहाँ तक आत्म-मीन धर्मिय । २

- (९) अब पुस्तक खने नयी होगये हैं ' कोल्ड '
 अब सिगरी का फिग- स्थानी में नयी लगातो है बन्कर
 हुन्नाय

यह धारे नगर में नयी देख को हु फिली हुई है स्थान-
 स्थान । ३

- (१०) बहुत से लोग रहे हैं
 बी बफा लिंग- एक गिलाही में निबोद कर
 उसे बाटना चाहती हैं

१- सतीश बमालो - एक वीर नंगा बादमी पृ० १४-१५

२- बही पृ० २१

३- बही पृ० २०

बाजार को हर दुकान पर टंगे थ्रेडिंग को देखकर
 तुम हर बीस को हाथियाँ क्यों तरासें लगते हो
 तुम्हें हर सौ सवाँ बीस क्यों नंगे नजर आती है । १

शक्ति मोक्ष की कविता 'स्वरे को पुकार' में धार्मिक मूल्यों के
 प्रति विद्रोह का स्वर दृष्टिगोचर होता है :

'पीछे के नात को तरह पिछी प्रार्थनाएं
 कूरी छूट जाती हैं ।' २

कविता में कुछ महिलाओं का योगदान विशेष
 एवं मूल्यों के विद्रोह के रूप में उभरा है। स्व संदर्भ में मीना गुलाटी तथा
 मणिका मोक्षिनी उत्प्रेक्षणीय हैं। मीना गुलाटी के विचार साक्षर मूल्यों
 के विरोध में हैं उनके लिए बौद्धिक एवं नैतिक प्रतिष्ठान संसृष्ट हो गए
 हैं। उसीका उदाहरण इतिहास को जीवने की है। वह नर-शताब्दी
 में रहते हुए बस्ती शरीर पर कफोले उगते क्षुब्ध करती हैं। मीना गुलाटी
 के अनुसार शताब्दी का पुरुष समुदाय नैतिक है। परन्तु मणिका
 मोक्षिनीवाचक टूटन का क्षुब्ध करती हैं। एक कविता प्रस्तुत है :

सुबह होने से लेकर दिन टूटने तक
 मैं संभार करती हूँ रात का
 जब हम दोनों एक ही कोने में सिप्ट कर
 एक-दूसरे की

१- स्तनोत्थ वयासो - एक बीर नंगा वादको पृ० २

२- डॉ० रमेश कुन्तल मेघ- वनविध्यवित्त ४ - पृ० १२६

३- कृति परिचय (कवितार्क) पृ० ५७-५८

४- वी० पृ० ६३

कुत्तों की तरह बाटने
विवाह के बाद बिदा रहने के लिए
जानवर बनना पड़ती है।^१

ममता का सिया की कविता 'लिट्टी स्केप'
में नारी मुख्य मर्यादा की तोड़ रही है। द्रष्टव्य है एक निवर्तन -

‘तुम मेरे शरीर पर छे बार बार गुजर जाती हो
फिर हम -----
उठकर नास्ता तैयार करती हैं
डाक में जब डाक्टर की बीम के बिह जाया करती हैं।’^२

कविता के उपरिस्तिता उदाहरणों का जसोक्त
करने पर ज्ञात होता है कि कविता के कवि के लिए कविता-व्यय,
कल्पना, तय, विषय जगत् प्रतीक के प्रयोगों के कारण निर्जोष और
पुरानी पद्धतें हैं। उन्होंने कविता के काव्यात्मक ढाँचे को तोड़ कर
‘नृत्य’ स्थिति ताने का प्रयास किया। इन कवियों का ध्यान यौन
विक्षुब्धियाँ, कुण्ठाओं, मूल्यों के प्रति विद्रोह, आधुनिकता के मोह में
अस्वकृति जगत् नकार की ओर रहा है। ऐसे नृत्य को स्थिति निमित्त
हुँव को नकारात्मकता का ठोस रूप है।^३ इन कवितावादियों ने मर्यादा,
नैतिकता तथा रुढ़ियों के प्रति विद्रोह का स्वर तैयार किया। हमारी पार-
स्परिक मर्यादाएँ विनाँ दिन टूटती जा रही हैं और यही कारण है कि

१- कृति परिचय (कविताकि) पृ० ५४

२- कृति परिचय, सितम्बर १९६७ पृ० ६६ से उद्धृत

३- डा० परमानंद भोवास्तव- नयी कविता का परिचय पृ० ११२

बाप के बच्चे झूठों से परियों की कारुणिक कहानी के बावत न पढ़ कर उस तेल के बारी में झुकी हैं जो उनके बाप निष्ठ स्कान्त में निर्वस्त्र हाकेर लेते हैं। यदि कवि छ तथ्य को पंथितकर कर देता है तो कौन सा गुनाह करता है और क्या बरतीलता है जब १३५ कविता ने धर्म श्रृंखला, सदियों, परम्पराओं तथा नैतिक नियमों- विचारों एवं धर्मकारों का डट कर विरोध किया। स्थिति यहाँ तक ही गई कि बच्चे सिंग-रस को गिलास में निबोद कर चाटना, फेलाव पीना, टट्टी लाना बापि नैतिक एवं समाज के सामाजिक मूल्यों के विरोध में उभरता हुआ संघर्ष है।

कवि आत्मकथा तथा पुत्रु वरण से घबराता नहीं है। उसकी बस्त्रकृति बाधुनिकता का बावराण बौद्ध हुए नकार को मुझाकर में सम्पुत जाती है। कमलेशमुखी, लतीत बमासी, पीना गुलाटी श्याम परमार बापि की कविताओं में नगर-बोध से ऊँची हुई आत्मकथा दिताई देती है। समग्र कृति नकुली की है जो कि लक्ष्मियों की हातिया काटना चाहते हैं। जब कवि को अपनी फेलाव करलो है तो वह उस बाबाव की कविता में प्रस्तुत करता है। यह बस्त्रकृति-धीरे-धीरे मूल्यों के प्रति विद्रोहात्मक मुद्रा बप्ता लेती है। सामाजिक जीवन की बर्तार टूट जाती है, परिवार की मर्यादा तथा नैतिकता समाप्त हो जाती है। संस्कार एवं देवता सभी मनु-स्त दिताई पड़ती हैं। लक्ष्मी मूल्य कारण लति व्यथिततादिता के कारण ये कवि निरन्तर लक्ष्मी तथा आत्म-नीम के प्रति स्त दिताई देती हैं। नीमवाद की चरम परिणति नारी के नीम में दिताई पड़ती है। प्रायः समकाली युवा लक्ष्मियों या महिलाओं

१- राम नीपाठ गुप्त- कविता । प्रतिक्रियाएं- कृति परिचय पृष्ठ ०

के गुण कहीं में सिद्ध है। नकारात्मक दृष्टिकोण तथा व्यक्तित्व-सुख का परम आनन्द यही ही सकता है। अतिलय व्यक्तिवाद इन कवियों की वैचारिकता के व्यावहारिक ढाँचे में सुदृढ़ स्थित गया है।

सारंशः कविता-काव्यान्वोसुत वस्तुवृत्ति
 के नवीनमेव तथा मूल्यों के विद्रोह का कामाक्षि, नकारात्मक स्वर है। अतिलय व्यक्तिवाद 'व्यक्ति' के अस्तित्व में पड़ गई है। वह स्थायी, नारी-जीन में रत विद्रुतियों में फँसा रहता है। उसका व्यक्तित्व-सुख ही वैयक्तिक जीवन के रूप में विकसित होता है। समष्टि पर्याय, नैतिकता परम्पराएँ और नियम आचरण तोली जाती हैं। सतीश कमाती का 'एक और नया आदमी' इसी प्रकार की रचना है जिसमें नए आदमी की देखकर बच्चे हँसते हैं। यह प्रकार कविता धर्म, समाज, संस्था, नियम-आचरण, संस्कार तथा अन्य रीति रिवाजों के विरुद्ध व्यक्तिवादी जीवन-दर्शन का काव्यात्मक रूप है जो कि वस्तुवृत्ति, नकार एवं नकारात्मक दृष्टिकोण की निरति परटिका है।

(क) फुल्लफन-भेदधन : वाधुनिकता की विद्रुति

हिन्दी कविता में भेदधन तथा फुल्लफन का चित्रण प्रयोगवाद तथा नयी कविता में खासकर प्राप्त होता है। सन् ६० के उपरान्त कविता में वाधुनिकता के नाम पर विद्रुति की बांधी बांधी। अब कविता में फुल्लफन, भेदधन तथा विरंगतियों से भरे चित्र प्रस्तुत होने लगे। कविता बोट कविता, रमजानी पोढ़ी तथा अन्य काव्यान्वोसुतों में फुल्लफन, विद्रुति तथा भेदधन चित्रण की अधिक महत्त्व दिया।

कविता में वाधुनिकता की विकृति अधिक प्राप्त होती है। कविता में फुल्लपन, भवसपन का चित्रण अत्यन्त बोधस्थ, स्थिति तथा वस्तुस्थिति रूप में हुआ है। नारी-पुरुष के सम्बन्ध तथा दोनों के गुणगानों को वस्तुस्थिति कविता को फुल्लपन बनाने लगी। कविता के प्रायः सभी कवियों ने नारी-पुरुष के सम्बन्ध फुल्लपन रूप में प्रस्तुत किये। कविता का चित्रोद्धार भी नारी के चरित्रों की रचनाओं के बाव पास प्रस्ताव रहा। इसके लोक, नारकसिंहा, यौन, सिंग, संयोग, प्रणाम, पागलताना, कपानुस, विपत्तियों आदि के बोधस्थ तथा फुल्लपन चित्रण कविता में प्राप्त होने लगे। उन्हें फनी, बेरया एवं प्रेमिका के माध्यम वस्तुस्थिति में लाना, कक्षा लाने लगा। उनके रचे चित्र प्राप्त होते हैं किन्तु प्रणाम, लुप्तता, बोधस्थता आदि के वर्णन होते हैं। वाधुनिक बोधन की विकृति तथा फुल्लपन के चित्र कविता के सिर हट कर गये। गंगा प्रसाद सिन्हा ने इस विकृति के संदर्भ में नगर-बोध के द्वारा प्रस्तुत किया है : “कब वह एक दम नीची होती जाती संस्कृति के प्रतीकों का नगर है। मानव-संस्कृति की नाड़ी तोड़ केतना के प्रतीकों का नगर वहाँ कोई संभावना नहीं है। कोई रास्ता नहीं है। अपना एक तलाश कर रहे हैं। परमहानगर संस्कृति ने उस तलाश को पोढ़ाओं को वही धरोहर दी है, बाहे हम अन्तराष्ट्रीय बन गए हैं। महानगर न वास्था का सूर्य है न वास्था का ग्रहण। वह केवल वस्तुस्थिति के नदी बेहरे से हमें बिदाता है। हमारे काल की विकृत कहल हुआ।”

श्याम परमार ने विकृति के विविध संकेतों पर प्रकाश डाला है। साथ के बाद की ओर अपनाओं में अत्यन्त फुल्लपन

वीर बोभलस रोमान कारीफि है। यह वस्तुतः कृतृति नून्य बोभलस
करफा बितास का एक प्रमाण है।^१ कविता में विकृत सम्बन्धी की
बहु उदाहता गया है। कविता की नियति कैलेफ की नियति नहीं
बल्कि विकृत-सम्बन्धी की नियति है।^२ कविता नारी-पुरुष के
सम्बन्धी की अरसीस अभिव्यक्ति फुल्लफ तथा भविसफ की चित्रित करती
है। कविता में बाधनिकता के नाम पर विकृति का अत्यन्त मिनीना तथा
नीका के बासा चित्रण प्राप्त होता है। इस संदर्भ में कुछ कविता के
कवियों के उदाहरण प्रस्तुत हैं। गंगा प्रसाद विमल की कविताओं के एक
देसिर-

(१) " एक मनुष्याकार सगातार अपनी पंख से स्वत
नहार जा रहा है
जवारीं छिफलियाँ रेंगाते हुईं स्वत पीती हैं। " ३

(२) " बाधनी की निगलते भवन
हुंसी
फिर प्लाट की तरह पूँके पूरे नगर
रास्ते पर मेरे हुए कीड़े
वीर कधारे- अपनी केंचुल संभाते हुए
जाती से सगार जन्म- विकलांग केरी
टूटे- भेदे कहीं तरोर बाधाहीन लंबों पर
तटके हुए
नये संसा निरन्तर फुंक्ते तबे हुए स्वर। " ४

१- श्याम परमार- कविता वीर कसा संदर्भ पृ० १६

२- वही पृ० २४

३- विजय पृ० ६

४- वही पृ० २३

बगदोश चतुर्वर्गों को कविताओं में बाधुनिष्ठा की
विकृति तथा पुनरुद्गम एवं नवस का विघ्नण देखिए-

(१) छठाधि से भर रही है गलियाँ

०

०

में ठठाकर डीस रहा हूँ

(हः हः हः हः हः हः हः)

मुझ लारों को जगह गंध प्यारी है

कटी बन्नी और स्तन टूटी माताओं का वारुण
शौर । १

(२) 'समाम मरे नगर में भरी हुई है सुगंध

के दुर पीरत की, रानों की, बालों की

पाँद में पुती हुई सुसंक कविताओं की

लड़कियों की

०

०

मधुबिनी में मिथुन रत कृत्ति और गिद

भुनते हैं बप्पी बप्पी जगों की

बुफ्फाप । २

(३) मैं इन अलहाय बमगावहों को छठाधि भरी कोठरी
में

परकटे कज्जूर का फड़ फड़ा रहा हूँ

निरुपाय, देवस ।

१- विजय पु० ४६-४७

२- वहीं पु० ४८-४९

मैं एक कटे धड़ का
 फटा हूँ निराला
 जीर हो रहा हूँ जितना दुःख
 उन काष्ठ प्रतिमाओं और डोम तथा रत्ननियों
 के नगर में
 डोली में धर
 हः हः हः कर बँसते हैं मुर्द । १

(४) जीर पंखों में से निकलते हैं केंचुए
 केंचुओं के पंखों में फंसे रिरियासि हैं लोग
 मुँह से चुबाता है लून
 जीर पीप जीर मवाद ।

० ०

गरीर सड़ता है
 रिखी है बीर्य-कोणों के जंतु
 जीर स्थान कृत्ते की मौत पर जाता है । २

(५) रोगों को एक ही सिरट है
 बवाछोर, भगबर या गिनोरिया से
 पीप चुबाते स्वयं मानव- सिंग । ३

(६) उनल रकी है संस्कृति के र सारे पिच्छ जीर गुबरीसि
 जीर

१- विषय पृ० ५०-५१

२- ..

३- .. पृ० ५६

ऊदविलास

नी हीठी पर कीड़ के घाव तिर मानवता बीस
रहो है लगादार

नोती फहीदह बीर भूमे हर वसा तिर श्रिया
गर्भाधान से डरती है । १

(७) ' कीड़ पर बीनी में पाँच नहीं रख के फेड ठूँ है
बीर शहर के बाधे लोग कसडियाँ में तिर घूम रहे हैं
तथेविक के कीड़े । २

(८) ' नाटियों में कुतियों की सारी
कीड़ों से सवालव
बीर पूजा गृह में
गुहणी को
सून में तथपथ देह । ३

(९) ' मौत पे कदाती है
कटोरा भर सून तिर
एक नसे पास से गुजर जाती है । ४

(१०) ' सभी मर्द फिनिने कहुवाँ से पकने हर हैं सील
कैडे , सो सिमटी जा रहो है रति कति कुतियाँ

१- विजय पृ० ६५

२- वही पृ० ६६

३- वही पृ० ६७

४- वही पृ० ८१

कुन बरवों को कतार से टिड्डियों की टोली
नपुंकों का हुजूम । " १

श्याम परमार की कविताओं में कृच्छ्रपन तथा
भय का चिह्न प्राप्त होता है। बाधुनिकता की विवृति के कारण
कीक फिनि दुश्य प्राप्त होते हैं, कुछ उपाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) बीर लोहे की किरणों से ज्विदी जाली से
रक्त को जगह पर हुए सीपों के केंद्र गिरते हैं। " २

(२) " सुंद बीर गतिधों के धी उलफे बिहाने
फफुंदो कोद के इतने
निहते
मगर से हुंड की मुवावों से
निहते सुस नाहो लिखि----
धरे गते तक पहुँच कर
ये सब हक गये हैं । " ३

(४) " जाली बीर फफुंडों की दरारी में
बाह्य में स्फूर्तिगी है
जाली की कटीरियाँ साफ करें । " ४

(५) " गिरा शरीर सुगों से रींदा वा कुका होता है

१- विषय	पृ० ६१
२- वही	पृ० १०४
३- वही	पृ० १०६
४- वही	पृ० १२३

धीरे लिये हुर विदात की
 लँछित कपास, लून भोगे बालों के उलझे गुच्छे
 कटो बोदो बरिचयों में खत- लनी फिट्टी
 कटि, कँकड़, लंगडियों में फिके मांस के लोथ --- । १

सुतोश बमाली का एक और नंगा बादमी
 कविता लंछन, फुल्लफन, भदेषन तथा बोवन की विभिन्न प्तिनी
 विदुतियों के विषय है। इस फुल्लफन की चरम परिणति 'महाश्राव'^२,
 'एक और नंगा बादमी'^३, 'ऊतनलून'^४, 'कसहमति'^५, 'नगर बोध'^६,
 'यन्त्रणा'^७, तथा 'वदिक्रमण'^८ आदि में देखी जा सकती है। एक
 अन्य कविता 'निहिसिज्म'^९ में फुल्लफन की वदिक्रमणा दृष्टिगोचर
 होती है। एक उदाहरण प्रस्तुत है :

'हरि में बंद पुगी
 करती है झूँ- झूँ
 शिकमि में फेला बूझा

१- विजय पृ० १२५

२- सुतोश बमाली - एक और नंगा बादमी पृ० ३

३- वही पृ० ६-७-८-९-१०, ११

४- वही पृ० १५

५- वही पृ० १५-१६-१७-१८-१९

६- वही पृ० २१

७- वही पृ० २१-२२

८- वही पृ० २८

९- वही पृ० ३२

करता है 'रू' , 'रू' ।

हुले सेत में गधि का बज्जा

रीता है रू- रू । २

इसी प्रकार पीना गुलाटी, लीमि पीन, केशल बाबपयो , केशु बादि को कविताओं में फुल्लफन का चित्रण प्राप्त होता है। इन कवियों ने नदरफन को कोरा बज्जकार के रूप में बज्जाया है। इसका मुख्य कारण बाधुनिकता के प्रति मोह है जिसने विचार तथा बहिष्यवित को विकृति प्रदान की। इन कवियों ने बहिसय व्यक्तवादो वर्णन को प्ररुषण कर फुल्लद , भेदस तथा विकृतिपूर्ण दृश्य प्रस्तुत किये हैं। इस प्रकार व्यक्तवाद का कविता परक्यन्त प्रभाव है।

(४) जई का चित्रफोट- अय्य चित्र जीर बरलोसता

अ. १६६० ई० के उपरान्त सिन्दो कविता में चिद्रोह का खर मुसरित होने लगा। कविता के व्यक्त ने बरलोसता को जैम उमाप्त कर दो। कविता का 'व्यक्त' अपनी वैयक्तिक चेतना को व्यक्त करने के लिए संघर्ष रत रहा। अब व्यक्त बाधुनिक जीवन की विरंगलियों से ऊँकर स्वतन्त्र होना चाहता है। कविता में व्यक्त का जई नाम चिद्रोह , बरलोसता, अय्य तथा फुल्लफन के रूप में चित्रित हुआ है। अब कविता में व्यक्त के जई का चित्रफोट दो

हों में हुआ- अंग्रेज चित्रों की परमार तथा अश्लील यौनपरक दृश्य का चित्रांकन । कविता का व्यक्तित्व कौता और नंगा शरीर नगर में प्रस्ता है, वही उनके फातुस को देखकर हैरान होते हैं। स्त्री-पुरुषों के यौनपरक सम्बन्धों के संदर्भ में भी चित्रों की उरोडा है। अब अंग्रेज-चित्रों का केवल आधुनिक परिप्रेक्ष्य में होने लगा । अंग्रेजों के पुराने विषय समाप्त हो गये । अब आधुनिक वैज्ञानिक एवं बौद्धिक अंग्रेजों के चित्र बंकि होने लगे । कविता के अंग्रेज लेख - जहाँ भाषा से सित हो तथा वांछित मुहावरों से वाञ्छित है। इन अंग्रेजों के कारण कविता के महत्व में कृति हुई । जगदीश बसु, ईशान परमार, गंगा प्रसाद विष्णु, मोना गुलाटी, गोविन्द राय, जारा तिकू, शीघ्र मोहन, विनय, बन्धुकांत देवदत्त, परिल, कुमार मिश्र, रमेश गौड़, खोन्ट नाथ त्यागी, श्रीरामलाल, मणिका मोहनो यदि की कविताओं में व्यक्त के वर्तमान कीस्फोट अंग्रेज को लोखी तथा फेंकी अभिव्यक्ति लेकर अव-सरित हुआ है। कुछ उदाहरणप्रस्तुत हैं :

गोविन्दराय की 'सुन्दरि बनार गीत'

कविता में राजगोवि की अंग्रेज का लक्ष्य बताया है :

और फिर फट के सिर रौंटी मणिबालों पर
 कुं गैस, लाठियाँ और गोशियाँ, और
 बीस साल बाद अब बराकता
 वर्ग-सहयोग विद्वान्त का पहले से जाना पहचाना
 स्पष्ट परिणाम ।

१- जगदीश बसु- एक और नंगा वादगी पृ० १५

और जब इतिहास अपने को दुहरायेगा
 क्योंकि इतिहास अपने को दुहराता है, और
 इसलिए भूत है और पहाड़ियों को
 सींचा जायेगा आदम के लहू से । १

मीना गुलाटी का व्यंग्य चित्र प्रस्तुत है :

नामांकित स्तब्धों के साथ शहर के भीतों कृत्ते
 गोस्त की लड़की के लिए भगदते हैं बदबूदार
 गलियों में । २

अन्धोश चतुर्धरो ऊँचिताओं में व्यंग्य चित्रों बाहुल्य में भास्यती हैं :

(१) सभी बुद्धिबोधी उदास हैं या चुप हैं या कर्नात हैं
 गौरियों के नयनों बग्नो हैं । ३

(२) नगर मरति है और संस्कृतियाँ दफन होती हैं
 कस्बों में उग जाती हैं सल्लिहान
 और रेतों में ली जाती हैं नल्लिस्तान । ४

(३) मुफ्त वैज्ञानिकों से
 साहित्यिकों से
 तमाम नामर्द प्रेमियों से सहानुभूति है । ५

१- ऊँचिता - अप्रैल १९६८ पृ० २१

२- वही पृ० २५

३- विजय पृ० ४६

४- वही पृ० ५०

५- वही पृ० ५५

(४) 'हर सादी गुना मर्द कायर है
हर सादी गुना स्त्री फ्रस्टेटेड है
क्योंकि वह एक दूसरे को प्यार नहीं करते
क्योंकि वह एक दूसरे को बेय समझते हैं।' १

(५) 'उस काल को रह जाती हैं बूढ़ो छातियाँ
या झूट धावातियाँ
बीर के गुलाम क्षति तमाम फर्
फासनों के ढोले पायों बढ़ाकर सड़कों पर घुमती हैं।' २

इस प्रकार कविता में कीमती व्यंग्य चित्र प्राप्त होते हैं। ये व्यंग्य धीरे धीरे बरसते बिजली की बीर उन्मुख हो गये हैं। कविता ने नैतिकता तथा मर्यादा के नियम-वाचरणों को तोड़ कर अनिव्यक्ति को बेनिभक्त प्रस्तुत किया है। कड़वाहट और हसोहसा बन गई।

मीना गुलाटी के एक कवितारस को देखिए-

'लतावधियों के पुले हल्की प्रत डोली है
नपुंसकों और बलीकों के देश पर
बीर पुरा देश बदल गया है कंधों में बीर निगल रहा
है फिट्टी
फिट्टी के स्तूपों पर पड़े हैं लहकियों के रक्त।' ३

१- विजय पृ० ५

२- .. पृ० ६३

३- नई धारा- जून १९६७ पृ० १६

जगदीश बर्बेदा ने इस जलस्रोत को मुक्त रूप में प्रस्तुत किया है। उदा-
हरण द्रष्टव्य है :

- (१) माँ और बहिन और पत्नी और प्रिया में अब
कोई अन्तर
नहीं दिखता है मुझ
कुत्तार के बियरों नजर आती हैं
कुछ बहलत और कंपन है दिखता हाथ
किसी विवस्त्रा के पुटनों के ऊपर की और सरक
जाता है। १
- (२) 'जीली कुतियाँ की तरह बिड़ बाँकी सड़कों पर
बिस्म मुब्बाने के लिए
जिन्हें सड़ि हूँगे हाँफते हुए
पुरा शहर उस पैर- रत जीत के बातें नाद में दूब
जायगा । २
- (३) 'असौपन का चाँप रंग रहा है
और उगल रहा है वात्सरति का विषम
बंद हैं दरवाजे
और, बिस्तरों पर सामीश पड़ी है रात :
नोसो रोशनोमि बंद ।
सोते - सोते जीक जातो हैं जल
दिल्ले हैं स्तनों के स्तूप

वीर बह जाती हैं बन्धन की नवकाशियाँ
फल पर इत्तियाँ रंगती हैं। १

(४) 'ज्वालामुखी का ध्वस्त हो लावे से सराबोर
वीर कीमती रंग की कृपित से नरा हुआ
लौटता है बदस्मास ।
बपराय कू में बंधा हुआ जाता है बेइयासियों में

वीर समझता देखी के ध्वं- गिर
सुम्ता है । २

(५) 'नोखी पक्षी देख वीर बड़े हुए बसा तिर स्त्रियाँ
गर्माधान से डरती हैं। ३

अन्य कविताओं में 'व्यतिक्रम', 'नगर
येना', 'निराफ', 'संक्षिप्त यात्राओं के बीच', 'विपर्यय',
प्रेम कविता : १६६६', 'कापातिक प्रिया' ^४ आदि में अस्सील
पित्र प्राप्त होती हैं।

विनय की कुछ कविताएँ भी अस्सीलता से पूर्ण
ह :

(१) 'उज्ज्वल था कि विश्वामित्र ने
मेला के जितम के उस हिस्से को बुझा था

१- विजय पृ० ५३-५४

२- वही पृ० ५८-५९

३- वही पृ० ६५

४- वही पृ० ६०, ६२-६३, ६५, ७१-७२, ८८-९०, ९३-९४

जो मेला के लिए गोपनीय था । १

(२) 'मैं कितना चाहता कि मैं तुम से प्यार करूँ

तुम्हारी देह पर उलट दूँ

रक्षादियों की उपलब्ध कराऊँ

तुम्हारे स्तनों पर लटका दूँ मातृत्व का फूटा । २

मीना गुलाटी, मणिका मोलिनो, त्याग

परमार, शीशिर मोहन, वादि की जीक कवितारं वरसीलता से सिन्धु

हैं। ज्योति जमाती के 'एक और नंगा वादपो' में जीक कवितारं

वरसील सिद्धि से सिन्धु हैं। छंदस में 'वस्त्रोक्ति', 'नगर मृत्तु',

'एक और नंगा वादपो', 'विनाश एक सम्भावना है' 'वात्प-

नीम', 'नगर बोध', 'वसिष्ठमण' वादि प्रमुख कवितारं हैं।

काः कविता व्यक्त के कई के विस्फोट के रूप में व्यंग्य सिद्ध तथा

वरसील सिद्धि को प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार की रचनाओं के लिए

वसिष्ठ व्यक्तिकारों प्रवृत्तियों ने विशेष योगदान दिया है।

(६) बटिल अभिव्यक्ति नाम सपाटबयानी

छन्दस के उपरान्त कविता के कथ्य एवं लित्य

के साथ साथ अभिव्यक्ति में भी उत्तर आया। जब अभिव्यक्ति सीधो

सरल तथा भावनासिद्ध नहीं रही। अभिव्यक्ति ने बटिल और कठिन

मार्ग लीये। कविता के साथ यही हुआ। कथ्य के विचार निरंतर चौकाटे

१- निजीय पृ० ६०

२- वही पृ० ६२

३- एक और नंगा वादपो पृ० २, ४, ५, ६, ७, १२, १३, १४, २१, २२

रहे, इन्हीं अभिव्यक्ति भी बटित हुए। परन्तु दूसरी ओर 'व्यक्ति' के अन्तर्गत की बातों को स्पष्ट एवं व्यापक रूप में कहने के लिए 'साफ-गाई' की आवश्यकता पड़ी। अतः कविता की अभिव्यक्ति सपाट बयानों की ओर भी मुड़ी। बटित अभिव्यक्तियाँ नारी-पुरुष के सम्बन्धी तथा प्लाने दृश्यों को प्रस्तुत करने लगीं तथा व्यंग्य चित्र एवं आलोचन को मुद्रा के चित्र सपाट बयानों के द्वारा विकसित होते रहे।

कविता, प्रसङ्ग, भवेत्तत्, विकृति एवं कल्पना के दृश्यों को प्रस्तुत करती रही है। सपाटबयानों के द्वारा विविध प्रकार के विचार सीधे सपाट एवं शैलीय प्रस्तुत होती रहे हैं। श्याम परमार ने 'संकेत' में 'कोलाय' वृत्ति को महत्वपूर्ण माना है : 'साफगाई' पद्य कविता की भाषा रोमाण्टिक स्तर की नहीं है। उच्च जालोनविद्याम है। स्पष्टतः कल्पना उसका स्वभाव है। जीवन में प्रवृत्ति 'कोलाय' वृत्ति का विघटन कविता की भाषा को शक्ति और शैलीय बनाता जा रहा है इसलिए इसके कृतित्व में कोई संशय नहीं, संगोष्ठाभास नहीं।¹ सपाट बयानों तथा बटित अभिव्यक्ति कविता की लय, रूप तथा संगोष्ठात्मकता से दूर ले जाती है। कविता के साथ भी यही हुआ। कविता का व्यक्ति विद्रोही, परम्परा भंग, क्रांतिक, कथामाफिक, वात्सल्यमयी तथा नारी वास्तव के रूप में चित्रित हुआ है। अतीत कालों का कविता ऐक्यन 'एक और नंगा बादमी' काव्योत्तर पूर्ववर्ती 'इतिहासकृत' , 'विकृति' विनय को क्रांतिक, 'मुतबिर' , 'सोफि मोहन को प्रवर्तन' 'महिमा' , 'परिवर्त'।

१- डॉ० श्याम परमार, 'अकविता और कला-संदर्भ' पृ० ३०

१- निबन्ध पृ० २६- २७-२८

२- वही पृ० २८-२९

३- वही पृ० ६०-६१

४- वही पृ० ६२-६३

५- वही पृ० ८४, ८५-८६

श्याम परमार को 'कविता से बाग' , 'कूठासूखी सीढ़ी पर लट्ठियाँ' ,
'हिप्पी फ्रीमन' , 'प्रतिन्यास' , आदि कवितारं बटिस अभिव्यक्ति
एवं सपाट बयानी से शिक्त हैं।

कविता के लोक कवि - मोना गुलाटी ,
हेलात बाजपेयी , गोविन्दराय, विष्णुबन्धु नाई, धीमि मोहन ,
रमल गौड़ , मोराराम सिंह, मलय , विमल , परित , जगदीश श्रीवास्तव
आदि भावगणकत्ता के रूप में कविता के क्षेत्र में दृष्टिगोचर होते हैं।
ज्यों वकार अन्य कवियों में गंगा प्रसाद विमल, जगदीश चतुर्वेदी, श्याम
परमार , बन्धुकान्त देवतासि, सुखवीर सिंह खीन्द्र नाथ त्यागी ,
मणिका मोहनी, शैल श्रीवास्तव आदि गम्भीरतापूर्वक विचार का प्रति-
पादन करते हैं। कविता में सपाट बयानी ने व्यक्ति को वैयक्तिक केतना
को प्रभावित किया है। परन्तु बटिस अभिव्यक्ति ने लौकिकी वाते, ज्यों
दृश्य प्रस्तुत किये हैं। ज्यों कमाखी की ८५० ०००० वि०^५ , बटिस
अभिव्यक्ति के संदर्भ में एक सही उदाहरण है।

सारसिः कविता में बटिस अभिव्यक्ति तथा
सपाटबयानी दोनों ही प्राप्त होती हैं। कविता का व्यक्ति बतिसय
व्यक्तिवादिता के कारण जगदीश कीमुद्रा में सपाटबयानी में अपनी बात
कहता है एवं दूसरी ओर जन्तुमुखी तथा व्यक्ति केन्द्रित होने के कारण
बटिस अभिव्यक्ति प्रदान करता है।

१- निधीय - पृ० १०२-१०३-१०४

२- विषय पृ० ६७ से ६६

३- वही पृ० ६६ से १०१

४- वही , पृ० १०१ से १०३ तक

५- ज्यों कमाखी- एक और नंगा वादमो पृ० ३०

(उ) अपरिचित कथ्य और नौका देने वाला शिल्प

प्रायः हिन्दी काव्य का कथ्य परम्परागत विषयों तक सीमित रहा है। आधुनिक हिन्दी कविता ने कथ्य के नये विषय चुने। नयी कविता कथ्य के विस्तार क्षेत्र को लेकर अतृप्त हुई। कविताएँ जति जाति इन विषयों का तापमान बढ़ने लगा। श्याम परमार ने कविता के तापमान को पकवाना है। 'नयी कविता की कड़ाकार मैली' (इतिष्टीकृत स्टाल्ड) में गुंफित केसर का फिलौर भाग कविता में निर्वाचित होनेसे समुदाता कहें। उसने मैली और तथ्य के लिए परिपूर्ण पाठ्यक्रम को लीज में भाषा के औपचारिक अभिव्यक्त्य की उतार हासा। ऊँचे कहीं कहीं निश्चय ही कविता 'टिप्पणी' ही जाती है। क्योंकि उभर जाने वाले नवकविता कवियों के लिए नौकाएँ एक कथ्य का काम करता है। वे एक दूसरे के दर्द को धुँधली हैं और होता यह है उन सबको गंध कुछ समय तक एक कैदी होती है। सब कोटि की समान रचनाओं में कविताएँ अस्मर्य (हायफिक्श) फिलौर विज्ञाता के प्रमाण हमें मिलते हैं। 'कविता के सब तापमान ने अपरिचित कथ्य दिया। यह नारी पुरुष के स्कान्त सम्बन्धों के चिन्ता को प्रस्तुतीकरण है जो कि कविता के लिए प्रायः नया है। कथ्य की भूमिका और अघाटक्यानों की अभिव्यक्ति ने अस्तीतता, बाधना आदि के चित्रों को वक्षित किया जाता रहा।

कविता का शिल्प- विधान बँकाने वाला है। भाषा, पुष्पावरे, कथ्य भूमिका आदि के परम्परागत प्रतिमानों को तोड़

कर कविता ने चौका देने वाला एक नया शिल्प प्रदान किया। जब कविता में अपरिचित कथ्य का आगमन हुआ तो भाषा, सय, अभिव्यक्ति आदि में परिवर्तन आने लगा। इसके कविता के कवि ने आधुनिक, बटल सपाट आदि प्रयोग होने लगे। कविता परम्परा को विरोधी रही है।
 कतः सक्- प्रयोग, सक्च चयन, मुहावरे तथा भाषा का सपाटपन एवं कार्योक्ति लगने लगी।

अपरिचित कथ्य के प्रयोगों के कारण कविता में बोभत्स, फुल्ल, नदिस, विभूत तथा घृणास्पद विचार्यों को विचार्य बना दिया गया। जैसे कवितावादो शिल्प में चौकाने वाले प्रयोग करते हैं। सबसे बनाही, बनाही चतुर्वदी, मोना गुलाटी, श्याम परमार, मणिका मोहिनो, विनय, चन्द्रकान्त देवतासे आदि की कविताओं में नये शिल्प का प्रयोग प्राप्त होता है। जैसे फुल्ल, बोभत्स तथा नदिस विचार्यों के कारण विरसगति एवं विभूत के विविध रूप कविता में वृद्धि होते रहे हैं। नारायण साह परमार की एक कविता देखिए-

कुल्ल गया
 सस्य भाव से
 एक आदमी
 दूक के नीचे (मत हुवी रखवला सड़क की) १

कतः कविता में एक ओर विरसगति, विरसता के वर्णन होते हैं तो दूसरी ओर अपरिचित कथ्य एवं चौका देने वाले

शिल्प का प्रयोग प्राप्त होता है। कविता का कवि, व्यक्तिवाद को अत्यन्त तीव्रता से ग्रहण करता है। उसका व्यक्ति आत्मभोग तथा स्व-केन्द्री हो जाता है। कई का पिस्कोट विद्रोह परम्परा पैदा के रूप में होता है, परन्तु नये शिल्प का प्रयोग एवं नये विचार्यों परकविता सूक्त व्यक्तिवादी दर्शन पर आधारित है।

(ऊ) निष्कर्ष

सू. ६० के उपरान्त हिन्दी कविता के कथ्य एवं शिल्प में महान् अन्तर प्राप्त होता है। कविता, बोट कविता, रक्तानी कविता, कोलाब, कविता आदि इसके प्रमाण हैं कि कथ्य की नयी भूमिका ने विविध प्रकार के दृश्य प्रदान किये हैं। कविता नकार, अस्वकृति की कविता है। परम्परागत नियम-वापरणों को तिराजित देने के कारण दोहन सूक्तों में विद्रोह कविता के 'व्यक्ति' का मुख्य लक्ष्य प्राप्त होता है। अब व्यक्ति अकेन्द्रित, आत्मभोगी, व्यक्तिनिष्ठ अध्यात्मिक, नीतिक एवं मुक्त हो गया है। उसकी माँ, बहन, पत्नी, प्रिया एक ही लगती है। समाज की परांदा टूट गई। इस कारण व्यक्ति मुक्त, वापरण होने एवं संस्कार विहीन हो गया। उसने बाधु-निकता के नाम पर कविता में विद्रुत विश्व एवं नंगाफन प्रदान किया। नीक कविता ने आक्रोश एवं परम्परा पैदा के रूप में पिनीने, बीमत्त, फूहड़, पवित्र तथा बहुरिकर स्थल वफा कविताओं में वीक्षित किये।

व्यक्तिवादी चिन्तन आत्म सुत का चिन्तन है। कवितावादी भी समाज से उसी आत्म सुत के अन्वीषी कवि हैं। इनका

कई कथ्यन्त तोग्र तथा बधिक है। हरी व्यंग्य, वरसोसता, पटित बधि-
 व्यक्त , उपाट नयानी, तपरिणित विचारों को परमार कविताओं
 में प्राप्त होती है। निष्कर्षतः कविता में व्यक्तित्ववाद के नकारात्मक,
 स्वकेन्द्री, कामाधिक तथा ईस्कार विरोधी विचारों को काव्यात्मक
 रूप में स्थापित किया है। अतः कविता, यीर व्यक्तित्ववादी विचारों
 का काव्य- ईकतन - हा बन गया है।

अष्टम अध्याय

सातवें दशक की कव्य काव्य-प्रवृत्तियाँ :

व्यक्तिवाद के परिप्रेक्ष्य में

सातवें दशक की अन्य काव्य-प्रवृत्तियाँ :

व्यक्तिवाद के परिप्रित्य में

सातवें दशक के प्रारम्भ से ही नयी कविता जीवन की जीवन्त समस्याओं से स्तराने लगी। नया व्यक्ति नयी कविता को लदियों से ऊँचा बंधे- बंधाये मुहावरों से ऊँचने लगा। अब कवि की नयी कविता भी पुरानी लगने लगी। श्याम परमार की लगने लगा कि "नयी कविता एक ऐसी चीज़ है जिसे शायदादो चीज़ों से डीनकर सप्तकों के बध्किस्तर कुजों में भोगा, पर जब उसके को लिपिल होने लगे तो वह ऐसे भयोजी केलायी में फँस गई कि उसकी दुर्नति पर स्वयं कविय को कई वर्षों के साथ "नये कवि से" शिकायत करने पड़ी।" सातवें दशक तक जाती जाती मूल्यों के प्रति विद्रोह एवं नकारात्मकता बादि कविता में नये स्वल्प लेकर उदघाटित हुए। अब कविता भीतरों बटिलताओं को व्यक्त करने में सक्षम हो गई। कविता में होने बान्धोसन हुए कि कविता का स्वल्प परिवर्तित होने लगा।

सातवें दशक का "व्यक्ति" सामाजिक परिवर्त के प्रति संकीर्ण होने लगा। उसे वैयक्तिक दुःख की लालसा में समसामयिक समस्याओं तथा संकटों को सबसे बड़ा संकट मानने पर बाध्य

१- डा० श्याम परमार- कविता की रक्षा- सम्बर्ध ५० १६

२- वही ५० १८

किया। इसे 'व्यक्ति' वात्पकेन्द्रित होने लगा और वह व्यक्ति-वादी बन गया। व्यक्तिवाद को सर्ववाद के रूप में सातवें दशक की कविता में प्रस्तुत किया गया। काः वासोप्य कविता विप्रीक, वसोस्ता, कीद्विस्ता, पर्यादाविहोन तथा परम्परामक के रूप में उभरी। इस कविता का पूरा स्वर परिवार, समाज, धर्म, राज्य आदि के नियम, परम्परा एवं संस्कारों के प्रति अव्योकार का रहा है।

सातवें दशक में कनक काव्यान्वीसनों का जन्म हुआ। ये काव्यान्वीसन व्यक्ति को क्षुब्धतियों तथा वनिध्यस्थित को स्वतन्त्रता के प्रभावित है। उन्होंने समाज को प्रायः लो ०००० वर्जनाओं की अव्योकार किया। देश, राजनीति, समाज, संस्कार, वर्जनाओं और नैतिक मूल्यों को नकारते हुए उन पर तीव्र व्यंग्य किया। उन कवियों में व्यक्तिवादिता का उन्मेष समाज की वैयक्तिकता की लेकर है। समाज और राजनीति तथा वास्तव्य के प्रवर्तित मूल्यों के प्रति जाग्रोश के और स्थापित मूल्यों के प्रति जाग्रोश है। उनके प्रति अव्योकार का भाव है। इस युग की कविता का पूरा स्वर निषेधात्मक व्यंग्य है। इस नकार और निषेधात्मकता का प्रभाव सातवें दशक के कवि, व्यक्ति तथा कविता पर स्पष्ट दृष्टिणीकर होता है। इस उद्भव में बोट कविता, रमलानी पीढ़ी, अव्योक्त कविता, सुसुखावादी कविता, कविता, साठोत्तरी कविता आदि विशेष रूप में महत्वपूर्ण हैं।

इन काव्यान्वीसनों के वाचिर्भाव का मुख्य

१- डा० बीम प्रकाश अवस्थी- नयी कविता के बाद पृ० १५

२- वही पृ० १०

कारण नयी कविता के गुट विरोध के प्रति आक्रोश रहा। एक अन्य कारण रहा गिन्सबर्ग तथा बोट बोडी, स्मथानो पीडी आदि का नैतिक मूल्यों के प्रति आक्रोश का स्वर। यह कविता के आन्दोलन समान बालोच है। यहाँ हम कुछ महत्वपूर्ण काव्यान्दोलनों पर प्रकाश डाल रहे हैं। कविता के संदर्भ में पीछे विचार किया जा चुका है। 'ज्योत' की सातवीं दशक के काव्यान्दोलन में प्रवृत्ति कर रहे हैं। सातवीं दशक के काव्यान्दोलन पर व्यक्तिवाद, कविवाद, नकारात्मकता का प्रभाव है। इन काव्यान्दोलनों की परिस्थितियों का विकास, तथा प्रकाशन बाधों पर फल विचार कर चुके हैं। यहाँ सातवीं दशक के काव्यान्दोलनों की व्यक्तिवाद के परिप्रत्यक्ष में व्याख्याति करने का प्रयास किया गया है।

कतः कुछ सप्त काव्यान्दोलनों पर ही संक्षिप्त रूप में विचार किया जा रहा है। उनको समग्र प्रवृत्तियों की व्याख्या आवश्यक है। क्योंकि सातवीं दशक के ये सप्त आन्दोलन आधुनिक व्यक्तिवाद के गुटवाद से प्रभावित हैं। तथा इनमें से कई तो बहुत कम समय ही जीवित रहे। कुछ कविता आन्दोलनों में एक या दो कवि ही अधिक प्रसिद्ध हुए। कतः उनके काव्य की प्रतिबिम्बित कविताओं एक ही कविताएँ ही निदर्शन रूप में प्रस्तुत की जा रही हैं। सातवीं दशक की इन काव्य-प्रवृत्तियों का अध्ययन व्यक्तिवादी परिप्रत्यक्ष में कर रहे हैं। इसलिए अन्य काव्यान्दोलनों से अलग इनकी काव्य प्रवृत्तियों की रेखांकित नहीं किया जा रहा है।

(ब) बन्धोक्त कविता

बन्धोक्त कविता के अन्तर्गत श्रीराम शुक्ल, फलशराम चौधरी, राकमल चौधरी, नीलम फलशराम शर्मा, लालू शर्मा,

मुझारादाय , रब्बी बादि एकदमकदक० कवि वस्वीकृत को मुझा में
 दृष्टिगोचर होती है। मझारादाय जीधरी रमलानी पोढ़ी है जुड़े रखी है
 जीर राकमस जीधरी कविता, बोट कविता है भी उकड़ रहे हैं। राव-
 कमस जीधरी एक प्रतिभावान कवि रहे हैं। परन्तु उनके जीवन तथा चिन्तन
 में व्यक्तिवादी जीवन दर्शन का अत्यधिक प्रभाव रहा है। उनका कई एक
 ऐसा ' कविता कला मेरी अपनी कविता कल मेरे लिए क्या कर्म रखती
 है- ' मैं ' व्यक्ति ' को अत्यन्त परस्वपूर्ण स्वीकारता है- ' सभी
 फलते मेरा अपना मनुष्य, क्यातु मैं । क्यातु, मेरी अपनी कविता का सभी
 फलता जीर सभी परस्वपूर्ण विषय मैं रखी हूँ । मैं, जीर मेरा अस्तित्व,
 मैं , जीर मेरा कई, मैं जीर मेरा व्याकरण । ' राकमस जीधरी को
 लम्बी वस्वीकृत कविता ' मुक्ति प्रयोग ' वात्म- स्वीकृतियों- मेरा
 लम्बा बयतव्य है। अब : राकमस जीधरी को कुछ रचनाओं का प्रत्यक्ष
 वस्वीकृत कविता के अन्तर्गत करना अवश्य है। वस्वीकृत कविता जीर कविता
 कहीं तक एक ही होगी । वस्वीकृत कविता का कवि व्यक्तिवादी चिन्तन
 है पूर्णतया प्रभावित है। नकार, वस्वीकृति, विरंगति, बरतील दृष्टी
 का चिन्ता, नैतिक मूल्यों के प्रति वस्वीकृति को मुझा बादि वस्वीकृत
 कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। श्रीराम शुक्ल के ' '
 लकीरवाँ लम्बकार ' ईश्वर पढ़ने के बाद राकमस जीधरी ने ' एक
 कविता (तुम्हारे लिए) लिखी । इस कविता में सामाजिक मूल्यों
 का बरकना, नैतिकता का हाथ, जीर बरतील चिन्तों को वस्वीकृत को
 मुझा में प्रस्तुत किया गया है :

स्त्रियों को तिकीनी लगावों में

१- लहर- फावरी १९६६ राकमस मूल्यकिन के उत्तराद ५० ४६

छिफ-छिफो लिये

उग जाये हैं

वपने देश का पुरुषा मुह के

रास्ते से कहता है

वीर्यपात

क्यलिर छिना बटल हो गया है-

कवि- कर्म

छिना कल्लि हो गया है

कस धरतो पर जोना

कल्लि भय कस से भयना है

फलाव

वीर कविता से भयना है

फलावो योनि धर्म

कस कवि बेचारा क्या करे

किस मातु कर्म में

बापस कस जाय कधीमुल

किस कल्लिनाह में । १

एक अन्य कवि कवयसिंह की कविता लक्ष्मीभूषा
व्याजसोतता के चित्र के प्रस्तुत करती है :

वीर्यपात करना तो बड़ा बुरा है

किन्तु धीरे वीर्य को सम्भात कर

कौन बोसली में बन्ध होगा ?

सारी मैम

जब तुम्हारी बहल नही

जब हम टूट टूट में

बन्धे पैदा करेंगे । १

जब प्रकार सामाजिक , नैतिक , धार्मिक
मुल्यों के प्रति व्यक्तित्व कविता का विपरीत निरन्तर वैयक्तिक " सोम "
के प्रति है। राजनीतिक से जुड़े हुए व्यंग्यात्मक संदर्भ भी कवि-स्थान
पर प्राप्त होते हैं। रवीन्द्र की " कैथासिस " कविता का एक उदाहरण
देखिए -

रोटी के टुकड़े के सिर

बफतर में लपटा हूँ बातों को छात

गोस्तरीर हूँ जसिर

किमकीलता हूँ बीबी को

का लगी सास

हुविधा मुस की कल्पना

फिर समूचे मुस देश की तरह

नासी में बसती बासुखी

दुध के कुत्सकली

वीर मासिकधर्मी बीकली

की बाट कर कुटाता हूँ बीनि .

के सिर बाग

उगलता हूँ उफकारें बाने पर
 कविताएँ : हड्डियों के टुकड़े
 गीली घास
 नेताजी उगली हैं भाषण
 बसकें झांकट
 व्यापारी बाजार भास
 बीरों कफ़ों के डिबायन
 बीर विषाघों फिल्लो गीत
 पछिमानियों
 जीन हैं खान यकी । १

बस्वीकृत कवियों ने वात्सल्य तथा
 वास्तव्यबोध के द्वारा 'नकार' की स्वीकार किया है। कलक कुवात
 की वास्तव्यबोध 'रक्षा का की द्रष्टव्य है :

'बाहे बसवात्सल्य से पीड़ित 'पीडिया' की
 कथा कम उग्र लक्ष्मियों से घिरी हुई 'सफ़ी'
 'होमीदि'कभुक्त की' के बस्तोत्त कथाफ की तरह
 रोब एक बाव स्वात की की धर्म

○ ○ ○

एक नया शिष्ट मुरज
 कल्प होता है 'वास्तव्य बोध का पदर पीता हुआ
 एक नई दृष्टि रानी की कि

विश्व की ही तरह छटक पाता है बीच में ही

व- वस्तुत्व की भोगने के लिए । १

स्थिति यहाँ तक जा जाती है कि वस्तुवृत्ति कविता का कवि ईश्वर के प्रति भी प्रत्यक्षित्व लाता है। धनंजय पिल्ले की 'बोधकेन्द्र' कविता का उदाहरण प्रस्तुत है :

कि एक बुद्धक से विचार
समय की नदी में स्थिर पड़े हम
आकर्षण के बोध से उत्पन्न
कहाँ है वह बोध केन्द्र ?
कौन है ईश्वरक ?
कि केवल वह- नीध
वह नीध : भय- कथित
वह नीध निरन्तर-----
समय की नदी में
बोध केन्द्र साक्षर । २

वस्तुवृत्ति कविता में जीतापन, वैयक्तिकता को विशेषतया विषयान है। धनंजय पिल्ले का विचार है : " क्योंकि वाच का स्वीकारिता अभी भी स्वीकृत हीना ही । जिस रचना में उस प्रकार की स्वीकृत की कृपता निहित है, वही 'वस्तुवृत्ति- रचना' है--

१- कैबल , दिसम्बर १९६६ पृ० ३१

२- वही पृ० ३२

चाहे कविता ही चाहे कहानी^१। श्रीराम शुक्ल की सम्बन्धी जम्बो कविताएँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। 'मरी हुई बीरा के साथ सम्भोग' एक सम्बन्धी जम्बो कविता है। इस कविता में श्रीराम शुक्ल ने स्वयं स्वीकारा है कि 'कविता की लीज में एक कविता'^२ 'मरी हुई बीरा के साथ सम्भोग' रहता है। इस कविता में राजनीतिक व्यंग्य, नैतिकता के प्रति विद्रोह, वर्तमान के प्रति क्रांति, जम्बोकार एवं नकार को मुद्रा, व्यक्तिगत रूप एवं जातिपरति में संलग्न विभिन्न मुद्राएँ और विद्रुति तथा विवेकसिद्धि के अनेक व्यक्तित्ववादी चित्र प्राप्त होती हैं। नीचे कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

(१) मैं लीज बीरा पाँच के बीच सात के
साथ लीगया हूँ
हाँ, लीज बात के लिए विन्दा
रहना चाहता हूँ मैं
कि कहीं फिलिंगा वह भूसा हुआ
बचपन बीरा लीया हुआ
मेरा दरफा, टूटे हुए काँच,
साथ हुए टुकड़े, फूले हुए
बसन्त ।^३

(२) 'देश की सम्पत्ति करते हुए मेरा माया बर्द करने लगा है
धीमे धीमे मैं अब फिर धिक् ऊँचा हूँ, फुकाऊँ न

१- पन्थ्याम रीत का लेख- जम्बो कविता और समाधान वही पृ० २१

२- श्रीराम शुक्ल- मरी हुई बीरा के साथ सम्भोग पृ० १

३- वही पृ० १

क्योंकि भुङ्कने से छड़ियाँ- डर है कि - उसी बाजार
में टूट जाएगी
लौंग जिसे अपना भारें मानती है
उसे मैं अपना दुष्कर्म सम्भरता हूँ
वीर वह मैं हूँ । १

(३) क्षीण का एक अनुभव हो पर्याप्त है
जीवन में साथ फलदायक सित है जाने के लिए

० ० ०

फिन्ने कहा था कि यदि वीर दुःख
के बीच पैरी है ।
पैरी एक दुःख के बीच हुए
सम्भोग का दृश्य न दिलाने को । २

(४) सिर्फ़ खिली हो रही जाती है उमलियाँ में कीद
वीर नास्तनी में अदक्षिण वीर काँती में
सिर वीर टांगी मेंफकान वीर पूरुषों में प्यास
वीर केहरे पर ज्ञायाबाद वीर हीठों पर जूना
वीर बारो रहा करता है अपने से अपनेको जूना
खाना दुःखी हूँ कि सम्भन नहीं पाता हूँ लीगी
के व्यसहार । ३

१- श्रीराम लखस- मरी हुई वीरस के साथ सम्भोग पृ० १-२

२- वही पृ० २

३- वही पृ० २

(५) झोडा कार भूस से कोड़ा हप जाए ती ?

रति कोड़ा, काम कोड़ा, केहि कोड़ा, पुष्प-
कोड़ा

सुत-कोड़ा, जीवन - कोड़ा, मृत्यु-कोड़ा तिमिर-
कोड़ा

सूर्य कोड़ा, जन्म कोड़ा, मी कोड़ा, तुम कोड़ा,
वही कोड़ा

कार कोड़ा झोड़ा हप जाए ती । १

(६) कप्पा टूटती होबाना रह गया है कपी जीने
का आधार ।

बार बार रदियाँ रगड़ने से कपिन तब
नहीं दगो

तब मिलि सिफे कर्ण के वालिगन में
बीर तमाम कवि मिलि सिफे सिगन । २

(७) उद्देश्य बीर उद्देश्यहीनता के बीच
मे निरुद्देश्य हूँ

क्या रह गया जीने का उद्देश्य बीर

बिन्ना रही कहे जानिका उद्देश्य या बोली कहे

जानि का उद्देश्य या निरन्तर रुप रहने का ? ३

(८) इस मौसम में वह हवा नहीं कसी बी

१- श्रीराम शुक्ल- मरी हुई बीरत के साथ सम्पीन पृ० ३

२- वही पृ० ३

३- वही पृ० ४

कलाशयी में दर्प पैदाकर दे बाबी
 में रहने तक कुत रहे , निर्वासन हुआ, जी बाबी ।
 निर्वाधन दिया
 वस्त्रोक्त हुआ , वस्त्रोक्त किया । १

(६) कीर्ति क्या करते हैं बाबि ?

पुरुष क्या करते
 हैं

हून, हून, बात हवार बात ही बत्तीय हूकोटी का
 हून । २

(१०) धिक् है यह संयोग कि बाबी की बाप नहीं हुई

नदी

कि जिसमें हम धीरे बहती गंगा में हाथ, कहीं न

हूए

हीता , न धीरा, धिक् हीता एक गुनगुने पाकी
 का घरा

गंगा की प्रकृति के विरुद्ध, हीता

गी ता । ३

(११) मैं कीर भी सम्कालीन कवि कविता नहीं लिखी

कविता का धीता लड़ा करते हैं कीर उन तमाम

धीली ।

१- श्रीराम स्मृत- मरी हुई कीर के साथ सम्योग पृ० ६

२- वही पृ० ७

३- वही पृ० १०

के बीच हमें स्वीकार करना पड़ता है कि यही
बख्शी कविता है । १

(१२) निरुक्त, कृत काय एक नारी पर भुका

हुआ पुरुष

बाने क्या लीकता , बाने क्या डूबता, बाने
क्या मगिता, बाने क्या बाकता, बाने क्या
थाकता

बाने क्या मवा ?

बाने कौन सी सवा । २

श्रीराम शुक्ल द्वारा लिखी उपर्युक्त वस्वोक्त

कविता स्वप्न में लिखी है। समस्त कविता पर व्यक्तिवाद तथा नकारात्मक
तत्त्व विचारधारा का प्रभाव है। कवि ने स्वीकारा है कि यह वस्वोक्त
कविता सिलो नहीं गई बल्कि 'अन्तर्द्वेषिता' द्वारा लिखा दी गई है।

इसी प्रकार श्रीराम शुक्ल कीर्णित वस्वोक्त कविता 'स्वकीर्णित वस्वोक्त'
में व्यक्तिवाद के विचारधारा प्राप्त होती है। वस्वोक्त कविता का समाधान
करते हुए धनराम रैन लिखी हैं कि 'व्यसाधारण वैयक्तिकता के क्लृप्त
विस्फोट को धारण करने वाला रचनाकार, एक वस्वोक्त साहित्य का जन्म नहीं
सकता'। श्रीराम शुक्ल द्वारा लिखित 'मरी हुई बीर के साथ सम्पन्न'

१- श्रीराम शुक्ल- मरी हुई बीर के साथ सम्पन्न पृ० १३

२- वही पृ० १४

३- वही पृ० १७ अन्तिम भाग है

४- धनराम रैन का लेख- वस्वोक्त कविता : बीर समाधान - केन्द्रीय

विद्युत् १९६६ पृ० १७

तथा स्कीखी सम्प्रसार " में व्यक्तिवाद का प्रभाव तत्त्वोक्तार, नकार तथा विद्रोह के रूप में दिखाई पड़ता है। " स्कीखी सम्प्रसार ", " वस्तुवस्तु कविता " के बीच में वह महत्वपूर्ण मूल्यों की स्थापना करना चाहता है। स्कीखीग्रन्थों की वस्तुवस्तु कविताओं में व्यक्तिवादी विचार धारा का प्रभाव है। कुछ निदर्शन प्रष्टव्य है :

(१) देवता बसात्कार किया करते हैं

बसात्कार हो नहीं भूषण सत्यार्थों

(क्या सेवा नहीं)

तो , तुम्हें बतावी दीस्त

तैस करीब देवताओं की आबादों

कम भित्तों होगयी है । २

(२) भरी देल में जीतों की " साक्षी " दिने

जाते हैं

ताकि वे बाट सँ सभी की

" सुवाक " के कोटाणु

जीर कविता -----

आवारा धरया बन गयी है

जिसे की लक्ष्मी नहीं

सारा सुन भोग सकता है

देनि काव्य पत्रिकारें विकास कर । ३

१- पनरयाम रीम का लेल - वस्तुवस्तु कविता : जीर समाधान केवटस

दिसम्बर १९६६ पृ० १६

२- केवटस - मर्ग । जून १९६७ ये वस्तुवस्तु पत्रिका पृ० १०

३- वही पृ० १२-१३

(३) बंज्या बागर को कोत में एक घोष है
 लोहं हुहं लाह्यो मे
 बाहि योनि को मुह में डाकती हुहं ' लं की बेटियां '
 ही
 या पोष भी स्तनी को गिरयो रखी हुहं
 कीरो कन्दरावी में । १

(४) कलमबाबाव के होटल को समझे ऊँची पंजिले से
 धेनिक अधिकारी को एक पन्थर बर्णिया लड़को
 ललसा हो हृद फड़की है फड़की फूट में एक पन
 उत्सर्गाये

बीर पोस्टमार्टम को रिपोर्ट बताते हैं कि ---
 भी बारी बीर शीर बढ़ता बता बता है
 बीर दोड़ता हुवाक 'ख्रिस्तान' ललसा' को ललस
 अपना बाकार बढ़ता हुवा
 ललसा हो
 डक लेता है
 धारि शहर को । २

(५) बीर कलबाहि प्रानी को उशतता हुवा बाकार में
 एक दुर्वाधन राजास उत्तर को लीव में
 फूटनी में मुह छिपाये कोने में बैठे हुए

१- कैबटस, पृष्ठ १। जून १९६७ में बरलोस फाईलिया पृ० १३-१४

२- वही पृ० १५

को व्यभिच्यस्ति, विकृत परिस्थिति, व्यंग्य और वाचन्य उद्धार को भया-
 वह करना यदि है, तो वह विद्रुक्थ पीढ़ी या बोटनिकों को विवश
 मोत्कार या नष्टक लिखताष्ट नहीं है, बल्कि अपनी परिवेश में मूल्यों के
 लोकोप, दृष्टियों के व्यापक विपरीत एवं अनौचित्य स्थितियों को तट-
 स्थता के कारण है, उसके मूल में हमारे सामाजिक जीवन के विचार और
 कर्म को बट्ट साधना, पीढ़ी केरी का वाहम्बर, अनिष्टा, परिच्छिन्ना,
 सार्वजनिक और अन्तर्गत निष्कर्षों का पीर अन्तर, विकृत परिस्थितियाँ
 लादि विन्हीं वस्तु- सत्य के प्रति एक नए व्यंग्य- बोध का जन्म दिया है।
 यथार्थ में 'वस्वोक्त' लक्ष्मिस्त सामाजिकता के विरोध में विकसित हुआ
 है। 'सत्य को सत्य न कह पाने को विचमता कभी न कभी अवरोध
 लोह कर वह निस्सतो है और सभी जन्म होता है वस्वोक्त कविता का।
 वस्वोक्त कविता वाच नहीं नहीं रही। इतना जरूर है कि यह कविता
 में सुल मित गई।

सारांशः वस्वोक्त कविता का कवि
 व्यभिच्यवाच से प्रेरित रहा है। उसकी अन्तर्मुखी प्रवृत्ति ने सामाजिक
 और नैतिक मूल्यों के प्रति वस्वोक्तार की मुद्रा प्रस्तुत की है। इस कविता
 का व्यभिच्य निरन्तर स्काकीप्त की और प्रयाण करता रहा। उल्ला
 वं वहाँ वस्वोक्त विन्हीं के प्रति उत्कर्ष है, वहाँ वह यौनपरक दृष्टियों को
 सजगतापूर्ण उद्दिष्टा रहा है। वस्वोक्त कविता का व्यभिच्य नकार नकारा-
 त्यक्तता, वस्वोक्तार तथा 'नास्ति' के भाव से प्रेरित रहा है। इस
 कविता के मूल में व्यभिच्यवादी वैजातिका कार्यरत रही है जो कि 'नका-

१- समर्याम रैन- वस्वोक्त कविता : और समाधान - केवटस दिवम्बर

१९६६ पृ० १६

२- डा० जगदीश गुप्ता- नया कविता : स्वल्प और समर्याम पृ० २०६

रात्मक 'को व्यक्त करती है। वस्त्रोक्त कविता वस्त्रोक्तार को व्यक्त-
बादी जैना से अनुप्राणित है।

(आ) स्मरानी पोढ़ी

शातर्षण्यरूप में विप्रीही, विपुल्य, अनुप्राणित,

मुसी पोढ़ी तथा स्मरानी पोढ़ी के द्वारा वैचारिक युद्ध परम्परागत कदियों
वैदिक मूल्यों और सामाजिकता के दबाव के विरोध में लड़ा गया। स्मरानी
पोढ़ी का के नाम से इ: के प्रकाशित हुस्ताना बाद में 'विभक्ति' के रूप
में यह पत्रिका परिवर्तित हो गई। 'स्मरानी पोढ़ी' के संपादक निर्भय
मल्लिक इन्हें के में 'वफा की बात' इस प्रकार कहते हैं-

“ किसी तथाकथित राजनीतिक हक के
सुझ है प्रातिवाह का नाम सुन हिन्दुस्तान को झूठ बनता हुआ ही रहता
है, फिराक की लायरी सुनने के लिए सिबलिजे गदरों को मोड़ छुट्टी
ही रहता है और तास की तास का पुरस्कार भी दिया जा सकता है,
किसी बाबाक औरत को सुन- सुविधा के लिए किसी धनी जादमी की
तिबोरी लाओ ही रहता है, और पेटों के लोह ज्यादा से ज्यादा संख्या
में उनके झुंड के ह्वे गिर्द बंधकर भी काट जाती हैं, किन्तु किसी स्मरानी
लेख को रचना पढ़कर भी छुट्टी हीनो, ऐसा मुझे स्तब्ध विस्मय नहीं। ”

स्मरानी पोढ़ी वस्तुतः व्यक्तिवाद की
उपज है। इसके अंदर के समर्पण वाक्य नीचे और बरलोक दृश्य प्रस्तुत

१- सं० निर्भय मल्लिक- स्मरानी पोढ़ी -६ वफा की बात पृ० १०-१२

कहता है- 'मित्र को सुनीता को जो अपनी पसि के दोस्त के लिए लुकी से नंगी हो जाती है।'

'रमलानो पोदो' का व्यक्ति संकृति, सम्पत्ति, इतिहास, वैदिक मूल्य आदि तत्वों को परम्पराविहीन मानता है। गलतफहमी को सुलोट वाता कुभव करता है जो कि सपाट ज़र्रा रखा है। ये पोदो सम्कालीन परिवेश, भीगे हुए आर्य और प्रामाणिक कुभव को बात कहता है। ये कवि मूर्त को कल्पना करी है ये संसार, यमणा और मुर्त के घिरा हुआ कुभव करती है। ये रमलान में बंटेकर काव्य-भुजन करना, कवि गोष्ठी एवं कवि सम्मेलन करना अधिक महत्वपूर्ण मानती है। रमलानि मुर्त को व्ययवाता में कवि गोष्ठी का आयोजन करके व्यक्तिवादी मूल्यों को धिनि स्वं में प्रस्तुत किया। उनके काव्य में व्यक्ति को मुर्त के स्वं प्रस्तुत करी को सतक मिलती है। निर्भय मल्लिक को एक 'रमलानो पोदो' को कविता का कीर चरि भारत के व्यक्तियोंको मुर्त तथा सम्प्र देश को अग्रगण्य मानता है :

सुनी दोस्तो,

मरि के बाद

मेरी सार पर वीर्यपात कर पूरा देना

और दिखी स्वत्वता और

के कपड़े में लपेट कर

पासियापिट के घर में फेंक देना

१- रमलानो पोदो - ६ पृ० १

२- सं० निर्भय मल्लिक - विमर्षित-४ पृ० ३०

कहाँ मिलनी जानी लड़ी मुर्दा की पीढ़ी
बीर जानी लड़ी क़त्लनाह हिन्दुस्तान में । १

इस प्रकार के लड़कों तथा बिलारों का प्रवर्णन करना उचित नहीं है। कवि की दृष्टिकोण- जैतना जानी लड़कों तथा बिलारों को चरम पराकाष्ठा का स्वरूप प्रवर्णन करती है कि व्यक्ति ज़ुलु की कल्पना करता हुआ अन्ध वेग की मुर्दा के बिरा हुआ पाता । यह पीढ़ी की कविताका व्यक्ति जाना बिरात, जनास्मा के विरुद्ध तथा पराक्रम - वीर्य के टूटा हुआ है कि यह वीर्य ज़ुलु न करे बल्कि - बापकी मुर्दा के रूप में वीर्य करता है। स्वतन्त्री पीढ़ी में कायुक्तता, बलशक्ति तथा वीर्यवाद एवं जातिवाद की विरुद्ध प्रवृत्ति होती है। स्वतन्त्री पीढ़ी व्यक्ति के चरम वैराग्य के उत्पन्न बलिष्ठ व्यक्तिवाद की विचारधारा का काव्य रूप है।

(४) बोट कविता : लूरी पीढ़ी

बोट पीढ़ी के सम्बन्ध में पिछले अध्याय में कहाँ की जा चुकी है। लूरी बोट कविता पर व्यक्तिवादी प्रभाव के बारे में विचार किया जा रहा है। वस्तुतः बोट पीढ़ी के व्यक्तियों की हिप्पी, मोट्सव एवं सावर पीढ़ी 'कहा जाता है रहा है । बोट पीढ़ी पर विभिन्न प्रकार के बाह्य प्रभाव पड़े हैं। डा० कुमार विश्व इन बाह्यों की एक प्रकार स्पष्ट करती है :

“ बोट पीढ़ी ‘ डिस्मैट’ के जैतना

हुई है----- यह भी सुदीप्तर नीच- नीच और बेवैनी की उक्त है। ---
 कथन: बीट पीढ़ी दृष्टि को 'हीडामिन्ग' का एक परिवर्तित
 रूप बना या बना है। बीट पीढ़ी 'चुरविष्ट' बनाम की है।
 प्रकार के बनाम में धार्मिक, वास्तविक, धार्मिक और राजनीतिक- सभी
 प्रकार के बनाम रही हैं----- बीट पीढ़ी वास्तविकताओं की तरह मरकर
 बसकृति के नाम की लेकर यह रही है। यहिद यह किसी वैचारिक
 भाषि का नहीं, उन्नीकता बसकृति का प्रतिनिधित्व करती है। ---
 सभी वास्तविक दुःख प्रकृति के कारण ही वैदिक विष्णुवादी
 वादीयक की 'वेस्टवुड बसकृति' करती है। --- सभी दुःख प्रकृति
 वास्तविक है। बीट पीढ़ी में नीचता बना सीकाका- वर्तन के 'नमानी
 नीच है' का वास्तविक विचार। वास्तविक वर्तन की भाँति यह जाने, बीन,
 नीच उद्गार में वास्तविक रही है तथा वास्तविक में नहीं है का विचार रही
 है।

हिन्दी में बीट पीढ़ी का ज्ञान पड़ा।

हिन्दी कविता में 'पुला पीढ़ी' के नाम से बीट कविता की स्वीकार
 किया गया है। राजकमल बीधरी, नन्दराम बीधरी, समीर राय,
 सुभाष जीन, सुविश्व बसक, प्रदीप बीधरी, उत्पल कुमार वसु आदि
 हिन्दी तथा संज्ञा के कवि बीट कविता से प्रभावित हुए हैं। इन कवियों
 पर गिन्धर्व का ज्ञान प्रभाव पड़ा कि 'उत्पल कुमार वसु ने वादी बना
 की, बसक ने सी. में बेहरा बेला होड़ दिया, प्रदीप बीधरी ने अपनी
 कण्ठ उतार दिये और कोई एक बसकरी के किसी बीराह पर हासिक

१- डा० कुमार विप्लव - काव्यानुशीलन : साधुनिक -असाधुनिक पृ० १८६-

हीराने के लिए बीच जड़ पर बैठ गया---^१। लड़ी प्रकार का प्रभाव हिन्दी के कवि राकमन्त चौधरी पर पड़ा, उनकी कविता में २६ ही विरलें प्राप्त होती हैं।

बोटे कविता जल्दा मुझे पीढ़ी बसितव्य व्यक्तित्व है बोद्ध है। वह पीढ़ी का कवि व्यक्तानात्मिक, व्यक्तान्त्रिक, व्यक्तान्त्रिक तथा बीर व्यक्तित्वकारी वात्सर्य में है। राकमन्त चौधरी की 'बीर' कविता का क्षेत्र देखिए किनासात्म्य है प्रभावित है :

बहु बीरवी है :

उसकी पीठ एक नीला धीप बन जाती है,

कानन का नीला धीप

मेरी उम्रियों में उसका एक स्तन की बदन की

सरक फुटने लगता है

बहु बीरवी रहती है।^२

राकमन्त चौधरी के बीर व्यक्तित्व है प्रभावित अन्य उदाहरण प्रस्तुत है :

(१) नाथिक लर्न का एक जाना की कारीबारी

बीरवी के लिए

कमरे बहुत लपराट है

तब के लारी के बात बिलाने बने हैं

१- डा० रमान मरवार- कविता बीर कता- संपर्क पु० २४

२- छंद, फरारी २६के राकमन्त मुस्वीन की - उत्तरार्ध पु० ५६

नर्म हँसी के ऊपर
 भराबी पर
 राखाबी पर । १

(२) एक नर्म भी धीमे पर मुककर कबो है
 राखस टुकल --- राखस टुकल
 नाक में खींच के लम्बी रबर की नहीं
 उसके सतर्प पर सफाई गी--- । २

(३) बापनी को धीकती नहीं है
 लीकटाभिक खतिनी केस पेट के का
 उधे मुका केती है धीरे धीरे तपाविल
 धीरे धीरे बमुक बना के के सिर
 उधे सिष्ट राव मयस केस प्रेमी
 नामलि बना लेती है
 बापनी को लख लीकटाभी संभार है
 खलम ही जाना बाहिर
 नले जाना बाहिर -
 कसबाबी गीना और बाहली
 मिलनी लकीमबी रूठिनी को काहोलीर
 कीयो दुनिया में गलानी में
 कलसो हाँ नौन कर
 ताते रहना बैककर है बीषित कूठिनी को
 ला जाने के ।

हम लोगों को कम सम्मिल नहीं करना है
 सब धरती से वादनी को हमेशा के लिए सत्त्व कर
 देने की

साहित्य में । १

(४) दिल्ली पढ़ने होने गीता बफ़ीय छिरीट
 पीने मरने का

एक नाम कमरा
 बीर से बन्द करके बीफ़र दिन के पढ़ने
 फ़ैलाव बीर्यवात
 फ़टमि बीर में छटे हुए
 छुवा बीध बुनमि पोते रहने के छिवा
 बिन्ने कोहं कड़ा काम नहीं किया बफ़ी देह
 बफ़ा बफ़ी फैला में सब उग्र तक । २

(५) "कवच---- एक ही फ़त्सकीधा धारण करणी
 बमस्त कणि-सिन्---- यही निर्वाय
 बफ़राधियाँ का । ३

(६) उसके फ़चरी का लहर था
 कासी नदी के पार कलधारा में हुने स्तुपी ने
 नहीं किया है फ़ुल नत्तकी का लव
 स्मोकार । ४

१- राकमस्त बीधरी- मुक्ति प्रसेन , प्रसेन-का बीधिय पाग

२- बही , लहर बिधकन ११६ राकमस्त मुत्यकिन के चूर्वादि ५०३६

३- बही ५० ४५

४- राकमस्त बीधरी- सामन्ती : कलावती ५० ३०

(७) लड़ी हुई बाली का पचाव कंवर की गन्ध बिडनी में
 केन्दर के रक्तशयित पुष्प
 नीराह पर मरा हुआ रक्तशय कृष्णलिनी का कात-
 धर्म तण्ड-तण्ड
 तण्डित ध्वजा दण्ड तण्डित मुक्तिर्ध्या
 बन्धित धोपावी की सप्पणा रेतारें नहीं रही वृष्टि
 दीप

मृत हुए
 भी दत्ताश्रयिध के, सभी बन्ध- नीकारें हूय नई
 नीगावत में । १

(८) यह पागल काही पही हुई बार्दकित कागद
 स्त्री विपकारिणी
 अपनी हीठी में उसके हीठी में अपनी लक्ष्म
 वाक्य पाचारें
 अपनी मुहावरों में उसकी कंवर धत्ती की नवतारिणी । २

(९) बाकी लक्ष रास भवन में, लक्ष काराग्रह में
 कक्ष्य वितामुक्त ही बारें
 उत्तर ठाहीं अपनी पिरि अपनी नकाब
 अपना इतिहास कब अपना कर्मान शिरस्त्राण
 नग्न निरस्त्र ही बारें----- ।
 अपनी मुट्ठियों में धामि हुए अपना ध्याकरण । ३

१- मुक्ति प्रश्न- लक्ष दिवस १९६६ ५० ७०

२- वही , मुक्ति प्रश्न वही ५० ७६

३- वही , ५० ८५

(१०) उपरुपुत्र कुमारगिरि जगत्तनु के बागमन के उपरान्त
उतार कर तपसा-कर्म करिष्य आमुष
काम्यन्त निर्वाह- नृत्य में कसबती ही नायिकाएँ ॥

(११) यहाँ गिरा था छतों का स्कन्ध-श्रीव
वर्तमान यही गिरा था
यौनि कावाल्या । २

(१२) बिदे भेड़ोंस टुकड़ों में बाँट कर कल कल बावरी है
भोग करना बनिय- सीवानर
जब दुनिया को सबसे नीचे सबसे मजबूत बीर
का नाम है

वियतनाम

० ० ०
ईदिरानाधी का हिन्दुस्तान
बीर मलयराय बीधरी का हिन्दुस्तान
जब दुनिया को प्रत्येक मजबूत बीर नीचे
बीर की टुकड़ों

में बँटी हुई

क बीरत भरी माँ बीर भरी बीबी भरा
देश

बीरमिरी किस्ती । ३

१- मुकुन्दा - मई १९६७ जन्मानन्वादास मुक्तके तिर - पशु कृंगार में
लुप्त नायिकाएँ

२- लहर- दिव० क० १९६६ पृ० १०२

३- राकमल बीधरी- मुक्ति प्रसंग पृ० २१

एक प्रकार की कविताएँ कविता से किसी प्रकार भिन्न नहीं प्रतीत होती। उनका कव्य आत्म बताया, पशु चिप्रीव, शरीरों की निबंध गीतार्थ, स्तनों के स्तुम, कपूरी हूस्के, ताज्जार मुनवी कृष्ण वाचना के विविध रूप स्थापित हुए हैं। राकमल बीधरी को कामल नारी शरीर की पीनने की रही है। उन्होंने कवि श्रीराम कुन्त की एक पत्र लिखा-

स्त्री शरीर बहुत स्वाभ्युक्त वस्तु है
लेकिन, कविता के लिए नहीं, अभीनके लिए

०

०

लेकिन हम कवि हैं, हमें न तो नपुंसक शरीर न
स्त्री शरीर का पकील बनना चाहिए । २

मलयराम बीधरी समस्त परिपाटियों को तोड़ना चाहते हैं :

(१) एक साहित्य- नान विराट

स्वयं एक प्रकट होनया

विश्व के दर्शन के लिए

तपों की अपना पित्त

कवि की मस्तिष्क में- फीताप

तोड़ की धारी बीमारों की

हृद की बीमारो-^१कधी बनार- कधी

पुरानी परिपाटी की

मरम कर की । २

१- डा० सचित्त कुन्त- नया काव्य नये मुख्य पृ० २०२

२- लहर, विश्व० जन० १६६६ पृ० ३८-३६

३- डा० गोविन्द हकीम - सम्प्रामाणिक हिन्दी कविता : विविध

परिपुश्य पृ० १८४-१८५

(२) मैं नल्ल गमं से निकल कर नल्ल नाम छटकार

२५ बीस तक भटकाता रहा

जब मैं लुप्त हो सब कुछ जाने- फुटाल

करके देना चाहता हूँ

किसे बिना और किसे मल्लराय चौधरीकृति है

भारतवर्ष किसे की बपीती है या नहीं जानना

चाहता हूँ

धिक्कं अपनी धिर से धेर तक भुगत कर देना चाहता

हूँ बरबाद होना किसे कृति है । १

एसी प्रकार भूती पीढ़ीके अन्य कवियोंकी

कविताओं में बरलोस धिक्कं तथा बाधनापरक विन प्राप्त होती हैं। राव-
कमल चौधरी का कृतित्व एवं व्यक्तित्व बोट पीढ़ी तथा भूती पीढ़ी का
प्रतिनिधित्व करता है। डा० हर मयास , रावकमल चौधरी काव्यकृत
एवं वैयक्तिक रचियों को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं। नीची व्यवस्तन स्त्रियां,
पासी और मुकड़ी की स्त्रियां, उनकी कासी , लफिद- गौर स्वस्थ एवं
हमना , गंधासी० धैर, पुष्ट लुखो बधि, कासी पीढ़ी, तास तनाम ,
मुकड़ी लिपि- कठोर स्तन, बिहारी की अपनी पुष्ट बाँकी में कड़ती
प्रीति महिहार, ताढ़ी , सराव, लव, लीमीविबुद्ध, भीम- मैनु, बबु
भरे कमरे , रमलान, बीमारियां, बस्पास, ताम्बिक , पिड्रीडो, नता,
सेस्पाई, कलामान्य स्थितियां और कथाधारण प्रतिक्रियाई, बाङ्गीत ,
हुटन, हुंठा, बटपटाष्ट, सामाजिक विरोधामात्र बादि में भूती पीढ़ी

के कवियों का मन रमा रहा है। भुत्तो पोद्दी का कवि हिन्दुत्व का शिष्य है वह कथामाफिक, कथार्थिक तथा कौटुम्भिक है। जब विश्व में वह मुक्त विचरण करना चाहता है। उसे स्वतन्त्र बीर भी दुर बाजार तक डे लगते हैं। उसका व्यक्ति इष्टप्राप्त, निराशा तथा निद्रोह का रूप अपनाता है। वह संस्कार तथा परम्पराओंको तोड़ कर मुक्त रहना चाहता है। नारी की बीर नारी भी भुत्तो पोद्दी की परमधिदि है। समस्त मायक वस्तुओं का जेबन उसकी बाल्या की तुष्ट करता है।

भारतः बोट कविता या भुत्तो पोद्दी हिन्दो में कयीरी मुद्रा लेकर अवतरित हुई। इसका समस्त दर्शन बीर व्यक्तिवाद पर टिका हुआ है। भुत्तो पोद्दी पर व्यक्तिवादी दर्शन की चरम व्यक्तिनिष्ठा का प्रभाव है।

(ई) बाठीत्तरी कविता

बाठीत्तरी कविता का प्रथम भाग १९६६ ई० में प्रकाशित 'उन्मेष' पत्रिका में हुआ। एक साप्ताहिक संस्करण ई: कवियों का संहितागुप्त के सम्पादन में प्रकाशित हुआ। इसमें - सुरेश संहिता, चन्द्रेश गुप्त, देवनाथ गुप्त, संहिता हस्त, बोलनहस्त तथा संहिता गुप्त ने अपनी व्यक्तियोंकी संशुद्धि अपनी कंठों के निशान लगाकर बाणीयता की निरालता के रूप में प्रकट किया। उन्मेष-२ में भी बाठीत्तरी कवियों की कुछ रचनाएं प्रकाशित हुईं। 'बाठीत्तरी कविता'

के सम्पादक ने ग्यारह सुनीं द्वारा अपनी पीछण्टा-पत्र का प्रचार किया । सम्पादक सुन सातवें में ' मे ' की व्यक्तिगत को वैयक्तिक न मानकर सामूहिकमानती हैं, परन्तु इन कवियों की कवितारें व्यक्तिवाद से प्रभावित हैं।

साठोत्तरी कविता के संदर्भ में हम पहले परिचय सक्षिप्त वर्ण कर चुके हैं। ' साठोत्तरी कविता ' के ग्यारह सुन निम्नलिखित हैं :

(१) साठोत्तरी कविता का कवि भी कानूनी में बंधकर कविता नहीं लिखता और न कविता का उद्देश्य बापों या नारों को जन्म देना सम्भवता है। उसका अपना व्यक्तित्व है, अपनी अनुभूतियाँ हैं अपनी विचार हैं अपना चिन्तन है, उसकी अपनी वाक्यांश है, अपने शिल्प के साथ ।

(२) साठोत्तरी कविता का कवि व्यक्ति के ढंग पर नहीं बल्कि काव्य की अधिकाधिक सम्प्रेषणयोग्यता पर विश्वास करता है।

(३) साठोत्तरी कविता के कवि का व्यक्तित्व अन्तर्राष्ट्रीय होकर भी राष्ट्र के अस्तित्व को स्वीकार करता है। उसकी अपना मानववाद और समाजवाद की पीछण्ट है और उसकी भावना राष्ट्रीयता और देश प्रेम के बीच प्रीत है।

(४) साठोत्तरी कविता का कवि कल्पना के नाम पर रुढ़ियों का बाध नहीं हुनता और न प्रयोग के नाम पर प्रयोग

कहा है बलि नववीरन का वीरन ही उरका प्रवीर है। उसकी कविता का धामान्य ही कविता है।

(५) बाढीसूरी कविता का कवि कविता
हिलने का उद्देश्य क्या की धरणा, ध्यान कथा कात्म स्वाका नहीं
मानता बलि कर्मादि के द्वारा नये पुस्वी की स्वाका हेतु कदापान्म
की कविता हिला है।

(4) बाढीसुखी कविता का कथन बाढ-
उत्पन्न जलका दैत्य न होकर बाढन विस्फोट है जो कि उत्पन्न जल की
नगण्य कबल नकारने है जल्पा है।

(७) छाठीसरी कविता का ये पैदाइश
न होकर साधुसिंह है।

(८) बाढीसरी कविता छन्द की रचना
 में कभी-कभी वसुप्रतिष्ठा की भी मही हुई पायरागी, विपरीत की
 प्रकृतिवर्णन प्रजापति के विरह आदि का वाक्यान्वय करती है।

(६) बाढोत्तरी कविता ललित स्थितियों को स्वीकार करने और नये प्रत्ययों में जीने की सामर्थ्य है वह कथार्थ को स्मृत कर नये प्रत्ययों को स्थापित करती है।

(२०) छाछीपट्टरी कविता वैज्ञानिक विकास के साथ मानवीय मूल्यों के विकास पर अधिक विश्वास करती है।

(११) बाढीतटरी कविता बात्मीयपुत्री न
 होकर बात्मीयुत्री है और उसका नया धरातल है और नवी पुष्पवृत्ति विरु-
 द्धता नहीं है।

ठाठीत्तरी पीढ़ी के कवि सखि तुम्ह तक अन्य स्थान पर स्वीकार करते हैं- ' तुम ही धर्म की धन के रूप में ठाठीत्तरी कविता को स्वीकार किया गया है। ' सखि तुम्ह को कविता ' काता हूँ ' व्यक्ति की शक्ति का रूप को व्यक्त करती है-

जब ही आपका जन्म कायिनी
 पीढ़ी को बन्धन देने लगी है
 तुम्हारे व्यक्त विचारों तक की स्मृति को
 निरुद्ध बना पाते हैं
 तुम्हारा स्वर काव्य की कलम उठाता है
 तुम्हारा नाम धर्म की शरण में मस्त है
 जहाँ सखियाँ की वाचनीय
 केवल कीर्ति की बफा तन्वीर की
 की तुम्हें सही परत्वासी
 की काव्य में बंद है । २

ठाठीत्तरी कविता की कविता की कविता

है। ये है; कवि कविता के द्वारा का शक्ति बना पाते हैं। यहाँ में
 ये कवि पूर्ववर्ती पीढ़ी के बन्धन, शोषण, अत्याचार, अहितव अनुशासन
 का विरोध करता है। ये विचारों का आधार पूरी पीढ़ी का (एकपुत्राणां)
 साम्यवादी शक्ति तथा विप्लव विद्रोहों के प्रभावित है। ठाठीत्तरी
 पीढ़ी का कवि व्यक्तिवाद के प्रभावित अवस्था है, परन्तु वह वैज्ञानिक जीवन
 प्रवृत्तियों को स्वीकारता हुआ साम्यवादी विचारधारा को अनादित किने

१- सखि तुम्ह- नया काव्य : नये मुख्य पृ० २०

२- स० सखि तुम्ह - ठाठीत्तरी कविता पृ० ४५

हुर है। बाठीत्तरी पीढ़ी का कवि व्यक्तिवाद से प्रभावित करण है, परन्तु वह वैज्ञानिक जीवन मूल्यों की स्वीकारता हुआ साम्यवादी विचार-धारा की स्थापना किए हुए है। अतः बाठीत्तरी कविता पर व्यक्तिनिष्ठा का प्रभाव है।

(उ) सुकुशावादी कविता

कलकत्ता से प्रकाशित 'सुकुशा' पत्रिका के सम्पादक सत्य श्री रामचंद्र का अत्यन्त योगदान रहा है। सुकुशावादी कविता सुक की श्रेष्ठतम मान्यता है। सुक कविता के द्वारा सुकना अनिवार्य है परन्तु सुकुशावादी कविता वादिन सुक प्रकृति की कलकत्ता पेशी है। सुकुशा अक्टूबर, १९६६ ई० में सम्पादक सत्य श्री रामचंद्र ने विप्लोवात्मकता की विचारधारा के रूप में माना है— 'जबका एक मान और भयानक कारण यह है कि जब साम्यवाद और जनताधारण के बीच एक तीसरा व्यक्ति का गया है। --- आवश्यकता है नृपतु हाथों की फल है साम्यवाद की मुक्त कराने के लिए अनुचित विप्लोव की। विप्लोव भी एक विचारधारा के व्यक्तिवादी द्वारा विप्लव के स्तर पर की। यह कविता के अन्य प्रमुख कवि चन्द्रमौलि उपाध्याय, मोहन, राखीव अम्बेगा, सत्य, बालक घोष-कर, उषा तथा रामानन्द कविता वादि हैं। 'सुक श्रेष्ठ', 'काम्य श्रेष्ठ' में चन्द्रमौलि उपाध्याय 'सुकुशा' भाषना की व्याख्या करते हैं। उनका मत है 'जबकि उषा किन्तु के सुई सुक के ही पैदा होती है, किन्तु' 'सुकुशा' महाभारत का सबसे कायर और हीन पात्र था।'

सुकुशावादी कविता में सुक, पीराम, सत्य

१- ई० सत्य श्री रामचंद्र- सुकुशा - अक्टूबर १९६६

२- चन्द्रमौलि उपाध्याय- सुक श्रेष्ठ, पूर्वा पृ० ३

मान है। मुकुटावादी कविता पर व्यक्तित्वादी चिन्तन का प्रभाव है जोकि विद्रोह एवं विरोध के रूप में व्यक्त हुआ है।

(७) सख कविता

ज्योत्सु के मार्च १९६७ ई० के 'सख कविता' पत्र में भावी कविता की बात उठाते हुए 'सख कविता' की विज्ञप्ति प्रकाशित हुई। यही विज्ञप्ति कुछ ठुपु पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुई। मुबकफरपुर विहार के 'चिन्तना-२' के अन्तिम पृष्ठ पर 'सख कविता' की विज्ञप्ति प्रकाशित हुई। 'सख कविता' के चार पृष्ठ माने गये। सख कविता की 'सुभाषिता' में डा० रामविद्याधर शर्मा डा० हरचंद्र सातगढ़ी० रामेश्वर मुखस जीवत तथा हत्ती चन्द्र के सम्मिलित नहीं हुए, केवाकि विज्ञप्ति में प्रकाशित हुआ। वही प्रकार प्रस्तावना सहयोग में भी ठाकुर प्रभाव सिंह, डा० रमेश कुन्तल भव, डा० रमा सिंह, श्री रामनरेश पाठक आदि भी 'सख कविता' में सामान्प्रित होती हुए भी दूर हो रहे।

सख कविता नये सिरे से कविता की जीव है। डा० रवीन्द्र प्रभर 'सख कविता' की परिभाषित नहीं करना चाहते। अनुभूति की प्रामाणिकता उनके लिए मुख्य है। सख कविता की

१- श्री ज्योत्सु रायण भीवास्तव - चिन्तना-२ पृ० वीतिव

२- श्री रवीन्द्र प्रभर - सख कविता पृ० १-२

३- चिन्तना-२ पृ० वीतिव

४- सख कविता पृ० ७

वार्क कविता भी होना है। इसलिए ये कोई बिकाने वाला नारा नहीं है। इसके मूल में बहुत सम्पूर्ण जीवन की प्रतीति और बहुत सुगठित हित के माध्यम की लीज का एक समानवार प्रत्यक्ष निहित है। वास्तव में बहुत कविता, कविता की प्रतिक्रिया है। इस प्रकार बहुत कविता का वास्तविक वस्तु की काव्य प्रस्तुतियों में एक और नाम जुड़ जाता है।

बहुत कविता के क्षेत्र में डा० जगदीश गुप्त ने कविता आन्दोलन के विकास क्रम में यह सिद्धा है- 'कलीगढ़ मुनिवाहिनी' से निकलने वाली हैला कीज 'कैदाशिक दस्तावेज' में इसी कड़ी कड़ी हस्तियों के साथ केवल नामः 'आप्ति जाने वाली' 'बहुत कविता' की यदि कलीगढ़ उड़ाने वाली होगी 'स + हय' समझकर हय करने की मानना से सम्बन्ध कर दें तो उसके प्रसंग की भी पीढ़ा होना स्वाभाविक है। नयी कविता के प्रसंग केवल यी ने सिद्धा कि - 'कोई भी कविता बहुत नहीं होती। बल्कि इन कविता कृत्रिम भी होती है। कहाँ अनुतापन है, आत्म केतना है, कल्पित सम्प्रेषण है, वहाँ सहकता या आत्मैतिक अनुभूति होती है।' 'भी रामधारी सिंह दिनकर का विचार है कि 'कविता में सहकता क्या है, लोग ऊपर एक पक्ष नहीं होने----' 'वेनाया' है अभी भी यह बात हम नहीं जानें कि बहुत या कबूकी कविता क्या है ?'

डा० रामधारी सिंह ने बहुत कविता के क्षेत्र में अपना विचार प्रकट किया - 'इन तमाम नारों के तौर में यह भी एक

१- बहुत कविता पृ० ८

२- .. . सुरेन्द्र वर्मा पृ० ३२

३- डा० जगदीश गुप्त - नयी कविता : स्वरूप और समस्याएँ पृ० २१६

४- बहुत कविता पृ० ६

५- .. . पृ० १०

नारा बनकर रह जायगा। कोई उसे नहीं स्वीकारता है प्रवण करना नहीं।^१
 डा० स्वाम परमार का मत है कि 'रीति नीति निश्चित करने के पश्चात्
 भावी कविता को उपसृद्धि करना कठिने में हाल पाये जायगा है--- फिर
 वाक्य तो हमारा जीवन सत्य नहीं रहा। सत्य की स्थिति अदृष्ट की
 स्थिति ही सत्यो है।' डा० स्वाम सुन्दर बोध का का विचार है कि,
 कविता को सत्य मानने के नाम पर वास्तविकी से अलग भी बनाया जा
 सकता है। सत्यता की धारणा भी समय क्षयित है।

सत्य कविता के क्षेत्र में ऊपर दिये हुए
 विभिन्न विद्वानों के मत कम कम हैं। इन विचारों से ज्ञात होता है कि
 वाच का जो बहिष्कारकों का है और वाच कविता सत्य ही होती है। परन्तु
 सत्य कविता के तीनों खोन्ड प्रमर 'सत्य' 'तत्त्व' 'सह वाच्य' इति
 सत्यः 'सर्वात्' की जन्म होती है, वह सत्य है। वह इसकी अनुभूति की
 प्रामाणिकता से जोड़ती है। इसे प्रमाणित होता है कि कवि अनुभूति की
 को सत्य कविता महत्त्व देती है। अतः सत्य कविता व्यक्तिवाद के अधिक
 निकट है न कि साम्यवाद के। खोन्ड प्रमर स्वीकार करती है कि
 'सत्य' की भाँति व्यक्तिवाद ही है हुए समाज क्षयित है।^५ इसी प्रकार
 डा० कुमार विमल सत्य कविता के माध्यम से ज्ञान कई, वैयक्तिक उपलब्ध
 की प्रमाणिकता प्रदान कराना चाहते हैं। इस प्रकार 'सत्य कविता'

१- सत्य कविता पृ० ११

२- .. पृ० ११

३- .. पृ० २५

४- .. पृ० ७

५- .. पृ० ७

६- .. पृ० २०

के मूल में व्यक्तिवादी विचारधारा कार्य कर रही है। अतः यह व्यक्ति-वादी काव्य है।

सहज कविता का व्यक्तिवादी स्वरूप स्पष्ट करने के लिए कुछ तथ्यांकित सहज कविताओं पर दृष्टि डालना आवश्यक है। जीम प्रजापति की कविता ' अपनी प्रेम्मा के गर्भस्थ शिशु के लिए ' का एक पद्य देखें जो कि एक कविता के रूप में प्रतीत होता है :

मेरी प्रेम्मा के गर्भस्थ शिशु ।

० ०

मेरा हर पुरुषात्मिन

तेरी माँ (मेरी प्रेम्मा) का हर पूर्ण समर्पण

तेरी मुखाब्धि में

तेरे कर-स्पर्श में

पुनर्जन्म लेगा । १

केवल गीस्वामो की ' मन के हर द्वार से ' कविता में निराशा, पराजय बोध तथा व्यक्तिवादिता के दर्शन होते हैं :

जोर सल मरे उस मयानक जन्धीरे में

रूगति बिजोसे बिजुकीं जोर

उल्टी सटकी जमनादहों के उरुवास से

दम तोड़तो गर्ह एक एक कहे

सारी वाशारे

धारी उफ़ी
 धारे उफ़ी
 बभिलाया फल की तरह जाने लगी
 सड़ी साली की गन्ध
 मन के दरबार में । १

डा० परमानन्द प्रोवाल्सकी कविता

‘कंधी दबाव के नीचे’ में बरसोत्ता का महत्व सम्झाया है । निदर्शन प्रस्तुत है-

वह कुल्ले सेट कर फल रही थी मैं सुन सकता था
 स्टूटो क्या मैं सुनती उसकी कूटो देह गन्ध
 कहने के लिए उस वक्त कुछ भी नहीं कहा जा सकता
 कंधी दबाव के नीचे शर्म छिपाने के लिए
 कुछ भी नहीं करना था
 सिवा इसके कि हम अपने हरायीं की
 पीढ़ा बरसोत्त कर लेती--- और तब
 बाघानो से बना जा सकता था । २

कन्स में सहज कविता के सम्पादक एडोल्फ प्रमर की ‘विभूति’
 कविता में व्यंग्य तथा ऊहवफा का दृश्य देखिए जो कि निरान्त व्यक्ति-
 वाली स्तर पर स्थित है। एवना की प्रस्तुत है -

तुम्हारी फ़ासियों में
 बुझती है ज़हरीली मुई

कि हाथों की कृतज्ञता है
कोई अग्निबाण

० ०

तुम्हारा भोग
मेरी विभूति कैसे ही ? १

जब काव्यान्वीक्षकों की दृष्टि से विचार करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि सहज कविता भी उसी प्रकार एक नारे के रूप में जायी और लुप्त होगई। इसका 'सहज कविता' नाम से एक काव्य संकलन प्रकाशित हुआ। यद्यपि सहज कविता अकविता, बोट कविता एवं ज्ञानानी पौढ़ों के विरोध में उठा हुआ तबु काव्यान्वीक्षक है जो कि व्यक्तिवादी गुट परस्तों के कारण जल न सका। इससे सहज कविता अपनी मूल विन्दुओं से भटक कर सहज से दूर होती जाती गई।

इस प्रकार के विविध दृश्य 'सहज कविता' में प्राप्त होती हैं जो कि व्यक्ति को क्षुब्ध, पराजय, निराशा तथा विरोधी विचारों के रूप में व्यक्त हुए हैं। इस कविता में व्यक्ति-केतना, व्यक्तिवादिता तथा व्यक्तिवादों विचारों का प्रभाव है। अतः सहज कविता व्यक्तिमुक्त है जो कि व्यक्तिवादों विन्तन को सहज रूप में व्यक्त करने का प्रयास करती है।

(२) अंगोत

नवगोत के सन्दर्भ में पिछले क-यागों में

१- सहज कविता पृ० ६४

बर्बाद कर चुके हैं। परन्तु 'कलित' तथा 'रष्टोगीत' के संदर्भ में यहाँ विचार कर रहे हैं। 'कलित' का व्याख्यात्मक कविता के अन्य लघु काल्पनिकों की तरह विकसित हुआ और लीप ही गया है। 'कलित' का जन्म सत्यजित के भी गिननाय मित्र 'सत्य' के द्वारा हुआ है। 'कलित' पत्रिका सम्पादन भी गिननाय बो ने किया। राजीव सक्सेना 'कलित' के संस्करण में अधिक प्रसिद्ध हुए। राजीव सक्सेना का 'आत्म निर्वासन तथा अन्य कविताएँ' 'कलित संस्करण' है। एक अन्य कवि भी कृष्ण शिवारी का 'कलित संस्करण' है जिसकी वे मालिकी 'कलित' अक्टूबर १९६८ में प्रकाशित हुआ। इस प्रकार 'कलित' तथा 'रष्टोगीत' नवगीत के समानान्तर चलता, परन्तु विकसित नहीं हो सका।

'कलित' की परिभाषित करते हुए गिरजा केर अवश्यो लिखती हैं कि 'कलित' जीका देने वाला व उपकरण लगाकर गीत या नहीं के वर्णों में न लिया जाय। 'कलित' के अन्तर्गत तथा-कथित गीत के प्रति नकारात्मक दृष्टि है। 'कलित' में प्रवाह, नयी की कटो-कटो पक्ष काफ़ीपरी को लक, मैदानों से मैदानों तक देखी रहने का ज्ञान, ऊपर उठता हुआ गगन, बीराह से गुजरने का भी न गुजरने की अनुभूति और वह लो पाया जाता है जिसकी लीन में हर नया सामने आता है।

कलित-१ में गिननाय सत्य का विचार है कि, 'कलित मानवो संवेदनार्थ भी यह भी कह सकती है कि व्यपष्ट भावनाभिव्यक्ति के प्रतिवाङ्मोह। वाङ्मोह सत्य से दूर नहीं है। इसी संज्ञा

१- सम्पादक- श्री गिननाय सत्य- कलित ३ मई १९६७ वर्षी गीच्छो से

२- कलित -२

तय से युक्त लक्ष्य योजना का संन्दर्भ भी मिलेगा ।

एक प्रकार 'कणित' 'दीनोत', तय, अन्य
वादि कलम स्थापित होना चाहता है। 'कणित' में 'कविता' के तत्त्व
विद्यमान हैं। डा० श्याम परमार इस संदर्भ में स्पष्ट करते हैं :

“ प्रकट है वात्म निवारण ' की ओर कविताओं
की ओर कविताओं की वास्तविक प्रक्रिया कविताओं की ओर उत्पन्न है। गीत
की ओर कविता की प्रक्रियाएँ यहाँ दो कलम दिखायी देती हैं। मानसिक दृष्टि
से विभिन्न प्रत्यक्ष कोणों से सम्बन्धित हैं।

कणित पर व्यक्तिवादों विचारधारा का
प्रभाव रहा है। इस संदर्भ में कुछ कणित के उदाहरण देना आवश्यक है।
श्याम मनीहर फिल का कणित नीचे देखिए-

भोगने की

कर्मधारियों में बन्द लड़कियों के घर

की ओर यहाँ में कटे समाचार

'क' की वात्म हत्या

'स' की सिमर ।

भोगने की

लहर से गुजरी नदी का तट

कटुपाठ ।

एक तण्डित च्यार

कटे समाचार

१- कणित- १ पृ० ४-५

२- डा० श्याम परमार- कविता की ओर कलम संदर्भ पृ० ५१

कसमारियाँ मैं बन्द लड़कियों के पद
भीगने को । १

एक अन्य कर्णोत्कार सख्त कुमार का कर्णोत्
केश वन्तर्मुखी व्यक्तित्वादिता से प्रभावित है :

मेरा बचन कुछ रेखा छिप्ट गया
कैसे कहुवा
बीर
गतिहीन हो गया है स्वल्प मेरा
वपनी में छुटती हुई, लबाघों के
दायी में
लज्जा को कठीला
वन्तर्मुख में प्रीति
करती जा रही है
पर मैं मौन हूँ
कनक युग ऐसे हो बोल जायेंगे । २

राज्यीय संवेष्टना को कर्णोत् कविताओं पर
कविता का प्रभाव है कुछ कर्णोत् केश प्रस्तुत है :

मेरे मित्र, नग्नता पर कविताएँ लिख लक्ष्मी हो
भीग नहीं सकती, सब लक्ष्मी-पुत्ति-पुत्ति के
आर्यों पर भारत सुरक्षा का ताला बंद दिया गया है

मासवारी ताते में धरे दिवासिया है गुम्हारे
मे मानधिक फेस में विश्वास नहीं करता । १

राजोव सवेना व्यक्तित्व के आन्तरिक

विचारी को महत्व देते हैं। वे अस्तित्व के युद्ध में व्यक्तित्ववादी हैं, एकाकी हैं और लडित हैं। इसी कारण उनका स्वर 'रष्टी गीत' परक है तथा कविता से प्रभावित है।

इस प्रकार कगीत कव्या रष्टी गीत

वाङ्मोहपरक, कविता से प्रभावित, गीतपरक अस्तित्व-बोध एवं व्यक्ति-केतना से प्रभावित है। उसका विद्रोह नितान्त एकाकी, वात्सल्यनिष्ठ तथा कियवितक दायित्व से विकसित हुआ है। अतः 'कगीत' व्यक्तित्ववादी स्तर पर गीत तथा नवगीत के प्रतिक्रिया स्वल्प विकसित हुआ है।

निष्कर्ष

सातवें दशक की कविता विद्रोह एवं व्यक्तित्व-निष्ठता से प्रभावित है। यह युग वाङ्मोह विद्रोह तथा परम्परा भंगन का है। अतः कविता के प्रायः सभी तत्त्व काव्यान्वीक्षण अतिवाद से प्रभावित हैं। इन कविताओं में अस्वोकार, नकार, नकारात्मकता, विद्रोह, क्षामा-धिक, कार्यात्मिक, नीतिक, क्षम्यादित तथा पराक्रम्य भाव के दर्शन होते हैं। इस संदर्भ में अस्वोक्त कविता, गीत कविता, स्फुटानो पौद्धो, साटोत्तरो कविता, युक्तुवावादी कविता, सहज कविता, कगीत, वादि में अति व्यक्तित्व-

१- राजोव सवेना- वात्सल्य निर्वाहिन तथा अन्य कविताएं पृ० १५

२- डा० रयाम परमार- कविता और कला संदर्भ पृ० ५५

वादों वैचारिकता का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

अन्य लघु काव्यान्वलीतों में प्रतिक्रम कविता, अनासन भूर्यादयो कविता, स्वोक्त कविता, कोलाज कविता, ताजी कविता, ठोस कविता, आदि में भी व्यक्तिवाद का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। यह व्याप्तव्य है कि कुछ कवि कई वान्दोलनों से जुड़े हुए हैं। यहाँ केवल उन रचनाओं को लिया गया है जिन पर व्यक्तिवादों जीवन-दर्शन का प्रभाव है।

निष्कर्षतः सातवें दशक के प्रायः सभी लघु काव्यान्वलीत 'व्यक्ति' की केन्द्र में मानकर विकसित हुए हैं। इन कवियों के मन में प्रवर्तक बर्तन को तोड़ देना है तथा अपने का रोग भी विद्यमान है। यह युग का व्यक्ति सँचित व्यक्तित्व का कवि है। अतः भुखो पोढ़ो, बल्लोक्त कविता, रफ्तानी पोढ़ो, युक्ततावादो कविता तथा अज्ञेय आदि पर व्यक्तिवाद, तर्कवाद, अस्तित्ववाद तथा भोगवादों नार्थक दर्शन का प्रभाव प्राप्त होता है।

उपसंहार

उपस्यप्रियां एवं स्थापनारं

उपसंहार

उपसंहारियाँ एवं स्थापनाएँ

व्यक्ति विश्व का सर्वोत्तम प्राणी है। वह कृतियों का पुत्र है। प्रत्येक साहित्यकार अपने व्यक्ति की कृतियों के माध्यम से जीता है। वह दैनिक अनुभव एवं संवेदनाओं के अन्तर्गत अपने 'स्व' को उद्घाटित करता है। प्रत्येक साहित्यकार पहले व्यक्ति है और बाद में कवि। इसी प्रकार कवि पहले व्यक्ति होता है इसके उपरान्त और कुछ। इससे यह स्पष्ट होता है कि कवि व्यक्ति की समस्त प्रवृत्तियों एवं व्यक्ति सुलभ धारणाओं को अपने-आपमें समाहित किये हुए है। व्यक्ति का काव्य से जुड़ सम्बन्ध है। व्यक्ति काव्य की अनुपस्थिति में नोएस जीवन जीता है। अतः काव्य एवं व्यक्ति एक दूसरे के पूरक हैं।

विश्व- साहित्य में विविध प्रकार के आन्दोलन हुए हैं जो कि अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। इसी प्रकार काव्य में आन्दोलन का प्रसार होता रहा है। काव्य के कथ्य एवं शिल्प में परिवर्तन होने पर नये आन्दोलन का उद्भव होता है। काव्य के कथ्य में परिवर्तन होने पर व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों का विविध प्रकार से स्फूर्ति हुवा है। इसी काव्य में जहाँवादो, अतिकार्यवादो, अभिषेकवादो अस्तित्ववादो आदि प्रमुख काव्यान्दोलन विकसित हुए हैं जो कि अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं। कवि एक जागरूक प्राणी है। इसी कारण उसका आन्तरिक व्यक्तित्व

वर्षों के प्रति सज्ज रहता है। वह भावना का काव्य में आगमन मनो-विश्लेषणवादी जन्मजातों के द्वारा हुआ है। आत्मामिथ्यवित के लिए कवि में वह का होना अत्यधिक महत्वपूर्ण है। जब कवि आत्मकेन्द्रित एवं व्यक्तिनिष्ठ हो जाता है तो उसके विचारों एवं अभिव्यक्ति में परिवर्तन जाने लगता है। अतः वह कला के विकास के लिए अपने सृजन की नूतन दिशा प्रदान करता है। इससे कवि काव्य के प्रति पूर्णतः समर्पित हो जाता है। काव्य के कथ्य के परिवर्तन जाने से अभिव्यक्तावाद का विकास हुआ है।

कवि मुक्तः चेतना सम्पन्न प्राणी है। वह निरन्तर व्यक्ति-स्वार्तन्त्र्य, वैयक्तिक-दायित्व, व्यक्ति-हित एवं व्यक्ति-निष्ठा के प्रति सज्ज रहता है। व्यक्ति की वैयक्तिक अनुभूतियाँ वीर व्यक्ति-स्वार्तन्त्र्य के प्रतिबलमय लासला ही उसे विद्रोह के प्रति प्रेरित करती हैं। इससे काव्य में विद्रोहात्मकता, नकारात्मकता एवं विरोधपरक कविताओं का बाहुल्य प्राप्त होता है। व्यक्ति सर्वत्र स्वार्तन्त्र्य हेतु धर्म, समाज एवं शासन के नियम तथा बन्धनों को तोड़कर मुक्त रहने का प्रयास करता है। इस मुक्त भावना ने काव्य में 'रोमाण्टिसिज्म', 'स्वच्छन्दतावाद', 'आयावाद', 'प्रयोगवाद' आदि आन्दोलनों को विकसित होने में सहायता प्रदान की है।

व्यक्ति-स्वार्तन्त्र्य की भावना काव्य में हतनी तोवतर रूप में प्रसरित हुई कि धार्मिक काव्य के स्वर भी स्वार्तन्त्र्य-चेतना को अव्यक्त करने लगे। इससे यह सिद्ध होता है कि आधुनिक कवि को मूल प्रवृत्ति स्वार्तन्त्र्य के प्रति कटु वास्तव्य है। जब कवि देश, समाज, धर्म आदि की नैतिक, सामाजिक, धार्मिक मान्यताओं को कहेलना करना अपना लक्ष्य मानने लगा। इससे काव्य में यौनवाद, भोगवाद, विद्रोह, ईद्रास,

वनास्था, कृष्ठा वादि के रूप में काव्य-संज्ञा होने लगी। कवि निष्कृष्ट है, वह वात्सल्य शिल्पी है, मुक्त है तथा व्यक्ति-स्वातंत्र्य के प्रति अर्द्ध सज्जन है। काव्य में व्यक्ति-स्वातंत्र्य वनादि काल से प्रमाहित है।

व्यक्ति जहाँ अन्तर्-संभावनाओं का पुंज है वहाँ वह सामाजिक, नैतिक, धार्मिक, राजनीतिक बन्धनों एवं परम्पराओं से अपने व्यक्ति को विकास के पथ पर मुक्त देना चाहता है। व्यक्ति समाज की स्वतन्त्र स्थापना है जिसका अपना अस्तित्व स्वातंत्र्य एवं अपनी एक गरिमा है। उसके विकास के लिए सामाजिक, धार्मिक, पुत्रा, साम्प्रदायिक विधि-विधान तथा कुष्ठान वादि का आरोधक है। वह समाज के सामान्य एवं साधारण व्यक्तियों से अलग एक विशेष व्यक्ति है। इसी कारण वह अपनी मनः कृष्टि तथा मनः स्वप्नों की प्रतीक स्थान पर आकार रूप में देना चाहता है। कठमुक्ते एवं पुराणपथियों का आभिजात्यवाद, नैतिकता, मान्यता, सुदृढता, मर्यादा, तथा कठोर नियम वादि व्यक्तिवाद के अरूप नहीं हैं। इसी कारण व्यक्तिवादो कवि किसी भी शासन, समाज एवं संस्था के दबाव वादि को न सहकर अन्तर्मुखी, आन्तरी तथा अन्तर्मुख का जीवन जीने लगता है। काव्य में व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों का व्यक्ति के अन्तर्मुख, अष्टाष्ट, विद्रोह, विद्रोह, आत्म-केन्द्रीय प्रवृत्ति वादि के कारण विकास हुआ है। इसी कारण काव्य के कथ्य एवं शिल्प में निरन्तर परिवर्तन होता रहा है। व्यक्तिवाद समाज एवं राज्य पर कत देकर व्यक्ति की मार्गों की पूर्ण कराने का पदापाती है। व्यक्ति को मुक्त प्रवृत्ति विद्रोह है जिसकी जीवन्तता और उद्गमशक्ति के कारण व्यक्ति में निरन्तर आत्म-निरोधन, आत्मानुसंधान की भावनाएँ जाग्रत

रहता है। उसीलिए व्यक्तित्वादी कवि काव्य में निरन्तर कल्पना का प्रयोग को और प्रसूत रहता है। बाह्य घटनाओं, सन्दर्भों एवं परिवर्तनों से उपेक्षित रह कर व्यक्तित्वादी कवि अपनी ही हृदय में नूतन सृष्टि करता है और स्वनिर्मित स्वप्नों की कल्पना में रत रहता है। व्यक्तित्वादी कवि अपनी आत्मदोषों से मार्ग प्रशस्त करता है।

आधुनिक युग के काव्य में वह के प्रति लगाव या 'मैं' के प्रति निरन्तर जागृकता प्राप्ता होती है। अतएव काव्य के फलक पर व्यक्तित्वादी कवि अपनी राग-विराग, हर्ष-विषाद एवं अनुभूतियों को व्यक्त करने में प्रयत्नशील रहता है। जब व्यक्तित्वादी नेतना पूर्णतः उत्थान पर होती है तब व्यक्तित्वादी कवि आत्म नष्टि एवं आत्मरक्षा के साथ-साथ आत्म प्रताप, आत्मानुभव एवं वैयक्तिक अनुभूतियों को प्रस्तुत करने के लिए संघर्ष रत पाया जाता है। वह अपनी उदात्त वह से निरन्तर प्रेरणा ग्रहण करता है।

काव्य में सहजानुभूति के साथ सहज अभिव्यक्ति की आवश्यकता है। कवि व्यक्ति-नेतना को महत्त्व देता है। अतएव काव्य में व्यक्ति-नेतना, वैयक्तिक-दायित्व एवं व्यक्ति स्वातंत्र्य को काव्य के रूप में अभिव्यक्ति प्रदान करता है। कलावाद एवं आभिजात्यवाद के कुछ नियमों में साम्य है। परन्तु व्यक्तित्वादी धरातल पर यह नियम टूट जाते हैं और व्यक्ति के आन्तरिक स्पन्दनों, अनुभवों एवं उसकी अन्तर्दृष्टि को महत्ता प्रदान करता है। व्यक्तित्वादी कवि निराशा की स्थिति में समाज से पलायन कर प्रकृति के प्राणिज में अपनी आन्तरिक नेतना को साकार रूप प्रदान करता है। वह प्रकृति को अपनी सुख-दुःख के रूप में देखता है और प्रकृति में अपनी मनः-स्वप्नों एवं अपनी कल्पना का साम्य प्राप्त करने का

प्रकट करता है। व्यक्तिवादो काव्य में विद्रोह एवं अवसाद को मुद्रा निरन्तर प्राप्त होती है। जब व्यक्तिवादो कवि की अभिलाषाएं क्षुब्ध रह जाती हैं तो वह काव्य के द्वारा अपने कर्तोंन को व्यक्त करता है। परन्तु जब वह सामाजिक नियमों एवं कर्तोंनों से अपने को असमर्थ पाता है तो अन्तर्मुखी होकर संसार से फ्लायन करता है या स्काको जीवन की कामना करता है कच्चा अपने लघुत्व या पराजय का बोध होने पर अवसादग्रस्त या कुण्ठित हो जाता है। जब वह अपने कर्म में विफल होता है तो उसे ग्लानि होती है, तब वह दुःख को जीवन का पर्याय मानने लगता है और उसी प्रकार काव्य-सृजन करता है। इस सुख-दुःख के सृजन में वह कभी कट्टहास करता है तो कभी सिसकियां भरते हुए समस्त जीवन बिता देना चाहता है। इसी-तिर व्यक्तिवादी काव्य भावनामय, सूक्ष्मता एवं अन्तर्मुखी प्रवृत्तियां आदि से सिद्ध पाया जाता है। कभी कभी विराट् कल्पनाओं एवं इच्छाओं की विफलता पर वह आत्म प्रवेक एवं आत्मघाती बन जाता है। इसी कारण काव्य में मृत्युपासना, आत्म हत्या एवं आत्म हनन की प्रवृत्तियां भी प्राप्त होती हैं।

व्यक्तिवादो कवि का वहम् ज्ञाना तीव्र एवं प्रगाढ़ होता है कि उसका लघु दुःख विराट् दुःख बन जाता है और उसका सुख विराट् सुख या विलक्षण सुख में परिवर्तित हो जाता है। इसमें उसको संवेदनशीलता एवं भाव द्रवणता, कल्पना, स्वप्नशीलता अधिक सहयोग प्रदान करती हैं। व्यक्तिवादो काव्य में कथितन का अन्वेषण और अज्ञात के प्रति अधिक ललक प्राप्त होती है। इसी कारण आधुनिक कविता में बोट कविता, श्मशानों पीढ़ों और कपीरों मुद्राएं निरन्तर प्रस्तुत हो रही हैं।

आधुनिक व्यक्तित्ववादों का अर्थ है आत्म-

निष्ठ दृष्टिकोण , व्यक्तित्व- सत्य, कल्पनाशीलता, सुखमय शक्ति , नग्न-
यथार्थ , स्वप्नदर्शिता , भावप्रवणता, कदृश्य के प्रति तत्कालान्तरिक
लौन्दर्य के अनुपादित सुख स्तरों का अनुवर्णन , विद्रोह विरोध, फ्ला-
या , नकारात्मकता, लघुत्व- बोध, दायाबोध, वधम्बोध, यौनपरक प्रलोभों
का बाहुल्य, रक्षाही, जनबोध, भाषा एवं कन्दों के प्राचीन नियमों का
नञ्ज तथा प्राचीन जीवन-मूल्यों के प्रति नकार आदि को जीव प्रवृत्तियाँ
पाये जाते हैं।

आ : व्यक्तित्ववादों कवि सर्वेव अपने व्यक्तित्व-

सत्य के प्रति जागृत रहता है। उसका जीवनस्रोत स्वयं एवं दमपुस्तक जाणी
उत्प्रेक्ष के कारण होती है। आत्म , कवि का जहम् उसे सर्वेव लेखन के
प्रति सजग रहता है। वह अपने को विनिष्ठ या तत्ताधारण प्रस्तुत करना
चाहता है। स्वोकारण वह काव्य में विविध प्रयोग करता है। यथार्थ में
व्यक्तित्व व्यक्तित्ववादोंकाव्य के केन्द्र में स्थित है। व्यक्तित्व सर्वोत्तम प्राणी
है और व्यक्तित्ववाद व्यक्तित्व की अस्मिता एवं स्वातंत्र्य का प्रबल समर्थक है।
काव्य में व्यक्तित्ववाद युगों परिस्थितियों एवं कवि के जना दायाँ से
प्रेरित है।

आधुनिक हिन्दी कविता में व्यक्तित्ववाद

विविध रूपों में विकसित होता रहा है। भारतीय युग में ' व्यक्तित्व ' के
नूतन दृष्टिकोण उत्पन्नहुवा । भारतीय युग के कवियों ने सामन्तोंय
विचारधारा के विरोध में व्यक्तित्व-स्वातंत्र्य की प्रवृत्ति दिया । इस युग में
व्यक्तित्ववाद के प्रति दायाँक भावना प्रस्तुतित होने लगे जो कि द्वितीय

युग का व्यक्तिवाद सुधारवाद, नैतिकता तथा मार्यादावाद में परिवर्तित हो गया। इससे व्यक्तिवादो विचारधारा व्यक्ति-स्वातंत्र्य, देश-प्रेम आदि के रूप में विकसित हुई। द्वितीय युग में व्यक्तिवाद की अधिक विकसित होने का अवसर प्राप्त नहीं हो सका। अतः आधुनिक हिन्दी कविता का प्रारम्भिक युग व्यक्तिवादो विचारधारा को पूर्णतया वात्सल्य नहीं कर सका।

शायवाद व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों की अधिकांश में वात्सल्य रूप में है। शायवाद का अवतरण व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों के विस्फोट के रूप में हुआ। हिन्दी कविता की शायवाद ने अत्यधिक प्रभावित किया। इसका मूल कारण शायवादो कविता में व्यक्तिवादो विचारधारा का विविध रूपों में रूपान्तरण है। शायवाद ने 'मैं' की स्वोक्ति प्रदान करके व्यक्ति को मुक्त होने का उद्घोष किया। शायवाद ने 'व्यक्ति' की महत्ता दी। उसने 'व्यक्ति' को स्वतंत्रता 'स्व' को केन्द्र माना और प्राचीन परम्पराओं से विद्रोह कर दिया। इस विद्रोह में व्यक्ति के विकास का नया मार्ग खुला- व्यक्ति के विकास में जो बन्धन मार्ग अवरोध करते हैं, शायवादो कवि उन बन्धनों का धीरे-धीरे विरोध रहा। यह विद्रोह दो रूपों में विकसित हुआ। एक तो प्रतीक-रूप कविता के रूप में तथा दूसरा परम्परागत मान्यताओं, आदर्शों तथा काव्य बन्धनों को तो लौटित कर मुक्त एवं स्वतंत्र रूप में। अब व्यक्तिवाद काव्य के रूप में 'व्यक्ति' को स्थापित करने में रत हो गया। शायवाद का व्यक्ति पूर्णतया व्यक्तिवादो विचारधारा को अपनी तरह से अभिव्यक्ति प्रदान करता रहा। अतः शायवाद में व्यक्ति-

१- प्रेमचंद- प्रयोगवाद नाम व्यक्तिवाद पृ० २१ (अप्रकाशित शोध प्रबन्ध)

२- डा० इन्द्र नाथ मदान - आधुनिक कविताका मूल्यांकन पृ० ३०

वाद वात्माभिर्व्यञ्ज तथा अन्तर्मुक्ती भावों के उद्गार के रूप में विकसित हुआ । शायवादा में व्यक्तिवाद अनुभूतियों एवं कल्पना के साध्यत्व से ' मैं ' के रूप में व्यक्ति को स्थापित करने में सतत क्रियमाण रहा । इसमें व्यक्तिवाद की वाक्यात्मिकता एवं रहस्य- भावना के आवरण को ओढ़कर जीवन से पलायन करना पड़ा । शायवादा ने व्यक्तिवादो प्रयु-
क्तियों को अपनी तरह से ग्रहण किया तथा निजी रूप में व्यवहृत किया । इसीलिए शायवादा व्यक्तिवाद के काव्यात्मक स्वरूप को अत्यन्त सफलता-
पूर्वक प्रस्तुत कर सका । वाधुनिक हिन्दी कविता में शायवादा ने व्यक्ति-
वाद की एक नयी भूमि प्रदान की तथा नूतन दिशार प्रशस्त की । अतः
शायवादा को व्यक्तिवाद का काव्यात्मक स्वरूप कहा जा सकता है।

‘ व्यक्ति ’ की गरिमा को अचूक
रखनेके लिए उत्तर शायवादी काव्य ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है ।
उत्तर शायवादी काव्य में व्यक्तिवाद का अतिशय स्थूल रूप दृष्टिगोचर
होता है। इसमें ‘ हालावादी ’ स्वर को अधिक उड़ाया गया । उत्तर
शायवादी काव्य शायवादा की प्रतिक्रिया के रूप में विकसित हुआ था ।
इसी कारण इस काव्य में हालावादी , मातिलवादी, स्थूल सौन्दर्य का
चित्रण हुआ है। लयी रोमांस और मृत्युपासना ने इस काव्य को पला-
यवादी, निराशावादी और अज्ञानात्मक घोषित कर दिया । उत्तर
शायवादी कवि समाज, संस्कृति, धर्म, ईश्वर, समूह, मोड़, परम्परागत
मान्यताओं, संस्कारों, नियमों आदि से विरोध करता है। वह व्यक्ति
है, अतः व्यक्ति के प्रति आस्था रखता है। मुक्तः यह काव्य ‘ व्यक्ति ’

को गरिमा और उसने जहाँ को सार्थक काव्यात्मक रूप में प्रस्तुत करता है। इस काव्य का चिन्तन व्यक्तित्ववादी विचारधारा पर वाशित रहा है। प्रगतिवादी काव्यान्दीशन समाजवादी तथा मार्क्सवादी विचारधारा को लेकर विकसित हुआ। इसमें व्यक्ति के स्थान पर समाज को सर्वोपरि महत्ता प्राप्त हुई। समाज को लेकर नौक काव्य- रचनाएँ लिखी गईं। अतः व्यक्ति तथा व्यक्तिवादी विचारधारा प्रगतिवादी काव्य के कारण रुक सी गई।

वाधुनिक हिन्दी कविता में सन् १९३६ ई० के उपरान्त वाधुनिकता के विविध विचार प्रयुक्त होने प्रारम्भ हो गये। प्रयोगवाद से लेकर साठोत्तरी कविता तक कविता में वैचारिक क्रान्ति के साथ नये प्रयोगों के प्रति ज्वलन्त लालसा रही है। 'तार-सप्तक' सन् १९४३ ई० के प्रकाशन में ही व्यक्तिवादिता के लक्षण प्राप्त होते हैं। प्रयोगवाद का मूल व्यक्तिवादी चिन्तन है वह व्यक्तिवाद के आधार तत्त्वों पर विकसित हुआ। नयी कविता का व्यक्ति भी व्यक्तिवादी है। वह एक और सामाजिक यथार्थ के प्रति सज्ज है और दूसरी ओर वैयक्तिक अनुभूतियों को महत्ता प्रदान करने में रत है। वह व्यक्तिवादिता से प्रभावित है। वह क्लेशबोध, एकाकीपन, शून्यबोध, तटुत्वबोध आदि से ग्रसित है। वह अनास्था, कुण्ठा, विद्रोह एवं संघर्ष में रत है। नयी कविता का कवि तनाव से बैध है। इसलिए वह व्यक्तिवादी प्रवृत्तियों को और रुझता है। उसका व्यक्तिवाद जहाँबाद के स्तर पर विकसित होता रहता है।

नवगोत तथा गगोत में व्यक्तवादो दर्शन को व्यक्तिकता के दर्शन होते हैं। व्यक्त के दुःख-दुःस, राग-विराग आदि ही नवगोत के विषय हैं। नवगोत नीचे हुए अर्थ को गीतात्मक अभिव्यक्ति है। व्यक्तवाद नवगोत में व्याप्त है। कविता एवं साठो-स्तरी पोदो के लघु आन्दोलनों में व्यक्तवादिता विविध रूपों में व्यक्त होती रही है। कविता, बोट कविता, शमलानो पोदो, सुकुसावादो कविता आदि व्यक्तवादो दर्शन तथा नकारात्मक क्षामाजि प्रवृत्तियों से पूर्णतः निरुद्ध हैं।

काः सन् १९३६ ई० से सन् १९७० ई० तक को हिन्दी कविता में व्यक्तवादो दर्शन विविध रूप में व्यापित होता रहा है। बालीय युग की अधिकांश काव्य-कैतना 'व्यक्ति' की केन्द्र में लेकर अवतरित हुए हैं जो कि व्यक्तवादो चिन्तन की काव्यात्मक रूपों प्रस्तुत करते हैं।

प्रयोगवादो काव्य को नाव भूमि पर विचार करने पर यह तथ्य प्रकाश में आता है कि यह काव्य व्यक्त-वादो धरातल पर विवक्षित हुआ है। कतिपय विद्वान् 'तारुप्तक' के कवियों में से पाँच को प्रगतिवादो अर्थात् मार्क्सवादो कैतना से जुड़ा हुआ बताते हैं और दो कवियों को उप्रगतिवादो अर्थात् व्यक्तवादो विचारधारा से सम्पृक्त मानते हैं। परन्तु प्रयोगवादो काव्य को नाव-

भूमि पर विचार करने पर यह तथ्य प्राप्त होता है कि 'तारसप्तक' के प्रायः सभी कवियों की भावभूमि कहीं न कहीं वैयक्तिक रही है। यद्यपि डा० रामविलास शर्मा आध्यात्म मार्क्सवादो- जैतना से जुड़े रहे हैं। इन कवियों की भाँति ही 'द्वयरा सप्तक' के प्रायः सभी कवि भाव-बोध के वैयक्तिक सन्दर्भों से लिखते हैं। इन कवियों की व्यक्ति- जैतना प्रयोग करने के लिए निरन्तर कटिबद्ध है। इसीलिए ये कवि विद्रोह के प्रति सजग रहे हैं। प्रयोगवाद में व्यक्तिवादो दर्शन को अनिव्यक्ति विविध प्रकार से हुई है।

'व्यक्तिबोध' की कविता पर विचार करने पर ज्ञात होता है कि 'व्यक्तिवाद' का प्रभाव उसकी कविता में इतना है कि वह वैयक्तिक- अस्तित्व, व्यक्ति- जैतना, व्यक्ति-स्वातन्त्र्य एवं वैयक्तिक अनुभूतियों के काल्पनिक लोक में विचारण करता है। वह इतना निराश है कि जीवन से फ्लायन करके प्राचीन मिथक, प्रतीक एवं विम्बों को प्रस्तुत करता है। इसके साथ साथ भावभूमि के विविध स्तरों के अन्तर्गत विचार करने पर यह ज्ञात होता है कि 'तारसप्तक' 'द्वयरा सप्तक' एवं 'नयेन के प्रपण' के कवियों की रचनाओं में अस्तित्ववाद, जहम् वाद, भोग वाद, फ्लायनवाद, लक्षणवाद और अनास्था एवं विद्रोह के विविध निदर्शन प्राप्त होते हैं। इतना जरूर कहा जा सकता है कि कुछ कवि मार्क्सवादो जैतना से प्रभावित रहे हैं। परन्तु वे व्यक्तिवादो- जैतना से इतने अधिक सम्पृक्त हैं कि उन्हें ज्ञात हो नहीं होता कि वे अपने काव्य में कितने व्यक्तिवादो हैं और कितने

भाववादो । इन कवियों का भावबोध , भाव- जेतना सर्व प्रयोग- जेतना , व्यक्ति- स्वातन्त्र्य को नितान्त वैयक्तिक रूप में जोता है और भावनिव्यक्ति से विविध उपायों से गुजरता हुआ व्यक्तित्ववादो धरातल पर अपनी काव्य की रचना करता है। मुक्तिबोध को जेतना भी इसी प्रकार को है। उसको समग्र जेतना वैयक्तिक है। उसका व्यक्ति- जेतना के नूतन धरातल स्थापित करने में सतत क्रियाशील है। उसको नकारात्मकता व्यक्तित्ववादो नकारात्मकता के अधिक समोप है और उसका वह निरन्तर संघर्ष करने का प्रयास करता है। इसी प्रकार जमशेद बहादुर सिंह की जीक कविताओं में स्थूल भोगवाद के निर्वर्ण प्राप्त होती हैं जो कि व्यक्तित्ववादो चिन्तन के समोप हैं।

उपरिलिखित तथ्यों से सिद्ध होता है कि प्रयोगवादो काव्य की भावभूमि व्यक्तित्ववादो- जेतना से प्रभावित हो नहीं, बल्कि उसको अपनी में समाहित करेगा है। प्रयोगवाद में व्यक्तित्ववादो दर्शन ' प्रयोग ' के साथ विद्रोह सर्व नकारात्मकता की विचारधाराओं को लेकर विकसित हुआ है। इसे यह कहा जा सकता है कि प्रयोगवाद व्यक्तित्ववादो चिन्तन का काव्यात्मक स्वरूप है।

' नवनिवाद ' का एक ऐतिहासिक महत्त्व है। प्रयोगवाद का इसी स्वरूप प्रस्तुत करने के लिए ' नवनि ' के प्रपत्र का प्रकाशन हुआ । वास्तव में प्रयोगवाद की इसी ' वाह्यदृष्टि ' -----

१- प्रयोगवाद का लेख- मुक्तिबोध का ब्रह्मराजस , प्रीतिस्वामी , प्रीति

आत्मा उस संकलन में अतिशय रूप में समाहित है। भाषा, तर्क, शब्द-चयन, अभिव्यक्ति-पौष्ट्य, वाक्य-विन्यास, वस्तु-विधान तथा चित्रात्मकता आदि में प्रयोग के अतिशय प्रयोगों के कारण नकेनवादों काव्य का युगीन महत्त्व है। यह काव्यान्वित प्रयोगवादके अन्तर्गत व्यक्ति-वादी दर्शन को एक दूसरी कड़ी के रूप में सामने लाया है। इसमें एक ऐसी कवितार्प है जो प्रयोग की दृष्टि से अत्यन्त उत्कृष्ट है। शब्दों के वैयक्तिक प्रयोग हिन्दी कविता में अन्यत्र इतने ठोस एवं सघन रूप से प्रयुक्त नहीं हुए हैं। समग्र रूप से यह कविता व्यक्तिवादी धारातल पर नकारात्मक प्रकृतियों की अभिव्यक्ति है। ये कवि न तो सामाजिक यथार्थ के प्रति और न अर्थवाद, वैयक्तिक कुंठा, प्रकृति, व्यंग्य आदि के प्रति अधिक मोह रखी हैं और न ही पाठकों की सहजि के संदर्भ के प्रति विचार करती हैं। ये केवल अपने प्रयोग के समर्थन में और परम्परागत परिपाटियों के विरोध के प्रति संकेत है। न ही ये जीवन के अनुभवों को नंगे हुए हैं और न जीवन के घात-प्रतिघात से परिचित हैं। इनका दृष्टिकोण 'नकार' एवं 'नकारात्मकता' के आधार पर बना हुआ है। इनके काव्य में भेदभेद एवं उदासीनता के चित्र अधिक प्राप्त होते हैं। इसलिए इनका व्यक्ति-स्वातंत्र्य, वैयक्तिक-स्वातंत्र्य के परिधि में अपना रचना-संसार निर्मित करता है। व्यक्तिवाद की अतिवादी प्रयोगात्मकता एवं नकार की प्रकृति समग्र काव्य का मूल मन्त्र बनकर रह गये हैं। काः नकेनवाद व्यक्तिवाद के अतिवादों चिन्तन की ग्रहण किये हुए हैं।

उपरिलिखित प्रयोगवादों तथा नकेनवादों

१- डा० रमार्कर तिवारी- प्रयोगवादों काव्यधारा ५० १९६

निष्कर्षों पर विचार करने पर निम्नलिखित तथ्य प्राप्त होते हैं :

१- प्रयोगवाद के तत्त्वज्ञ कवियों ने भावभूमि के व्यक्तिवादों धरातल पर काव्य-सृजन किया है।

२- 'तारुस्तक' 'दूसरा सप्तक' तथा नकेन के प्रयोग के सभी कवियों (राम चित्तल जनों को छोड़कर) की कविताओं में अस्तित्ववाद, लक्ष्मवाद, भोगवाद, फलाकवाद, राजावाद, ज्ञात्या एवं विद्रोह के निर्दर्शन सहज ही प्राप्त हो जाते हैं। अतः प्रयोगवादों काव्य व्यक्तिवादों जेतना से प्रभावित हैं।

३- प्रयोगवाद का कवि व्यक्ति जेतना के साथ साथ प्रयोग जेतना और काव्य- जेतना के प्रति भी उतने ही सजग है जितना कि भाव बोध के वैयक्तिकसंदर्भ के प्रति सजग है।

४- इन कवियों का व्यक्तिवाद सर्ववाद में परिवर्तित हो गया है।

५- प्रयोगवादों कवियों की भावभूमि-व्यक्ति व्यक्तिवादों रूप में अवस्थित हुई है। इसके काव्य में भोगवादों फलाकवादों, राजावादों एवं ज्ञात्या तथा विद्रोह के स्वर सुललित हुए हैं।

६- प्रयोगवाद का रचना-रूप निरान्त वैयक्तिक धरातल पर विकसित हुआ है।

निष्कर्षतः प्रयोगवादी काव्य में व्यक्तित्व-वादी विनाशधारा की एक शक्ति में व्यक्त हुई है। प्रयोगवाद व्यक्तित्ववाद का काव्यात्मक स्वरूप है जो कि भारतीय परिवेश और भारतीय भूमि की उपलब्धि है। प्रयोगवाद व्यक्तित्ववाद का दूसरा नाम नहीं, बल्कि व्यक्तित्ववादी चेतना का प्रयोगवाद के रूप में प्रतिफलन है। प्रयोगवाद ने व्यक्तित्ववाद की कई स्तरों पर अपनी काव्य में समाहित किया है। इसलिए यह सत्य है कि प्रयोगवादी काव्यान्दोलन में व्यक्तित्ववादी विनाशधारा का अधिकार में प्रयोग हुआ है। प्रयोगवाद व्यक्तित्ववाद से नावकीर्ण एवं शिल्प के धरातल पर पूर्णतया सम्पृक्त है। अतः प्रयोगवाद व्यक्तित्ववाद का काव्यात्मक रूपान्तरण है। यह व्यक्तित्व की गरिमा का पूर्ण काव्यात्मक वान्दोलन है। प्रयोगवाद का 'प्रयोग' काव्य में 'व्यक्तित्व' के रूप में परिवर्तित हो गया है। व्यक्तित्व का वह प्रयोगवादी कविता का अलङ्घित क्षेत्र बन गया है। इसलिए प्रयोगवाद व्यक्तित्ववादी-चेतना की एक प्रकार से वात्सल्यता करता रहा है।

वाधुनिक हिन्दी साहित्य में स्वातंत्र्योत्तर काव्य का विशिष्ट महत्त्व है। इस युग की कविता में अनेक प्रयोग हुए हैं, परिवर्तन आये हैं, कई काव्यान्दोलनों का उतार-चढ़ाव आया है तथा खनालित्व में नवीनता एवं वाधुनिकता का नया विश्वास विकसित हुआ है। नयी कविता परिस्थितियों की उपज है। यह प्रयोगवाद के झोड में जन्मा और हिन्दी कविता के पूर्ववर्ती संस्कारों को त्यागकर नये मार्ग पर प्रवृत्त हुई। भारतीय व्यक्तित्व सामन्तो-व्यवस्था को प्रतर्की में रखा हुआ पुतला है। स्वराज्य प्राप्त के उपरान्त उसका मोह-नीम एवं

स्वप्न भंग हुआ। 'व्यक्ति' का मोह भंग वर्तमान सत्ताधारियों के विरोध में एवं वर्तमान जीवन-मूल्यों के विरोध में उभर कर सामने आता है। इसके व्यक्ति के मन में वान्तरिक रज्ज को वैचारिकता के मध्य निराशा, नकारात्मकता, लघुत्व बोध एवं क्लेशों की स्थिति विकसित होती है।

जब व्यक्ति वापुनिक जीवन से सम्पृक्त व्यक्तिवादों चिन्तन के निकट आता है। व्यक्ति के मन में अस्तित्व-बोध, दाणबोध, लघुत्व-बोध, बर्ह-बोध, व्यक्तिनिष्ठा, विद्रोह, भोगवाद, क्लेशात्मकता, कास्था एवं निराशा आदि के भाव विकसित होती हैं। काः नयी कविता का व्यक्ति अस्तित्व के विभिन्न व्यक्तिवादों स्तरों को जोता है। उसको वैयक्तिक क्लेशना परम्परा-भङ्ग के रूप में विकसित हुई है।

नयी कविता में निराशा का केन्द्र व्यक्तिवादों स्तर परहुवा है। व्यक्ति में निराशा, सामाजिक, आर्थिक पर्यादा-भङ्ग, युद्ध की वार्शिका, महानगरीय सभ्यता, सत्ता में नव्य-स्था आदि के कारण-अस्तित्व हुई है। व्यक्ति ने तीव्रता किया, वह विकसित हुआ और निराशा को और अग्रसर हुआ। यही व्यक्तिवादों चिन्तन को अभिव्यक्ति नयी कविता में निराशा की स्थिति है।

अस्तित्ववादों प्रवृत्तियाँ व्यक्ति के अन्तर्भूत में विविध रूपों में उपस्थित रही हैं। व्यक्ति की क्लेशात्मकता की पीड़ा,

टूटने का दुःख , मोह में लीजाने की आर्त्तिका, स्वयं को मरा हुआ
 ज्ञाता प्रेतात्मा मानना, समग्र विश्व को लाल ज्ञाता मुदा सम्भलना,
 महापानव के नय, मोह का भय, संक्रास, आत्म हत्या की प्रक्रिया ,
 पृष्ठात्मक वस्तुओं के प्रति रागात्मकता, बदहू मरो , उबकाई मरो ,
 युद्ध जनित भयंकर स्थितियाँ, विसंगतियाँ एवं अतगाव के जीवा जादि
 से उसका हृदय विच्युब्ध है। नया कवि क्षना तनाव ग्रस्त एवं संघर्ष-रत
 है कि उसके दैनिक जीवन की क्रियारं भी आक्रोश के तेवर तथा तनाव की
 सुझार प्रस्तुत करती हैं। कंधी छड़के, मोह मरो लहके, पराशर्या , टूटे-
 फूटे मतलब , वैश्याओं के गस्ति का, दायित्वहीन जीवन , अनिर्णय
 की स्थिति , अस्तित्व के प्रति चिन्ता, इतिहास एवं संस्कृति के पतन
 से अनिश्चय एवं आर्त्तिका का मन में बैठ जाना जादि से नयी कविता का
 कवि जन्म हुआ है। नयी कविता में अस्तित्ववादो चिन्तन का आधार
 व्यक्ति है। व्यक्ति अनुभव करता है कि वह विकृत संस्कृतियों को उपज
 है। वह प्रतिपादना मृत्यु को निकट से गुजरते हुए देखता है। व्यक्तिवादो
 धारणा के अनुसार व्यक्ति आत्म-केन्द्रित हो गया है। अब उसे मोह
 मरो लहके निर्भर लगती है। नयी कविता में अस्तित्ववाद का स्थापन
 एकलतापूर्ण हुआ है। इन कविताओं में व्यक्तिवादो- चेतना कीधारा
 प्रवाहित होती हुई दृष्टिगोचर होती है।

लघुमानव को प्रतिष्ठा के केन्द्र में

व्यक्ति- चेतना एवं वैयक्तिक-दायित्व को विचारभूमि उर्वरता का
 कार्य करती रही है। व्यक्ति- हित, व्यक्ति- निष्ठा , वैयक्तिकता
 एवं व्यक्ति-स्वातंत्र्य को भावना लघुमानव की निरन्तर प्रेरित करती

हो है। नयी कविता का व्यक्तित्व साधारण, आम, लघु एवं दलित व्यक्तित्व है जो समाज, वर्ग एवं सत्ता से टूटा हुआ, कूटा हुआ तथा बिसरा हुआ बीना व्यक्तित्व है। नयी कविता के लघु-मानव को ईश्वर विरोधी, परम्परा-भङ्ग, समाज-विरोधी, धर्म-विरोधी एवं व्यक्तत्वा के प्रति आक्रोश की मुद्रा में स्थापित किया है। समाज विरोधी होने के कारण वह व्यक्तित्ववादो होगया है। नयी कविता का लघु मानव अपने लघुत्व को छोड़ने की प्रक्रिया में है। अतः लघुमानव नयी कविता को विशिष्ट उपलब्धि है जो कि व्यक्तित्ववादो चिन्तन पर आधारित नये व्यक्तित्व की गरिमा के प्रतिपादक है।

नयी कविता के कवि की साणानुसृति,

साण-बोध, साण का महत्व आदि का वैयक्तिकता के पाठ्य से व्यक्तित्ववादो चेतना के अनुसृत सफल कैतव्य हुआ है। नयी कविता का वह कुछ स्थानों पर 'ईश्वरत्व' एवं 'विराट' की ओर उन्मुख हुआ है। समग्र रूप से नयी कविता में वह वैयक्तिकता के आधार पर पर विकसित हुआ है। नयी कविता में आत्यंतिक वैयक्तिकता-कैलाफ एवं अजनबोफ की ओर मुह गयी है जो कि व्यक्तित्ववादो चिन्तन से प्रेरित है। नयी कविता विद्रोह को व्यक्तित्ववादो मुहिम पर स्थिर है। व्यक्तित्व का विद्रोह, धर्म, समाज, ईश्वर आदि के प्रति व्यक्तित्ववादो चेतना को नूतन रूप में प्रस्तुत करता है। नयी कविता में शूलस्वपरक भोगवाद अधिक है जो कि वैयक्तिकता से सम्पृक्त है। नयी कविता में भोगवाद व्यक्तित्ववादो चिन्तन से प्रभावित रहा है। इसमें अजनबोफ एवं कैलाफ का चित्रण व्यक्तित्व-केन्द्रित भाषा उसी आत्म-केन्द्रित भाषना पर टिका हुआ है। नयी कविता में कैलाफ, अजनबोफ एवं

एवं अलग-अलग की प्रवृत्तियाँ व्यक्तिवादों चिन्तन की देन हैं।

नयी कविता का पोढ़ा- बीध व्यक्ति-वादों जैतना से प्रेरणा प्राप्त कर ताजा ढंग से व्यक्त हुआ है। व्यक्ति समग्र पोढ़ा और दर्द को एकाकी जोता है। उसको दर्द सहने को सामता मौलिक और जोब है। नये कवि की वैयक्तिक अनुभूतियाँ इस पोढ़ा की अपनी तरह से व्यक्त करती हैं। नयी कविता का व्यक्ति सामाजिक, आर्थिक विषमताओं से बंधा आत्म केन्द्रित हो गया है जो कि व्यक्तिवाद की एक प्रवृत्ति विशेष है।

कविता व्यक्ति की वैयक्तिक प्रज्ञा है। कविता का केन्द्र व्यक्ति का हृदय माना जाता रहा है। परन्तु नयी कविता में केन्द्र परित्यक्त माना जाता है। यथार्थ में नयी कविता व्यक्ति को जादिकता का परिचय देती है। सन् ५० के उपरान्त कविता में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं। नयी कविता में निराशा, नास्तिकता, क्रान्ती, अस्तित्व, आक्रोश, अव्यवस्था, विघटन, भय, विवास, कृष्ण, अनिश्चयवाद का समावेश विविध प्रकार से हुआ है। नयी कविता का कवि उक्त समग्र विराग्तियों को भोगता है और उनको अभिव्यक्ति प्रदान करता है। नयी कविता का व्यक्ति सण्डित, जारज, लघु, बाना तथा गर्म से धक्का देकर निकाला हुआ है। वह समाज को इकारे होते हुए भी समाज की व्यवस्था से उपेक्षित जीवन जी रहा है। इस कारण व्यक्ति में क्रान्ती एवं संघर्ष की प्रवृत्तियाँ विकसित हुई हैं।

नयी कविता की अनुभूतियाँ व्यक्ति की वैयक्तिकता पर आधारित हैं। व्यक्ति ने समाजवाद से अनुभूतियों को

पनाया है और व्यक्त किया है। नयी कविता को विषय-वस्तु विशाल है- वैयक्तिक-वाक्य के साथ सामाजिक-वाक्य के प्रति भी ये कवि सजग रहे हैं। परन्तु निराशा, नकार, परम्परा भंग, अस्तित्व-बोध, सपुत्र बोध, पाण-बोध, वास्तविक वैयक्तिकता, अहंवाद, भोगवाद, क्लेशापा, क्लेशा, कृष्ण तथा विद्रोह को नयी उद्भावनाओं ने नयी कविता में व्यक्तिवादी चिन्तन को विराट् फलक प्रदान किया है। नयी कविता नकार एवं निषेध से उत्पन्न हुई है। नयी कविता नये व्यक्ति की प्रतिष्ठा में रत है। व्यक्ति की प्रतिष्ठा हो नयी कविता को व्यक्तिवादो केतना के निकट ला देती है। नयी कविता वैयक्तिक केतना को जोवन्त अमिष्यवित है। अतः नयी कविता व्यक्तिवाद के काव्यात्मक विकास की वैचारिक मूिका निमाती है।

नवगीतके प्रारम्भिक दौर में प्रकृति-चित्रण का आधिक्य रहा है। प्रणय एवं रोमांस को अनुभूतियों को वैयक्तिक रूप में प्रस्तुत करने का नवगीत ने कार्य किया। परन्तु परम्परागत विषयों से हटकर उन उल्लेख उपरान्त नये विषयों को नवगीतकार ने ग्रहण किया तथा नयी परिस्थितियों के ताजा-टटके नवगीत लिते। व्यक्ति को टूटन-पुटन एवं नगरीय जीवन की विद्रूपताओं ने नवगीतकार को भिन्नगीत दिया। वह यगर्ग जीवन को और प्रेरित हुआ। इस कारण नवगीत में व्यक्तिवाद विद्रोह एवं आक्रोश के स्वर लेकर अवतरित हुआ।

नवगीत में प्रेम, प्रणय तथा रोमानिया की विविध रूप से वंशित किया गया है। नवगीत का व्यक्ति वास्तविक

जीवन तथा आंतरिक जीवन के मुख्य नये रोमानियक के मधुर गीतों की रचना कर रहा है। नवगीत ने प्रणय सम्बन्धी काव्य परम्पराओं में भी प्रयोग किये हैं। नवगीत को रोमानियक व्यक्तित्व की वैयक्तिक निधि है।
 कतः प्रायः सभी रोमानियक के नवगीतों में व्यक्तिवादी जीवन-दर्शन का प्रभाव रहा है।

नवगीत में नगरबोध के विविध तवर और मस्त मुद्राओं का ज्ञान प्राप्त होता है। इनमें व्यक्तित्व की टूटन - छूटन और संक्राण के स्वल्प को उद्घाटित किया गया है। कतः नवगीत नगर-बोध को सम्पूर्ण रूप से अपने में फाये हुए है। इन नवगीतों में महानगरीय जीवन से उत्पन्न कुण्ठा, संक्राण, ऊब , पराजय-बोध, मोह भंग , तलित व्यक्तित्व आदि के विविध चित्रों को स्फाटित किया गया है। इनमें ताजा कृतियों को अतृप्तपूर्व ढंग से प्रस्तुत किया गया है। नवगीतकार व्यक्तित्व के जीवन की विचित्र परिस्थितियों को जो रहा है। इसके व्यक्तित्व के अन्तर्भूत में वैयक्तिकता , व्यक्तित्वनिष्ठा एवं व्यक्तित्व-स्वातंत्र्य के भाव प्राप्त होते हैं। कतः नवगीतकार नगरबोध के जीवन की व्यक्तिवादी चिन्तनके आधार पर जो रहा है।

नवगीत में अकेलापन, अजनबीपन, कुण्ठा, एवं आस्था के तवर विद्यमान हैं। नवगीतकार युगोप परिस्थितियों से निरन्तर जुक्त रहा है, उसका वर्तमान अजनबी है, एकाकी है। उसका व्यक्तित्व आस्था और छूटन पर जीवन में आस्था को एक किरण जीवता है। यही नवगीतकार में व्यक्तिवादी जीवन की प्रेरणादायक उपलब्धि है। यथार्थ में व्यक्तित्व के निजी सम्बन्धों में दरार, आस्था का वाता-

वरण , जीवन के प्रति अनिश्चय, वर्तमान संश्लेष एवं वास्तविकता से घिरा हुआ है। इसलिए व्यक्ति का मन जैसा होते हुए भी संघर्षरत है।

आवावादी एवं उत्तर आवावादीगीतों में आस्था, जैलापन, अनिश्चय तथा नकार के स्वर ठोस चिन्तन लेकर व्यक्त होते हैं। परन्तु नवगीत में अज्ञानबोध, जैलापन, आस्था , टूटन, घुटन आदि के स्वर विद्यमान होते हुए भी जीवन के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण नहीं प्राप्त होता और न ही 'नकार' चिन्तन को पुष्टि हो प्राप्त होती है। ज्ञाना ज्ञेय है कि नवगीत का व्यक्ति वैयक्तिक अनुभूतियों को व्यक्तिवादो स्वरूप चिन्तन के परिप्रेक्ष्य में ग्रहण करता है जिसे उदात्त मान प्राप्त होते हैं। इस प्रकार जीव नवगीतकारों की रचनाओं में वैयक्तिक अनुभूतियों से सिद्ध आत्मनिष्ठा तथा आत्मकेन्द्रित होनेके चित्र प्राप्त होते हैं। नवगीत की भाषा अनुभूतियों वैयक्तिकता से सिद्ध व्यक्ति की स्वतन्त्र-सत्ता की व्याख्या करने में रत है।

आक्रोश व्यक्ति की मनोदशा को व्यक्त करता है। इससे नवगीत के कथ्य को सघनता में वृद्धि हुई है। नवगीत मन की फाँसों की भेदन में सक्षम है। इसीलिए नवगीत में व्यंग्य अधिक प्राप्त होते हैं। नवगीत की विद्रोहात्मक व्यंग्य से वास्तविक रचनाएँ विभिन्न मैगज़ीन एवं पत्रिकाओं में अधिक प्रचारित हुई हैं। इससे ज्ञात होता है कि नवगीत में आक्रोश के स्वर निरन्तर अपना स्थान बना रहे हैं। समग्र रूप से नवगीत में आक्रोश , विद्रोह तथा विरोध नवगीतकार के वैयक्तिक जीवन से प्रभावित है। नवगीतकार सामाजिक परिवेश के विरोध

में वैयक्तिक रूप से नवगीत को सर्वना करता है। का: यह विद्रोह सामा-
जिक होते हुए भी व्यक्तिवादिता से प्रभावित है।

वाधुनिक युग का व्यक्ति अपने परिवेश
में जो रहा है। दैनिक जीवन की उथल पुथल, पारिवारिक जीवन की
घुटन तथा टूटन व्यक्ति को पराभव की ओर ले जाती है। व्यक्ति का
जीवन अत्यन्त जटिल होता जा रहा है। नवगीतकार परिवार और
समाज से अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों को फाता, सोचता और उनको
अभिव्यक्ति का रूप प्रदान करता है। उसके लिए व्यक्ति का संहित बर्ह
तथा व्यक्तिवादो विन्तन को अभिव्यक्ति वाञ्छनीय है तो दूसरी ओर
समाज तथा परिवार से उत्पन्न नये जेतना का उद्घोषण भी इन नव-
गीतों को निधि है। एक ओर व्यक्ति पुराने कदियों तथा परम्परागत
संस्कारों में उतकता है और दूसरी ओर व्यक्ति में प्रसार वैयक्तिक जेतना
को व्यापक करने में लगता है। नवगीतों में व्यक्ति और समाज की
विविध समस्याओं तथा व्यष्टि एवं समष्टि की फैलों को अत्यन्त
विचारपूर्ण एवं गम्भीरतापूर्वक संकित किया है।

नवगीत प्रणय, सौन्दर्य, प्रकृति तथा
वाध्यात्मिक विचारों से अलग वाधुनिकयुग बोध से सम्पृक्त महानगरीय
संघर्ष, उच्चलित जीवन तथा ग्रामीण जीवन की कार्मपरक अभिव्यक्ति
है। वाधुनिक युगबोध के कारण व्यक्ति के व्यक्तित्व में परिवर्तन आया।
व्यक्ति को रोमानियस के सफे टूट गये। व्यक्ति मोह-भंग तथा पराजय-
बोध को स्थितियों से गुजरने लगा। नवगीत में रोमानियस, नारी-
सौन्दर्य, महानगरीय बोध से उत्पन्न कुण्ठा, संताप, अलसता, आस्था

बाह्योत्थ तथा आत्मनिष्ठा के भाव प्राप्त होती हैं। नवगीत में व्यक्तित्व के अन्तर्प्रेम को भावना का यथार्थपरक चित्रण हुआ है।

नवगीतकार को वैयक्तिक अनुभूतियाँ , वैयक्तिक-साहित्य, व्यक्ति-स्वातंत्र्य तथा आत्म-केन्द्रित विचारों की प्रेरणा देती हैं। लोकजीवन की दृष्टि में समष्टि भाव है, कन्याओं १६७० ई० तक के नवगीतव्यक्तिगत में व्यक्तिवादी आत्म-केन्द्रित चिन्तन की अभिव्यक्ति है। नवगीत पर व्यक्तिवादी चिन्तन का स्वरूप एवं उसके प्रभाव प्राप्त होता है। अतः नवगीत में व्यक्तिवादी चिन्तन का प्रतिफलन सफलतापूर्वक हुआ है।

कविता सातवें दशक की कविता है, जो कि साठोत्तरी पीढ़ी के "सौच" पर आधारित है। कविता नगरीय सभ्यता की यथार्थपरक अभिव्यक्ति है। कविता जीवन की उन सच्चाइयों को व्यक्त करती है जिन सच्चाइयों को व्यक्ति पीगता है, परन्तु अभिव्यक्ति प्रदान नहीं कर पाता। नयी कविता के व्यक्तिवादी अस्तित्ववाद में कुछ विसंगतियाँ उभर आई थीं उनको धीरे में खोजा गया था। कविता उसी धीरे में प्रसारित सुखदार्पण का अन्वेषण है। कविता व्यक्ति के विद्रोह की कविता है। यह विद्रोह निरीह और अस्वीकृति के रूप में व्यक्त हुआ है। कविता परम्परागत मूल्यों के प्रति विद्रोह है। यह व्यक्ति के अर्थ का यथार्थपरक विस्फोट है। कविता व्यक्तिवाद को और व्यक्तिनिष्ठा का परिणाम है।

कविता में धर्म, संस्कृति, मर्यादा, रीतियाँ एवं परम्परागत संस्कारों के प्रति विद्रोह का स्वर प्राप्त होता

है। इसके साथ इतिहास, संस्कृति, धार्मिक अनुष्ठान एवं संस्कारों के प्रति नकारात्मकता के विविध दृश्य प्राप्त होते हैं। अब संस्कार पर विश्वास नहीं है, संस्कृति तोत्सी और निर्णम है, नगर और संस्कृतियाँ मर रही हैं, धार्मिक स्थलों में मिला रत कुत्ते तथा गिद्ध कुकर्म करने में मग्न हैं। सभी पुरुष नामर्द हो गये हैं तथा पूरी पीढ़ी व्यर्थ संस्तान है। इन कविताओं में परम्परागत जीवन-मूल्यों का लण्डन, अस्वीकृति एवं नकारात्मक जीवन दर्शन का वाह्यनिक रूप प्राप्त होते हैं।

कविता के कवि के लिए कविता स्वप्न, कल्पना, तय, बिम्ब जैसा प्रतीक के प्रयोग के कारण निर्जीव और पुरानी पड़ गई। उन्होंने कविता के काव्यात्मक ढाँचे को तोड़कर 'शून्य' स्थिति लाने का प्रयास किया। इनका ध्यान यौन-विकृतियों, कुण्ठाओं, मूल्यों के प्रति विद्रोह वाह्यनिकता के मोह में अस्वीकृति जैसा नकार को और रखा है। इसके शून्य की स्थिति निर्मित हुई जो नकारात्मकता का ठोस रूप है। इसीलिए कवितावादियों ने धर्म-ग्रंथों, ऋद्धियों परम्पराओं तथा नैतिक नियमों-विचारों एवं संस्कारों का हटकर विरोध किया। स्थिति यहाँ तक होगई कि अपने 'लिंग-रस' को गिलास में निचोड़ कर चाटना, प्लास पीना, टट्टी लाना आदि नैतिक एवं समाज के सामाजिक मूल्यों के विरोध में उभरता हुआ संघर्ष है।

कवि वात्म हत्या तथा मृत्युव्रण के व्यव-राता नहीं है। उसकी अस्वीकृति वाह्यनिकता का वावरण कीड़े हुए नकार को फुटा में उपस्थिति होती है। अण्डील-भुक्ती, स्त्रील जगती, मौना गुलाटी, श्याम परमार आदि को कविताओं नगरबोध के ऊपरी हुई स्तावदी

के प्रति विरोध दृष्टिगोचर होता है। समग्र संस्कृति नृपुंसकों की है जो कि लड़कियों की ऊढ़ी काटना चाहते हैं। जब ऊढ़ी को फँसो पनाब करते हैं तो वह उस जावानु को ऊढ़िता में प्रस्तुत करता है। यह उत्सुकता धीरे धीरे मूल्यों के प्रति विद्रोहात्मक मुद्रा बना लेती है। सामाजिक जीवन की बर्जनाई टूट जाती है, परिवार की मर्यादा तथा नैतिकता समाप्त हो जाती है। ईश्वर एवं देवता सभी नेष्ट हो जाते हैं। इसका मुख्य कारण अतिव्यक्तिवाद है जिसके कारण ये कवि एकाकी तथा आत्म-भोग के प्रति लालाछि रहते हैं। भोगवाद की चरम परिणति नारी के भोग में उभरी है। प्रायः सभी ऊढ़ी युवा लड़कियाँ ऊढ़ा महिलाओं के गुप्तांगों में लिप्त हैं। नकारात्मक दृष्टिकोण तथा व्यक्तित्व-सुख का चरम आनन्द यही हो सकता है। अतिशय व्यक्तिवाद इन कवियों को वैचारिकता के व्यावहारिक ढाँचे में घुस मिल गया है।

यथार्थ में ऊढ़िता काव्यान्दोलन उत्सुक-कृति के नवोन्मेष तथा मूल्यों के विद्रोह का सामाजिक, नकारात्मक स्वर है। अतिशय व्यक्तिवाद 'व्यक्ति' के अन्तर्गत में फँस गई है। जब एकाकी, नारी-भोग में हत विकृतियों में फँसा रहता है। उसका व्यक्तित्व-सुख ही वैयक्तिक भोग के रूप में विकसित होता है। समग्र मर्यादा नैतिकता, परम्पराएँ और नियम-आचरण लीकते लगते हैं। सतीज बपाही का एक 'एक और नंगा आदमी' हसी पत्थर की खना है जिसमें नंगी आदमी की देखकर ऊढ़ी रहती है। एक प्रकार ऊढ़िता धर्म, समाज, संस्था, नियम-आचरण, संस्कार तथा अन्य परम्पराओं के विरुद्ध व्यक्तिवादी जीवन दर्शन का काव्यात्मक रूप है जो कि उत्सुकता, नकार एवं नकारात्मक दृष्टिकोण को चिह्नित पर टिका है।

कविता में फूटफुल, भेदसफ को चित्रण अत्यन्त बीभत्स, घिनौने एवं वश्लोत् रूप में हुआ है। नारो-पुल्लण के सम्बन्ध तथा दोनों के गुप्तार्थों को वश्लोत् विकृति कविता को फूटफुल बनाने लगी। कविता के प्रायः सभी कवियों ने नारो-पुल्लण के संबंध फूटफुल एवं विकृति रूप में प्रस्तुत किये। कविता का विद्रोह नारो के उरीजों और जेजाजों के बास पास घुमता रहा। ल्यो रोड, बारहलिया, योन, लिंग, लंभोग, घृणा, पागलताना, बनमानुष, शिफली बादि के बीभत्स तथा फूटफुल चित्र कविता में प्राप्त होने लगे। इन्हें फनी, मेरया एवं प्रेमिका के साथ 'वस्त्र मुक्त' सोना बना लगता है। और ऐसे चित्र प्राप्त होते हैं जिते घृणा, अगुप्ता, बीभत्सता बादि के दर्शन प्राप्त होते हैं। वाधुनिक जीवन को विकृति तथा फूटफुल के चित्र कविता के लिए इष्ट बन गये। सतीश जमासी, जगदोशभुवेदी, मीना गुलाटी, सौमित्र मोहन, बैलाश बाजपेयी, केशु बादि की कविताओं में फूटफुल का चित्रण प्राप्त होता है। इन कवियों ने भेदसफ को कोरा लफ्फार के रूप में लफ्फाया है। इसका मुख्य कारण वाधुनिकता के प्रति मोह है जिसने विचारतया अभिव्यक्ति को विकृति प्रदान की। इन कवियों ने तत्तिशय व्यक्तित्वाधो दर्शन को ग्रहणकर फूटफुल, भेदस तथा विकृतिपूर्ण दृश्य प्रदान किये हैं। अतः इन कवियों ने व्यक्तित्वाद का घोर वैयक्तिक रूप से प्रभावित स्वरूप प्रस्तुत किया है।

कविता तक जाते जाते व्यंग्य के प्राचीन विषय परिवर्तित हो गये। अब वाधुनिक वैज्ञानिक एवं बौद्धिक व्यंग्यों के चित्र अंकित होने लगे। कविता के व्यंग्य तेज तरार भाणा से सिक्त होने लगा तोसे मुहावरों से बाज्जादित है। जगदोशभुवेदी, रयाम परमार,

गोविन्दराय, तारा तिवरू, सीम्हि मोहन, विनय, चन्द्रकान्त देवताले, परेश, कुमार विश्व, रमेश गौड़, खोन्द्र त्यागो, मोरामसिंह, मणिका मोहनो आदि की कविताओं में व्यक्ति के वर्ग का विस्फोट व्यंग्य को तोखी तथा पैनी अभिव्यक्ति लेकर व्यक्तित्वित हुआ है। अतीश जमालो के 'एक और नंगा आदमी' में जीक कविताएं अतीश चित्रों से सिक्त हैं। इस सन्दर्भ में 'कस्कीकृति, नगरपुष्ट, एक और नंगा आदमी, विनाश एक सम्भावना है, आत्म भोग, नगरबीध, अतिश्रमण, आदि इनकी समस्त कविताएं हैं जिनमें अतीशता के चित्र प्राप्त होते हैं। काः कविता व्यक्ति के वर्ग के विस्फोट के रूप में व्यंग्य-चित्र तथा अतीश चित्रों को प्रस्तुत करती रही है। इस प्रकार की रचनाओं के लिए अतिशय व्यक्तिवादो प्रवृत्तियों ने विशेष योगदान किया है।

कविता में सपाट बयानों ने व्यक्ति की वैयक्तिक - चेतना को प्रभावित किया है। परन्तु अभिव्यक्ति ने चौकाने वाले जीव दृश्य प्रस्तुत किये हैं। कविता में अटल अभिव्यक्ति तथा सपाट बयानों दोनों ही प्राप्त होते हैं। कविता का व्यक्ति अतिशय व्यक्तिवादिता के कारण आक्रोश की मुद्रा में सपाट बयानों में अपनी बात कहता है तथा दूसरों और अन्तर्मुखों एवं व्यक्ति केन्द्रित होने के कारण अटल अभिव्यक्ति प्रदान करता है।

अपरिचित कथ्य के प्रयोगों के कारण कविता में बोधस्थ, प्रसन्न, भवेष्ट, विकृत तथा घृणास्पद विचारों को अपना रचना-केन्द्र बना लिया। जीक कवितावादियों ने शिल्प में

चौकाने वाले प्रयोग करते हैं। कविता में एक ओर विरंगति, विरक्ता के दर्शन होते हैं तो दूसरी ओर उपरिन्ति कथ्य एवं चौका देने वाले शिल्प का प्रयोग प्राप्त होता है। कविता का कवि व्यक्तित्ववाद को अत्यन्त तीव्रता से आत्मसात् करता है। उसका व्यक्तित्व आत्मभोगी एवं स्वदेन्द्रो ही जाता है। कई का विस्फोट परम्परा-भङ्ग के रूप में होता है, परन्तु नये शिल्प का प्रयोग तथा नये विषयों पर कविता सुजन व्यक्तित्ववादो दर्शन से प्रभावित मूल्यों पर आधारित है।

सन् ६० के उपरान्त हिन्दी कविता के कथ्य एवं शिल्प में महान् अन्तर प्राप्त होता है। कविता, कोट कविता, रमझानो कविता, कोलाज कविता, आदि इसके प्रमाण हैं कि कथ्य को नयी नगिमा ने विविध प्रकार के रूप प्रदान किये हैं। कविता, नकार अस्वीकृति की कविता है। परम्परागत नियम-आचरणों की तिराजलि देनेके कारण जीवन मूल्यों में विघ्नोह कविता के व्यक्तित्व का मुख्य तथ्य प्राप्त होता है। जब व्यक्तित्व स्वदेन्द्रित, आत्मभोगी, व्यक्तित्वनिष्ठ, अमानाधिक, अंतर्गत एवं स्वतः ही गया है। उसकी माँ, बहन, पत्नी एवं प्रिया एक ही लगती हैं। समाज की मर्यादा टूट गई। इस कारण व्यक्तित्व मुक्त, आचरणहीन एवं से-कार विहीन हो गया। उसने वाधनिकता के नाम पर कविता में विकृत, विरूप एवं नगण्य प्रदान किया। अनेक कवियों ने वाङ्मय एवं परम्परा भङ्ग के रूप में पियारी, वीरन्त, फूहड़, नदी तथा बहुरिकर स्थल वस्तु कविताओं में संकलित किये हैं।

व्यक्तित्ववादो विन्तन आत्म-गुह का चिन्ता है। कवितावादो समाज के उसी आत्म-गुह के अन्वेषणो कवि है। उनका

वही अत्यन्त तीव्र तथा अधिक है। इसके अर्थ, व्यक्तित्व, अद्वितीय-व्यक्ति, सपाट बयानी, अपरिचित विषयों को सामान्य कविताओं में प्राप्त होता है।

निष्कर्षतः कविता में व्यक्तित्ववाद के नकारात्मक, स्वकेन्द्री, कामात्मिक तथा संस्कार विरोधी विचारों को काव्यात्मक रूप में स्थापित किया है। कवि कौताफ, वज्रवीर्य एवं आत्मरति को स्थितियों को जीता है। जीवन के घोर विरुद्धता के क्षणों का स्थापित कविता के घोर व्यक्तित्ववादी जीवन का दर्शन का परिणाम है।

सातवें दशक का 'व्यक्ति' सामाजिक परिवेश के प्रति संकोच होने लगा। उसे वैयक्तिक दुःख को साहसा ने समसामयिक समस्याओं तथा संकटों को सबसे बड़ा संकट मानने पर बाध्य किया। इसके व्यक्ति आत्म केन्द्रित हो गया और घोर व्यक्तित्ववादी बन गया। सातवें दशक के अनेक सुरु काव्यान्दोलनों का जन्म हुआ। ये काव्यान्दोलन व्यक्ति को अनुभूतियों तथा अभिव्यक्ति को स्वतन्त्रता के प्रभावित रहे। इन्होंने समाज को प्रायः सभी वर्गों को उत्तेजित कर दिया। देशराजनीति, समाज, संस्कार, वर्णों एवं नैतिक मूल्यों को नकारते हुए उन पर तीव्र व्यंग्य किया। इन कविता आन्दोलनों में नकार और निष्पीडात्मकता का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इस सन्दर्भ में अश्वमेध कविता, बोट कविता, समतानी पोढ़ी, गुरुदास-वादी कविता, कविता एवं सातवीं शताब्दी कविता वादि महत्वपूर्ण रही हैं।

अस्वीकृत कविता ने विगत की अस्वीकृत तथा वर्तमान सत्ता को अस्वीकृत कर दिया । इनके अनुसार अस्वीकृति आज तक के सभी कलाकारों का धर्म रहा है। अस्वीकृत कविता में विषय का बोध, मानवीय नविष्य को बर्णना, ब्राह्मण स्थितियाँ, यन्त्र युग की यातनाएँ, अज्ञान, विकृत परिस्थितियाँ, व्यंग्य, वासन्ध, संसार का भय आदि चित्रण प्राप्य होता है। अस्वीकृत कविता अविग्रस्त सामाजिकता के विरोध में विकसित हुई ।

सारांशतः अस्वीकृत कविता का कवि व्यक्तिवाद से प्रेरित रहा है। उसकी अन्तर्मुखी प्रवृत्ति ने सामाजिक और नैतिक मूल्यों के प्रति अस्वीकार को मुद्रा एवं आक्रोश के विविध स्वर प्राप्त होते हैं। अस्वीकृत कविता का व्यक्ति निरन्तर स्काफीन की ओर प्रयाण करता रहा । उसका वहल वहाँ अस्तित्व चिन्तों के प्रति सतर्क रहा है, वहाँ वह यौनपरक दृष्टियों की सज्जतापूर्ण उद्भूत रहा है । अस्वीकृत कविता का व्यक्ति नकार, नकारात्मकता , अस्वीकार तथा " नास्ति " के भाव से प्रेरित रहा है। इस कविता के मूल में व्यक्तिवादी वैचारिकता कार्यरत रही है जो कि " नकारात्मक " को व्यक्त करती है। अस्वीकृत कविता अस्वीकार को व्यक्तिवादो केतना से अनुप्राणित है।

रमेशानो पोदी का व्यक्ति संस्कृति, स-का, इतिहास एवं नैतिक मूल्य आदि शब्दों को परम्पराविहीन मानता है। ये पोदी समकालीन परिवेश , नीचे हुए कारण और प्रामाणिक अनुभव को ज्ञात करता है। ये कवि मूल्यों को कल्पना करती है, ये

संसार यन्त्रणा और मुर्दा से घिरा हुआ अनुभव करते हैं। ये श्मशान में बैठकर काव्य सृजन करना, कवि गोष्ठी एवं कवि सम्मेलन करना अधिक महत्वपूर्ण पानते हैं।

श्मशानी कविता की कवि की वैयक्तिक कितना अपनी संकीर्ण तथा विद्रोह की चरम पराकाष्ठा का स्व-प ग्रहण करते हैं कि व्यक्ति मृत्यु की कल्पना करता हुआ समग्र देश की मुर्दा से घिरा हुआ पाता है। इस कविता का मैं व्यक्ति होना निराश, आत्मा से सिक्त तथा पराजय- बोध से टूटा हुआ है। वह स्वयं की जो वित्त क्षमता न करे मुर्द के रूप में जीवित करना श्रेष्ठ सम्भवता है। श्मशानी पोद्दा की कविता में कामुकता, अरलीलता, निरक्ति, फुसड़पन, वितृष्णा के चित्र , भोगवाद एवं जातिरति की विविध स्थितियों का चित्रांकन प्राप्त होता है। श्मशानीपोद्दा की कविता के व्यक्ति के मन में चरम निराशय से उत्पन्न अतिशय व्यक्तिवादो विचारधारा का घिसाव, बोमत्स, कुत्सित एवं विकृत स्व-प काव्य के रूप में स्थापित हुआ है।

आठवें दशक के काव्यान्दोलनों पर बोट पोद्दा का प्रभाव अत्यधिक पड़ा है। आधुनिक हिन्दी कविता में मुत्तो पोद्दा के नाम से बोट कविता को स्वीकार किया गया है। इस कविता पर विद्रोह का प्रभाव पड़ा है। ये कविता कविता से भिन्न नहीं है। इनकी मुख्य विषय वस्तु- आत्महत्या, फूट विद्रोह, उरीजी की निर्बन्ध गोलार्ध, स्तनों के स्तूप, कपूरी कूले, ताज्जार दुखी एवं अकुप्त वासना के विविध रूप प्राप्त होते हैं। बोट कवि तारो तारो की संयोग के लिए

स्वास्थ्य प्रद वस्तु मानते हैं। इसीलिए इनकी कविताओं में वस्ती, धनी-निर्धन एवं वाचनापरक चित्र मिलती हैं। भूखो पोढ़ो के इन कविगणों का वाक्य नंगो कथन जोरों, पाखी जोर मुख्यों की जोरों, उनकी काली सफेद गौर स्वस्थ एवं हल्का, गंधातो देह, पुष्ट हस्तीबन्धि, मुल्ले शिथिल कठोर स्तन, किशोरी की पुष्ट बाही में ऊड़ती प्रीति महितार, ताढ़ो, शराब, शव, भोग-भोग, कदम पर कपूर, श्मशान, तान्त्रिक, ज्योरो एवं जीपारियाँ आदि रहे हैं। राजकमल जीधरी को ये वैयक्तिक रुचियाँ उसकी कविता में विविध रूपों में वस्ति हुई हैं। भूखो पोढ़ो का कवि क्लामाजिक, अधार्मिक तथा क्रैतिक है। उसका व्यक्ति टपटाट, निराशा और विद्रोह का रूप अपनाता है। वह परम्पराओं की छे तोड़कर मुक्त रहता है। नारो बग और नारो-भोग भूखो पोढ़ी की परम सिद्धि है। मादक वस्तुओं का सेवन उसकी आत्मा की संतुष्टि प्रदान करता है। सारस्वतः बोट कविता या भूखो पोढ़ी हिन्दों में ज्योरो मुद्रा लेकर अवतरित हुई। इसका समग्र काव्य दर्शन और व्यक्तिवाद के नाम भुग पर टिका हुआ है। भूखो पोढ़ो पर व्यक्तिवादो दर्शन की नाम व्यक्ति निष्ठा का प्रभाव है।

साठोत्तरी कविता सोधि कथन की कविता है। ये हः कवि कविता के द्वारा ज्ञान-ज्ञानि लाना चाहते हैं। यथार्थ में ये कवि पूर्ववर्ती पोढ़ी के दमन, शोचण, जग्यकार, अतिशय, सुगमन आदि के शत्रु हैं। साठोत्तरी कविता साम्यवादी विचारधारा तथा व्यक्तिवादो विचारधाराओं की अपने में समाहित किये हुए हैं। साठोत्तरी पोढ़ी का कवि व्यक्तिवाद के प्रभावित अवश्य है। परन्तु वह वैज्ञानिक जीवन मूल्योंकी स्वीकारता हुआ साम्यवादी विचारधारा की भी आत्म-

सात् किये हुए हैं। अतः साठोत्तरी कविता पर व्यक्तनिष्ठा एवं वैयक्तिकता का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

युक्तसावादी कविता युद्ध, पातन, तैय, जोरता तथा युद्ध पीडा के दृश्यों से व्यापक है। इस कविता के कवि को मृत भावना युद्ध है। इसीलिए युक्तसावादी कविता विद्रोह एवं युद्ध की भावना से जीत प्रीत है। युद्ध वादिम प्रवृत्ति है। युक्तसावादी कविता में विद्रोह, नकार, अस्वीकार तथा विरोध की भावना विद्यमान है। युक्तसावादी कविता पर व्यक्तवादो चिन्तन का प्रभाव है जो कि विद्रोह विरोध एवं युद्ध की भावना के रूप में व्यक्त हुआ है।

सहज कविता पर व्यक्तवादो चिन्तन का प्रभाव है। अनेक रचनाएँ इस कविता एवं व्यक्तोत्त प्रवृत्तियों से प्रभावित हैं। सहज कविता के व्यक्ति में क्षुब्ध, पराजय, निराशा तथा विद्रोह आदि के विचार प्राप्त होते हैं। सहज कविता में व्यक्ति-चेतना, व्यक्ति-वादिता एवं व्यक्तवादो विचारों का प्रायः चिन्तन हुआ है। अतः सहज कविता व्यक्तिसूचक है जो कि व्यक्तवादो चिन्तन की सहज रूप में अभिव्यक्ति है।

इसी प्रकार 'अंगीत' कविता 'एष्टो गीत' 'आश्लेषपरक, अकविता से प्रभावित, वास्तव्यबोध एवं व्यक्ति-चेतना से प्रभावित है। अंगीत का विद्रोह नितास्त रकाकी, वात्सल्यनिष्ठ तथा वैयक्तिक दायित्व से विकसित हुआ है। अतः अंगीत व्यक्तवादो विचारधारा से अनुप्राणित गीत तथा नवगीत की प्रतिक्रियास्वरूप विक-

रिक्त हुआ एक सघु काव्यान्दोलन है।

सातवें दशक की कविता विद्रोह एवं व्यक्ति-निष्ठा से प्रभावित है। यह युग आक्रोश, विद्रोह तथा परम्परा भंग का है। अतः कविता के प्रायः सभी सघु काव्यान्दोलन अतिवाद से प्रभावित हैं। इन कविताओं में अस्वोक्ति, नकार, नकारात्मकता, विद्रोह, असाधारणिक, व्यापिक, क्रांतिक, कमर्चादित तथा पराजय भाव के दर्शन होते हैं। इस संदर्भ में अस्वोक्ति कविता, बोट कविता, शम्भानी पोढ़ी, साठोस्तरी कविता, युगुत्सावादी कविता, सहज कविता एवं जगीत आदि में व्यक्तिवादो वैचारिकता का प्रभाव दिखाई पड़ता है।

अन्य सघुकाव्यान्दोलनों में प्रतिबद्ध कविता अनात्मन सूर्योदयो कविता, अस्वोक्ति कविता, कोलाज कविता, ताजो कविता, ठोस कविता आदि में भी व्यक्तिवाद का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। व्याख्यान है कि कुछ कवि कई आन्दोलनों से जुड़े हुए हैं।

निष्कर्षतः सातवें दशक के प्रायः सभी सघु काव्यान्दोलन 'व्यक्ति' की केन्द्र में मानकर विकसित हुए हैं। इन कवियों के मन में प्रवर्तक करने की तीव्र इच्छा है तथा अपने का रोग विद्यमान है। इस युग का व्यक्ति संहित व्यक्तित्व का कवि है। अतः भूखी पोढ़ी, अस्वोक्ति कविता, शम्भानी पोढ़ी, युगुत्सावादी कविता तथा जगीत आदि पर व्यक्तिवाद, अहंवाद, अस्तित्ववाद, भोगवाद एवं जावांक दर्शन आदि का प्रभाव व्यापक रूप से व्याप्त है।

व्यक्तिवाद व्यक्ति को महत्ता प्रदान

करता है। उसका समग्र दर्शन व्यक्ति के तत्त्विक व्याप्त है। राजनीति और साहित्य में व्यक्तिवादो विचारधारा की विशिष्ट उपलब्धि व्यक्ति-स्वातंत्र्य है। काव्य में व्यक्तिवाद ने वैयक्तिकता की इस प्रकार प्रतिष्ठा की है कि वह काव्य से क्लृप्त नहीं की जा सकती। कवि की वैयक्तिक-केतना काव्य-सृजन के प्रति सदैव समर्पित रही है। कवि के काव्य में प्रयोग इस बात का प्रमाण है कि वह कहों-न-कहों वैयक्तिक संस्पर्श से जनमाने हो जुड़ गया है। उसने व्यक्ति (स्फूर्ति) ने निरन्तर क्लेशाण किये हैं और वह व्यक्तिनिष्ठा एवं व्यक्ति-स्वातंत्र्य के प्रति सदैव निष्ठावान रहा है।

डा. वासुदेव हिन्दो कविता (सन् १९४९

६० से १९७० ६० तक) का अध्ययन करने पर यह उपलब्धि प्राप्त होती है कि वासुदेव हिन्दो कविता पर व्यक्ति एवं व्यक्तिवादो चिन्तन का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव प्राप्त होता है। प्रयोगवादो काव्य में व्यक्ति एवं व्यक्तिनिष्ठा के प्रति क्लेश साक्ष्य प्राप्त होती है। ' दारुपस्तक ' , ' दूसरा सप्तक ' एवं ' नयेन के प्रपञ्च ' में वैयक्तिकता, व्यक्ति-स्वातंत्र्य एवं व्यक्ति निष्ठा का अत्यधिक प्रभावप्राप्त होता है। उत्तर काव्यवादो काव्य में पृष्ठ के प्रति ललक, पराजय-बोध, वैयक्तिकता , रोमांस एवं वरलोला के दृश्य प्राप्त होते हैं। उत्तर काव्यवाद में जायो रोमांस की व्यक्तिवादो अवधारणाके द्वारा व्यक्त हुई है।

नयो कविता में व्यक्ति के विहित व्यक्तित्व

एवं व्यक्ति को नयो प्रतिष्ठा के प्रति अत्यधिक प्रभाव प्राप्त होता है।

नयी कविता में व्यक्तिवादों प्रवृत्तियों के विविध स्रोत प्राप्त होते हैं। अस्तित्ववाद, कर्मवाद, भोगवाद, लघुमानव, साधनावाद, विद्रोह, अनास्था, अकेलापन, अवनवोपन, वास्तव्यन्तिक वैयक्तिकता, कृष्णता, अन्धारा एवं वैयक्तिक-केतना के स्वर नयी कविता में विविध रूप से प्रतिफलित हुए हैं। कविता में घोर व्यक्तिवाद का धिमाँना, विकृत एवं फुल्ल स्वप्न प्राप्त होता है। मार्क्स दर्शन एवं स्थूल स्वपक्ष भोगवाद तथा व्यक्तिवाद के विविध रूप नयी कविता में प्राप्त होते हैं। सातवें दशक के लघु काव्यान्दोलनों में बोट कविता, रमणानो पीढ़ी एवं अन्विकृत कविता में व्यक्तिवाद का ठोस एवं सघन रूप प्राप्त होता है। इन काव्यान्दोलनों में व्यक्ति-स्वातंत्र्य के प्रति निष्ठा का भाव दृष्टिगोचर होता है।

सारंशितः आधुनिक हिन्दो कविता में व्यक्ति की प्रतिष्ठा एवं उसके कर्म के प्रति निष्ठा प्राप्त होती है। आलोच्य युग के प्रायः सभी काव्यान्दोलनों पर व्यक्तिवादों चिन्तन का प्रभाव परिलक्षित होता है। अतएव है कि व्यक्तिवाद को इस प्रतिष्ठा में वैयक्तिक-केतना एवं व्यक्ति-स्वातंत्र्य की भावना कार्यरत रही है। इसीकारण प्रयोगवाद, उत्तराश्रयावाद, नयी कविता, कविता, अन्विकृत कविता, रमणानो पीढ़ी, बोट कविता, युक्त्या-वादी कविता आदि में व्यक्तिवादों विनाशधारा की विविध प्रवृत्तियाँ स्थापित हुई हैं। व्यक्ति-स्वातंत्र्य के प्रति व्यक्ति का संघर्ष एकाँ से चलता रहा है। परन्तु आधुनिक युग में यह संघर्ष व्यक्तिवादों अवधारणा के प्रभाव से अतिरिक्त तोड़ एवं सघन रूप में उभर कर सामने आया है।

आधुनिक हिन्दी कविता के कथ्य एवं शिल्प में व्यक्तिवादी चिन्तन के परिणामस्वरूप निरन्तर परिवर्तन आया है। व्यक्तिवाद आधुनिक हिन्दी काव्य पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से आच्छादित रहा है। इसके फल-स्वरूप आधुनिक हिन्दी काव्य में व्यक्तिवाद एवं वैयक्तिक चेतना की सफल अभिव्यक्ति के दर्शन होते हैं। अतः आलोच्ययुगीन काव्य पर अधिकारितः व्यक्तिवादी दर्शन का कत्यधिक प्रभाव प्राप्त होता है।

परिशिष्ट

सहायक ग्रंथों एवं पत्र-पत्रिकाओं

की

सूची

परिलिख

सहायक ग्रंथ और पत्र-पत्रिकाओं की

सूची

हिन्दी

कविता और काव्य संघर्ष : डा. क. रघुनाथ परमार, कृष्णा प्रकाश ,
जयपुर, प्र० सं० सन् १९६६ ई०

कैसे कंठ को पुकार : अश्विनी कुमार

कुलान्त : सत्यनारायण वर्मा, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली
प्र० सं० सन् १९६६ ई०

वर्धिव्यक्ति - १ : डॉ० रमेश कुमार मेघ , रायपास एण्ड सोन , दिल्ली

जागत की जलियाँ : वीरेन्द्र कुमार जैन

वचनराजिता : अमल

अमेरिका में प्रजातंत्र : जी. वि. सहाय, पत्रिका प्रकाशन प्रा० लि०
बम्बई, प्रथम हिन्दी संस्करण सन् १९५६ ई०

वरी की । कृष्णा प्रभाकर : अश्विनी , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन,
काशी , प्रथम सं० सन् १९५६ ई०

वस्तुतत्त्ववाद और द्वितीय अमरीक्न हिन्दी साहित्य : डा० रघुनाथ
सुन्दर मि. विद्या प्रकाशन मंदिर, प्रथम संस्करण
सन् १९७१ ई०

वस्तुतत्त्ववाद : महावीर दाधीच

वविराम चत मधुसूतनी : वीरेन्द्र मि. , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन ,
दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् १९६७ ई०

- वैजय जीर वाधुनिक रचना की समस्या : रामस्वरूप चतुर्वेदी , भारतीय
ज्ञानपीठ प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण सन् १९६० ई०
- वैजय का काव्य : एक पुनर्मूल्यांकन : डा० शैलनाथ चतुर्वेदी
वाल्मीकी : श्रीवर नारायण , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली ,
द्वितीय संस्करण १९७१ ई०
- वाल्मीकीय : वैजय , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन काशी, प्रथम संस्करण
सन् १९६० ई०
- वाल्मीक निर्वाचन तथा अन्य कवितारं : राजीव चव्हेला, राजकपल प्रकाशन,
दिल्ली , प्रथम संस्करण सन् १९६६ ई०
- वालीकना तथा काव्य : डा० इन्द्रनाथ प्रधान , राजपाल एण्ड सन्स,
दिल्ली , प्रथम संस्करण सन् १९६० ई०
- वाधुनिक कवितारं : डॉ० रणधीर सिंह
- वाधुनिक काव्य प्रवृत्तियाँ : एक पुनर्मूल्यांकन , डा० गणेश शर्मा , पुस्तक
संस्थान कानपुर, प्रथम सं० सन् १९७६ ई०
- वाधुनिक परिवेश जीर नवलेखन : डा० शिव प्रसाद सिंह , लोक नाट्यी
प्रकाशन, झांझाबाद, प्रथम संस्करण ,
सन् १९७० ई०
- वाधुनिक हिन्दी कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ : डा० नगेन्द्र , नेशनल
पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, तृतीय संस्करण,
सन् १९६६ ई०
- वाधुनिक हिन्दी काव्य में पताकावाद : डा० रमन नागपाल , विष्णु
प्रकाशन, झांझाबाद प्रथम संस्करण ,
सन् १९७७ ई०

वाधुनिक हिन्दी साहित्य, सच्चिदानन्द वात्स्यायन, राजपात एण्ड

सम्प, दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् १९७६ ई०

वाधुनिक कविता का मूल्यांकन : डा० हन्ड नाथ मदान, हिन्दी भवन,

वातन्धर, प्रथम संस्क० सन् १९६२ ई०

वाधुनिक साहित्य की व्यक्तिवादी भूमिका : डा० बसन्त तिवारी,

नंदकिशोर एण्ड सम्प, वाराणसी,

प्रथम संस्क० सन् २०१६ वि०

वाधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ : डा० नामवर सिंह, लोक भारती

प्रकाशन, स्तावाबाद, चतुर्थ संस्क०

सन् १९६६ ई०

वास्था : सूर्यप्रकाश सिंह, सं० सम्भुनाथ सिंह, सहाकारी कविता प्रकाशन,

वाराणसी, प्रथमावृत्ति सन् २०१३ वि०

वास्था के चरण : डा० नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली,

प्रथम संस्क० सन् १९६६ ई०

वागिन के पार द्वार : वज्र - भारतीय ज्ञानपीठ काशी, प्रथम संस्क०

सन् १९६९ ई०

इतिहास दर्शन, डा० बुद्ध प्रकाश, हिन्दी समिति पुनर्जा विभाग (उ०प्र०)

प्रथम संस्क० सन् १९६२ ई०

इत्यस्तम् : वज्र, प्रथम संस्क० सन् १९४६ ई०

हन्ड धनुष रवि दुर : वज्र, प्रथम संस्क० सन् १९५७ ई०

एक बीर नंगा बादमी - सतीश जमाली, ६३ माटल टाउन, सीवीफ्त

निकट दिल्ली

एक सुनी नाव : सर्वेश्वर दयाल सम्भना, प्रथम सं० सन् १९६६ ई०

स्कान्ता संगीत : बच्चन , सन् १९५४ ई०

जी वप्रस्तुत मन, भातभूषण कृपास , राकमल प्रकाशन, दिल्ली,

प्रथम संस्करण सन् १९५८ ई०

कथा युग : धर्मवीर भारती, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन दिल्ली,

वष्टम संस्करण पुनर्मुद्रित सन् १९७६ ई०

कल सुनना मुझे , धूमिल , युगबोध प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण

सन् १९७७ ई०

कलावती , राकमल बोधरो , पीना कोठी , बुद्ध मार्ग, पटना ,

प्रथम संस्करण सन् १९६४ ई०

कनुप्रिया , धर्मवीर भारती, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन दिल्ली ,

प्रथम संस्करण

कविता और संघर्ष चेतना , डा० यश गुलाटी , छन्दप्रस्थ प्रकाशन,

दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् १९८० ई०

कवितारं- ५७ सं० बन्धु सिंह देव

कवितार- ६४ सं० बन्धु कुमार, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली,

प्र० सं० सन् १९६६ ई०

कवित्री , ज्ञेय , प्रथम संस्करण, संवत् २०१३ वि०

कवार को शक्ति , रामरत्न पाठक

क्योंकि मैं उसे जानता हूँ - ज्ञेय , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली,

प्रथम संस्करण सन् १९७७ ई०

काठ को घंटियाँ- सर्वेश्वर बघास सक्सेना, भारतीय ज्ञानपीठ, वाराणसी,

प्रथम संस्करण सन् १९५६ ई०

कामायनी पर शैव दर्शन का प्रभाव - डा० राज कुमार गुप्त, राजेश प्रकाशन,

दिल्ली, प्रथम संस्करण संवत् २०३३ वि०

काव्यानुसूतन : आधुनिक काव्याधुनिक - डा० कुमार विमल, ज्ञानपीठ

पटना , प्रथम संस्करण सन् १९७० ई०

किरण के पाँच , रमेश रंजन , नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली, प्रथम

संस्करण, सन् १९६६ ई०

गोत- २ डॉ० भूपेन्द्र कुमार लोहो , गोत प्रकाशन, दिल्ली, प्र० सं०

सन् १९६७ ई०

कडक्यूह - कुंवर नारायण

बाँद का मुँह टेढ़ा है- सुखितबोध , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, वाराणसी,

तृतीय संस्करण सन् १९६५ ई०

झायाबाद , डा० नामवर सिंह, राकमल प्रकाशन, दिल्ली, द्वितीय

संस्करण सन् १९६८ ई०

झायाबाद , डा० खोन्ड्र प्रमर , राकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम

संस्करण, सन् १९७१ ई०

झायाबाद का पत्तन , डा० देवराज , प्रथम संस्करण सन् १९४८ ई०

झायाबादी कवियों का सांस्कृतिक पृष्ठभूमि , डा० प्रसाद सिन्हा,

लोक भारती प्रकाशन, झायाबाद, प्रथम संस्करण

सन् १९७३ ई०

झायाबादी काव्य में राष्ट्रीय- सांस्कृतिक चेतना , खोन्ड्र नाथ दत्त,

बाणी प्रकाशन, दिल्ली , प्र० संस्करण

सन् १९७३ ई०

झायाबादोत्तर हिन्दो काव्य की सामाजिक वीर सांस्कृतिक पृष्ठभूमि,

डा० कमला प्रसाद पाण्डेय, रत्ना प्रकाशन,

झायाबाद, प्रथम संस्करण सन् १९७२ ई०

शायबादोत्तर हिन्दी प्रगोत, डा० विनोद गोवरे, बाणी प्रकाशन,
कमला नगर, दिल्ली, प्रथम संस्करण
१९७५ ई०

जस्तो हुए वन का वसन्त , दुष्यन्त कुमार , प्रथम संस्करण
जो बंध नहीं सका, गिरिजाकुमार भादुर, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन,
दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् १९६६ ई०

ठंडा सोडा , धर्मवीर भारती, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, तृतीय संस्करण
१९७६ ई०

तारसप्तक , सं० ज्ञेय , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, चतुर्थ संस्करण
सन् १९७२ ई०

तीसरा सप्तक , सं० ज्ञेय , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली,
तृतीय संस्करण सन् १९६७ ई०

विनारम्भ , श्रीकान्त तर्मा
दिवेदो युक्तीन काव्य पर जार्ज जमाज का प्रभाव, भक्त राम तर्मा
दूसरा सप्तक , सं० ज्ञेय , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली ,
द्वितीय संस्करण सन् १९७० ई०

नकेन के प्रपथ , नकेन , मोतीराम बनारसीदास पटना-४ प्रथम संस्करण
सन् १९२६ ई०

नदी के दीप , ज्ञेय , तृतीय संस्करण सन् १९६० ई०

नया काव्य नये मूल्य , ललित शुक्ल , दि कैमिलन कम्पनी आफ
एडिडिया, दिल्ली, प्रथम संस्करण सन्
१९७५ ई०

नया परिवेश , डा० एफ़ी

नया हिन्दी काव्य , डा० शिवकुमार मिश्र , अनुसंधान प्रकाशन, कानपुर

प्रथम संस्क० सन् १९६२ ई०

नयी कविता और अस्तित्ववाद , डा० राम विताय शर्मा, राकमल प्रकाशन,

दिल्ली, प्रथम संस्क० सन् १९७८ ई०

नयी कविता का आत्म संघर्ष तथा अन्य निबन्ध , मुक्तिबोध , सन्

१९७७ ई०

नयी कविता के बाद , डा० जी० प्रकाश क्वली, पुस्तक संस्थान कानपुर,

प्रथम संस्क० सन् १९७४ ई०

नयी कविता के प्रतिमान , लक्ष्मीकान्त वर्मा , भारती ग्रंथ प्रकाशन,

इलाहाबाद, प्रथम संस्क० ई० २०१४ वि०

नयी कविता का आत्म विकास, डा० श्यामसुन्दर घोष, हिन्दी

साहित्य संसार, पटना, प्रथम संस्क० सन्

१९६५ ई०

नयी कविता का परिचित्य , डा० परमानन्द प्रोवास्तव , मोलाम प्रकाशन,

इलाहाबाद, प्रथम ई० सन् १९६० ई०

नयी कविता नये कवि , विश्वम्भर मानव, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद,

संशोधित द्वितीय संस्क० सन् १९६३ ई०

नयी कविता में मुख्य बोध , शशि सहगल , वमिनव प्रकाशन, दिल्ली ,

प्रथम संस्क० सन् १९७६ ई०

नयी कविता : उद्भव और विकास , डा० रामचन्द्रन राय, बिहार

हिन्दी ग्रंथ क्लादमी, प्रथम संस्क०

सन् १९७७ ई०

नयी कविता : स्वल्प और समस्याएं , डा० जगदीश गुप्त, भारतीय

ज्ञानपीठ प्रकाशन, दि० संस्क० ई० १९७२ ई०

नयी कविता के सात अध्याय, डॉ० देवेंद्र ठाकुर, मौलिक साहित्य-

प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्क० ई० १९७६ ई०

नयी कविता में वैयक्तिक चेतना, डा० ज्योत्स्ना रायण त्रिपाठी, काठर

पुस्तकालय, मथुरा, प्रथम संस्करण

सन् १९७६ ई०

नयी कविता में ध्वनि का वस्तुगत परिमिश्रण - डा० गोविन्द द्विवेदी

नयी कविता विस्तारती संदर्भ, डा० जगदीश कुमार, सम्पादन, प्रकाशन,

दिल्ली, प्र० संस्करण स० १९७६ ई०

नयी समीक्षा : नये संदर्भ, डा० नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस,

दिल्ली, प्र० सं० स० १९७० ई०

नये प्रतिमान पुराने निष्पन्न, सत्सोकान्त वर्मा

नये साहित्य का शीर्षकशास्त्र, नवानन माधव मुक्तिबोध - राधाकृष्ण

प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण १९७१ ई०

नवजागरण की रायावाद, डा० महेंद्र नाथ राय, नेशनल पब्लिशिंग

हाउस, दिल्ली, प्र० संस्करण

निबन्ध, डॉ० जगदीश कुर्वेदी, ज्ञान भारती प्रकाशन, नयी दिल्ली,

प्र० संस्करण स० १९७२ ई०

फर नई है धूम, डा० रामदत्त मिश्र, भारतीय ज्ञानपीठ वाराणसी,

प्रथम संस्करण सन् १९६६ ई०

परिवेश : हम तुम, सुंदर नारायण, प्रथम सं० संवत् २०१२

पश्चिमी वाचार विज्ञान का वास्तविकतात्मक अध्ययन - डा० ईश्वर चन्द्र

शर्मा देवसरी

पश्चिमी दर्शन (ऐतिहासिक निरूपण), डा० दीवान चन्द, प्रकाशन

प्यारी सूचना विभाग, उ० प्र० प्रथम संस्करण

सन् १९५७ ई०

पाँच जोड़ बाँसुरी , चन्द्र देव सिंह, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, प्रथम

संस्करण सन् १९६६ ई०

पाश्चात्य समीक्षा के सिद्धान्त , डा० कुल बिहारी शर्मा , देवकनि

प्रकाशन, कलौगढ़, प्रथम संस्क० १९७५ ई०

सूमा , ज्ञेय , राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली, प्रथम संस्क० सन् १९६५ ई०

प्रातिवाद और ज्ञेय, शैल सिन्हा, कलौक प्रकाशन, दिल्ली , प्रथम संस्क०

सन् १९६६ ई०

प्रातिवाद : एक समीक्षा , डा० धर्मवीर भारती, साहित्य भवन लि०

प्रयाग , प्रथम संस्क० १९४६

प्रयोगवादी काव्यधारा , डा० रमार्कर तिवारी , नीलम्बा , विद्या

भवन वाराणसी, प्रथम संस्क० संवत् २०२१

प्रयोगवाद नाम व्यक्तिवाद, प्रेम शंकर, वक्राश्रित लोध प्रबन्ध

प्रारंभ , सं० जगदीश चतुर्वेदी

क्रायक मनोविज्ञान प्रेरिका , कैलिन एस० हाल, प्रथम हिन्दी संस्क०

सन् १९६३ ई० रायकमल प्रकाशन, दिल्ली

बावरा कैरी , ज्ञेय , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली , दि०

संस्क० सन् १९७२ ई०

बैरंग केनाम चिट्ठियाँ- डा० राम दास मिश्र

भीतर अंकित बाहर अंकित , हुंवर बेबन, प्रणीत प्रकाशन, गाजिबाबाद,

प्रथम संस्क० सन् १९७८ ई०

मकलीघर , विजयदेव नारायण शर्मा

मनुष्य जाति की कहानी , हेमिङ्ग्वे विलेम्पान हून, हिन्दी समिति मूचना

विभाग, उत्तराञ्च प्रथम हिन्दी संस्क० सन्

१९७० ई०

महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग- डा० उदयमानु सिंह, तल्लुङ

विश्वविद्यालय प्रकाशन, प्रथम संस्करण

पृष्ठ २०८ पृ०

मरी हुई औरत के साथ सम्भोग , श्रीराम शुक्ल , कंचना कमोनाबाय ,

तल्लुङ

मानवमूल्य और साहित्य , डा० प्रमोद भारती, भारतीयज्ञानपीठ ,

प्रकाशन , काशी , प्र० सं० सन् १९६० ई०

मानववाद और साहित्य, नवलकिशोर, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली ,

प्रथम संस्करण सन् १९७२

मायादर्पण, श्रीकान्त वर्मा , भारतीय ज्ञानपीठ, प्रकाशन, दिल्ली ,

प्र० संस्करण सन् १९६७ ई०

मुक्ति प्रयोग , राजकमल चौधरी

मेक्स , प्रभाकर माखरे , भारतीयज्ञानपीठ प्रकाशन, प्रथम संस्करण सन्

१९६७ ई०

मेरा रूप तुम्हारा दर्पण , बाल स्वरूप राठी

युद्धियस् , चन्द्रमौलि उपाध्याय

गूरीपौर दर्शन , रामावतार शर्मा , दूसरा संस्करण सन् १९६२ ई०

वनपाली सुनी , नरेश बेस्ता

विजय , सं० जगदीश चतुर्वेदी , राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली , प्रथम

संस्करण सन् १९६७ ई०

जबद - देश , डा० जगदीश गुप्त , भारतीय पीठार प्रयाग, प्रथम संस्करण

सन् १९५६ ई०

शहर जब भी संभावना है , कैलाश दाजपेयी

- शिक्षा पत्र चम्पकी , गिरिजाकुमार माथुर , साहित्य भवन प्रा० सि०
 छायावाद, प्र० संस्क० सन् १९६१ ई०
- संज्ञान्त , ईसाश बाजपेयी , भारतीय ज्ञान पीठ प्रकाशन, वाराणसी,
 प्रथम संस्क० सन् १९६४ ई०
- सत्ता और व्यक्ति , बर्ट्रान्ड रसल , रणजीत प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स,
 दिल्ली , प्र० ६० हिन्दो सह० सन् १९५२ ई०
- सत्यं शिवं सुन्दरम् , प्रथम भाग , डा० रामानन्द तिवारी भारतीयनन्दन,
 भारतीय मंदिर, नरतपुर , प्र० ६० सन् १९६३
- सप्तक काव्य , डा० अरविन्द , दि मैकमिलन कंपनी वाफ इंडिया,
 नयी दिल्ली, प्रथम संस्क० सन् १९७६ ई०
- सफेद सिडिया , विनीद बन्डर पाण्डी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली ,
 प्रथम संस्क० सन् १९५६ ई०
- समकालीन हिन्दी कविता, डा० खोन्ड्र प्रमर , राजेश प्रकाशन, दिल्ली,
 प्रथम संस्क० सन् १९७२ ई०
- समानान्तर सुने , शान्ता सिन्हा , रंजा प्रकाशन पटना, ५ प्रथम संस्क०
 समुद्रफेन , ६० रमासिंह , उदय प्रकाशन, लखनऊ , प्रथम संस्क० सन्
 १९५७ ई०
- संस्कृति , वारसी प्रसाद
- संसद से सहक तक , धूमिल , राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, द्वितीय आवृत्ति
 सन् १९७५ ई०
- संस्कृत कविता , डॉ० खोन्ड्र प्रमर, शाकुन्तलम् प्रकाशन, जलौगढ़ , प्रथम
 संस्करण सन् १९६६ ई०
- साठोत्तरी कविता , डॉ० सतिल गुप्ता, एकता प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम
 संस्क० सन् १९६६ ई०

सात गीत वर्ण , धर्मवीर नाटो, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली,

तृतीय संस्करण, सन् १९७६ ई०

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी और गुजराती नयी कविता , मंगू सिन्हा , नेशनल

पब्लिशिंग हाउस , दिल्ली, प्र० संस्करण

सन् १९७३ ई०

साहित्य का उद्देश्य , प्रेमचन्द

साहित्य का नया परिदृश्य , डा० सुर्वर , भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन,

दिल्ली , द्वि० संस्करण सन् १९६६ ई०

साहित्य के विविध क्षेत्र , डा० लीठार कुल्से , गणेश प्रकाशन, दिल्ली,

प्रथम संस्करण सन् १९६६ ई०

साहित्य की समस्याएँ , शिवदान सिंह, आत्माराम राय सन्धि, दिल्ली,

प्र० सं० सन् १९५६ ई०

स्थितियाँ : मुमुक्षु तथा अन्य कवितारं, राजेन्द्र किशोर

भूय का स्वागत , सुषमता कुमार, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण

सन् १९५७ ई०

हरी घास पर दाण मर , अम्य , प्रथम संस्करण सन् १९४६

हिन्दीउपन्यास का उद्भव और विकास , डा० सुरेश सिन्हा, कलक

प्रकाशन दिल्ली , प्र० सं० सन् १९६५ ई०

हिन्दी उपन्यास का विकास और वैतिक्ता , डा० सुत्तम शुक्ल, अनुसंधान

प्रकाशन, कानपुर, प्र० सं० सन् १९६६ ई०

हिन्दी उपन्यासों का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन, डा० गिरधर प्रसाद

सर्मा, अन्धप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण

सन् १९७८ ई०

हिन्दी कविता : आधुनिक आयास , डा० रामदश मिश्र

हिन्दी कविता : तीन दशक , डा० रामदश मिश्र , ज्ञान भारती

प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् १९६६

हिन्दी काव्य की प्रवृत्तियाँ, डा० रघुवीर , राजकमल प्रकाशन, दिल्ली,

द्वि० सं० सन् १९५५ ई०

हिन्दी की प्रयोगशील कविता और उसके प्रेरणास्रोत, डा० श्रीराम

नागर, सत्यार वल्लभ भाई विद्यापोठ,

वल्लभ विद्यानगर, गुजरात, प्र० सं०

सन् १९६६ ई०

हिन्दी नवलेखन , राम स्वल्प कर्तुर्वेदी, भारतीय ज्ञानपोठ प्रकाशन, काली

प्रथम संस्करण सन् १९६० ई०

हिन्दी वाङ्मय : दोसवीं शती , सी० डा० नगेन्द्र, विनीत पुस्तक मंदिर,

आगरा, प्रथम संस्करण सन् १९७२ ई०

हिन्दी साहित्य आधुनिक परिदृश्य - डा० गोविन्द राजोज, देवनागर

प्रकाशन, जयपुर, प्र० सं० सन् १९७३ ई०

हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, डा० जयकिशन लण्डेनवाल , विनीत

पुस्तकमंदिर आगरा, नवम संस्करण

हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास, कर्तुर्वेदी भाग , सी० डा० हरवीर लाल

शर्मा, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी,

प्रथम संस्करण संवत् २०२७ वि०

हिन्दी साहित्य एक आधुनिक परिदृश्य , सन्धिदानन्द वात्स्यायन,

राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण

सन् १९६७ ई०

कीश

मानविकी पारिभाषिक कीश, दर्शन सण्ड, सं० डा० नगेन्द्र , राजकमल
प्रकाशन, दिल्ली , प्र० सं० सन् १९६५ ई०

मानविकी पारिभाषिक कीश, साहित्य सण्ड सं० , डा० नगेन्द्र , राज-
कमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण सन्
१९६५ ई०

मानक हिन्दो कीश, सं० रामचन्द्र वर्मा, हिन्दो साहित्य सम्मेलन,
प्रयाग, प्रथम संस्करण सन् १९६६ ई०

वृक्ष कीशो- हिन्दो कीश भाग १ , सं० डा० हरदेव वाहरी, जानमण्डल
सि० वाराणसी, प्र० सं० स० १९६६ ई०

वैज्ञानिक परिभाषा कीश, सं० बदरीनाथ कपूर, तब्द लोक प्रकाशन,
बनारस, १९६५ ई०

सूचित भागर, संग्रहकर्ता , रमेश गृप्त, उ० प्र० प्रकाशन शाला, पुनना
विभाग, प्र० संस्करण सन् १९५६ ई०

हिन्दो विश्व कीश - सण्ड ७, ६, ११, नागरी प्रचारिणी सभा काशी,
संवत् २०२१, २४, २६ वि०

हिन्दो साहित्य कीश भाग १ , सं० धीरेन्द्र वर्मा , जानमण्डल सि०
वाराणसी , प्र० संस्करण संवत् २०१५
वि०

पत्र- पत्रिकारं

कविता - सं० गोविन्दराय , अप्रैल १९६६ ई०

कविता कंक १,३

कविता- कंक १,२,३ सं० गिनाथ सत्य , मार्च १९६७ ई०

कविता , कंक ३ , सं० विद्यालंकार , मार्च १९५५ ई०

कविता, सं० नविकिता , २६ जुलाई १९७९ ई०

कविता , कंक १-२ सं० प्रेमलंकार , मार्च १९७७ एवं अप्रैल १९७७

(नवगीत विवेचना)

कविता- ३ सं० विमल पाण्डेय

कविता नवगीत कंक. सं० राधेश्वर प्रसाद सिंह, जुन १९६६ ई०

कविता कंक १५-१६ सं० राधेश्वर प्रसाद सिंह, मार्च १९८० ई०

कविता , जुन १९६५

कविता - नव० १९५२, जुन. १९५६ , नव० १९५६ , दिस० १९६०,

जुलाई १९६१ , जन. १९६२ , फर० मार्च- अप्रैल १९६२,

मई १९६२ , जुन १९६२ , अप्रैल १९६३ , जुलाई १९६३,

जुन १९६३, सित० १९६३ , फरवरी १९६६ , अप्रैल १९६६,

जुन १९६६ , जुलाई १९६६ ।

कविता- १ , ६, ६ सं० नागीर्य नागीर्य, कविता प्रकाशन, जयपुर

कविता - २ सं० नलिन विलोचन जर्मा

कविता , सं० नरीश मेहता , जगन्नाथ १९५६

कविता परिवय (कवितांक) सं० ललित कुमार शोभास्तव , सितम्बर १९६७

कादम्बिनी , नव० १९६४ , १९६१

कालवनि , १५ अगस्त १९७०

कैबटल , सं० राही शर्मा, दिस० १९६६ , फरवरी १९६७, मई, जून ६७

गोतागिनी , सं० राजेन्द्र प्रसाद सिंह, मुजफ्फरपुर (बिहार)

उत्तर - ३ , सं० लीक बच्चन

चिन्तना - २ , सं० सत्यनारायण श्रीवास्तव, मुजफ्फरपुर (बिहार)

ज्योत्स्ना , दिस० १९५६

धर्मपुत्र - २ दिसम्बर १९५८ , २५ जुलाई १९६५, १५ अक्टूबर १९६५,

२० अप्रैल १९६६, २०-२६ जून १९८०

नई धारा, जून १९६७

नयी कविता , अंक २ , १९५५

नयी कविता-४ , १९५६

नयी कविता - ५-६ (संयोजक) १९६०-६१

नयी कविता-८ किताब पहल, छायावाच

निकष - ३-४

परिचय ५ , सं० कृष्णाकुमार शर्मा, गाजियाबाद

प्रतीक , १९४८ जन० १९५१

ब्रजवाणी, कवित्तिक , मई जून १९६६

लय , सं० नोरज, अग० दिस० अक्टू० १९६७

लहर , कवित्तिक जन० १९६१ , दिस० जन० १९६७

लहर - राजकमल मूल्याकिन के पुरस्कार दिस० जन० १९६६

लहर - राजकमल मूल्याकिन के उत्तरार्द्ध, फरवरी १९६६

मधुमती , नव० १९६६

मूल्याकिन , जुलाई, दिस० १९६६

रमानी पोद्दो- अंक ६ सं० निर्मल मल्लिक, कलकत्ता

संयमित - कै १-२ सं० बोरिन्द्र मिश्र , बम्बई
 साप्ताहिक हिन्दुस्तान , १४ फरवरी १९६५, १६ सित० १९६५,
 ६ नव० १९६६, २३ फरवरी १९६६, ५ अप्रैल,
 १९७० , २१ अप्रैल १९७४

प्रोतस्विनो , ग्रोम कै १९७७

सुसुखा सं० जलम श्रीरामसिंह, अप्रैल १९६६ , मई १९६७

वातावरण , कै ६

वाल्मन्तो , मार्च १९६२ , अप्रैल १९६२ मई १९६२

विमर्शित , कै ७ सं० निर्मय मल्लिक

यात्रा , सं० गजिन्द्र तिवारी , जन० १९६६

जानीदय , अगस्त १९६६ , अगस्त १९६६

जानीदय , महानगर विशिष्टादि , नव० १९६६

जना कै , ११, १२, १३, १४, १५ , सं० आग्नेय शाण्डिल्य, सतना

सुचक कै- १ , सं० विक्रम कुमार

संस्कृत

काव्यालंकार- नामद , मौलम्बा संस्कृत सीरीज, बनारस

काव्य मोर्माडा, राजीश्वर, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद्, पटना

मण्डगोता , हरियाणा साहित्य संस्थान, सन् १९७३ सं०

सुन्दरानन्द काव्य- अष्टाष्टी, पीतोसात बनारसीदास, दिल्ली

सं० २०३९ वि०

कौजी ग्रन्थ

एग्जिटेसियसिज्म एण्ड द माडर्न प्रडिका , एफर एन० हात्नेमन
 एग्जिटेसियसिज्म , बीन पात साष्ट्र
 एग्जिटेसियसिज्म एण्ड ह्यूमनिज्म , प्रो० पी० साष्ट्र
 इण्डियनविदुसिज्म : वाल्ड एण्ड न्यू , जान डेवी
 इल्युजन एण्ड रीयल्टी , क्रिस्टोफर काडवेल
 हिस्ट्री आफ इंग्लिश लिटरेचर
 द स्टर्नर आफ क्रिटिसिज्म , के० के० प्रीनिवास अय्यर
 द फिलासफी आफ नीत्श
 लिटरीरी एसेज आफ एचरा पाउण्ड
 रिविस एक्जिटेसियसिज्म , प्रिंसिप , वृत्तकश्य
 शास्त्रालाजी, नारमन एन० मुनि०

कौश

एनसायलोपीडिया क्रिटिकल , वाल्यूम ८, १२
 द आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी , वाल्यूम २
 एन सायलोपीडिया आफ सीरल साइन्स, वाल्यूम ७
 एनसायलोपीडिया आफ रिलीजन एण्ड इग्लिश , वाल्यूम ७
 दि न्यू डिक्शनरी आफ पाट्स : ए सायलोपीडिया आफ कूटनय
 एन सायलोपीडिया आफ ह्यूमनिटीज एण्ड फिलासफी
 द सार्टर आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी वान लिस्टारोक्त प्रिन्सिपल

वाल््यूम -१

डिक्शनरी आफ फिलासफी एण्ड सायलाजी , वाल्यूम -१